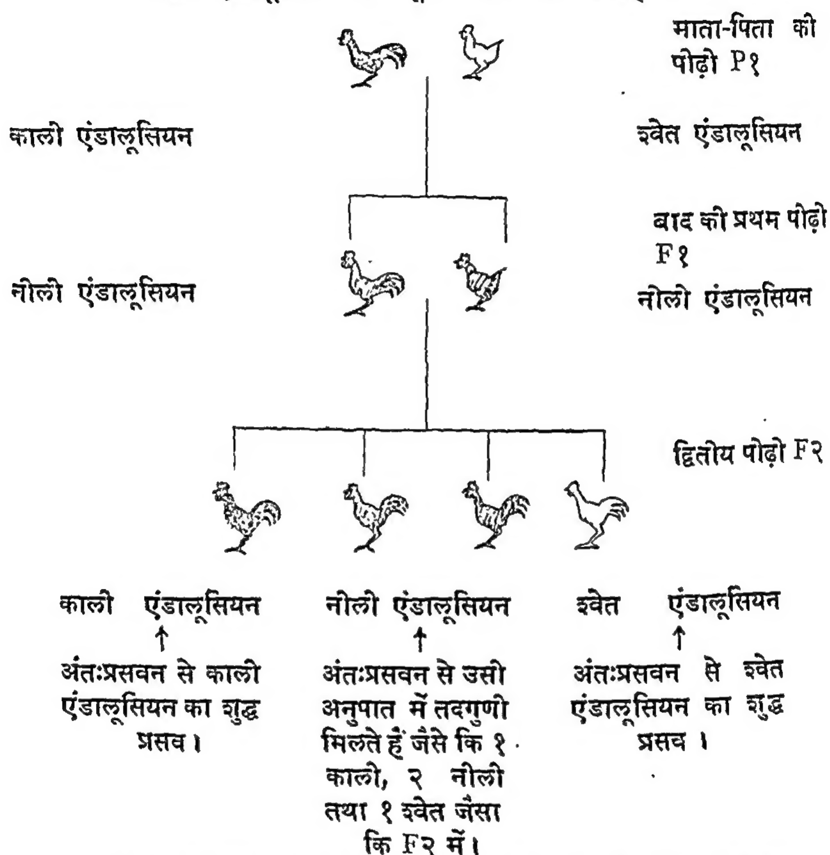
वे सन्ततियाँ जिनमें पित्र्यकों के समान जोड़े मिलते हैं (अथवा भिन्नयुग्म या बहुयुग्म—'Allelomorph'—जिन्हें अब कभी कभी 'एलिलीज'—

चित्र नं० ९८

नीले एंडालूसियन में अपूर्ण प्रभाव का उदाहरण



(F२ पीढ़ी में हमने सब मुर्गे ही दिखलाये हैं परन्तु ये अनुपात मुर्गियों के लिए भी मुर्गों की भाँति लागू होते हैं।)

'Alleles' भी कहते हैं) और इसलिए जो नस्ल के अनुरूप शुद्ध प्रसव करती हैं, युग्मैकगुण[1] (समयुग्मिक) कही जाती हैं, जब कि उनको, जिनके विभिन्न जोड़ों में

१. Homozygous

चित्र नं० ९९

पशुओं में अपूर्ण प्रभाव का उदाहरण

माता पिता की पीढ़ी (P_1)	काले एवर्डीन (Aberdeen) = लाल हेयरफोर्ड (Hareford)		श्वेत शार्टहार्न (Shorthorn) = लाल शार्टहार्न (Shorthorn)
प्रथम पीढ़ी (F_1)	काले एवर्डीन × हेयरफोर्ड = काले एवर्डीन × हेयरफोर्ड		रोन श्वेत × लाल शार्टहार्न = रोन श्वेत × लाल शार्टहार्न
द्वितीय पीढ़ी (F_2)	शुद्ध काले; काले एवर्डीन × हेयरफोर्ड = काले एवर्डीन × हेयरफोर्ड; शुद्ध लाल		शुद्धश्वेत; रोन श्वेत × लाल शार्टहार्न = रोन श्वेत × लाल शार्टहार्न; शुद्ध लाल
तृतीय पीढ़ी (F_3)	शुद्ध काले; प्रसंकर काले एवर्डीन –हेयरफोर्ड; शुद्ध लाल		शुद्ध श्वेत; प्रसंकर रोन, श्वेत-लाल शार्टहार्न; शुद्ध लाल
	शुद्ध प्रसव (ब्रीड) ↑; उसी अनुपात में तद्‌गुणी जैसा कि F_2 पीढ़ी में ↑; शुद्ध प्रसव (ब्रीड) ↑		शुद्ध प्रसव (ब्रीड) ↑; उसी अनुपात में तद्‌गुणी जैसा कि F_2 पीढ़ी में ↑; शुद्ध प्रसव (ब्रीड) ↑

विभिन्न गुण मिलते हैं, युग्मानेकगुण[1] (विषमयुग्मीय) कहते हैं। इस प्रकार नीली एंडालूसियन में माता-पिता की काली तथा श्वेत सन्ततियाँ युग्मैकगुण हैं। प्रत्येक जोड़े में रंग का निर्णय करनेवाले पित्र्यक एक से हैं, जैसे कि आकार या बाह्य समरूप में मिलते हैं। परन्तु परिणामित एंडालूसियन प्रसंकर युग्मानेकगुण है क्योंकि पित्र्यक अब मिश्रित हो गये हैं जिनमें काले तथा श्वेत तत्त्व मिलते हैं। उसी प्रकार से धवलांग युग्मैकगुण वाला होता है जिसमें धवलांग के लिए ही पित्र्यक (जनकबीज, जीन्स) मिलते हैं। पर यदि किसी मनुष्य का यह बाह्य समरूप (फेनोटाइप) रंगा हुआ हो परन्तु जिसके भिन्नरूप में धवलांग है, जिसमें रंगे हुए पित्र्यकों का प्रभाव हो, वह युग्मानेकगुण होता है।

जब हमने नीले एंडालूसियन के समान प्रसंकर की उत्पत्ति पक्की कर दी हो तो पारस्परिक स्वतन्त्र संयोग से होनेवाली सन्तति न केवल नीले युग्मानेकगुण की ही उत्पत्ति करती है परन्तु काले तथा श्वेत युग्मैकगुण की भी करती है। इसका अर्थ है कि ये सन्ततियाँ अब केवल शुद्ध श्वेत तथा काले बच्चे उत्पन्न करेंगी, मानो वे संकरण से उत्पन्न ही न हुई हों।

इस प्रकार से पित्र्यकों (जीन्स) के दो समूहों में छँट जाने को पृथक्करण कहते हैं। जहाँ पर इनकी संख्या बड़ी होती है, यह पृथक्करण बेतरतीब नहीं बरन् गणितीय आधार पर होता है। इसका प्रदर्शन चित्ररूप में निम्न प्रकार से तथा चित्र नं० १०० द्वारा भी किया जा सकता है जिसमें इसका जननिक गठन सरल तरीके से दिखलाया गया है।

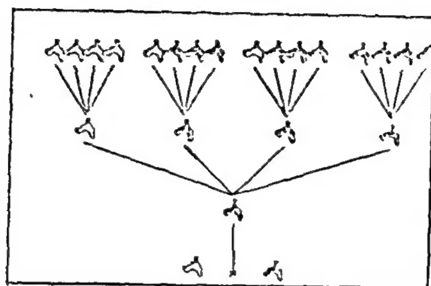
बचे हुए नीले एंडालूसियन दूसरी पीढ़ी में इसी क्रिया को दुहरायेंगे--प्रत्येक पीढ़ी में आधे से अधिक नीले रंगवालों की उत्पत्ति न होगी।

जब कि इस उदाहरण को हम नीले तथा कालों में संकरण करके कम सरल बना देते हैं, तब भी वही पृथक्करण की क्रिया चलती रहती है और एक समान सन्तति के निर्माण का प्रयत्न असफल बना देती है। पर इस बार हमें काले तथा नीले समान अनुपात में मिलते हैं तथा केवल काले ही शुद्ध प्रसव कर सकते हैं। इसके विपरीत यदि हम धब्बेदार श्वेतों का नीलों से संकरण करें तो हमें नीले तथा श्वेत धब्बेवाले बराबर संख्या में मिलते हैं। पूर्ण प्रसंकर पीढ़ी शुद्ध माता-पिता में संकरण करने से ही प्राप्त हो सकती है। प्रसंकरों के आपस में संकरण से या शुद्ध सन्ततियों से संकरण

१. Heterozygous

होने से अवश्य ही एक अथवा अधिक पूर्वज के प्रकारों की (जैसा संकरण हुआ हो, उसी के आधार पर) सन्तति होती है।'

हमारे प्रसंकर के समस्त अनुभव के अनुसार यही पृथक्करण की विधि सदैव कार्य करती है।



चित्र नं० १००
नीला ऐंडालूसियन कुक्कुट

(ए० डी० डर्बीशायर A. D. Derbyshire से उद्धृत ब्रीडिंग ऐण्ड मेण्डेलियन एक्सपेरीमेण्ट 'Breeding and Mendelian Experiment')

[श्वेत तथा काले ऐंडालूसियन के संकरण से नीलों की उत्पत्ति होती है परन्तु इनसे शुद्ध नीली संतति की उत्पत्ति नहीं होती।

नीले ऐण्डालूसियन अपूर्ण प्रभावी का अच्छा उदाहरण है। इसका कारण अनेक भिन्नयुग्मों (Allelomarph) की क्रिया बतलाया गया है।

समस्त नीले पक्षी फिर उसी अनुपात में काले तथा श्वेत पक्षियों को जन्म देते हैं।]

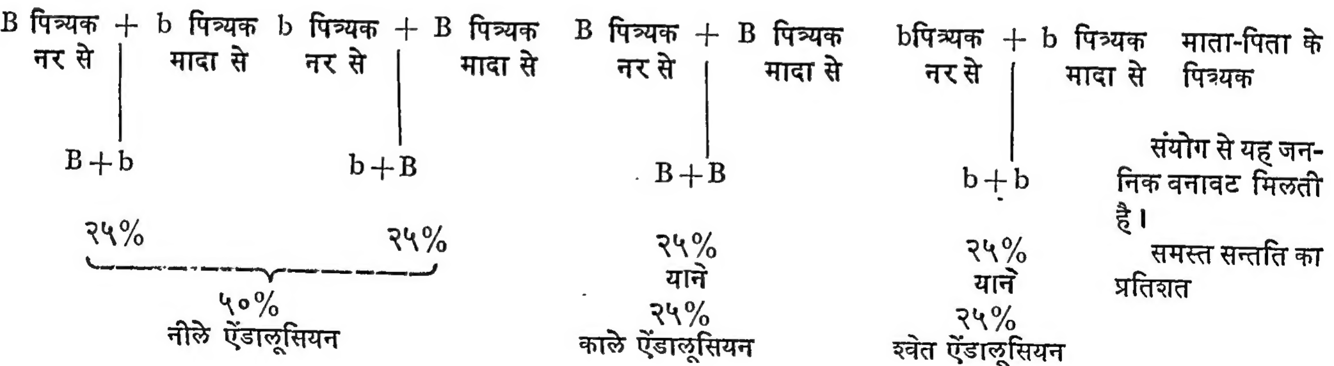
इस प्रकार जब दो रंगीन खरगोशों में संकरण होता है, जिनमें दोनों ही युग्मानेकगुणी हैं, तब, यतः दोनों ही शुद्ध सन्तति के नहीं हैं तथा अपने में धवलांगता के अपसारी पित्र्यक ले जाते हैं, अतः परिणाम होता है एक युग्मैकगुणी धवलांग तथा तीन रंगीन होते हैं। परन्तु ये अन्तिम तीन युग्मैकगुणी नहीं हैं। वास्तव में केवल एक ऐसा है तथा उसी में ठीक रंग के प्रसवन की क्षमता है, जब कि अन्य युग्मानेकगुणी (विषमयुग्मीय) हैं तथा समय समय पर धवलांग की उत्पत्ति करेंगे। इसलिए इनके साथ धवलांगता अपसारी है क्योंकि तीन में से दो ऐसे देखे जाते हैं, जैसे वे नहीं हैं, अर्थात् युग्मैकगुणी (समयुग्मिक) या शुद्ध प्रसव तथा धब्बेदार खरगोश।

चित्र नं० १०१

(B+B)=नीले ऐंडालूसियन के प्रारम्भिक काले माता-पिता

(b+b)=नीले ऐंडालूसियन के प्रारम्भिक श्वेत माता-पिता

यदि (B+B) तथा (b+b) का संकरण होता है तब प्रथम पीढ़ी में (B+b) मिलता है। यह नीली ऐंडालूसियन है जिसमें कि न तो काले न श्वेत प्रभावी गुण मिलते हैं तथा केवल तटस्थ (neutral) नीला रंग दिखलाई पड़ता है। यदि (B+b) बनावट के पक्षी (नीले ऐंडालूसियन) का अन्तः प्रसवन होता है तब निम्नलिखित पित्र्यक संयोजन मिलते हैं।



एक दशा जो कि प्रसवन में समान है (जैसा कि देखा जा चुका होगा) यह है कि संकरण के प्रथम जनन में पूर्ण अथवा अपूर्ण रूप से प्रभावी गुण का प्राधान्य होता है। यह नीले ऐण्डालूसियन में देखा जा चुका है जहाँ अपसारी धव्वेदार श्वेत पक्षी प्रथम जनन में पूर्ण रूप से गायब हो जाता है। परन्तु एक सम-रंग की अपेक्षा शुद्ध प्रभावी के लिए उसी जनन में अपसारी गुणों को नष्ट करना अधिक सरल है जैसा कि एवर्डीन ऐंगस तथा हेयरफोर्ड के संकरण में। तिस पर भी वे जव अपनी वारी में अंतःप्रसवन करते हैं तव हम मेण्डल के नियम को ३ काले तथा १ लाल पशु के रूप में कार्यान्वित होते पाते हैं। परन्तु इन तीन काले पशुओं में केवल एक की उत्पत्ति शुद्ध है तथा अन्य दो प्रसंकर हैं[1]।

खरगोशों में यह देखा गया है कि छोटे बालोंवाले वेल्जियन खरगोश तथा लम्बे वालों वाले ऐंगोरा खरगोश के संकरण से सब छोटे बालों के खरगोशों की उत्पत्ति होती है। तिस पर भी जब इन छोटे वालोंवाले प्रसंकरों का ऐंगोरा जाति से संग कराया जाता है तव लम्बे तथा छोटे वालोंवाले ऐंगोरा की उत्पत्ति ठीक मेण्डल के नियमानुरूप अनुपात में होती है।[2] इसके आगे दूसरी पीढ़ी में प्रसंकर ऐंगोरा का जब शुद्ध ऐंगोरा से संग कराया जाता है तो शुद्ध उत्पत्ति होती है[3]। यह परिणाम जातियों सम्वन्धी हमारे अध्ययन के लिए कुछ महत्त्व का है। कारण यह है कि हम चाहे खरगोश अथवा मनुष्यों[4] का अध्ययन करें दोनों में प्रक्रिया समान है, हालाँ कि मनुष्य के अध्ययन में वह अधिक जटिल हो जाती है। यदि हम श्वेतता के वदले स्वर्ण केश (blondness) और लम्बे कपाल होने के गुण को लें तथा उन्हें अपसारी गुण मानें, जैसा कि अनेक

१. जेम्स विल्सन (James Wilson), दि ब्रीडिंग एण्ड फीडिंग आफ़ फार्म स्टाक (The Breeding and Feeding of Farm Stock), लन्दन, १९२१, पृष्ठ ३६

२. मेण्डल के अनुसार प्रत्येक की अपेक्षित संख्या १९ है।

३. सी० सी० हर्स्ट (C. C. Hurst), एक्सपेरीमेन्ट्स इन जेनेटिक्स (Experiments in Genetics), कैम्ब्रिज, १९२५, पृष्ठ १६९–१७१

४. युजेन फिशर (Eugen Fisher) ने अपने (Die Rehobother Bastards und das Bastardierungs problem beim Menschen) में १९१३ के लगभग दिखलाया है कि मेण्डल के सिद्धान्तों को होटेनटाट (Hottentot) तथा यूरोप निवासियों के संकरण से देखा जा सकता है।

दशाओं में वे हैं, फिर दो प्रकार की जनसंख्या, एक तो श्वेत वर्ण तथा लम्बे कपाल वाली तथा दूसरी भूरे रंग तथा छोटे कपाल वाली, का संकरण करें तो इसका भी ठीक उसी प्रकार का परिणाम होगा। हालाँ कि मनुष्य की जननिक बनावट पशुओं की अपेक्षा अधिक जटिल होती है और ये गुण निःसन्देह ही पित्र्यकों के एक जोड़े से अधिक द्वारा प्रभावित होते हैं। इससे अधिक विभिन्नता होगी[२] तथा परिणामतः प्रत्येक का अनुपात भी प्रभावित होगा।[१]

वंशानुगति को प्रभावित करनेवाले कारक इतने सरल भी नहीं हैं जितने कि प्रभावी तथा अपसारी के विचार से प्रतीत होते हैं। और न यही निश्चित है कि जहाँ पर हमने अपसारी शब्द का प्रयोग किया है, वहाँ अनुपस्थिति के बदले कोई अन्य कारक सम्बद्ध हैं।

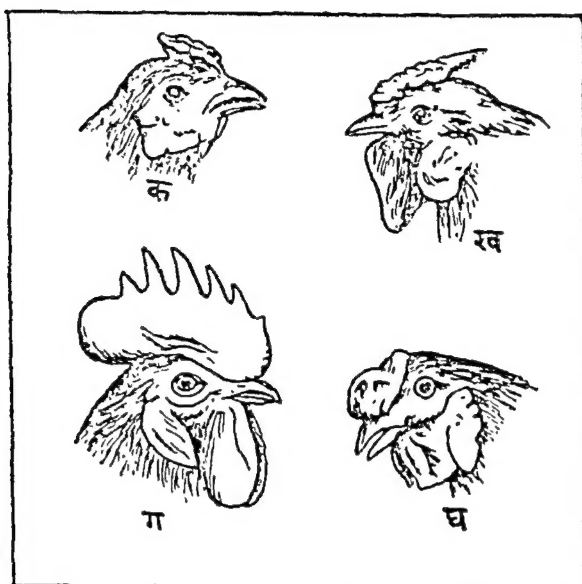
यदि हम शुद्ध प्रसव के रोज़ कोम (जैसे कि एक ब्लैक हैम्वर्ग, व्हाइट डार्किंग अथवा व्यानडोट (Wyandotte) का शुद्ध प्रसव सिंगिल कोम (लेगहार्न, माइनार्का अथवा कोचीन), से संकरण करें, तब सम्पूर्ण सन्तति रोज़ कोम की होगी। इसमें रोज़ प्रभावी रूप में मिलता है। अगली पीढ़ी में यदि हम इनमें अन्तःप्रसवन करें तो शुद्ध रोज़, अशुद्ध रोज़ तथा शुद्ध सिंगल का यह अनुपात मिलेगा—१,२,१। यह वही है जैसी कि हमें आशा करनी चाहिए।

उसी प्रकार यदि हम शुद्ध प्रसव के 'पी' कोम पक्षी (इंडियन गेम तथा ब्रह्मा) का सिंगिल कोम से संकरण करें, तब भी ठीक वही क्रिया होती है। इसलिए रोज़ तथा पी-कोम दोनों सिंगिल कोम की तुलना में प्रभावी हैं। परन्तु रोज़ तथा पी-कोम का संकरण होने से क्या होता है? यह संपरीक्षण १९०५ तथा १९०६[२] में बेटसन तथा पुनेट ने किया, जिसके आश्चर्यजनक परिणाम निकले। इस संकरण से वालनट (Walnut) कोम की उत्पत्ति हुई जैसे कि मलाया तथा ओरलोफ़ में मिलते हैं। इन सब के अन्तःप्रसवन से यह देखा गया कि अगली पीढ़ी में ९:३:३:१ के अनुपात में वालनट, रोज़, पीज़ तथा सिंगिल मिलते हैं। ये अनुपात मेण्डल के सिद्धान्तों पर भली भाँति

१. हम मनुष्य के जननिक से सम्बन्धित वास्तविक गुणों का वर्णन आगे कुछ विस्तार से करेंगे।

२. डब्लू० बेटसन (W. Bateson) तथा आर० सी० पुनेट (R. C. Punnett) "ए सजेशन एज टु दि नेचर आफ़ वालनटकोम इन फाउल्स" Proc. Comb Phil soc, १३, १६५ पृष्ठ

समझे जा सकते हैं परन्तु सिंगिल कोम का मिलना अनपेक्षित था जो कि माता-पिता के वर्ग में नहीं मिलता। इस स्थिति को समझने के लिए अनुपस्थिति के सिद्धान्त की कल्पना हुई। सभी कोम (चोटी या शिखा) मौलिक रूप से सिंगिल हैं, रोज़ चोटी एक सिंगिल है जो कि रोज़ के कारक की क्रिया के द्वारा रोज़ में परिवर्तित हो गयी।



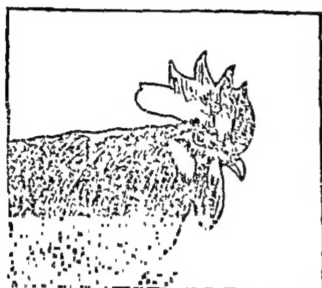
चित्र नं० १०२

(आर० सी० पुनेट R. C. Punett के मेण्डलिज्म से उद्धृत पक्षियों की चोटी के प्रकारों की चित्रित रूपरेखा)

क पी चोटी (Pea Comb)
ख रोज चोटी (Rose Comb)
ग सिंगिल चोटी (Single Comb)
घ वालनट चोटी (Walnut Comb)

कहने का तात्पर्य यह है कि रोज़ कोम का कारक किसी पक्षी की बनावट में मिले अथवा न मिले, यदि यह उपस्थित है तो पक्षी में रोज़ चोटी के गुण प्रदर्शित होते हैं। यदि यह नहीं है तब सिंगिल कोम के गुण देख पड़ते हैं। उसी प्रकार से मटर की (पी) चोटी में भी होता है। जब किसी पक्षी की बनावट के कारकों में R (Rose comb) तथा P (Pea Comb) एक साथ उपस्थित रहते हैं तब उस पक्षी में वालनट के समान गुण

मिलते हैं तथा जब इनमें से कोई भी उपस्थित न हो तो शिखा (कोम) सिंगिल होती है। इस उपस्थिति तथा अनुपस्थिति के विचार के अनुसार (जैसा कि सबसे पहले कोरेंस ने बतलाया और बेटसन तथा अन्य लोगों ने बाद में विस्तार से निश्चित किया) विभिन्न गुणों के एक जोड़े के दोनों हिस्से दो स्पष्ट कारकों पर आधारित नहीं बल्कि एक ही कारक की दो सम्भावित दशाओं पर आधारित हैं—यह है समपित्र्यक[1] में उसकी उपस्थिति तथा अनुपस्थिति।





चित्र नं० १०३

कुक्कुटों की चोटी के प्रकार

(टी० डब्लू० स्टर्जेस (T. W. Sturgess) द्वारा ए० डी० डर्बीशायर के ब्रीडिंग ऐण्ड मेण्डेलियन डिस्कवरी से उद्धृत)

[१. ब्लैक लेगहार्न (Black Leghorn) कुक्कुट के सिंगल कोम।
२. पेट्रिज व्यानडोट (Patridge Wyandotte) के रोज कोम]

जननिक सूत्र में इसे व्यक्त करने का तात्पर्य यह है कि युग्मैकगुण रोज तथा पी के संकरण के पश्चात् उसका प्रदर्शन RRPP × rrPP से होता है। जिस पीढ़ी की उत्पत्ति होती है (F_1) वह Rr PP होगी। बड़े अक्षर **उपस्थित** कारक तथा छोटे अक्षर **अनुपस्थित** कारक को प्रदर्शित करते हैं, जैसा कि प्रभावी तथा अपसारी गुणों के उदाहरण में होता है।

१. एफ़० ए० क्रू (F. A. Crew), M. D., D. Sc., F. R. S. E., एनीमल जेनेटिक्स १९२५, पृष्ठ ४५–४६

इस पीढ़ी के अन्तःप्रसवन से F_2 पीढ़ी निम्नलिखित प्रकार से उत्पन्न होती है।

नर

मादा

	Rp	Rp	rp	rp
RP	RRPP	RRPp	RrPP	RrPp
Rp	RRPp	RRpp	RrPp	Rrpp
rP	RrPP	RrPp	rrPP	rrPp
rp	RrPp	Rrpp	rrPp	rrpp

इसको संक्षिप्त करने से हम निम्नलिखित परिणाम पाते हैं—

वाह्य समरूप में हमारे पास वालनट (Walnut) के ९ रूप हैं (R P) जो कि निम्न प्रकार से हैं—

समपित्र्यक 'Gentoype' R R P P—संख्या में १
समपित्र्यक R R P p —संख्या में २
समपित्र्यक R r P P —संख्या में २
समपित्र्यक R r P p —संख्या में ४, योग ९

वाह्य समरूप में हमारे पास रोज़ (Rose) के ३ रूप (R p) हैं जो कि निम्न प्रकार से हैं—

समपित्र्यक R R p p —संख्या में १
समपित्र्यक R r p p —संख्या में २, योग ३

वाह्य समरूप में हमारे पास पी (Pea) के ३ रूप हैं (r P) जो कि निम्न प्रकार से हैं—

समपित्र्यक r r P P —संख्या में १
समपित्र्यक r r P p —संख्या में २, योग ३

वाह्य समरूप में हमारे पास सिंगिल (Single) रूप (r p) का एक समपित्र्यक rrpp है।

वेटसन तथा पुनेट ने सन् १९०८ में श्वेत डार्किंग (Dorking) तथा श्वेत सिल्कीज़ (Silkies) में संकरण किया। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रथम पीढ़ी में समस्त पक्षी रंगीन हुए। जब परिणामित प्रकारों से बच्चे प्रसूत कराये गये तो ९ रंगीन पक्षी तथा ७ श्वेत हुए। इसमें भी ठीक वही घटना घटी जैसी कि कोम (चोटी)

के अध्ययन में हुई, जहाँ कि उपस्थिति तथा अनुपस्थिति गुण कार्य कर रहे थे, सिवाय इसके कि समस्त श्वेत प्रकार एक से हैं तथा उनमें ३:३:१ का अनुपात न होकर कुल ७ ही निकले। ऐसा कहा जाता है कि इनमें रंग रंग के कारकों में पारस्परिक क्रिया का परिणाम है जो कि यदि साथ ही प्रकट होते तो रंगीन प्रकार होते, नहीं तो वे सफ़ेद ही रहते।





चित्र नं० १०४
कुक्कुटों की चोटी के प्रकार
(टी० डब्लू० स्टर्जेस (T. W. Sturgess) द्वारा ए० डी० डर्बीशायर के ब्रीडिंग एण्ड मेण्डेलियन डिस्कवरी से उद्धृत)
१. सुमात्रा गेम के पी कोम।
२. मलाया पक्षी के वालनट कोम।

इसलिए यह स्पष्ट है कि श्वेत डार्किंग तथा श्वेत सिल्कीज़ का श्वेत रंग, रंग का अपसारी है तथा यह इसलिए है कि उनमें रंग के उत्पादनवाला कारक अनुपस्थित है। जब कि श्वेत लेगहार्न तथा श्वेत डार्किंग के बीच संपरीक्षण किये गये, यह देखा गया कि बिलकुल वही क्रिया नहीं हुई जैसा कि श्वेत सिल्कीज़ के होने से होती। यह स्पष्ट हो गया कि कोई निरोधक कारक भी सम्मिलित था।

मान लिया जाय कि C रंग के कारक का प्रदर्शक तथा I रंग के निरोधक का प्रदर्शक है, तब CCII बनावट का एक पक्षी पूर्ण श्वेत परन्तु प्रभावी होगा, जब कि कोई दूसरा cc ii बनावट का भी बिलकुल श्वेत परन्तु अपसारी होगा। CC ii सूत्र निःसन्देह रंगीन होगा तथा CC Ii भी कुछ सीमा तक श्वेत होगा।

इसलिए श्वेत लेगहार्न तथा श्वेत डार्किंग के संकरण से प्रथम पीढ़ी (F^1) Cc-Ii की है जो कि कुछ अंश तक रंगीन है (वास्तव में समस्त श्वेत पंखों में कुछ रंगीन

धब्बे हैं)। इस पीढ़ी का अन्तः प्रसवन CI, Ci, cI, ci चार पित्र्यकों के आधार पर निम्न प्रकार से होगा—

नर

मादा		CI	Ci	cI	ci
	CI	CCII	CCIi	CcII	CcIi
	Ci	CCIi	CCii	CcIi	Ccii
	cI	CcII	CcIi	ccII	ccIi
	ci	CcIi	Ccii	ccIi	ccii

किसी युग्म (जाइगोट) (याने पित्र्यकों के संयोजन) में यदि आधिकारिक या मुख्य कारक हो तो वह एक श्वेत पक्षी के रूप में उत्पन्न होता है। यदि दोनों पित्र्यकों में यह मिलता है तो पक्षी बिलकुल श्वेत होता है चाहे CC रंगकारक भी उपस्थित हों। परन्तु एक I से एक श्वेत पक्षी की उत्पत्ति होती है जिसमें रंग के धब्बे होते हैं तथा उन सब संयोजनों से जिनमें C हो पर I नहीं, रंगीन पक्षियों की उत्पत्ति होती है।

इससे स्पष्ट है कि अपसारी श्वेत पक्षी जिसकी बनावट cc ii (अर्थात् जिसमें रंग तथा रंग-निरोधक कारक की कमी है) बिलकुल श्वेत पक्षी है, जब कि CC II कारकोंवाला बिलकुल श्वेत दिखाई देनेवाला तथा प्रभावी पक्षी वास्तव में रंगीन है, जिसमें रंग के प्रदर्शन को रोकनेवाला निरोधक कारक है।

इस संपरीक्षण से यह स्थापित होता है कि कोई गुण एक जाति में प्रभावी तथा अन्य में अपसारी होता है। परिणामतः जब जाति की बनावट के इन मूल सिद्धान्तों को हम मनुष्य पर लागू करते हैं तब इन सब बातों को ध्यान में रखना चाहिए। ऐसा विश्वास करने के लिए उचित कारण है कि मेडिटेरेनियन तथा ऐटलाण्टिक जातियों

के काले केश नार्डिक के स्वर्णकेशों पर प्रभावी हैं परन्तु हमें अभी तक पता नहीं कि उनकी स्थिति में पारस्परिक क्या सम्बन्ध है। साथ ही इन जातियों के काले केश और मंगोलायड तथा मेलोनायड के केशों के लिए भी यह उतना ही सत्य है। फिर जैसा कि हम आगे देखेंगे, जब कि पूर्वी यूरोप में चौड़े कपालवाले लम्बे कपालवालों की अपेक्षा प्रभावी हैं, उत्तर-पूर्वी यूरोप के लैप्स में मिलनेवाले कुछ चौड़े आकार के कपालों की अपेक्षा लम्बे कपाल प्रभावी हैं। वास्तव में क्या यह ठीक उसी प्रकार के तत्त्वों के कारण हैं जिनका वर्णन हमने अभी किया है, यह देखना शेष है। फिर भी तथ्य यही है कि पशुओं की इस प्रकार की व्याख्या (चाहे हमारे ज्ञान की वृद्धि के साथ बाद में उसमें भी सुधार करना पड़े) मानव जातियों में वंशानुगत जातीय गुणों के साधारण सिद्धान्तों के समझने में सहायक है।

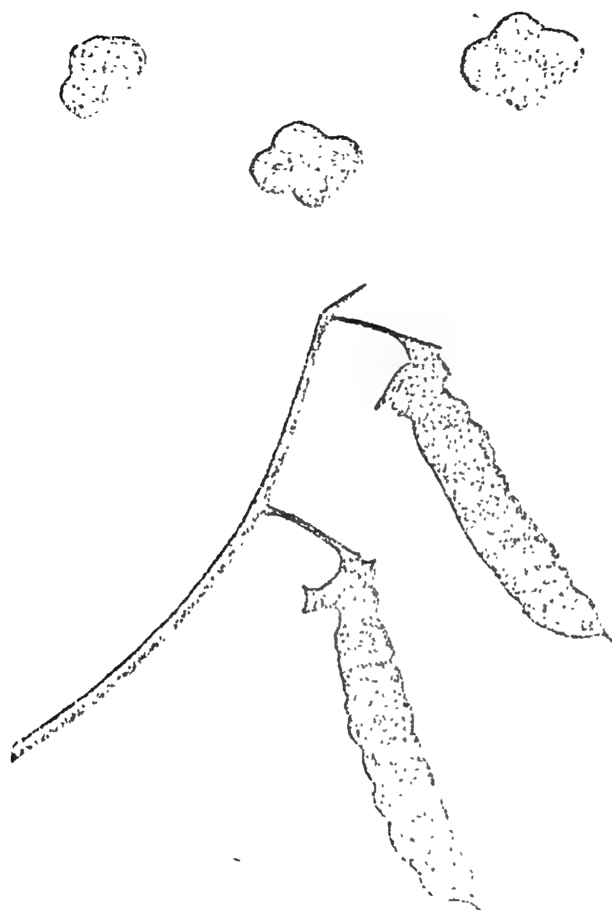
हम यह देख चुके हैं कि संकरण होने पर नियमित रूप से एक सन्तति के समस्त गुण दूसरे के सम्बन्ध में एक एकक की भाँति कार्य नहीं करते। दूसरे शब्दों में प्रत्येक गुण को नियन्त्रित करनेवाले पित्र्यक अन्य गुणों को नियन्त्रित करनेवाले पित्र्यकों से भिन्न कार्य करते हैं। वे सब मेण्डल के उन्हीं नियमों का पालन करते हैं।

मेण्डल को द्विसंकर[1] में इस क्रिया का पता चला जब उसने बाग के पीले गोल आकार के एक मटर का एक हरे सिकुड़े मटर से संकरण किया। जो मटर उत्पन्न हुए वे पीले गोल थे क्योंकि पीला हरे पर तथा गोल सिकुड़े पर प्रभावी था। परन्तु दूसरी पीढ़ी में इन द्विसंकर आकारवालों में अन्तःप्रसवन करने से वे सामूहिक रूप से अपने पूर्वजों के आकार में नहीं बदल जाते। संयोजन (गोल-पीले तथा हरे-सिकुड़े) टूटे जाते हैं तथा गुणों का प्रत्येक समूह (पीला, गोल, हरा तथा सिकुड़ा) स्वतन्त्र हो जाता है, कारण यह कि प्रत्येक विभिन्न पित्र्यक की बनावट द्वारा निर्मित है।

फिर भी बनावट में वंशानुगत तत्त्वों का स्वतन्त्र रूप से व्यवहार करना प्रत्येक उदाहरण में पूर्ण रूप से सत्य नहीं है। बेटसन तथा पुनेट ने जन्यु या जननकोश के जोड़े अथवा ग्रथन की खोज की, जिसका वर्णन अगले अध्याय में किया जायगा

१. एकसंकर (Monohybrid) वह संकरण है जिसमें केवल एक ही गुण से सम्बन्ध है जैसे कि नीले एंडालूसियन में काला तथा श्वेत गुण। द्विसंकर (Dihybrid) वह है जहाँ दो गुण (इस उदाहरण में जैसे कि रंग तथा आकार) से सम्बन्ध रहता है तथा त्रिसंकर (Trihybrid) वह है जहाँ तीन गुणों का सम्बन्ध है, जैसा कि गिनी सुअर में, जहाँ कि छोटे कोट, चिकने कोट तथा रंग से सम्बन्ध है।

तथा यह दिखलाया जायगा कि ग्रथित गुण एक ही पित्र्यसूत्र से नियन्त्रित रहते हैं। जब कि बैंगनी फूल तथा पराग के लम्बे कणों के तत्त्ववाले मीठे मटर का लाल



चित्र नं० १०५

(ए० डी० डर्बीशायर (A. D. Derbyshire) के ब्रीडिंग एण्ड मेण्डेलियन एक्सपेरीमेण्ट्स से उद्धृत)

गोल तथा सिकुड़े मटर

[फलियों में इनके विभिन्न अनुपातों को देखकर मेण्डल ने उनके साथ सम्परीक्षण किया तथा इससे उनको जननिक विज्ञान के उस नियम की स्थापना में सहायता मिली जिसको पित्रागति सिद्धान्त (Mendelian law) कहते हैं, जिसने जीव-विज्ञान सम्बन्धी ज्ञान में क्रान्ति उत्पन्न कर दी तथा वंशानुगति के प्रभाव की सत्यता प्रमाणित कर दी।]

फूल तथा गोल कणवाले मटर से संकरण किया जाय तब दोनों कारक द्विसंकर में ग्रथित रहते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि गुण, समूहों के रूप में पारेपित किये जा सकते हैं, क्योंकि समूह का प्रत्येक सदस्य अन्य से ग्रथित है।



चित्र नं० १०६

(ए० डी० डर्बीशायर (A. D. Derbyshire) के ब्रीडिंग एण्ड मेण्डेलियन एक्सपेरीमेण्ट्स से उद्धृत)

सिकुड़े पीले तथा हरे गोल मटरों के संकरण का परिणाम

[पैत्रिक सन्तति--ऊपर बाईं ओर--पीले सिकुड़े माता-पिता
ऊपर दाहिनी ओर--हरे गोल माता-पिता

F_1 पीढ़ी --मध्य के पाँच मटर प्रथम प्रसंकर पीढ़ी के हैं

F_2 पीढ़ी --फली के अन्दर के मटर दूसरी प्रसंकर पीढ़ी के हैं जो कि सिकुड़े-पीले, पीले-गोल, हरे-गोल तथा हरे-सिकुड़े मटर हैं।]

फिर यही ऐसा प्रभाव है, जो किन्हीं परिस्थितियों में कार्यान्वित होने पर जातिगत विभिन्न गुणों को एक दूसरे से पृथक् रखता है।[1]

१. इसका और वर्णन आगे किया जायगा

अब फिर द्विसंकर की ओर ध्यान दें तो इसकी क्रिया मेण्डल के मटरसम्बन्धी सम्परीक्षण में, जिसका वर्णन अभी किया गया है, वंशानुगति के निम्नलिखित विस्तृत चित्रण में भली-भाँति देखी जा सकती है। हम मान लें कि YY= पीले के पित्र्यक तथा GG= हरे के पित्र्यक हैं और RR= गोल के पित्र्यक तथा WW= सिकुड़े के पित्र्यक हैं। पीले गोल (=YY RR) तथा हरे सिकुड़े (=GG WW) प्रारम्भ के माता-पिता हैं।

इनमें संकरण करने पर प्रथम पीढ़ी में सब वाह्य समरूप (Phenotype) पीले गोल मटर निकलते हैं, जिससे यदि हमें ठीक पता नहीं होता तो हम परिणाम निकालते कि इसकी YY RR बनावट है। पर वास्तव में उनका समपित्र्यक (जीनोटाइप) अथवा भिन्नरूप (आइडिओटाइप), जैसा कि हम जानते हैं, YG RW हैं क्योंकि उनकी क्रिया से स्पष्ट है कि पीले तथा गोल प्रभावी तथा हरे सिकुड़े अपसारी हैं।

दूसरी पीढ़ी में अनेक प्रकारों की उत्पत्ति होगी। इनमें से एक पीले तथा गोल समरूप होंगे तथा चार समपित्र्यक होंगे—जो ये हैं, YY RR, YY WR, YG RR तथा YG RW। परन्तु पीले तथा गोल के प्रभावी होने के कारण ये गुण वाह्य समरूप के साथ भी दीखते हैं। उसी पीढ़ी में एक दूसरे वाह्य समरूप की उत्पत्ति होगी जो पीले तथा सिकुड़े होंगे। समपित्र्यक में यह YY WW तथा YG WW से प्रदर्शित होंगे। यह देखा जायगा कि सिकुड़ेपन की दृष्टि से मटर का यह प्रकार युग्मैक-गुणी (होमोज़ाइगस, समयुग्मिक) है, परन्तु रंग की दृष्टि से केवल एक भाग ऐसा है, क्योंकि हरे रंग के लिए आधे में अपसारी पित्र्यक मिलते हैं। इसी पीढ़ी के तीसरे प्रकार में हरे तथा गोल समरूप होते हैं, परन्तु फिर वास्तव में वे GG RR तथा GG RW समपित्र्यक में मिलते हैं। यहाँ पर रंग का पित्र्यक युग्मैक-गुणी है तथा आधे में गोलपन युग्मानेकगुण (विषमयुग्मीय) है। अन्त में चौथे प्रकार की उत्पत्ति में वह गोल और सिकुड़े होंगे तथा समपित्र्यक में वह भी GG WW याने युग्मैकगुणी होगा। यह हरे तथा सिकुड़े हुए अपसारी पित्र्यकों से बनता है, अतः जब तक वह अपने समान का ठीक प्रसव न कर सके इसकी उत्पत्ति नहीं हो सकती।

इन प्रकारों की उत्पत्ति का वास्तविक अनुपात इस प्रकार होगा—

वाह्य समरूप में ९/१६ पीले, गोल होंगे (परन्तु १/१६ ही युग्मैकगुणी होंगे), ३/१६ पीले तथा सिकुड़े होंगे (परन्तु केवल १/१६ युग्मैकगुणी होंगे), दूसरे ३/१६ वाह्य समरूप में गोल तथा हरे होंगे (परन्तु केवल १/१६ फिर एक वार युग्मैकगुणी होंगे) तथा अन्त में १/१६ वाह्य समरूप तथा सम पित्र्यक में हरे तथा सिकुड़े होंगे।

यही नियम प्रत्येक प्रसवन के लिए सत्य है तथा केवल पौधों तक ही सीमित नहीं है। इसलिए यदि एवर्डीन-ऐंगस (Aberdeen Angus) का जो कि काले तथा विना सींग के होते हैं, हेयरफोर्ड (Hareford) से संकरण किया जाय जो कि लाल तथा सींगवाले हैं, तव उनकी सन्तति काली तथा विना सींग के होगी। परन्तु वाद वाली पीढ़ी में अपसारी लाल रंग तथा सींग पुनः प्रकट हो जाते हैं, तव हमें निम्न अनुपात मिलता है—

काले तथा सींग-रहित ९;
काले तथा सींग वाले ३;
लाल तथा सींग-रहित ३;
लाल तथा सींग वाले १.

इनमें से काले तथा सींग-रहित के ९ में से १ शुद्ध प्रसव करता है, काले तथा सींग वाले ३ में १, लाल तथा सींग-रहित के ३ में १ तथा अपसारी लाल तथा सींगवाले १ में १ शुद्ध प्रसव करता है।[1]

यदि हम एक काले हैम्वर्ग का (जिसके रोज़ चोटी है) श्वेत लेगहार्न (जिसके सिंगिल चोटी है) से संकरण करें तव परिणाम होगा[2]—९ श्वेत रोज़ चोटी (कोम), ३ श्वेत सिंगिल चोटी (कोम), ३ काले रोज़ चोटी तथा १ काला सिंगिल चोटी (कोम)।

वेलमैन[3] (Wellman) ने भी जव एक वेसेट हाउण्ड कुत्ते का फाक्स टेरियर कुतिया से संकरण किया, तव उन्हीं सिद्धान्तों को क्रियान्वित होते पाया। प्रथम जनन में ५ काले तथा धव्वेदार (छाती तथा टाँगों में श्वेत चित्तियाँ) तथा ढाँचे में लगभग वेसेट के समान मिले। इसलिए वेसेट का काला तथा धव्वेदार ढाँचा फाक्स टेरियर

१. जेम्स विल्सन (James Wilson) पूर्व कथित, पृष्ठ ३७-३८.

२. एफ़० ए० ई० क्रू (F. A. E. Crew, M. D., D. Sc., F. R. S. E., एनिमल जेनेटिक्स (Animal Genetics) १९२५, पृष्ठ ३०

३. ओ० वेलमैन (O. Wellman) के 'एक्सपेरिमेन्ट्स विद डाग्ज़ इन कनेक्शन विद दि मेन्डेलियन लाज़ आफ़ हेरिडिटी', नेशनल साइन्स बुलेटिन, १९१६, ४८, पृष्ठ ३१५

के गुण की अपेक्षा प्रभावी है। इनके प्रसवन से दूसरे जनन में ३२ बच्चे उत्पन्न हुए जिनमें से २१ जीवित रहे, बचनेवालों में—

१८ काले तथा धब्बेदार बेसेट से मिलते जुलते,
४ चित्तीदार बेसेट के आकार के,
३ काले तथा धब्बेदार, टेरियर गठन के,
२ धब्बेदार टेरियर रंग के, टेरियर शरीर के थे।

यह मेण्डल के नियम के अनुपात ९:३:३:१ से काफ़ी मिलता जुलता है जो कि निःसन्देह ही अधिक संख्या होने पर ठीक देखा जाता।

यह उदाहरण जातियों-सम्बन्धी अध्ययन की दृष्टि से काफी लाभदायक है। यहाँ पर मिश्रित मटरों की संख्या है जो कि मनुष्यसमूह की विभिन्नताओं से मिलती जुलती है। इस जनसंख्या में एक छोर में ९/१६ वाँ भाग मिलता है जो शुद्ध जातीय प्रकार से सम्बन्धित मालूम पड़ता है, हालाँ कि वास्तव में उस संख्या का १/२ भाग ही शुद्ध सन्तति उत्पन्न करता है। दूसरी ओर केवल १/१६ वाँ भाग है। वास्तव में इसका प्रसव शुद्ध तथा शुद्ध सन्तति का होता है। इनके बीच में एक या अन्य से मिलते जुलते कई विभिन्न गुण-वाले मिलते हैं। यदि जाति की प्रक्रिया के विषय में हमें कुछ नहीं मालूम होता तब हम इस परिणाम पर पहुँचते कि प्रारम्भिक जातीय तत्त्व, जिनसे मिश्रित जनसंख्या का निर्माण हुआ है, ९:१ के अनुपात में रहे होंगे। यह हमारी भूल होती, क्योंकि जनसंख्या का प्रसव दोनों सन्ततियों की बराबर संख्या से हुआ है। यह होता इस प्रकार है कि एक सन्तति के गुण अन्य की अपेक्षा अपसारी होते हैं तथा बाह्य समरूप से एकांगी स्थिति का ही पता चलता है।

जैसा कि हमने पहले बतलाया है, जहाँ पर तीन गुणों का सम्बन्ध है उसे त्रिसंकर-कहते हैं। इस उदाहरण में प्रथम जनन में (F^1) प्रत्येक व्यक्ति के तीन प्रभावी गुण होंगे, जब कि उनके समपित्र्यक में ६ कारक सम्बद्ध होंगे। दूसरे जनन में (F^2) २७: ९: ९: ९: ३: ३: ३: १ का अनुपात होगा।

केसेल के गिनी पिग के संपरीक्षण[1] द्वारा साथ में दी गयी तालिका नं० २ में त्रिसंकर को चित्रित किया गया है। इन पितृवंशों में से एक के कोट में तीन गुण हैं—छोटा,

१. डब्लू० ई० केसेल (W. E. Castle), साइज इन गिनी पिग क्रासेज (Size in Guinea Pig crosses), प्रोसीडिंग आफ़ नेचुरल, एकेडेमी आफ़ साइन्सेज १९१६, २, पृष्ठ २५२

चिकना तथा रंगीन। दूसरे में ये तीन हैं—लम्बा, पाटलक तथा श्वेत। प्रथम

तालिका नं० २

छोटे, चिकने तथा रंगीन गिनी पिग (Guinea Pigs) और लम्बे, पाटलक तथा श्वेत के संकरण से उत्पन्न बाह्य समरूप तथा समपित्र्यक के संयोजन को प्रदर्शित करनेवाली तालिका—

S S छोटे कोट (Coat) तथा s s अपसारी लम्बे कोट
C C रंगीन तथा c c अपसारी श्वेत (Albino)
R R पाटलक (Rosetted), गुलाबी रंगरंजित तथा r r अपसारी चिकने कोट

बाह्य समरूप	समपित्र्य	संख्या		
S C R	१. S S C C R R	१		*शुद्धप्रसवन
छोटे कोट वाला	२. S S C C R r	२		युग्मानेकगुणी
रंगीन	३. S S C c R R	२		,,
पाटलक	४. S S C c R r	४		,,
	५. S s C C R R	२		,,
	६. S s CC Rr	४		,,
	७. Ss Cc RR	४		,,
	८. Ss Cc Rr	८	२७	,,
S C r	९. SS CC rr	१		*शुद्धप्रसवन
छोटे कोटवाला	१०. SS Cc rr	२		युग्मानेकगुणी
रंगीन	११. Ss CC rr	२		,,
चिकना	१२. Ss Cc rr	४	९	,,
S c R	१३. SSccRR	१		*शुद्धप्रसवन
छोटे कोटवाला	१४. SSccRr	२		युग्मानेकगुणी
श्वेत (Albino)	१५. SsccRR	२		,,
पाटलक (Rosetted)	१६. SsccRr	४	९	,,

जनन में (F^1) छोटी, पाटलक तथा रंगीन उत्पत्ति हुई। जब इनका अन्तःप्रसवन हुआ तब दूसरे जनन (F^2) में आठ बाह्य समरूप मिले। ये निम्न प्रकार से थे।

१. छोटे, रंगीन, पाटलक (गुलाव-रंग-रंजित)
२. छोटे रंगीन, चिकने।
३. छोटे, श्वेत, पालटक।
४. लम्बे, रंगीन, पालटक।
५. छोटे, श्वेत, चिकने।
६. लम्बे, रंगीन, चिकने।
७. लम्बे, श्वेत, पालटक।
८. लम्बे, श्वेत, चिकने।

(तालिका नं० २ का शेषांक)

s C R	१७. ssCCRR	१		*शुद्धप्रसवन
लम्बे कोटवाला	१८. ssCcRr	२		युग्मानेक गुणी
रंगीन	१९. ssCcRR	२		
पाटलक	२०. ssCcRr	४	९	,,
Scr				
छोटे कोटवाला	२१. SSccrr	१		*शुद्धप्रसवन
श्वेत	२२. Ssccrr	२	३	युग्मानेक गुणी
चिकना				
ScR				
लम्बे कोटवाला	२३. ssCCrr	१		*शुद्धप्रसवन
रंगीन	२४. ssCcrr	२	३	युग्मानेक गुणी
चिकना				
scR				
लम्बे कोटवाला	२५. ssccRR	१		*शुद्धप्रसवन
धवलांग	२६. ssccRr	२	३	युग्मानेक गुणी
पाटलक				
scr				
लम्बे कोटवाला	२७. ssccrr	१	१	*शुद्धप्रसवन
धवलांग				
चिकना				

योग ६४

इन आठ बाह्य समरूपों (फेनोटाइप) में २७ समपित्र्यक (जेनोटाइप) थे। यह साथ दी हुई तालिका से स्पष्ट हो जाता है। यह देखा जायगा कि प्रत्येक के केवल ८ प्रकार हैं (ये सितारे के चिह्न से चिह्नित हैं) जो कि अन्तःप्रसवन से उसी समरूप का प्रसवन करेंगे जिनसे वे सम्बन्धित हैं। शेष इसके विपरीत युग्मानेकगुणी हैं जो कि परिवर्तित होकर प्रारम्भिक गुणों के विभिन्न संयोजन व्यक्त करते हैं।[1]

ऐसे उदाहरणों का सम्बन्ध केवल एक, दो अथवा तीन पित्र्यकों के सेट से रहता है। परन्तु मनुष्य तथा पशुओं में हमें कहीं अधिक मिलते हैं। इसलिए प्रारम्भिक दो सन्ततियों (प्रवर्गों, स्टेन्स) से अगणित भेदों का निर्माण होता है; हालाँकि उनमें शुद्ध प्रसव करनेवालों का अनुपात कम होता है। हक्सले तथा हेडन[2] बतलाते हैं कि यदि पुनः संयोजन में एक पित्र्यक सम्मिलित है तब जो प्रकार उत्पन्न होंगे उनकी संख्या १ घात २ ($१^२$) अर्थात् दो होगी, यदि दो सम्मिलित हों तो परिणामित प्रकार ($२^२$ याने) चार होंगे। जबकि यदि दोनों प्रकार १० पित्र्यकों के सम्बन्ध से भिन्न होते हैं, तब पुनःसंयोजन में २ घात १० ($२^{१०}$) याने १०२४ नये संयोजन सम्भव होते हैं। इनमें से केवल दो माता-पिता के आकार हैं। इस प्रकार १०२२ नये प्रकार मिलते हैं। यदि परिणामित संकरण में एक मध्य प्रकार भी निर्मित हो तो पुनः संयोजन

१. त्रिसंकर का दूसरा उदाहरण एबर्डीन-ऐंगस को हेयरफोर्ड के साथ मिलाने से होता है। यह न केवल बतलाये गये दो गुणों में ही (रंग तथा सींग) भिन्नता बतलाते हैं बल्कि इसमें भी हेयरफोर्ड का चेहरा श्वेत होता है जो कि एबर्डीन-ऐंगस के काले चेहरे पर प्रभावी है। इसका परिणाम है कि हमारे पास ८ बाह्य समरूप निम्न प्रकार के मिलते हैं।

२७ श्वेत चेहरा, काला, सींग रहित, एक शुद्ध प्रसवन के साथ
९ श्वेत चेहरा, काला, सींग वाला, ,,
९ श्वेत चेहरा, लाल, सींग रहित, ,,
९ साफ़ चेहरा, काला, सींग रहित, ,,
३ श्वेत चेहरा, लाल, सींग वाला, ,,
३ साफ़ चेहरा, काला, सींग वाला, ,,
३ साफ़ चेहरा, लाल, सींग रहित, ,,
१ साफ़ चेहरा, लाल, सींग वाला, ,,

२. पूर्व-कथित, पृष्ठ ७९

२ के स्थान पर ३ की शक्ति (घात) से बढ़ता है। परिणाम यह होता है कि जब हम मनुष्य पर आते हैं, जिसमें सहस्रों पित्र्यक हैं जो कि मनुष्य के अनेक गुणों को नियन्त्रित करते हैं, तब पुनःसंयोजन अगणित होते हैं। यही कारण है कि वंशानुगति के नियम मनुष्य में छिपे हुए या अप्रकट से रहते हैं परन्तु इस पर भी वे अपना काम बराबर करते रहते हैं।

व्यावहारिक रूप में इतनी अधिक विभिन्नता पर कुछ बन्धन भी हैं। कई गुण परस्पर ग्रथित होते हैं, अतः वंशानुगति से एक पूरी इकाई के रूप में हस्तान्तरित होते हैं।

त्रिसंकर की अपेक्षा अनेक संख्या के गुणोंवाले प्रकारों में जिनमें ग्रथन नहीं होता, संकरण के अनुपात जानने का प्रयत्न किया जा चुका है परन्तु चतुःसंकर से अधिक का संपरीक्षण कभी नहीं किया गया क्योंकि उनमें संख्या बहुत बढ़ जाती है। इस प्रकार से चतुःसंकर की दूसरी पीढ़ी में त्रिसंकर के ६४ अथवा $(३\times१)^{३}$ की अपेक्षा २५६ अथवा $(३\times१)^{४}$ प्रकारों की सम्भावना मिलती है। क्रू ने बतलाया है कि उन माता-पिता में जो कि १० एकक गुणों में भिन्न हैं १०,४८,५७६ प्रकारों की सम्भावना होगी। जैसा कि उसने बतलाया है व्यावहारिक संपरीक्षण तथा अभिजनन के लिए दो गुण अथवा एक समय में एक गुण के एकक को लेना ही ठीक होगा, जब तक कि वह युग्मैकगुण दशा में न मिल जाये। ऐसा करने के पश्चात् अन्य गुणों की दृष्टि से भी गणना की जा सकती है।

दसवाँ अध्याय

जाति की बनावट सम्बन्धी बहुत से कारक, जननिक परिवर्तन तथा अन्य बातें

इस समय यह बतला देना आवश्यक है कि वंशानुगति का समस्त चित्रण प्रभावी, अपसारी, निरोधन, अनुपस्थिति तथा उपस्थिति, ग्रथन (लिंकेज) इत्यादि से भले ही जटिल हो गया हो परन्तु उलझनों के अन्त तक हम अब भी नहीं पहुँचे हैं, क्योंकि जटिलता बढ़ाने के लिए बहुसंख्य कारकों (मल्टिपिल फैक्टर्स) का एक अन्य सिद्धान्त है जो कि कुछ संकरणों में प्रकट होता है।

इस समय तक दूसरी पीढ़ी (F_2) कुछ अंशों में अथवा सम्पूर्ण रूप से अपने माता-पिता के आकार से मिलती जुलती थी। परन्तु अब तक जो कुछ हमने अनुभव किया है उसके स्थान पर यह सम्भव है कि इस पीढ़ी में एक माता-पिता के आकार से दूसरे तक अस्पष्ट किन्तु पूर्ण परिवर्तन-क्रम मिले। कासेल द्वारा खरगोशों के कानों पर किये गये संपरीक्षण में हम ऐसा पाते हैं। उन्होंने बेलजियम के एक हेयर डो का जिसके कान ११८ मिलीमीटर लम्बे थे, एक २१० मि० मीटर के लटकते कानोंवाले खरगोश से संकरण किया। इन दोनों का औसत १६४ मि० मी० था। प्रथम जनन (F_1) के पाँच सदस्यों में यही औसत लम्बाई मिलती थी। इनमें से दो, १७० मि० मी० तथा १६६ मि० मी० कान की लम्बाई वालों का संग किया गया। इनकी सन्तति (F_2) के कानों की लम्बाई १६० मि० मी० से १७६ मि० मी० थी। इसमें प्रारम्भिक आकार को पुनः ग्रहण कर लेने की प्रवृत्ति नहीं मिलती जैसा कि अभी तक बतलाये गये उदाहरणों में नियम देखा गया है।

क्रू[1] ने बतलाया है कि वंशानुगति सम्बन्धी मेण्डल के नियम के प्रति इसमें कोई विरोधाभास नहीं प्रकट होता तथा जैसा कि प्रथम दृष्टि से मालूम पड़ता है ऐसा कोई सुझाव ग्राह्य नहीं माना जा सकता कि वंशानुगति सन्ततियों का एक दूसरी में मिल जाना

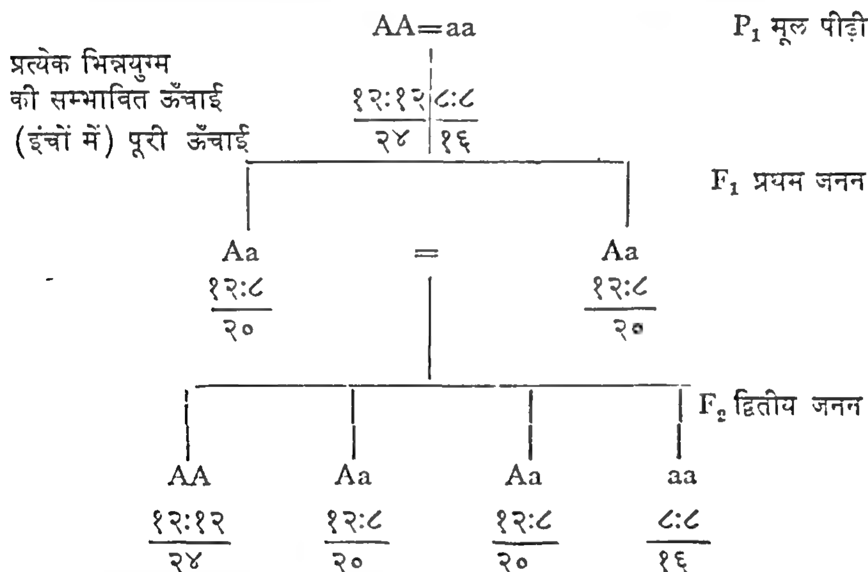
१. क्रू (Crew), पूर्वलिखित, पृष्ठ ५४–५५

साबित किया जा सकता है। गेहूँ के दाने में रंग की वंशानुगति के प्रति अनुसन्धान करके निलसन एहले[1] ने जहाँ पर कि उन्होंने एक छोर से दूसरे छोर तक यही क्रमिक परिवर्तन पाया , इसकी निम्नलिखित व्याख्या की है।

चित्र नं० १०७

कारकों की संख्या अनेक होने पर स्थिति की साधारण व्याख्या

मान लिया जाय कि AA, २४ इंच वाले तथा aa १६ इंच के हैं। यह भी मान लें कि पैत्रिक पीढ़ी (P_1), AA तथा aa जनों द्वारा प्रदर्शित की गयी है, तब --



[यह देखा जायगा कि वास्तविक कद १६ से २४ इंचों तक मिलता है और जननिक बनावट पर आधारित है।]

रंग के उत्पादन में तीन कारक सम्बद्ध है। इन तीनों की उपस्थिति से गेहूँ का रंग लाल होता है। परन्तु जब इसमें अपसारी जन्यु (गैमीट) उपस्थित रहते है तब गेहूँ सफ़ेद रंग का होता है। जब केवल एक प्रभावी रंग का जन्यु रहता है तो गेहूँ में

१. एच० निलसन एहले, Krevzungsuntersuchungen an Hafer und Weizen, १९०९, पृष्ठ १

कुछ लालपन होता है, जब दो रहते हैं तब अधिक लाल और जब तीन होते हैं तब उससे भी अधिक लाल मिलता है। रंग की गहराई, रंग जन्युओं (गैमीट) के एकत्रित प्रभाव पर आधारित है। इसका अर्थ है कि जब ६ जन्यु होते हैं तो दूसरे जनन (F_2) में एक छोर से दूसरे छोर तक ६ गहराई के रंग मिलते हैं।

कानों की विभिन्न लम्बाई वाले खरगोशों के संकरण में ठीक यही बात होती है, जैसा कि अभी बतलाया गया है। क्रू ने जहाँ माप से सम्बन्ध है इन प्रश्नों से सम्बद्ध सूत्र बतलाया है[1] कि यदि एक सदस्य २४ इंच लम्बा तथा दूसरा १६ इंच लम्बा है, उनका संकरण होता है तथा केवल एक ही ऊँचाई का कारक सम्बन्धित है तब जो वास्तविक ऊँचाई प्राप्त होती है वह १६ से २४ इंच तक के बीच की होती है। किन्तु यदि दो आकार के कारक सम्बन्धित हैं तब सूत्र कुछ अधिक जटिल हो जाता है, जैसा कि साथ में दिये हुए चित्र नं० १०८ से स्पष्ट है।

यह स्पष्ट है कि यह सारा ज्ञान जो हमारे लिए उपलब्ध है, अनेक गुणों के विश्लेषण में अधिक सहायक होता जायगा, मुख्यतः उनके विश्लेषण में जिनका सम्बन्ध माप से है, जैसे मनुष्य का क़द, जिसमें निस्सन्देह एक से अधिक कारक सम्बद्ध हैं। आगे जब हम मनुष्य के क़द का विवेचन करेंगे, तब फिर इसकी चर्चा करेंगे। त्वचा का रंग अनेक पित्र्यकों के परिणाम का एक और उदाहरण है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि काले तथा सफ़ेद के संकरण से मध्यम रंग क्यों मिलता है तथा इन अर्धसंकरों (हाफ़ ब्रीड्ज) के विवाह से बीच के रंग के और भी प्रकार क्यों कर उत्पन्न होते हैं।[2] हो सकता है कि यही चीज बालों के रंग के सम्बन्ध में तथा अस्थियों के कितने ही लक्षणों के सम्बन्ध में भी लागू होती हो।

यह बात समझ में आती है कि अधिक संख्या में विभिन्नता होने से समस्या और भी अधिक जटिल हो जाती है जैसा कि हम मनुष्य में पाते हैं। परिणामतः मनुष्य में वंशानुगति का अध्ययन इतना जटिल है कि यदि हम ठीक-ठीक इन सिद्धान्तों को, इसी से मिलते-जुलते किन्तु साधारण सचेतनों (जीवों) में, पहले तो पौधों में, फिर पशुओं में न देख लेते, तो हम उन नियमों को अपना काम करते हुए कभी नहीं समझ सकते थे और मानव जातियों के जटिल आधारक की व्याख्या, भौगोलिक, सामाजिक

१. क्रू, पूर्व लिखित, पृष्ठ, ५९–६०

२. कोकेन, ई. ए. (Cockayne, E. A.) इनहेरिटेड ऐबनार्मेलिटीज आफ स्किन एण्ड इट्स अपेन्डेजेज, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस लन्दन, १९३३, पृष्ठ ४४

चित्र नं० १०८

दो आकार के कारकों से सम्बन्वित सूत्र की व्याख्या। मान लीजिये एक माता-पिता की सन्तति का कद २४ इंच है तथा दूसरे का १६ इंच और माता-पिता की (P१) पीढ़ी क्रमशः AABB तथा aabb द्वारा बतलायी गयी हैं तब —

AABB = aabb — P_1 जनन, माता-पता की पीढ़ी

प्रत्येक भिन्न युग्म allclomrph का स्वाभाविक क़द। — ६६६६ | ४४४४

इंचों में व्यक्ति का पूरा कद — २४ | १६

AaBb (६४६४ / २०) = AaBb (६४६४ / २०) — F_1 जनन, वाद की पहली पीढ़ी

F_2 जनन, दूसरी पीढ़ी:

१AABB	२AABb	२AaBB	४AaBb	१AAbb	१aaBB	२Aabb	२aaBb	१aabb
६६६६	६६६४	६४६६	६४६४	६६४४	४४६६	६४४४	४४६४	४४४४
२४	२२	२२	२०	२०	२०	१८	१८	१६

[यह देखा जायगा कि १६, १८, २०, २२ से २४ इंचों तक की जो क्रमिक विभिन्नता मिलती है वह दो जोड़े कारकों के आधार पर समझी जा सकती है।]

परिस्थिति तथा शिक्षा द्वारा करके परिस्थितिवादी अब भी अपनी अगणित उपधारणाओं को, किसी के द्वारा खण्डन न किये जाने के कारण, हमारे सम्मुख रखते रहते।

वंशानुगति का जो चित्र हम प्राप्त कर सके हैं वह एक जटिल पच्चीकारी के काम के समान है परन्तु इसमें एक नियम तथा तरीका है जो कि मेण्डल के खोजे हुए नियमों पर आधारित है जिनसे मनुष्यों, पशुओं तथा खेत के पौधों तक का नियन्त्रण होता है।

जननिक परिवर्तन (Genetic Drift)

पशु-प्रसवन का अध्ययन हमें मेण्डल के नियम के एक अन्य आवश्यक सिद्धान्त के समझने में सहायक होता है जो कि मनुष्यों की नस्लों तथा जातियों की उत्पत्ति में महत्वपूर्ण है। ऐंगस-एवर्डीन जाति के पशु की चर्चा अभी की जा चुकी है। यह नस्ल प्रथम बार गाय की नार्स तथा केल्टिक जातियों के संकरण से उत्पन्न हुई। नारवे-निवासी अपने पशुओं को स्काटलैण्ड लाये जो कि हलके रंग, बिना सींग वाले, छोटी टाँगों तथा बड़े पेट के थे। केल्टिक पशु काले, सींगदार, लम्बी टाँगों तथा लम्बे शरीर के कारण इनसे भिन्न थे। जब इन दोनों अभिजातियों (ब्रीड्ज) का संग हुआ तथा अंतः प्रसवन हुआ, तो काफ़ी समय बाद अन्य सन्ततियों के योग से, एवर्डीन-ऐंगस की उत्पत्ति हुई। वास्तव में हुआ यह कि नार्स (नारवे के) पशु का मौलिक प्रकार बचा रहा तथा साथ में, जिससे संकरण हुआ, उसका रंग मिल गया। परिणामतः चुनाव के प्रसवन से दोनों प्रारम्भिक प्रकार, जिनसे उसकी उत्पत्ति हुई थी, पूर्णतया समाप्त हो गये।

एबर्डीन-ऐंगस तथा हेयरफोर्ड के संकरण की व्याख्या करते हुए हम बतला चुके हैं कि काले तथा सींग-रहित ९, काले तथा सींगवाले ३, तथा लाल और सींग-रहित ३, लाल और सींगवाले १ के अनुपात में मिलते थे। इनमें से प्रत्येक प्रकार केवल एक शुद्ध सन्तति उत्पन्न करता है।

अगले पृष्ठ के चित्र में प्रत्येक उदाहरण में पित्र्यकों का संयोजन बतलाया है। BB=काले, PP=सींग रहित, bb=लाल तथा pp सींगवाले हैं। इस सम्बन्ध में मानी हुई रीति के अनुसार बड़े अक्षर प्रभावी गुणों को तथा छोटे अपसारी को प्रदर्शित करते हैं।

इस चित्र में यह देखा जा सकता है कि इसमें चार सम-पित्र्यक हैं जो कि सत्य (शुद्ध) प्रसवन करते हैं। इसलिए, हालाँकि प्रारम्भिक प्रकार BB+PP (काले, सींग रहित) तथा bb+pp (लाल, सींगवाले) हैं, फिर भी दो नये प्रकारों bb+pp (लाल सींगवाले) तथा BB+pp (काले, सींगवाले) की उत्पत्ति होती है। इनमें से प्रथम

चित्र नं० १०९

एवर्डीन-ऐंगस तथा हेयरफोर्ड के संकरण से उत्पन्न वाह्य समरूपों (Phenotype) तथा समपित्र्यकों (genotype) की विभिन्नता।

काले, सींगरहित पशु एवर्डीन-ऐंगस हैं। अन्य संकरित पशु हैं।
लाल, सींगवाले पशु हेयरफोर्ड हैं। (शेषांग पृ० १९८ पर)

BB PP	काले पशु विना सींग के ←	लाल पशु विना सींग के →	bb pp
इस भाग में केवल एक, एवर्डीन-ऐंगस, सम पित्र्यक में शुद्ध है परन्तु वाह्य समरूप में सभी शुद्ध हैं।	BB PP (boxed) Bb PP bB PP BB Pp Bb Pp bB Pp BB pP Bb pP bB pP	bb PP bb Pp bb pP	इस भाग में सब नये प्रकार हैं।
इस भाग में सब प्रकार नये हैं।	BB PP Bb PP bB PP	bb pp (boxed)	इस भाग में सब समपित्र्यक तथा वाह्य समरूप में शुद्ध हेयरफोर्ड प्रमाणित हैं।
BB PP	काले पशु सींग वाले ←	लाल पशु सींगवाले →	bb pp

उदाहरण में (bb+pp) हेयरफोर्ड का लाल रंग तथा एवर्डीन-ऐंगस का सींग-रहित होना पूर्ण रूप से पित्रागत है। दूसरे (BB+pp) में बाद के (अवरोक्त) का काला रंग तथा पहले (पूर्वोक्त) का सींग पित्रागत है।

यह सिद्धान्त जिसमें कि एक प्रसंकर (Hybrid) किसी जाति से लिये गये एक गुण के लिए युग्मैकगुणी हो जाता है तथा दूसरे में दूसरा हो जाता है, जननिक परिवर्तन कहलाता है। इसमें गुण अपने प्रारम्भिक आधारों या आश्रयस्थानों से भिन्न हो जाता है। प्रसवन में यह एक महत्त्वपूर्ण कारक है जिसका कारण मनमाना चुनाव अथवा पित्र्यकों के पृथक्करण के अन्य कारण हो सकते हैं।

इन तथ्यों से हम निश्चित नियमों की स्थापना कर सकते हैं जो मनुष्यों के नये प्रकारों तथा पशुओं में नयी नस्लों की उत्पत्ति में समान रूप से कार्य करते हैं।

उदाहरणार्थ हम कह सकते हैं कि यदि दो जातियाँ होतीं जिनमें केवल एक ही गुण की विभिन्नता होती तब कोई नये प्रकार की उत्पत्ति नहीं हो सकती थी। उदाहरण के लिए यदि हम मान लें कि ऐटलाण्टिक तथा नार्डिक चेहरे में मुख्य विभिन्नता केवल प्रथम के काले केश तथा बाद वाले के स्वर्ण-केशों की है, तब हम कह सकते हैं कि काले केशोंवाले ऐटलाण्टिक तथा हलके रंग के केशोंवाले नार्डिक में संकरण होने पर एक नये प्रकार की उत्पत्ति असम्भव होगी। परन्तु यदि हम ध्यान रखें कि उनमें वास्तविक दो जोड़े मुख्य गुणों के हैं जिनमें विभिन्नता मिलती है, जैसे कि केशों का रंग तथा चेहरे की लम्बाई, तो यह स्पष्ट है कि यदि प्रसवन को नियन्त्रित रखा जाय तो इन दो जातियों से दो की नयी उत्पत्ति हो सकती है, जिनमें से एक के तो काले केश तथा लम्बे चेहरे होंगे और दूसरे के स्वर्ण-केश तथा माध्यमिक लम्बाई के चेहरे होंगे।

इस परिणाम को सरल बनाने के लिए तथा केवल शुद्ध सैद्धान्तिक प्रदर्शन के लिए चित्र नं० ११० उन दो मानव जातियों के संकरण के मुख्य परिणामों को चित्रित करता है जिनमें केवल केश तथा चेहरे के आकार की विभिन्नता पायी जाती है। सत्यता यह है कि अपने जननिक रूप में दशा वस्तुतः इससे कहीं अधिक जटिल है। इसे प्रदर्शित

(पृ० १९७ का शेषांश)

इस चित्र में समपित्र्यकों में जितने तारका-चिन्हित हैं वे नये प्रकार हैं जो शुद्ध प्रसवन करेंगे।

समकोण चतुर्भुजों के अन्दर बन्द सम पित्र्यक शुद्ध पैत्रिक पीढ़ियाँ हैं जो कि शुद्ध प्रसवन करती रहेंगी।

करने के लिए दिये हुए मानचित्र से कहीं अधिक जटिल चित्र की आवश्यकता पड़ेगी क्योंकि यह स्पष्ट है कि केशों का रंग, साथ ही सम्भवतः चेहरे की लम्बाई भी, एक जोड़ा पित्र्यकों की अपेक्षा अधिक पर आधारित है। तिस पर भी चाहे जो हो इन सबका जो परिणाम निकलेगा, वह सिद्धान्ततः जैसा कि इस चित्र से पता चलता है, उससे भिन्न न होगा, यद्यपि यह उससे कहीं अधिक जटिल होगा—इतना जटिल कि वास्तव में इस स्थान में इसका प्रदर्शन नहीं किया जा सकता।[1]

हम यह सुझाव नहीं दे रहे हैं कि ये दोनों जातियाँ केवल इन्हीं दोनों गुणों में एक दूसरे से भिन्न हैं। उनमें विभिन्नता अनेक गुणों में पायी जाती है, जैसे कि ऐटलाण्टिक जातिवालों का अधिक लम्बा कद तथा गठा हुआ शरीर, अधिक चौकोर जबड़ा, गाल की ऊँची हड्डियाँ तथा अधिक मात्रा में बालों का लालपन। फिर भी मुख्यतः ब्रिटिश द्वीप, जर्मनी तथा स्वीडेन में होनेवाले सम-पित्र्यकों के संयोजन के प्रकारों को सरल रीति से समझने के लिए यह चित्र पर्याप्त होगा, बशर्ते कि वहाँ पर ऐटलाण्टिक तथा नार्डिक जातियों में होनेवाले प्रसंकरण में इन दो गुणों का ही ध्यान रखा जाय और सम्बन्धित अन्य अनेक कारकों की सम्भावना की अवहेलना कर दी जाय।

यदि दो जातियाँ तीन गुणों में भिन्न होती हैं तब दो नये प्रकारों की अपेक्षा छः की उत्पत्ति होती है तथा यदि उनमें चार गुणों की विभिन्नता हो तब १४ नयी सन्ततियां (ब्रीड्ज) मिलती हैं तथा इसी प्रकार से आगे समझना चाहिए।

यह सिद्धान्त, जिससे ज्ञात होता है कि एक तथा दूसरी जाति के संकरण से नये प्रकार की उत्पत्ति हो सकती है, चाहे वह पशु हो अथवा मनुष्य, वर्तमान मानव समाज के जाति-विज्ञान की व्याख्या के लिए महत्त्वपूर्ण कुंजी है, जैसा कि हम आगे इन समस्याओं पर अधिक विस्तार से विचार करते समय देखेंगे।

इस अवस्था में इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाना आवश्यक है कि जहाँ संकरण किये जानेवाले समाज के व्यक्तियों की संख्या बहुत थोड़ी है तथा जहाँ आकस्मिक पृथक्करण द्वारा वे पृथक् समूहों में बिखरे हैं, वहाँ यह कहा जा सकता है कि जो संततियां बच रहती हैं, वे बिलकुल ही पैत्रिक सन्ततियाँ न हों वरन् वे नये स्थायी प्रकार हैं। प्रारम्भिक मनुष्य ऐसे ही छोटे समुदायों से सम्बन्धित था जो अक्सर बड़े क्षेत्रों द्वारा एक दूसरे

१. सम्बद्ध पित्र्यकों की संख्या के अनुसार समपित्र्यकों की संख्या तथा अनुपात उससे भिन्न होगा, जैसा कि हमने इस सीधे साधारण उदाहरण में दिखाया है।

से पृथक् थे, इसलिए आकस्मिक संकरण में पित्र्यकों के नये संयोजन से बचे हुओं का पारेषण होता था, और उन पीढ़ियों में जाति की पुरानी सन्ततियाँ नष्ट होती गयीं। इस क्रिया को जननिक परिवर्तन (जेनेटिक ड्रिफ्ट) कहते हैं, क्योंकि एक जाति के पित्र्यक इस तरह दूसरी में चले जाते हैं।

चौड़े कपालवाले काकेसायड तथा जननिक परिवर्तन

हमारे मत से, जैसा कि आगे हम विस्तार से व्याख्या करेंगे, काकेसायड जातियों में अल्पाइन, डाइनारिक, आर्मीनायड तथा पूर्वी बाल्टिक जातियाँ इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई हैं, जिनमें चौड़े कपाल, रक्त समूह, तथा कुछ अन्य गुण मंगोलायड से काकेसायड लोगों में स्थानान्तरित हो जाने से ये नयी जातियाँ बन गयी हैं जिन्हें हम जाति की नयी नस्लें कहकर मूल जातियों से भिन्न दिखलाना ठीक समझते हैं।

फिर भी, जननिक परिवर्तन ही केवल एक कारक नहीं, जो इसके पीछे काम करता रहता है। संकरण के पश्चात् जननिक परिवर्तन उन समुदायों में से, जिनमें परस्पर संकरण होता है, विभिन्न नये प्रकारों को जन्म देता है। इन अनेक नये प्रकारों में से अन्त में यदि केवल एक बच रहता है, तो इसका कारण अन्य प्राकृतिक नियमों का प्रभाव ही है। इनमें सबसे अधिक शक्तिशाली है प्राकृतिक चुनाव का नियम। बहुधा इसमें निश्चित रूप से यथानुरूप मिलन भी सहायक होता है।

जब कि इस प्रकार नये प्रकारों की उत्पत्ति होगी ही, जहाँ भौगोलिक तथा सामाजिक दशाएँ उपयुक्त हों तथा काफी लम्बा समय भी सापेक्षिक पृथक्करण के लिए हो, जिससे कि नयी सन्ततियों की स्थापना की जा सके। वे दशाएँ जो कि प्रागैतिहासिक काल से नहीं मिलीं, यह आवश्यक नहीं कि वे मूल पैत्रिक पीढ़ियों को दबा दें जिनसे उनकी उत्पत्ति हुई है। हाँ, यदि जलवायु की स्थिति नये प्रकारों के लिए अधिक उपयुक्त हो तथा अन्य कारक प्राकृतिक चुनाव के लिए अधिक अनुकूल हों तो बात दूसरी है। जैसा कि हमने अन्य किसी स्थान पर बतलाया है, समान की समान से संग करने की प्रवृत्ति मिलती है। इसका अभिप्राय यह है कि एक प्राकृतिक प्रेरणा के कारण, उदाहरण के लिए अभी बतलाये गये सूत्र में वर्णित सन्ततियों में, एक साफ़ रंग, लम्बे चेहरेवाले व्यक्ति में उसी प्रकार के व्यक्ति से विवाह करने की प्रवृत्ति मिलेगी और चूँकि ये अपसारी गुण हैं, ये पूर्ण शुद्धता में मिलते जाते हैं। जब कि ऐटलाण्टिक प्रकार के उदाहरण में (काले केश तथा माध्यमिक लम्बा चेहरा) ये गुण प्रभावी हैं, उन लोगों की अधिक संख्या के मध्य में शुद्ध रूप में तथा संकरण के रूप में भी, सन्तति को बनाये रखने में कोई कठिनाई नहीं पड़ती। दबाने की जान-बूझ कर की गयी चेष्टा

चित्र नं० ११०

ऐटलाण्टिक तथा नार्डिक के संकरण से सम्बद्ध समरूपों तथा समपित्र्यकों की विभिन्नता का एक सरल सैद्धान्तिक उदाहरण, जिसमें यह मान लिया गया है कि प्रत्येक वाह्य समरूपी गुण बहुत से पित्र्यकों के बजाय केवल एक जोड़े के कारण हैं।

ऐटलाण्टिक जाति $\frac{BB}{MM}$ से प्रदर्शित है।

जहाँ पर B B काले केशों के लिए प्रभावी है, तथा M M माना हुआ प्रभावी है जिससे केवल मध्यम लम्बाई के चेहरे से अभिप्राय है।

नार्डिक जाति $\frac{bb}{mm}$ से प्रदर्शित है, जिसमें b b अपसारी स्वर्ण-केश तथा M M माना हुआ अपसारी लम्बा चेहरा है।

	काले केश, माध्यमिक चेहरा			स्वर्ण केश, माध्यमिक चेहरा	
ऐटलाण्टिक जातीय प्रकार; केवल एक चतुर्भुज के अन्दर घिरा, शुद्ध प्रसवन	B B M M	Bb MM	bB MM	bb* MM	नये प्रकार, केवल एक, * चिन्ह द्वारा सूचित, शुद्ध प्रसवन।
	BB Mm	Bb Mm	bB Mm	bb MM	
	BB mM	Bb mM	bB mM	bb mM	
नये प्रकार, केवल एक, *चिन्ह द्वारा सूचित शुद्ध प्रसवन	BB mm	Bb mm	bB mm	b b m m	नार्डिक जातीय प्रकार, [illegible] प्रसवन शुद्ध।
BB mm	काले केश, लम्बा चेहरा			स्वर्ण-केश, लम्बा चेहरा	bb mm

अथवा केवल वीमारी तथा परिस्थिति की प्रतिकूल दशाओं आदि से ही दोनों प्रारम्भिक जातियाँ पूर्ण रूप से मिटायी जा सकती थीं।

गुणों में अधिक विभिन्नता होने से न केवल नये प्रकारों की संख्या वढ़ती है परन्तु इसकी भी सम्भावना कम होती जाती है कि मिश्रित आधारक में से शुद्ध नस्ल का कोई व्यक्ति मिले। यदि ऐसी दो जातियों या नस्लों से संकरण वने हैं जो केवल एक गुण में ही विभिन्न हैं, तव चौथाई वर्ग के अतिरिक्त, जो कि अपने अपसारी माता-पिता की भाँति शुद्ध प्रसवन करेगा, शेष में से (जो प्रभावी माता-पिता से मिलते जुलते हों) तीन में केवल एक ऐसा होगा जो शुद्ध प्रसवन करेगा। परन्तु जहाँ पर संकरण के व्यक्तियों में दो प्रभावी गुण हों वहाँ समूह के ९ में से केवल १, जो कि अपने प्रभावी माता-पिता की भाँति है, शुद्ध प्रसवन होगा। यदि ३ गुण हों तव २७ में १ तथा यदि ४ गुण हों तव ८१ में १ शुद्ध होगा; इसी प्रकार आगे भी समझना चाहिए।

हम नीले एंडालूसियन के उदाहरण में देख चुके हैं कि प्रथम जनन में काले के स्थान पर नीला प्रभावी था। इसी कारण चूँकि इसने पूर्ण रूप से अपने को प्रकट नहीं किया, इस उदाहरण में हम काले पित्र्यक को अपूर्ण प्रभावी कहते हैं। इसी प्रकार की क्रिया हम कुछ पशुओं में भी देख चुके हैं। इस तरह जव काले तथा लाल पशुओं का संग होता है, तव संकरज काले होते हैं। परन्तु यदि यह मेल लाल तथा श्वेत पशुओं में होता तो सन्तति लाल होती, जब कि यदि माता-पिता काले तथा श्वेत होते तव परिणाम स्वरूप नीला पशु होता।

यहाँ पर हमारे समक्ष ठीक उसी प्रकार की क्रिया उन अपूर्ण प्रभावी गुणों में काम करती है जो श्वेत तथा काले वर्गों के मनुष्यों के संकरण में पाये जाते हैं। जहाँ तक कि श्वेतों तथा नीग्रो लोगों के प्रसंकर का सम्वन्ध है, प्रथम पीढ़ी (मुलैटो) काली नहीं होती (हालाँ कि यह रंग प्रभावी है) परन्तु इन दोनों के बीच का रंग मिलता है। हम इसलिए चुने हुए अभिजनन द्वारा काले तथा श्वेत रंगों का प्रसवन करा सकेंगे तथा यही अनेक उदाहरणों में होता है। वाद में हम मनुष्य की इस वंशानुगति से प्राप्त रंग के प्रश्न की तथा सम्वन्धित अनेक कारकों की पूर्ण रूप से व्याख्या करेंगे, इसलिए इस स्थान पर अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं।

जातियों के अंतःप्रसवन के सम्वन्ध में यह याद रखना चाहिए कि किसी व्यक्ति में एक जोड़ा भिन्नयुग्म-पित्र्यकों से अधिक की पित्रागति नहीं हो सकती, उसके पूर्वज चाहे जितने मिश्रित क्यों न हों। इसलिए एक धूसर (Grey) घोड़े की उत्पत्ति ऐसे पूर्वजों से भले ही हुई हो जिनमें चेस्टनट (गहरा लाल), काला, वे (लाल सा भूरा), डन (मटमैला सा) तथा धूसर आदि रंगों का मेल रहा हो, परन्तु यदि यह शुद्ध धूसर

न होकर प्रसंकर है तो इसमें केवल धूसर तथा एक और किसी रंग के ही पित्र्यक हो सकते हैं[1]।

अब यह समझा जा सकता है कि यदि कोई मनुष्य चाहे जितने भिन्न-जात या मिश्रित पूर्वजों, उदाहरण के लिए नीग्रो, श्वेत, पीले तथा एमेरिंड पूर्वजों, से उत्पन्न हुआ हो, तो उसे इन सभी जातियों के पित्र्यक वंशानुगति से प्राप्त नहीं हो सकते वल्कि केवल दो ही प्राप्त होंगे। प्रकृति का ध्येय समस्त प्रसवन जगत में से छाँटना तथा ऐसा करके उस जटिलता को कम करना मालूम होता है जिसे मनुष्य, प्रकृति के नियमों के अज्ञान वश, बढ़ाता रहा है।

जातियों के बनने के प्रक्रिया-सम्बन्धी अन्य विचार

वंशानुगति की प्रक्रिया, न केवल ऐसे स्पष्ट गुणों का, जैसे कि त्वचा, आँखों, केशों के रंग, कपाल, कद तथा चेहरे के आकार आदि का, ही नियंत्रण करती है वल्कि अन्य

१. जेम्स विलसन (James Wilson) पूर्वकथित, पृष्ठ ४० में इसको प्रदर्शित करते हुए कहते हैं कि "एक चेस्टनट रंग के घोड़े का यदि पूर्ण काले से, जिसमें काला प्रभावी है, संग किया जाय तो सन्तति काली होती है, हालाँ कि उसके माता-पिता म काला तथा चेस्टनट दोनों ही रंग हैं। इस काले प्रसंकर का यदि शुद्ध बे (Bay) रंग वाले से संग किया जाता है जिसमें भूरा केवल गहरी छाया के रूप में है तथा बे रंग, काले तथा भूरे दोनों में प्रभावी है, तव सन्तति बे रंग की होती है, हालाँ कि बे माता-पिता के कारण बे रंग तथा काले माता-पिता से काला या चेस्टनट होने की सम्भावना है। यदि यह प्रसंकर बे शुद्ध डन (Dun) से मिलाया जाता है तथा डन भी बे, काले तथा चेस्टनट की अपेक्षा प्रभावी है, तव सन्तति डन होगी, यद्यपि डन माता-पिता के कारण डन अथवा काले या चेस्टनट, जो भी बे को अपने काले माता-पिता से मिला, दोनों होने की सम्भावना थी। अन्त में यदि डन प्रसंकर को शुद्ध धूसर से मिलाया जाता है तथा धूसर अन्य चार रंगों से प्रभावी है तव सन्तति धूसर होगी, जिसमें, धूसर माता पिता के कारण, धूसर रंग तथा डन अथवा अन्य रंगों में से जो भी रंग उसे बे माता-पिता से मिला था, वह रंग निश्चित हो गया हो। घोड़ा इन पाँचों रंगों में से किसी रंग का हो सकता है परन्तु उसमें एक समय में दो रंग के प्रभाव से अधिक नहीं मिल सकते।" घोड़ों में वालों के रंग के अध्ययन के लिए सी० सी० हर्स्ट (C. C. Hurst), एक्सपेरीमेन्ट्स इन जेनेटिक्स, कैम्ब्रिज, पृष्ठ २३९ देखिए

बहुत से ऐसे गुणों का भी जो कि अभी तक परिस्थिति के परिणाम समझे जाते थे। हम दिखला चुके हैं कि कद वंशानुगति पर आधारित है, परन्तु यह उन गुणों में से एक है जो कि परिस्थिति द्वारा प्रभावित होते हैं, कारण यह है कि इसमें केवल वृद्धि का प्रश्न है इसलिए इसका नियन्त्रण ठीक उस तरह से नहीं किया जा सकता, जिस तरह से अन्य गुणों का। तात्पर्य यह कि कोई मनुष्य यदि लम्बे कदवाली नस्ल का हो, तो भी उसके पूर्ण विकास को हम अ-पौष्टिक खुराक द्वारा रुद्ध कर सकते हैं। दूसरी ओर जाति चूँकि नियन्त्रित करनेवाली मुख्य वस्तु है, इसलिए किसी प्रकार की भी अच्छी परिस्थितीय दशाएँ छोटे कद की जाति के मनुष्य को लम्बे कदवाली जाति के सबसे ऊँचे मनुष्य का मुकाबला करने योग्य नहीं बना सकतीं। अतः अपेक्षा की जा सकती है कि इस प्रकार के गुण पित्रागति नियम (मेण्डेलियन ला) द्वारा नियन्त्रित होते हैं। आगे हम काफ़ी स्थान, परिस्थिति तथा जाति के समस्त प्रश्न को देंगे। इसलिए यह आवश्यक नहीं कि उस विषय को यहाँ विस्तार से बताया जाय। यहाँ पर साधारण सिद्धान्तों को प्रदर्शित करने के लिए इसी से मिलते-जुलते ब्रिटिश गायों के उदाहरण की ओर ध्यान आकर्षित करना पर्याप्त होगा।

ब्रिटिश गायें तीन श्रेणियों में मिलती हैं जिनको कि सबसे अधिक दूध देनेवाली, माध्यमिक तथा सबसे कम दूध देनेवाली गायों की श्रेणी कह सकते हैं। यह देखा गया है कि सबसे अधिक तथा सबसे कम दूधवाली श्रेणी विभिन्न पित्र्यकों के कारण तथा माध्यमिक श्रेणी प्रसंकर के कारण है। इसलिए एक सी दशाओं में रहते हुए, तथा जहाँ अच्छे पशुओं पर प्रतिकूल परिस्थिति का बुरा प्रभाव नहीं पड़ने पाता, निम्नलिखित[1] पित्रागति सिद्धान्त का प्रदर्शन मिलता है।

यह भी देखा गया है कि प्रतिशत मक्खन के कम अथवा अधिक होने के गुणों का पारेषण होना वंशानुगति पर आधारित है। माता-पिता दोनों ही उन गुणों को पारेषित करते हैं जो कि अनेक कारकों[2] द्वारा नियन्त्रित हैं।

यह सब हमारे समक्ष होते हुए हमें यह समझ लेना चाहिए कि मनुष्य तथा पशुओं का प्रत्येक गुण पित्रागति सिद्धान्त (मेण्डेलियन सिद्धान्त) पर आधारित है। इसलिए

१. जेम्स विल्सन (James Wilson) पूर्व कथित, पृष्ठ ४५

२. जे० डब्लू० गोवेन (J.W. Gowen) इनहेरिटेन्स आफ़ मिल्क यील्ड एण्ड बटर फैट परसेन्टेज इन क्रासेज आफ़ डेरी एण्ड बीफ़ ब्रीड्स आफ़ कैटल, जर्नल आफ़ हेरेडिटी, II, पृष्ठ ३०० तथा ३६५

उनके ऐसा होने में आश्चर्य न होना चाहिए जैसा हम बाद में अधिक विस्तार से देखेंगे, यहाँ तक कि हम देखेंगे कि न केवल प्राकृतिक गुण ही वरन् मानसिक गुण भी निःसन्देह और शायद मुख्य रूप से वंशानुगति पर आधारित हैं। वास्तव में जननिक विद्या के आधार पर हम उन चीजों को समझना आरम्भ कर सकते हैं जिन्हें अन्य प्रकार से समझना कठिन है।

चित्र नं० १११

दूध देनेवाली ब्रिटिश गायों में दूध उत्पादन का वंशानुगत आधार

गायों (या बैलों) की श्रेणी	उन गायों या बैलों की श्रेणी जिनसे उन का संग कराया जाय	सन्तति की उत्पत्ति		
		सबसे अधिक दूधवाली श्रेणी	माध्यमिक श्रेणी	सबसे कम दूध वाली श्रेणी
सबसे अधिक	सबसे अधिक	१०० %	० %	० %
सबसे अधिक	माध्यमिक	५० %	५० %	० %
सबसे अधिक	सबसे कम	० %	१०० %	० %
माध्यमिक	माध्यमिक	२५ %	५० %	२५ %
माध्यमिक	सबसे कम	० %	५० %	५० %
सबसे कम	सबसे कम	० %	० %	१०० %

[स्पष्ट है कि ऊपर की तालिका में मेण्डल के अनुपात मिलते हैं। सबसे अधिक तथा सबसे कम उत्पादन भिन्न पित्र्यकों के कारण है तथा मध्य का उत्पादन प्रसंकर के कारण है।]

इसलिए मेण्डल के सिद्धान्त के आधार पर, उदाहरणार्थ, हम यह भी समझ सकते हैं कि क्यों ऐसे माता-पिता जो कि देखने में पूरी तरह से ठीक और अन्य लोगों की तरह हैं, कभी कभी क्षीणमस्तिष्क, गूंगी-वहरी, धवलांग (एलविनोज) तथा अन्य असाधारण गुणोंवाली सन्तान उत्पन्न करते हैं। इसकी व्याख्या यही है कि हालाँ कि माता-पिता प्रत्यक्ष रूप में साधारण हैं परन्तु वे युग्मैकगुणी (होमोजाइगस) न होकर युग्मानेकगुणी (हेटरोजाइगस) हैं और वे अपसारी रूप में इनमें से किसी कमी को अपने साथ लिये रहते हैं। परिणामतः उसी अपसारी कमीवाले दो जनों में अन्तर्विवाह होने पर उनके ऐसे वच्चों की उत्पत्ति होती है जो वाह्य समरूप तथा समपित्र्यक दोनों में अपसारी गुणवाले होते हैं और यह गुण, हो सकता है कि, पीढ़ियों से परिवार में न दिखलाई पड़ा हो। यही कारण है कि समीप के रिश्तेदारों में विवाह, जिनके वर्ग या मूल वंश (स्टाक) किसी भी रूप से दोषी हैं, दुर्भाग्यजनक होते हैं क्योंकि इससे ऐसे अवांछनीय संयोजनों की सम्भावना वढ़ जाती है। अन्तःप्रसवन से पैदायशी विद्वान होने की सम्भावना वढ़ जाती है तथा इससे लुकी-छिपी अज्ञता की उत्पत्ति की भी सम्भावना दुगुनी हो जाती है।

इनकी, तथा प्रकृति में वंशानुगति की प्रक्रिया के हमारे ज्ञान से उत्पन्न अन्य विचारों की, व्याख्या समय आने पर की जायगी। परन्तु इन नियमों का अर्थ तो विलकुल स्पष्ट है जिनका प्रयोग मेण्डल ने प्रथम वार पौधों में करके देखा तथा वाद के कार्यकर्ताओं ने मक्खियों, चूहों, गिनी सुअरों और फिर कुक्कुटादि में, मवेशियों में तथा घोड़ों में प्रयुक्त कर विकसित किया और इसका सम्वन्ध मनुष्य के साथ, एक व्यक्ति की भाँति तथा जाति के सदृश सचेतन इकाई के सदस्य होने की भाँति भी देखा। इसीलिए जाति-विज्ञान को सवसे प्रथम तथा हमेशा के लिए जननिक विद्या पर आधारित करना चाहिए जिसका पूर्ण ज्ञान तव तक नहीं प्राप्त किया जा सकता जव तक कि हम मनुष्य के तथा जातियों के जननिक शास्त्र का अध्ययन करने के पूर्व पौधों तथा पशुओं के जननिक विज्ञान का अध्ययन न कर लें।

ग्यारहवाँ अध्याय

ग्रथन का विषय

पिछले किसी अध्याय में जो कुछ कहा गया है, जिसमें ग्रथन (लिंकेज) का भी उल्लेख किया गया था, उससे स्पष्ट है कि यदि एक ही पित्र्यसूत्र में वहुत से कारक (पित्र्यक—जीन्स) हों तथा पित्र्यसूत्र का वर्ताव एक पूर्ण एकक के समान हो, तो यह परिणाम निकलता है कि उस पित्र्यसूत्र से सम्वद्ध सभी कारक अथवा पित्र्यक उस से जुड़े हुए हैं और इस प्रकार वे एक दूसरे से ग्रथित हैं।

परिणामतः, जैसा कि हम देख चुके हैं, कुछ कारक (फैक्टर्स) ऐसे होते हैं जो आपस में जुड़े रहते हैं। जो भी परिस्थिति हो, ऐसा होना चाहिए, यह स्पष्ट है। उदाहरण के लिए ड्रोसोफीला मेलानोजास्टर[1] में केवल आठ पित्र्यसूत्र होते हैं परन्तु उसमें सैकड़ों मेण्डल के कारक आ जाते हैं। परिणामस्वरूप उन पित्र्यकों को, जो इन कारकों के आधार हैं, आठ पित्र्यसूत्रों के साथ सामूहिक रूप से सम्वद्ध होना चाहिए। लैन्सफील्ड (Lancefield)[2] ने वतलाया है कि ड्रोसोफीला आव्सक्योरा[3] में जिसके पाँच जोड़े पित्र्यसूत्र हैं, पाँच ग्रथित समूह हैं। मेज़[4] ने भी देखा है कि ड्रोसोफीला विलिस्टोनी (Drosophila Willistoni) के तीन जोड़े पित्र्यसूत्रों के समकक्ष ग्रथित गुणों के भी तीन समूह पाये जाते हैं।

१. Drosophila Melanogaster

२. डी० ई० लैन्सफील्ड (D. E. Lancefield), "लिंकेज रिलेशन्स आफ़ दि सेक्स-लिंक्ड कैरेक्टर्स इन ड्रोसोफीला आव्स्क्योरा" जेनेटिक्स ७, १९२२, पृष्ठ ५३५

३. Drosophila Obscura

४. सी० डब्लू० मेज (C. W. Metz), "क्रोमोसोम स्टडीज इन दि डिप्टेरा, आइ० ए० प्रिलिमिनरी सर्वे आफ़ फाइव डिफरेन्ट टाइप्स आफ़ क्रोमोसोम ग्रुप्स इन दि जीनस ड्रोसोफीला" जर्नल, एक्स, जूलोजी १७, पृष्ठ ४५

लिंग-ग्रथन (सेक्स लिंकेज)

ग्रथित पित्रागति का प्रश्न मुर्गियों के प्रसवन के सम्वन्ध में न केवल ठीक प्रकार से देखा गया, परन्तु यह वाणिज्य के लिए काफ़ी महत्त्व का है, जहाँ पर कि दूसरे गुण के साथ लिंगसम्वन्ध मिलता है। इस सम्वन्ध को हम लिंग-ग्रथन कहते हैं।

हमने मादापन का कारक X X से तथा नर का Y से प्रकट किया है। इस प्रकार एक नर की कारकीय बनावट X Y है। ये गुण वास्तव में केवल पित्र्यक के ही नहीं होते बल्कि स्वयं पित्र्यसूत्रों के होते हैं। मान लिया जाय कि हम एक लाल आँखवाली मादा पोमेस मक्खी का श्वेत आँखवाले नर से संकरण करते हैं। यह देखा जायगा कि संकरण के उपरान्त लाल आँखवाली मक्खी की उत्पत्ति होती है तथा आगे के अन्तः-प्रसवन में दूसरी पीढ़ी में लाल तथा श्वेत मक्खियों की उत्पत्ति होती है किन्तु प्रत्येक श्वेत आँखवाला नर होगा। श्वेत आँखवाले वावा ने श्वेतपन को केवल पोतों की ओर ही बढ़ाया है, पोतियों की ओर विलकुल नहीं। इस घटना के होने के कारण की व्याख्या यह है कि श्वेत आँखों के अपसारी पित्र्यक, अपसारी रूप से X पित्र्यसूत्र में होते हैं। यह (wX) द्वारा प्रदर्शित किया गया है। लाल आँखों के पित्र्यक भी एक X पित्र्यसूत्र के होते हैं जो कि WX हैं इसलिए, लाल आँखोंवाली मादा की वनावट (WX) (WX) है। (लाल पित्र्यक, X पित्र्यसूत्र में स्थित हैं) तथा श्वेत आँख के नर की वनावट (wX) (Y) है—श्वेत आँखों का अपसारी गुण X पित्र्यसूत्र तथा नर के लिए Y पित्र्यसूत्र जिसमें कि आँखों के रंग के लिए कोई पित्र्यक नहीं है।

वे पैत्रिक जनन (P_1) हैं। संकरण करने पर दूसरे जनन में लाल आँखवाले मादा तथा नर क्रमशः (WX) (wX) तथा (WX) (Y) बनावट के होंगे। जब इनका अंतःप्रसवन होता है तब अगले जनन (F_2) में

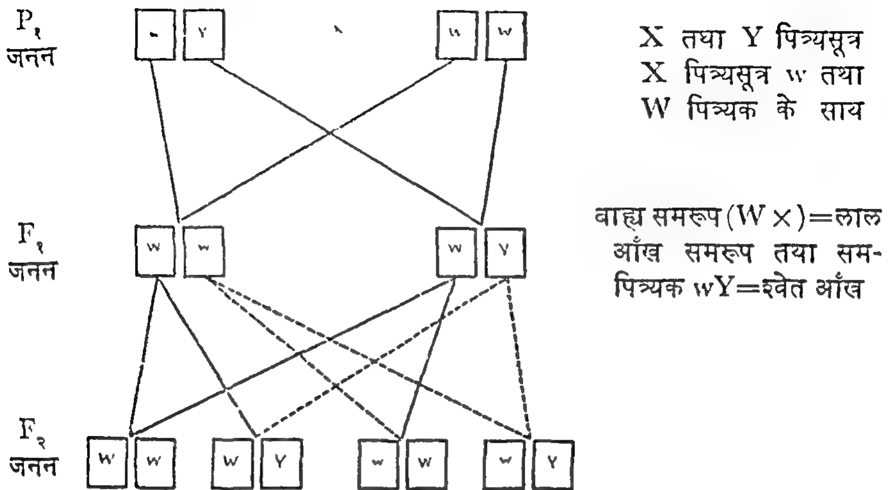
१ लाल आँख वाली मादा (WX) (WX)
१ लाल आँख वाली मादा (wX) (WX)
१ लाल आँख वाला नर (WX) (Y)
१ श्वेत आँख वाला नर (wX) (Y) मिलता है।

इसका चित्रण चित्र नं० ११२ में किया गया है।

पित्रागति की इस विधि की खोज प्रथम वार बिल्ली तथा मनुष्यों में हुई थी परन्तु जब तक ड्रोसोफ़ीला के सम्वन्ध में इसकी जाँच भली-भाँति नहीं कर ली गयी, तव तक इसका मतलव पूर्ण रूप से समझ में नहीं आ सका था।

चित्र नं० ११२

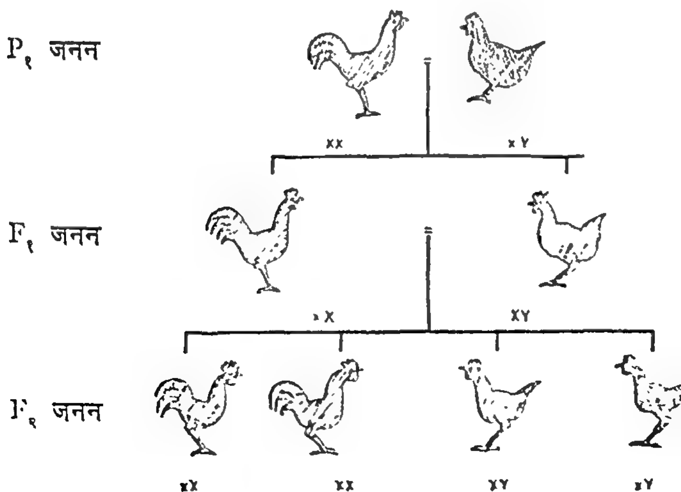
श्वेत आँखोंवाले नर का संकरण लाल आँखोंवाली मादा से



W=लाल आँखोंवाले प्रभावी पित्र्यक जो X-पित्र्यसूत्र में मिलते हैं।
w=श्वेत आँखोंवाले अपसारी पित्र्यक जो X-पित्र्यसूत्र में मिलते हैं।

चित्र नं० ११३

वार्ड राक (Barred rock) मुर्गा तथा ब्लैक आरपिंगटन मुर्गी का संकरण



लिंग के लिए नर में XX की तथा मादा में XY की बनावट होती है।
वार्स (Bars) के लिए X प्रभावी है। काले के लिए x अपसारी है।

एक दूसरे प्रकार का लिंग-ग्रथन होता है जिसमें मादा की बनावट XY पित्र्यसूत्रों की तथा नर की XX की होती है। ऐसा मुर्गे-मुर्गियों आदि में होता है, जैसा कि चित्र नं० ११३ में वार्ड राक मुर्गा तथा ब्लैक आरपिंगटन मुर्गी के संकरण में दिखलाया गया है।

लिंग-ग्रथित Y-पित्र्यसूत्र पित्रागति

न केवल यही दिखला दिया गया है कि लिंग-ग्रथन मे गुण X-पित्र्यसूत्र में स्थित होते हैं परन्तु हाल में ही यह खोज की गयी है कि एक दूसरा तरीका भी है जिसमें Y पित्र्यसूत्र भी गुण का परिवहन करते हैं। इसे **लिंग-ग्रथित Y-पित्र्यसूत्र पित्रागति** कहते हैं। इसलिए अब यह नहीं माना जा सकता कि Y-पित्र्यसूत्र में पित्र्यक नहीं मिलते। वास्तव में पशुओं तथा पौधों में यह दिखलाया जा चुका है कि Y-पित्र्यसूत्रों में पित्र्यक मिलते हैं।[1]

Y-पित्र्यसूत्र में एक प्रभावी पित्र्यक केवल नरों को प्रभावित करेगा। ऐसे नर असामान्य गुण अपने वंश के नरों को देते जायँगे। मादा में Y-पित्र्यसूत्र न होने के कारण वह ऐसे गुण पारेषित नहीं कर सकती।

ऐसा प्रतीत होता है कि जुड़े हुए अँगूठे पित्रागति की इस विधि के कारण होते हैं जैसा कि पृ० २१२ के वंशक्रम[2] से ज्ञात होता है।

लिंग-ग्रथन की व्याख्या समाप्त करने के पूर्व हम लिंग-सीमित पित्रागति का कुछ वर्णन करेंगे जिसकी कुछ बातें लिंग-ग्रथन से सम्बन्धित हैं। स्टर्न[3] ने यह सुझाव दिया है कि Y-पित्र्यसूत्र में प्रभावी गुण का एक निरोधक पित्र्यक होता है। कुछ उदाहरणों में एक लिंग के व्यक्ति में ही किसी गुण के प्रकट होने का यही कारण होगा।

कोकेन ने बतलाया है[4] कि नर में लिंग-सीमित गुण प्रभावी हो सकता है परन्तु मादा में यह अपसारी होगा। इस प्रकार नर की DD बनावट में, जो कि प्रभावी तथा युग्मैक-

१. ई० ए० कोकेन (E. A. Cockayne), 'इनहेरिटेड एबनार्मेल्टीज आफ़ दि स्किन एण्ड इट्स एपेन्डेजेज', आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन, १९३३, पृष्ठ १६

२. आर० शोफील्ड (R. Schofield), जर्नल आफ़ हेरेडिटी, १९२२, XII, ४००

३. स्टर्न कर्ट (Stern Curt), Biol. Zentralbl, १९२६, XLVI, ३४४

४. कोकेन ई० ए०, पूर्वलिखित, पृष्ठ १८

गुणी होगी, गुण की अभिव्यक्ति होगी तथा इसी प्रकार DR बनावटवाला, युग्मानेक-गुणी नर भी गुण को प्रकट करता है। जब कि युग्मानेकगुणी मादा (DR) तथा युग्मैकगुणी मादा अपसारी (RR) गुणों के कारण दोनों बिना किसी गुण के होंगी।

भेड़ों में सींगों की पित्रागति इसी प्रकार की मालूम होती है। कोकेन ने बतलाया है कि इन उदाहरणों में Y-पित्र्यसूत्र में कोई निरोधक पित्र्यक नहीं होता परन्तु एक पित्र्यक होता है जो दूसरे पित्र्यसूत्र के प्रभावी पित्र्यक को क्रियाशील कर देता है। उसने लड़कों के तारुण्य के समय माथे पर श्वेत बालों का गुच्छा दिखलाई देने को पित्रागति[1] की इस विधि का फल बतलाया है।

मनुष्यों में पित्र्यसूत्र इस प्रकार से मिलते हैं कि माता के XX तथा पिता के XY होते हैं। लड़कियों में परिणामतः अपनी माता की जैसी बनावट XX मिलती है, जिसमें एक पित्र्यसूत्र X अपनी माता का तथा दूसरा पिता का एकमात्र पित्र्यसूत्र X आ जाता है, जब कि लड़कों में XY मिलता है, इनका X पित्र्यसूत्र माता से आता है।

इसलिए एक बात ध्यान में रखनी चाहिए जो कि लिंग-ग्रथन से स्पष्ट हुई। लड़का अपने X-पित्र्यसूत्र के पित्र्यकों को अपनी माता के X-पित्र्यसूत्र से लेता है, जब कि लड़की अपने X-पित्र्यसूत्रों में से एक से सम्बन्धित सभी गुण अपने पिता के एक पित्र्यसूत्र से लेती है।

इसलिए जैसा कि कोकेन ने बतलाया[2] है, "इस साधारण कथन का कि लड़का अपनी माता को पड़ता है तथा लड़की अपने पिता को, वास्तव में कुछ आधार भी है।"

यह स्पष्ट है कि लिंग-ग्रथन मनुष्यों में इतना बार बार नहीं होता जितना कि ड्रोसोफीला में, क्योंकि मनुष्यों में केवल १० लिंग-ग्रथित गुण होते हैं जब कि ड्रोसोफीला में १५० गुण तथा मनुष्यों में जो गुण लिंग-ग्रथित नहीं हैं उनकी [जिन्हें स्वयं शरीर-सम्बन्धी (Autosomal) कहते हैं] तुलना में गुणों का परस्पर अनुपात यह है—

१. इस गुण का होना क्रियाशील पित्र्यक के कारण नहीं है जैसा कि कोकेन ने बतलाया है परन्तु यह एक असाधारणता के कारण है जो कि मादा में अपसारी तथा नर में प्रभावी है।

२. कोकेन ई० ए० (Cockayne E. A.), पूर्वलिखित, पृष्ठ २७

१ लिंग-ग्रथित गुण : १७ अ-लिंगग्रथित गुण है, जब कि ड्रोसोफीला में यह अनुपात १ : १·७ है।[1]

क्रू[2] ने बतलाया है कि ड्रोसोफीला में जितने गुण बतलाये गये हैं उनसे कहीं अधिक गुण पित्र्यक तथा पित्र्यसूत्र के लिंग-ग्रथनहीन प्रवन्ध द्वारा पित्रागति से मिलते हैं।

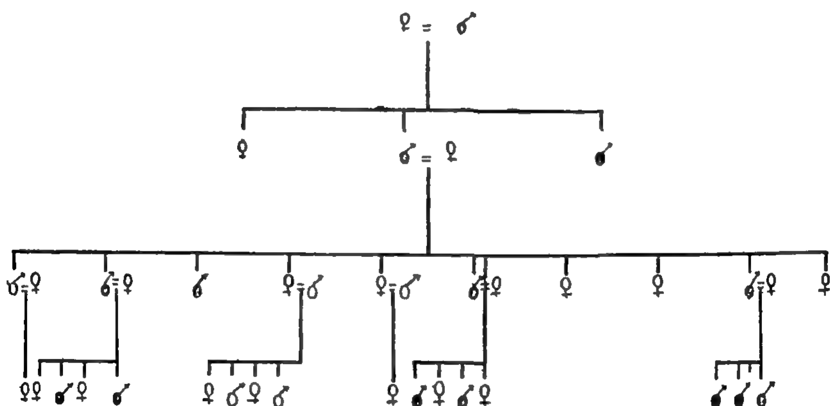
चित्र नं० ११४

Y–पित्र्यसूत्र (Y-Chromosome) द्वारा लिंग-ग्रथित जुड़े हुए अँगूठे की पित्रागति

♂=नर जुड़े हुए अँगूठेवाला (संकेत को भरा हुआ काला मानिए)

♂= नर साधारण अँगूठेवाला

♀= मादा साधारण अँगूठेवाली



इस वंशसूची में किसी मादा में असाधारणता नहीं है जो कि नर पित्र्यसूत्रों में होती है तथा नरों में ही पारेषित हो सकती है।

स्वभावतः जब कि पित्र्यसूत्र, लिंग का हो तब उसके ग्रथनसमूह को पहचानना अधिक सरल होता है, क्योंकि तब लिंगग्रथन तुरन्त होता है। परन्तु अक्सर एक दूसरा पित्र्य-

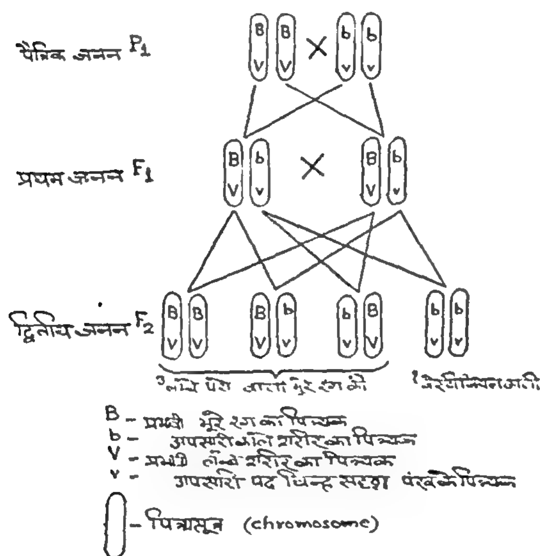
१. मारगन स्टर्टेवेन्ट एण्ड ब्रिजेज (Morgan, Sturtevant and Bridges) सेक्स लिक्ड इनहेरिटेन्स इन ड्रोसोफीला, कारनेगी इन्स्टीट्यूट, वाशिंगटन, १९१६, प्रकाशन नं० २३७, तथा जेनेटिक्स आफ़ ड्रोसोफीला, बिबलियोग्राफिका जेनेटिका, १९२५, ii, कोकेन ई० ए०, पूर्वलिखित, पृष्ठ ४२–४३

२. क्रू, पूर्वलिखित पृष्ठ, १०१

सूत्र समूह होता है जिसमें ग्रथित गुणों की संख्या अधिक हो सकती है। यह ड्रोसोफोल के काले शरीर के रंग से ग्रथित गुणों से स्पष्ट होता है।

पोमेस[1] मक्खी के काले-भूरे शरीररंग तथा लम्बे लुप्तप्राय पंख (वेस्टीजियल विंग) में, जहाँ दो कारक अथवा पित्र्यक एक ही पित्र्यसूत्र में होते हैं, क्या होता है, यह निम्न चित्र में दिखलाई पड़ता है।

चित्र नं० ११५



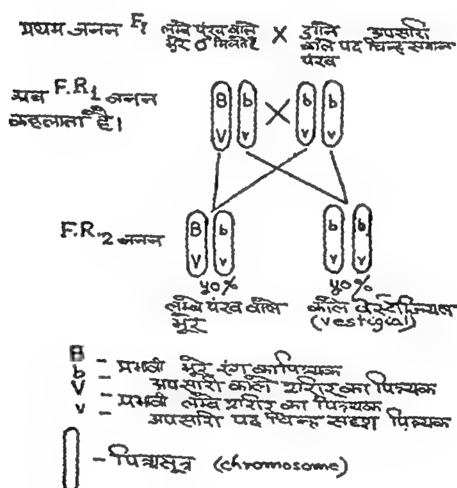
ग्रथन की परीक्षा के लिए तत्-संकरण (Back crossing)

ग्रथन की परीक्षा के लिए साधारण नियम है कि F_1 जनन का, अन्य अपसारी गुणों को दिखलानेवालों से (बैक क्रासिंग) तत्संकरण किया जाता है। समझने के लिए अन्तिम उदाहरण को लिया जाय। एक लम्बे पंख के भूरे नर का [(VB) (vb)

१. ग्रू, पूर्वलिखित, पृष्ठ १०२

बनावट वाला], ऐसी मादा से जिसके दोनों ही पित्र्यक गुण अपसारी हों, जैसे कि (vb) (vb) तथा जिसके काला शरीर तथा लुप्तप्राय पंख हों, संकरण किया जाता है। यदि संकरण से ५० प्रतिशत लम्बे पंखवाले भूरे तथा ५० प्रतिशत काले लुप्तप्राय पंख (वेस्टीजियल) प्रकार की उत्पत्ति होती है, तब यह स्पष्ट है कि यह गुण ग्रथित है। यह चित्र नं० ११६ में सरलता से देखा जा सकता है।

चित्र नं० ११६



यदि ग्रथन न होता तो २५% लम्बे पंखवाले भूरे, २५% लम्बे पंखवाले काले, २५% लुप्तप्राय पंख भूरे तथा २५% लुप्तप्राय पंख काले FR_2 जनन में मिलते, जैसा कि वास्तव में लुप्तप्राय पंख भूरे तथा लम्बे पंखवाले काले का संकरण करने से होता है, जहाँ पर कोई ग्रथन नहीं मिलता। इसके परिणाम चित्र नं० ११७ में दिखलाये गये हैं।

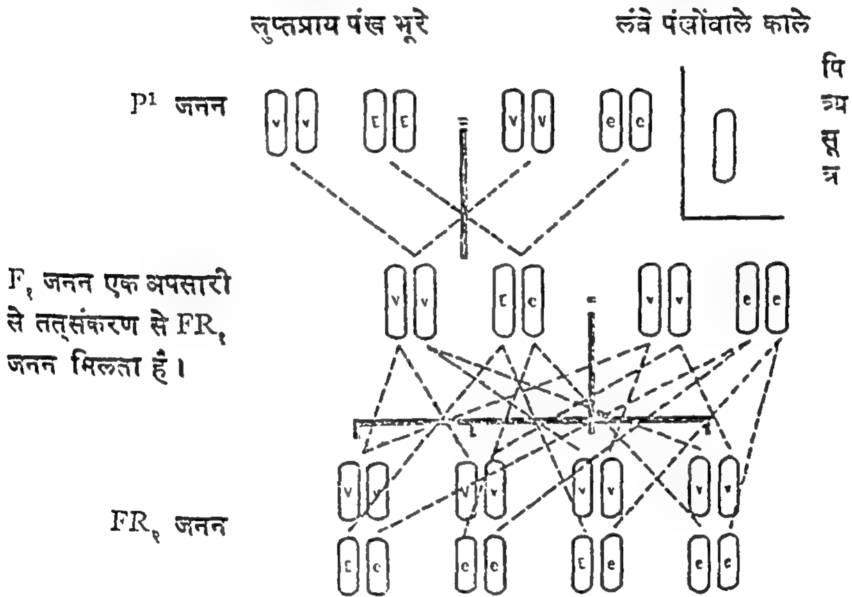
मनुष्य तथा जाति-विज्ञान के लिए इस सबकी आवश्यकता स्वयं-सिद्ध है तथा जैसे जैसे हम आगे बढ़ेंगे यह अधिक स्पष्ट होती जायगी। परन्तु इस स्थान पर भी

यह बतलाया जा सकता है कि कोकेन[1] (Cockayne) के कथनानुसार मनुष्यों में निम्न ग्रथन देखे जा सकते हैं—

१. मोनीलेथ्रिक्स (Monilethrix) तथा काले बाल।

चित्र नं० ११७

ग्रथन के लिए तत्-संकरण द्वारा परीक्षा, अग्रथन का उदाहरण



२५% लम्बे पंखवाले भूरे २५% लम्बे पंखवाले काले २५% लुप्तप्राय पंख भूरे २५% लुप्तप्राय पंख काले

EE=प्रभावी धूसर रंग
ee =अपसारी काला रंग
VV=प्रभावी लम्बे पंखवाला
vv = अपसारी लुप्तप्राय पंख

१. कोकेन ई० ए० (Cockayne, E. A.), पूर्वलिखित, पृष्ठ २६

बारहवाँ अध्याय

व्यत्यसन (Croossing over) की कार्य-प्रणाली

वंशानुगति की क्रियाएँ काफ़ी जटिल होती जाती हैं परन्तु अभी तक वे सदैव विलकुल ठीक तथा स्पष्टता के साथ कार्य करती पायी गयी हैं। जो हो, इस अवस्था में पित्र्यसूत्रों (Chromosomes) का अध्ययन एक दूसरी समस्या उत्पन्न करता है, जो इनकी अपेक्षा कम नियमित है।

कोश (cell) में पित्र्यसूत्र, दो भागों में बँटकर दो कोश वनाने के पूर्व, एक साथ मिलते (या कांजूगेट, संयुक्त होते) हैं तथा फिर अलग अलग हो जाते हैं। इस क्रिया के होने में पित्र्यसूत्र गुथ जाते हैं तथा कभी कभी टूट जाते हैं, जैसा कि आगे दिये हुए चित्र में दिखलाई पड़ता है।

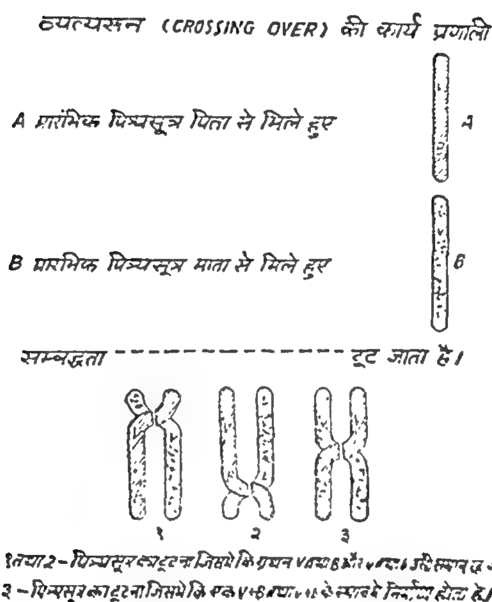
चूँकि अव हम यह जानते हैं कि यह विश्वास करने के सभी कारण हैं कि पित्र्यक प्रत्येक पित्र्यसूत्र में विलकुल निश्चित स्थानों पर स्थित हैं, प्रसवन में मिलनेवाले अनुपातों पर उसका वड़ा वाधक प्रभाव पड़ने की सम्भावना है। चित्र में यह स्पष्ट है कि जव दो पित्र्यसूत्र परस्पर मिलते या संयुक्त हो जाते हैं (तथा कभी कभी टूट भी जाते हैं) तो सभी कुछ उनके टूटने के स्थानों पर निर्भर रहता है। संयोग के सम्भावित आकारों के प्रथम तथा दूसरे उदाहरण में पित्र्यसूत्रों के टूटने से परिणाम पर कोई भिन्न प्रभाव नहीं पड़ेगा। परन्तु अन्तिम सम्भावित उदाहरण में यह देख पड़ेगा कि टूटने की क्रिया सम्वन्धित पित्र्यकों के दो सेट (Vv तथा Bb) के वीच में होती है तथा वास्तविक व्यत्यसन हो जाता है। परिणाम यह होता है कि पित्र्यसूत्र Vb तथा vb पित्र्यकों सहित विभाजित होने के वजाय vB तथा Vb पित्र्यकों में विभाजित होते हैं।

इस स्थान पर यह कहा जा सकता है कि ड्रोसोफीला में यह व्यत्यसन केवल डिम्व (ओवम) में ही देखा गया है तथा नरों को प्रभावित नहीं करता। वास्तव में व्यत्यसन की क्रिया होती है या ऊँचे प्रकार के जीवों से सचमुच उसका कोई सम्वन्ध होता है, इस विषय में अव भी प्रचुर अन्वेषण की आवश्यकता है।

ऊपर वतलाया हुआ उदाहरण लुप्तप्राय पंख (वेस्टीजियल) पोमेस मक्खी तथा धूसर लम्वी पंखोंवाली के संयोग से उत्पन्न, व्यत्यसन से सम्वन्ध रखता है।

F_1 मादा की बनावट (BV) (bv) थी। इसका संग एक ऐसे नर से किया गया जिसमें दुगुने अपसारी गुण (bv) (bv) थे, तब बच्चे चार श्रेणियों में हुए। दो का कारण चमकीले रंग के पदार्थ (क्रोमाटिन) तथा पित्र्यसूत्र के उस भाग के एक जोड़ा पित्र्यक को मिलाकर आपस में बदल जाना हो सकता है। इस प्रकार के

चित्र नं० ११८



१ तथा २ – पित्र्यसूत्र का टूटना जिससे कि ग्रथन V तथा B और v तथा b उसी स्थान पर जाते हैं।
३ – पित्र्यसूत्र का टूटना जिससे कि एक V+B तथा v+b के स्थान के निर्धारित होता है।

V+B प्रभावी पित्र्यक A पिञ्यसूत्र पर स्थापित
v+b अपसारी पित्र्यक B पित्र्यसूत्र पर स्थापित

[अनुबद्धता में नर तथा मादा पित्र्यसूत्र गुथ जाते हैं, फिर अलग अलग हो जाते हैं। कभी कभी एक दूसरे से चिपक जाते हैं, फिर अलग अलग नहीं हो पाते इसलिए टूट जाते हैं।

यह चित्र तीन प्रकार का टूटना दिखलाता है तथा एक पित्र्यसूत्र के एक टुकड़े से दूसरे में पित्र्यकों के बदलने की क्रिया दीखती है, इसी प्रकार पित्र्यकों का ग्रथन टूट जाता है।]

उदाहरणों की प्रतिशत संख्या १७ थी जिससे विदित होता है कि ६ में एक की सम्भावना मिलती है जिसमें कि पित्र्यसूत्रों के टूटने से पित्र्यकों का ग्रथन भंग हो जाता है। (फ्रू, पूर्वलिखित, पृष्ठ ११३)

यह देखा गया है कि व्यत्यसन के अनुपात को बहुत ऊँचे या बहुत नीचे तापक्रम[1] से सम्बन्धित किया जा सकता है। यह हो सकता है कि प्रसवन की कृत्रिम रीति से सम्बन्धित दशाओं के कारण इन मक्खियों की प्रकृति में अनियमित विकास की वह प्रवृत्ति मिलती है जो साधारणतः कम पायी जाती है। इसलिए पशु तथा मानव-जनन में व्यत्यसन मिलने की पूरी सम्भावना होते हुए भी यह परिणाम निकलता है कि यह इस सीमा तक नहीं होता—या उच्च प्रकार के जीवों में ऐसा नहीं होता जो एक ही पित्र्यसूत्र में स्थित पित्र्यक गुणों के ग्रथन को भंग कर दे।[2]

मनुष्य में व्यत्यसन

यदि कोई पौधे तथा नीचे प्रकार के जीवों में व्यत्यसन के प्रश्न को भली-भाँति चित्रित करे, जैसा कि साधारण पाठ्य पुस्तकों में मिलता है, तो यह परिणाम न निकालना चाहिए कि मनुष्यों में ऐसा नहीं होता।

इसके विपरीत इसके अनेक उदाहरण हैं। पाठकों का ध्यान प्रोफ़ेसर आर० रेगेल गेट्स के ह्यूमन जेनेटिक्स के दो जिल्दोंवाले ग्रन्थ[3] की ओर आकर्षित किया जाता है, जिसमें मानव वंशों में पित्रागति की असाधारणता के अनेक उदाहरण दिये गये हैं तथा जिनमें सचमुच व्यत्यसन हुआ है या इसकी शंका की जाती है।

हरे रंग का अंधापन तथा अधिरक्तस्राव (Haemaphila) से सम्बन्धित व्यत्यसन के सम्बन्ध में बेल तथा हल्डेन[4] ने जो अध्ययन किया है उससे यह प्रकट है कि इन दशाओं के पित्र्यकों का काफ़ी घनिष्ठ ग्रथन था जिसमें व्यत्यसन का भी तत्त्व सम्बद्ध था। यह ५ प्रतिशत के लगभग आँका गया था।

१. सी०बी०ब्रिजेज (C. B. Bridges), ए लिंकेज वेरियेशन इन ड्रोसोफीला, जर्नल आफ़ एक्सपेरिमेंटल जूलोजी, १९, पृष्ठ १, १९१५

२. संभावित उत्परिवर्तन (Mutation) तथा मनुष्य में भी होने की सम्भावना का कारण पारमाणविक विकिरण (Atomic radiation) बतलाया जाता है। इसकी व्याख्या आगे अधिक विस्तार से करेंगे। यदि वास्तव में ऐसा है तब यह व्यत्यसन में टूटने के रूप में पित्र्यसूत्रों को काफ़ी प्रभावित कर सकता है।

३. मैकमिलन कम्पनी, न्युयार्क (New York), १९४६

४. जुलिया, बेल तथा जे० बी० एस० हल्डेन (Julia, Bell and J. B. S. Haldane), 'दि लिंकेज बिटवीन दि जीन्स फार कलर ब्लाइंडनेस एण्ड हेमोफीला इन मैन, प्रोसीडिंग्ज आफ़ द रायल सोसायटी, १९३७, १२३३, पृष्ठ ११९

पश्चिमी स्काटलैण्ड में रिडेल[1] (Riddel) के अधिरक्तस्राव तथा रंग के अन्धेपन के अनुसन्धान पर हल्डेन ने ४·५ प्रतिशत व्यत्यसन आँका है।

इन तथ्यों से स्पष्ट है कि मनुष्य में भी व्यत्यसन के ऊपर विचार करना चाहिए। यह हो सकता है कि जब असाधारण तथा जातिसम्बन्धी बेमेल गुण दिखाई दें तो यही तत्त्व उनका कारण हो। इस प्रकार से भूरे तथा काले केश, काली आँखों के साथ मिलते हैं तथा स्वर्ण-केश हलकी आँखवालों के साथ, हालाँकि काले केशों के प्रभावी होने पर वे हलकी आँखों के साथ उन क्षेत्रों में भी मिलते हैं जहाँ कि ऐटलाण्टिक जाति का प्रभाव नहीं है जिसमें यह असाधारण संयोजन मिलता है। इसलिए भूरी आँखों तथा स्वर्ण-केशों का होना व्यत्यसन का एक उदाहरण होगा, यदि केश तथा आँखों के रंग वास्तव में ग्रथित हैं।

ज्ञान की इस अवस्था में हम यह नहीं कह सकते कि यह ग्रथन वास्तव में होता है। परन्तु इससे सम्भावना होती है कि किसी समय भी मनुष्य में असमान प्रकारों की उत्पत्ति की व्याख्या व्यत्यसन द्वारा हो सकती है।

१. डब्लू० जे० बी० रिडेल (W. J. B. Riddel), हेमोफीलिया एण्ड कलर ब्लाइण्डनेस आक्यूरिंग इन दि सेम फेमिली, ब्रिटिश जर्नल आफ़ आपथैल्मिया १९३७, २१, पृष्ठ ११३, तथा ए हेमोफीलिक एण्ड कलर ब्लाइण्ड पेडिग्री, जर्नल आफ़ जेनेटिक्स, १९३८, ३६, पृष्ठ ४५

तेरहवाँ अध्याय

संकुचित तथा विस्तृत पित्र्यकों-सम्बन्धी अनेक कारकों पर अधिक विचार तथा बहुल भिन्न-युग्मों का विषय

अभी तक हमने कारकों अथवा पित्र्यकों के बारे में बतलाया है तथा हमने देखा है कि वे पित्र्यसूत्रों में मिलते हैं, जैसा कि पित्र्यकों के ग्रथन द्वारा प्रदर्शित किया गया है। परन्तु फिर भी हम वास्तव में स्वयं पित्र्यकों के विषय में कुछ नहीं जानते तथा साधारणतया उनके कार्यों के परिणामों भर को पहचान सकते हैं।

एक महत्त्वपूर्ण खोज यह है कि न केवल एक पित्र्यसूत्र में मिलनेवाले सम्बन्धित पित्र्यकों के कारण ग्रथन होता है बल्कि एक दूसरे प्रकार का ग्रथन होता है जिसमें एक पित्र्यक कई कारकों को नियन्त्रित करता है। इसलिए बहुत से उदाहरणों में बहुत से परिणामों का कारण एक पित्र्यक में पाया जा सकता है। क्रू[1] (Crew) का कथन है कि

"यदि प्रभाव के आधार पर देखा जाय तो एक पित्र्यक बहुधा शरीर के काफ़ी विभिन्न ढाँचों को प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए अल्पविकसित पंखों के पित्र्यक पंखों के गुण के ऊपर पड़नेवाले प्रभाव के कारण पहचाने जाते हैं, परन्तु इस वर्ग को अधिक देखने से विदित होगा कि उससे अन्य स्थायी प्रभाव भी पड़ते हैं; पीछे के पैर जंगली प्रकार की मक्खी के पैरों से छोटे होते हैं, मादा पूर्ण रूप से वन्ध्या तथा इस वर्ग की जीवित रहने की शक्ति अपेक्षाकृत कम होती है......संतान की उत्पत्ति तथा पंखों के नमूने, दोनों उसी तथा एक ही पित्र्यक की क्रिया से प्रभावित रहते हैं।"

किसी अन्य स्थान में यह बतलाया गया है कि एकक गुण या इस तरह की कोई वस्तु नहीं होती जिसमें समस्त गुण एक साथ जुड़े होते हों तथा एक ही जैसा बर्ताव

१. क्रू (Crew), पूर्वलिखित, पृष्ठ १३२

करते हों। परन्तु एक ही पित्र्यक का जो अनेकविध प्रभाव होता है जिससे अनेक गुण परस्पर ग्रथित हो जाते हैं, वह छोटे पैमाने पर यही काम करता है। परिणामतः पित्र्यक के अनेक प्रभाव, साथ साथ उचित ग्रथन भी सदैव होते हैं (जिसका कारण कई पित्र्यकों का एक ही पित्र्यसूत्र में होना है)। इस ग्रथन से प्रसवन में विभिन्न गुण एक साथ बने रहते हैं।

एक पित्र्यक कई गुणों को नियन्त्रित करे, इसके विपरीत भी दशा मिलती है, जहाँ पर एक से अधिक पित्र्यक उन गुणों को नियन्त्रित करते हैं जो कि अनुभवहीन को एक ही समान लगते हैं। इस प्रकार से ड्रोसोफीला में हमें हलका काला, काला तथा आवनूस के समान काला; शरीर के ये रंग मिलते हैं जो समपित्र्यकों से नियन्त्रित रहते हैं। यह बिलकुल स्पष्ट है कि जब हम मनुष्यों के गुणों का अध्ययन करते हैं तब गुणों की उससे कहीं अधिक सुनिश्चित व्याख्या करना, जितनी कि अभी तक करते रहे हैं, बहुत आवश्यक है। इसका यह अभिप्राय नहीं कि सारे काले केश (उदाहरणार्थ) एक ही पित्र्यक से नियन्त्रित होते हैं, हालाँकि हम ऐसी ही धारणा बना लेंगे जब तक कि प्रमाण उसे गलत सिद्ध न कर दे।

अपूर्ण प्रभावी

अभी तक यह माना गया है कि जब एक प्रभावी का अपसारी से संकरण होता है, साधारण नियम के अनुसार एक संकरज के गुण सामान्य दशा में (जैसे कि यदि प्रभावी DD है तथा अपसारी RR, तब उसकी बनावट DR होगी) समरूपी अथवा DD आकार के होंगे। हमने देखा है कि ऐसा सदैव नहीं होता, इसी से नीले एंडालूसियन के मामले में प्रसंकर काले प्रभावी पित्र्यकों द्वारा अपूर्ण रूप से ही प्रभावित होता है।

यह विश्वास करने के कारण हैं कि एक साधारण प्रभावी पित्र्यक के कारण बाह्य समरूप में जो पूर्ण प्रभाव माना जाता है वह केवल देखने में ऐसा है, वास्तव में नहीं। दूसरे शब्दों में, ठीक से देखने पर बहुधा पता चलेगा कि प्रभाव अपूर्ण है, उतना ही जितना कि नीले एंडालूसियन में, भले ही यह उतना स्पष्ट न हो। इसलिए गुण के प्रकटीकरण में अन्तर होता है, चाहे यह समझना इस दृष्टि से कितना ही कठिन हो कि प्रभावी पित्र्यक साधारण अथवा दोहरी (डूप्लेक्स) दशा में है। यह दिखलाया जा चुका है[1]

१. एफ़० ई० लुज (F. E. Lutz), एक्सपेरीमेन्ट्स कन्सर्निंग दि सेक्सुअल डिफ़रेन्सेज इन दि विंग लेंग्थ आफ ड्रोसोफीला एम्पीलोफीला, जर्नल एग्स, जूलोजी, १४, पृष्ठ २६७, १९१३

कि यदि लम्बे पंखोंवाली ड्रोसोफीला में ठीक माप लिया जाता जो कि छोटे पंखों की अपेक्षा प्रभावी है, तब युग्मानेकगुणी से युग्मैकगुणी का अन्तर दिखाना सम्भव होता।

नीले एंडालूसियन में अनेक कारक

जैसा कि नीले एंडालूसियन में हम पहले देख चुके हैं वह प्रभावी और अपसारी तथा *युग्मानेकगुणी दशाओं से उत्पन्न प्रसंकर का साधारण उदाहरण बतलाया गया* था परन्तु यह सम्भवतः कहीं अधिक जटिल है। नीले एंडालूसियन का मामला उससे सम्बन्धित काफी विस्तृत संपरीक्षण किये जाने के पश्चात्, इतना सीधा-सादा सा प्रतीत होता था तथा वह अवश्य ही अपनी बनावट[1] की इस सरल परिभाषा के अनुसार ही कार्य करती है, जिससे यही समझा जा सकता था कि इसके आगे कुछ और कहने की आवश्यकता नहीं, परन्तु अब ऐसा विश्वास है कि उसके साथ ही एक अन्य युग्मकोश (जाइगोट) है[2] और हम एक दोहरे प्रसंकर की चर्चा कर रहे हैं।

विस्तृत तथा संकुचित कारक—उनका जाति-विज्ञान से सम्बन्ध

जो सिद्धान्त अब उत्पन्न होता है वह जाति-विज्ञान के लिए कुछ महत्त्व का है क्योंकि इससे हरी तथा हलकी भूरी आँखों में अधिकांश भूरा रंग पाये जाने की व्याख्या भली भाँति हो जाती है। उससे यह भी अनुमान होता है कि रंग के कारक के साथ ही एक दूसरा सेट है जो सारे शरीर में रंग के विस्तार से सम्बन्धित है तथा एक वह है जो उसके विकास को सीमित करने में प्रभाव डालता है। इसके अलावा यह भी प्रकट होता है कि अन्तिम दोनों साथ ही जुड़े (ग्रथित) हैं। ये सम्भवतः एक ही पित्र्यसूत्र में मिलते हैं और जो भी हो, यह सूचित करने के लिए कि पित्र्यसूत्र एक ही प्रकार के हैं, कोष्ठचिन्हों का प्रयोग करना सुविधाजनक होगा, क्योंकि उनका व्यवहार वही

१. डब्लू० बेटसन तथा ई० आर० साण्डर्स (W. Bateson and E. R. Saunders), **रिपोर्ट टु दि इवोल्युशन कमेटी आफ़ दि रायल सोसाइटी, रिपोर्ट** I, **रायल सोसाइटी** (Royal Society), **पृष्ठ,** I.

२. डब्लू० ए० लिपिन्कोट (W. A. Lippincott), **दि केस आफ़ दि ब्लूड एंडालूसियन,** (Amec Nat.), **१९१८, ५२, पृष्ठ ९५, फर्दर डेटा आन दि इनहेरिटेन्स आफ़ ब्लूड इन पोल्ट्री,** (Amer Nat). **१९२१, ५४, पृष्ठ २८९, जीन्स फार दि एक्सटेन्शन आफ़ ब्लैक पिगमेन्ट इन दि चिकेन** (Amer Nat). **१९२३, ५७, पृष्ठ २८४**

हैं जैसा कि ऐसा होने पर होता। परिणामतः काले कुक्कुट की बनावट में (PP) रंग तथा एक पित्र्यसूत्र में r (रंग की रोक का अपसारी) और E (सम्पूर्ण शरीर में रंग के विस्तार का कारक) होता है। दूसरे पित्र्यसूत्र में वही बनावट मिलती है—इसलिए चिह्नरूप में काला पक्षी PP (rE) (rE) हुआ।

श्वेत (चित्तीदार) पक्षी में भी जो कि नीले एंडालूसियन के माता-पिता में से दूसरा है, रंग का कारक P है परन्तु विस्तार (E) का नहीं तथा उसका अपसारी c है। रंग को संकुचित करने के लिए कारक (R) मिलता है। इससे बनावट हुई, PP (Rc) (Rc)।

इसलिए प्रसंकर, नीला एंडालूसियन, PP (Rc) (rE) होगा।[1]

श्वेत लेगहार्न तथा श्वेत डार्किंग के संकरण की व्याख्या करते समय हमने रंग के निरोधक कारक की क्रिया पर भी विचार किया है। संकुचित तथा विस्तृत पित्र्यकों के साथ भी यह कारक रह सकता है। इस प्रकार श्वेत लेगहार्न पक्षी वास्तव में रंग-वाला है परन्तु इसमें उसके विकास को रोकनेवाला कारक है। साथ ही स्पष्ट रूप से उसमें रंग के विस्तार का भी कारक होता है जो कि रोकनेवाले कारक का पूर्ण रूप से अपसारी है, इसलिए उसकी बनावट है II PP (rE) (rE)।

मनुष्यों के साफ़ रंग में सदैव इस तरह के रंग के निरोधक कारक (I) के होने की सम्भावना है जो कि प्रभावी है तथा उसका अपसारी (i) पित्र्यक है जो कि रंग के विकास में सहायक है।

१. निम्नलिखित नस्लों की बनावट निम्न प्रकार की समझी जाती है—

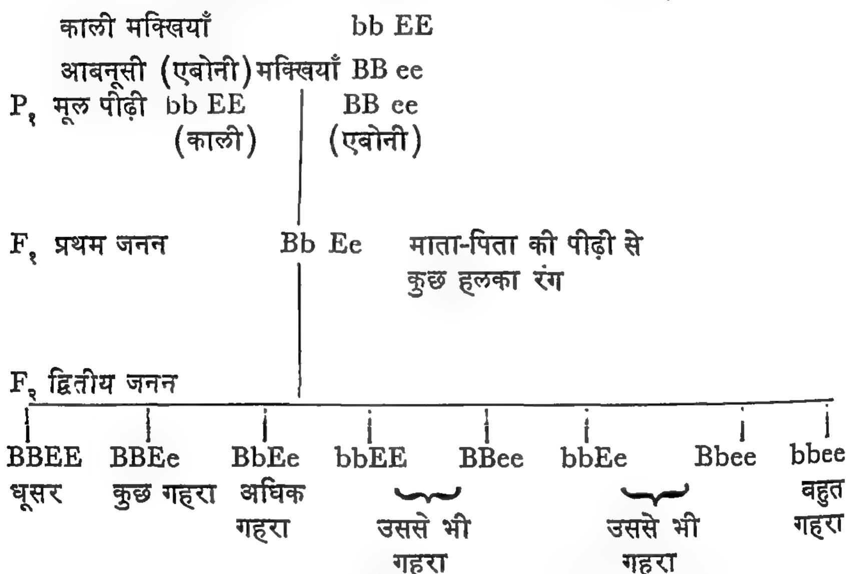
श्वेत व्यानडोट (Wyandotte)	PP (rE) (rE)
श्वेत प्लाईमाउथ रॉक (Plymouth Rock)	PP (rE) (rE)
काली एंडालूसियन (Andalusian)	PP (rE) (rE)
नीली एंडालूसियन	PP (Re) (rE)
नीली धब्बेदार एंडालूसियन	PP (Re) (Re)
काली लैंगशॉन (Langshan)	PP (rE) (rE)
नीली ऑरपिंगटन (Orpington)	PP (Re) (rE)
श्वेत लेगहार्न (Leghorn)	PP (rE) (rE)
नीली लेगहार्न	PP (Re) (rE)

निरोधक कारक तथा मनुष्य के केशों के रंग से उनका सम्बन्ध

साधारण रूप से ऐसा माना जाता है कि स्वर्णकेश तथा भूरे केशों के विभिन्न प्रकार एक ही हैं। हाल के ही वर्षों में यूरोपीय देशों के अन्वेषकों ने पूर्वी वाल्टिक

चित्र नं० ११९

ड्रोसोफीला (Drosophila) में रंग की पित्रागति



[टिप्पणी—F_1 जनन में सम्भावित नियम से विभिन्नता मिलती है क्योंकि माता-पिता के रंग से कुछ हलका रंग है।

एक से अधिक कारक काम करते हैं, यह इस बात का प्रमाण है।]

जाति तथा नार्डिक जाति के स्वर्ण-केशों में निश्चित विभिन्नता दिखलायी है, जो ठीक ही है। इन्हें इस रचना में हम क्रमशः प्लेटिनम तथा स्वर्ण-केश (Blond) कहते हैं। इस विभिन्नता का कारण यह बताया जा सकता है कि प्रथम उदाहरण में निरोधक कारक है जिसकी क्रिया से ऐसा होता है।

जैसा कि हमने पहले भी कहा है, यह काफ़ी सम्भव है कि ऐटलाण्टिक, अल्पाइन, ड़ाइनारिक, आर्मीनायड, सुडेटिश जातियों के तथा मंगोलायड और निग्रायड समूह

आदि मनुष्य के कुछ वर्गों में पाये जानेवाले सभी भूरे रंग के गुणों को जननिक दृष्टि से समान कहना गलत हो। यह निष्कर्ष सत्य भी हो सकता है, इसका आभास क्रू द्वारा दिये गये मक्खियों के साधारण काले रंग के विवरण[1] में मिलता है। उसने बतलाया है कि एक जंगली प्रकार की मक्खी धूसर (ग्रे) शरीर की (BB) होती है। किन्तु सामान्य मक्खी (bb) का रंग अधिक काला होता है। इन दोनों का संकरण (B+b) है जिसमें दोनों माता-पिता के रंग का मध्यम रंग मिलता है, जैसी कि हम आशा कर सकते हैं। काले रंग की एक किस्म वह भी होती है जिसे हम एबोनी (आबनूस) ee कहते हैं तथा इन्हीं चिन्हों का प्रयोग करके हम भूरी जंगली मक्खी को EE से सूचित करते हैं। इस तरह इस प्रकार की मक्खियों में कालेपन के दो कारक हैं तथा दोनों ही उदाहरणों में अपसारी गुणोंवाले हैं। इसलिए काली मक्खी, जिसमें कि एबोनी (EE) के नहीं बल्कि कालेपन (bb) के गुण हैं, bb EE है, जब कि एबोनी रंग की मक्खी इसके विपरीत BB ee है।

इन दोनों के संकरण से F_1 पहली पीढ़ी Bb Ee हो जाती है जिनमें साधारण दशा में कालेपन के दो कारक हैं तथा बिना किसी आश्चर्य के, माता-पिता में से प्रत्येक के रंग से कुछ गहरे रंग के प्रकार मिलते हैं। परन्तु जब इस जनन (पीढ़ी) का अन्तः-प्रसवन होता है तथा F_2 पीढ़ी की उत्पत्ति होती है, तब यह स्पष्ट है कि पुनःसंयोजन में कुछ ऐसे परिणाम निकलेंगे, जो यदि हमारे सम्मुख मेण्डल का सिद्धान्त न हो तो, बहुत ही अनपेक्षित होंगे।

इस प्रकार से BB EE पित्र्यकवालों में कालेपन के कारक नहीं होते इसलिए वे धूसर रंग के होंगे, जब कि bb ee संयोजनवालों में, जो कि दूसरे सिरे पर होंगे, प्रत्येक व्यक्ति अपने प्रारम्भिक माता-पिता की अपेक्षा अधिक गहरे रंग का होगा। पहले दिये हुए चित्र[2] नं० ११९ से यह बात स्पष्ट हो जाती है।

ऊपर दिये हुए चित्र के तथ्यों से एक नियम बनाया जा सकता है, वह यह कि जब प्रसवन की प्रथम पीढ़ी (F_1) में सम्भावित नियम से कुछ परिवर्तन मिले तथा दूसरी पीढ़ी (F_2) में और भी अधिक परिवर्तन हो तो उस गुण से केवल एक कारक या एक जोड़ा पित्र्यक का ही सम्बन्ध न समझना चाहिए।

१. क्रू, पूर्वलिखित, पृष्ठ १३८-१३९
२. क्रू द्वारा

बहुविध भिन्नयुग्म (Allelomorphs)

अब हम भिन्न-युग्मों पर विचार करेंगे। यह दिखलाया[1] जा चुका है कि कभी किसी गुण में, जैसे रक्त-लोचनत्व में, न केवल श्वेत-लोचनत्व का भिन्न-युग्मिक गुण पाया जाता है परन्तु अन्य वहुत से रंग भी, जो कि लाल के विकल्प हैं। ऐसा कहा गया है कि इसका आशय यह है कि चमकीले पदार्थ (क्रोमैटिन) में कुछ परिवर्तन उस समय होता है जव कि सम्वन्धित पित्र्यसूत्र में श्वेत आँखों का रंग उत्पन्न करनेवाला पित्र्यक उत्पन्न होता है। परिणामतः श्वेत रंग की उत्पत्ति करने के वजाय परिवर्तन की सीमा के अनुसार, वह चमकीला लाल, हलका पीला, श्वेत, गुलावी इत्यादि रंग उत्पन्न कर सकता है। यह देखा गया है कि यह वहुविध भिन्न-युग्मिक दशा अन्यों की अपेक्षा कुछ गुणों से अधिक सम्वन्धित पायी जाती है। चूहे में यह निश्चित किया जा चुका है कि धूसर, श्वेत, पीले तथा काले रंग वहुविध भिन्न-युग्म हैं तथा खरगोश में यह हिमालयन, सर्वश्वेत तथा स्वयं अपने रंग के तीन प्रकार के होते हैं।

इसलिए, उदाहरणार्थ, रंग ऐसे पदार्थों को प्रभावित करने में रंग से सम्वद्ध केवल साधारण प्रभावी की स्थिति काफ़ी नहीं होती, परन्तु रंग के निरोध, विस्तार व संकोच तथा वहुविध कारक के प्रश्न भी सम्वद्ध हैं जहाँ एक से अधिक पित्र्यक की स्थिति या एक से अधिक पित्र्यसूत्र सम्वन्धित हैं। साथ ही भिन्न-युग्मों की सम्भावना का प्रश्न भी है जहाँ पर एक ही पित्र्यक के दूसरे रूपों में रंगों की अलग-अलग तर्जों का सम्वन्ध मिलता है।

इसमें से कितने कारक मनुष्य में क्रियाशील हैं यह कहना कठिन है परन्तु इस तथ्य से कि एक अथवा अन्य दशा में वे अन्य प्रकार के जीवों में मिलते हैं, यह विदित होता है कि मनुष्य के रंग को निर्धारित करनेवाले कारक कितने जटिल हो सकते हैं।

यह वात, जिसकी चर्चा पहले मक्खियों के शरीर के भूरे, एवोनी तथा काल रंग की व्याख्या के समय की जा चुकी है, स्पष्टतर होती जाती है कि बहुधा एक गुण की उत्पत्ति में एक से अधिक पित्र्यक सम्वन्धित होते हैं। मक्खियों की आँखों के रंग में यही वात होती है, जैसा कि ड्रोसोफीला मेलानोजास्टर में दिखलाया जा चुका है कि लगभग २५ जोड़े पित्र्यकों का इससे सम्वन्ध होता है। मनुष्यों की आँखों के रंग के सम्भावित

१. क्रू, पूर्वलिखित, पृष्ठ १४२

आधार को वतलाने का जो प्रयत्न हमने आगे किया है, उससे भी यह स्पष्ट हो जाता है कि एक जोड़े से अधिक पित्र्यक सम्बन्धित हैं। चूँकि मनुष्यों का मक्खियों की भाँति अध्ययन नहीं किया जा सकता, हमारे परिणामों का थोड़ा बहुत अपूर्ण रहना स्वाभाविक है, इसलिए हम कुछ ही कारकों को निर्धारित कर सके हैं। यह बहुत सम्भव है कि आँखों के रंगों के प्रत्येक गुण की उत्पत्ति में एक के स्थान पर अनेक पित्र्यकों का योगदान होता हो। इसका पक्का निश्चय अभी और अनेक वर्षों के संपरीक्षण से ही किया जा सकता है। तिस पर भी यह अनुमान सम्भवतः अथवा बहुलांश में, ज्ञान की और वृद्धि के कारण होनेवाले संपरिवर्तनों के बाद भी ठीक होगा, क्योंकि यह सब उन सिद्धान्तों पर आधारित है जो कि ड्रोसोफीला मेलानोजास्टर में स्पष्ट रूप से कार्यान्वित हैं।

यह पूर्ण स्पष्ट है कि ये नियम अवश्य ही मनुष्य में क्रियान्वित होने चाहिए जिनके साधारण सिद्धान्तों की व्याख्या हमने अभी की है तथा जो अधिकतर जीवन को नियन्त्रित करते देखे जाते हैं तथा जिन कुछ प्रमाणों को हमने वतलाया है उनसे उनकी क्रिया की स्पष्ट रूप से पुष्टि हो सकती है। इसलिए, जैसा कि हमने पहले वतलाया है, मानव जातियों के हमारे अध्ययन में जाति-विज्ञान के जननिक आधार की अवहेलना नहीं की जा सकती तथा इसके किसी भी विद्यार्थी को, जननिक सिद्धान्तों का अध्ययन, मानव-विज्ञान पर उन्हें लागू करने के पूर्व कर लेना आवश्यक है।

चौदहवाँ अध्याय

उत्परिवर्तन, विभासन (Irradiation) पर कुछ टीका-टिप्पणी तथा उत्परिवर्तन पर उसका प्रभाव

पिछले अध्याय में बहुविध भिन्न-युग्मों (एलेमापर्स) की व्याख्या करते समय यह बतलाया गया था कि एक ही पित्र्यक में जो वैकल्पिक गुणों की उत्पत्ति होती थी, वह चमकीले पदार्थ (क्रोमैटिन) की बनावट में परिवर्तन के कारण थी।

जब इस प्रकार का परिवर्तन हो तब उसे उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) कहेंगे। इस प्रकार का कोई भी परिवर्तन जब पित्र्यसूत्र में चमकीले पदार्थ के रासायनिक स्वरूप में होगा तब अवश्य ही वह भी उसी तरह उत्परिवर्तन होगा। हालाँकि हम सोच सकते हैं कि पित्र्यकों (Genes) की रासायनिक बनावट में नियन्त्रित तथा आकस्मिक परिवर्तन से ही उत्परिवर्तन होते हैं, फिर भी यह ध्यान में रखना चाहिए कि व्यत्यसन के कारण, जिसकी व्याख्या हमने अभी की है, जो परिवर्तन होते हैं, वे भी एक अर्थ में उत्परिवर्तन ही हैं, क्योंकि वे नये प्रकार के पित्र्यसूत्रों की उत्पत्ति करते हैं तथा जहाँ सम्बन्धित पित्र्यक बहुविध कारकों के अंश हैं, प्रकारों के बदल देने में उनका काफ़ी प्रभाव पड़ सकता है।

फिर भी, रासायनिक परिवर्तनों के कारण होनेवाले उत्परिवर्तन सहज रूप से नहीं बल्कि क्वचित् ही होनेवाली घटना हैं और उनकी वास्तविक दशा का ज्ञान हमें नहीं है। जब उत्परिवर्तन एक बार हो जाता है तब सहज गुण की भाँति वह पूर्णरूप से स्थायी अस्तित्व बन जाता है। उत्परिवर्तन क्वचित् ही होते हैं फिर भी पित्र्यसूत्रों की किन्हीं स्थितियों में, अन्यों की अपेक्षा वे अधिक मिलते हैं।

स्वभावतः उत्परिवर्तन अपने गुण तथा प्रभाव में काफ़ी भिन्न होते हैं परन्तु जननिक शास्त्रियों के अनुसार साधारण सिद्धान्त यह है कि बड़े परिवर्तनों से सम्बद्ध उत्परिवर्तनों की अपेक्षा वे अधिक होते हैं जिनके गुणों में थोड़ा परिवर्तन होता है।

उत्परिवर्तन एक से अधिक गुणों को प्रभावित कर सकता है

यह भी देखा गया है कि जब उत्परिवर्तन होता है, वह केवल एक ही गुण को प्रभा-

वित नहीं करता। इस प्रकार ड्रोसोफीला में ऐसा प्रतीत होता है कि उत्परिवर्तन के किसी निश्चित परिणाम के साथ-साथ छोटे पंख तथा वक्ष-देश में कुछ उठा हुआ भाग भी मिलता है। यह स्वयं ही आश्चर्यजनक नहीं है क्योंकि ऐसा विश्वास करने के सभी कारण हैं कि कुछ पित्र्यक एक गुण से अधिक को नियन्त्रित अथवा प्रभावित करते हैं।

उत्परिवर्तन की प्रवृत्ति अपसारिता की ओर होती है

उत्परिवर्तन में अपसारी होने की प्रवृत्ति होती है तथा साथ ही साधारणतया यह घातक भी होता है, कम से कम ड्रोसोफीला ऐसे जीवित जीवों के सम्बन्ध में यही परिणाम निकाला जा सकता है।

उत्परिवर्तन में घातक प्रवृत्ति

डा० रोजर पिल्किंगटन[1] इस मत के विशेष समर्थक हैं, यदि हम हाल में ही अखबारों में प्रकाशित उनके लेख को देखें, जहाँ उन्होंने लिखा है—

"लगभग सभी ज्ञात उत्परिवर्तन हानिकारक हैं, कुछ ही ऐसे हैं जिन्हें बहुत हुआ तो हम अहानिकर कह सकते हैं, पर अधिकांश घातक होते हैं। दोहरे अपसारी तथा लिंग-ग्रथित (Sex-linked) घातक उत्परिवर्तन ही प्रारंभिक भ्रूण के बहुधा नष्ट हो जाने का कारण है। बहुत से उत्परिवर्तन अपसारी भी होते हैं इसलिए उनका प्रभाव तब तक ज्ञात नहीं होता, जब तक अनेक पीढ़ियों बाद कोई क्षति नहीं हो जाती।[2]

ये विचार बहुत ज़ोर देकर व्यक्त किये गये हैं तथा प्रत्येक को मान्य नहीं हो सकते।

अवश्य ही इस समय यह एक विवादास्पद समस्या है और अणु-शक्ति से सम्बन्धित भौतिक-शास्त्री, जीव-वैज्ञानिक तथा अन्य लोगों की अपेक्षा, इस तर्क से कम ही प्रभावित होते हैं। यह लिखते समय इस बात की सत्यता जानने के लिए कुछ गम्भीर अनुसन्धान किये जा रहे हैं।

१. Dr. Roger Pilkington

२. हाइड्रोजन बम का जननिक प्रभाव 'Genetic effects of the H. Bomb' टाइम एण्ड टाइड 'Time and Tide' लन्दन, मई, १९५५, पृष्ठ ५९१

हमारी स्वयं की भावना यह है कि जो लोग सतर्क होने के लिए कहते हैं वे इससे संतुष्ट या प्रसन्न होनेवालों की अपेक्षा सत्य के अधिक निकट हैं, क्योंकि सामान्यतः, जैसा कि हम देखते हैं, उत्परिवर्तन अधिक वार घातक प्रवृत्तियों से सम्बन्धित होते हैं।

उत्परिवर्तन तीन प्रकार के हो सकते हैं।

जन्यव (Gametic) उत्परिवर्तन

जन्यव वह है जब माता-पिता में से एक के जन्यु (गैमीट) में उत्परिवर्तन होता है, इसलिए वह युग्मकोश के केवल उस भाग में मिलता है जो उक्त माता या पिता से प्राप्त होता है।

युग्मिक उत्परिवर्तन

युग्मिक उत्परिवर्तन वह है जो निषेचन के तुरन्त वाद होता है तथा युग्मकोश (जाइगोट) के दोनों जन्युओं को प्रभावित करता है। यहाँ उसका प्रभाव केवल व्यक्ति में दिखलाया गया है, जब कि जन्यव में यदि वह अपसारी उत्परिवर्तन है, यह स्पष्ट नहीं है परन्तु वह बाद की पीढ़ियों में प्रकट होगा, जब संयोगवश दो अपसारी गुणों के व्यक्ति एक दूसरे का संग करेंगे।

शरीरसम्बन्धी (सोमैटिक) उत्परिवर्तन

एक तीसरे प्रकार का उत्परिवर्तन होता है जो कुछ महत्त्व का सिद्ध हो सकता है। यह शरीरसम्बन्धी है तथा इसका कीटाणुकोश पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि इसका सम्बन्ध केवल शरीरसम्बन्धी कोशों से रहता है और इसलिए अपना प्रभाव यह केवल शरीर पर ही दिखलाता है। इस शरीरसम्बन्धी उत्परिवर्तन से बेतुकी वस्तुओं इत्यादि की उत्पत्ति होती है।[1] इसलिए प्रत्येक असाधारण रूप को जननिक उत्परिवर्तन वतलाने के सम्बन्ध में सावधान रहना चाहिए, जब तक कि उसके परिणाम प्रसवन द्वारा न देख लिये जायँ।

१. शरीरसम्बन्धी उत्परिवर्तन की कुछ ऐसी घटनाएँ हैं जो जननग्रन्थि के तन्तुओं को प्रभावित करती हैं तथा इनसे उसका योगदान पित्रागति की ओर रहा है। कहाँ तक ये इस दशा में सचमुच शरीरसम्बन्धी उत्परिवर्तन समझे जा सकते हैं, यह संदेहास्पद है।

उत्परिवर्तन का मनुष्य से सम्बन्ध

यदि हम कुछ जाने हुए उत्परिवर्तनों पर विचार करें तो उत्परिवर्तन का मनुष्य से सम्बन्ध तुरन्त ज्ञात हो जायगा।

नीग्रो लोगों में इतरजातीय दशा

उदाहरणार्थ कोकेन ने बतलाया है कि नीग्रो लोगों (हब्शियों) में इतरजातीय दशा, जो बहुत कम देखी जाती है, उन सभी उदाहरणों में, जिनका अध्ययन किया गया है[1], उत्परिवर्तन के कारण है।

अधिरक्तस्राव (Haemophilia) के लिए उत्परिवर्तन

अधिरक्तस्राव में पित्र्यक के उत्परिवर्तन का एक और उदाहरण मिलता है। यह एक बीमारी है जिसमें रक्त के जमने का गुण समाप्त हो जाता है, इस कारण वह बहा करता है। मनुष्य में रक्त के जमने के लिए एक कारक होना स्वाभाविक है। परन्तु कुछ अभागे व्यक्तियों में X पित्र्यसूत्र पर स्थित यह पित्र्यक, जो कि लिंग से भी सम्बन्धित है, स्वाभाविक रूप से अपना कार्य बन्द कर देता है, इसलिए शरीर में इस प्रकार की प्रक्रिया उत्पन्न नहीं करता जिसका कार्य रक्त को जमाना है। चूंकि एक पित्र्यक के उत्परिवर्तन के कारण रक्त का जमना बन्द हो जाता है, (जो कि अधिरक्तस्राव की दशा है) अतः स्पष्ट है कि असामान्यता का पारेषण होता है। जिन व्यक्तियों में अधिरक्तस्राव के पित्र्यक मिलते हैं उनमें से एक-तिहाई नर तथा दो-तिहाई मादा पित्र्यक होते हैं। यह इसलिए है कि XX पित्र्यसूत्र में उत्परिवर्तन से अधिरक्तस्राव होता है और पुरुषों में केवल एक ही X पित्र्यसूत्र तथा स्त्रियों में दो होते हैं। अधिरक्तस्राव वाले मनुष्यों में से लगभग एक-चौथाई प्रत्येक पीढ़ी में प्राकृतिक चुनाव द्वारा नष्ट हो जाते हैं।[2] परिणामतः अधिरक्तस्राव आज पूर्णतया समाप्त हो जाता यदि समय समय पर उत्परिवर्तन द्वारा उसका पुनर्निर्माण न होता। हल्डेन[3] का कथन है कि जनसंख्या में

१. जे० बी० एस० हल्डेन J. B. S. Haldane, हेरेडिटी एण्ड पॉलिटिक्स, १९३८, पृष्ठ ६९

२. जे० बी० एस० हल्डेन J. B. S. Haldane, हेरेडिटी एण्ड पॉलिटिक्स १९३८, पृष्ठ ६९

३. जे० बी० एस० हल्डेन J. B. S. Haldane, पूर्वोल्लिखित, पृष्ठ ७२

अधिरक्तस्राव की आवृत्ति से पता चलता है कि लगभग ५० सहस्र पीढ़ियों में एक वार X पित्र्यसूत्र का एक स्वाभाविक पित्र्यक उत्परिवर्तित होकर अधिरक्तस्राविक हो जाता है। अमेरिका के कुछ आँकड़ों से पता चलता है कि यह कुछ अधिक वार होता है।

उत्परिवर्तन बहुत कम होते हैं

इसलिए यह स्पष्ट है कि प्राकृतिक चुनाव के प्रभाव के कारण कुछ वीमारियाँ पूर्णतः नष्ट हो जातीं, यदि उत्परिवर्तन न होता, जिसके कारण जनसंख्या में वह फिर से उभड़ आती हैं। फिर भी ये उत्परिवर्तन सामान्यतः वहुत कम होते हैं।

प्राकृतिक चुनाव द्वारा घातक उत्परिवर्तनों का अन्त

कुछ घटनाओं में उत्परिवर्तनों का प्रभाव, जहाँ वे प्रभावी हानिकारक गुण उत्पन्न करते हैं, प्राकृतिक चुनाव द्वारा दूर हो जाता है। प्रकृति उत्परिवर्ती गुणों पर तुरन्त प्रभाव डाल सकती है जिससे समरूपता मिलती है। फिर भी जहाँ पर उत्परिवर्तन का सम्बन्ध एक अपसारी पित्र्यक से होता है, जैसा कि आसानी से समझा जा सकता है, प्रकृति बीमारी या खरावीवाले वर्ग को नष्ट करने में इतनी शीघ्रता नहीं करती, क्योंकि प्राकृतिक चुनाव का कार्य तभी होता है जव कि अपसारी गुण समरूप में सतह के ऊपर आ जाता है।

इस प्रकार बालकों की नेत्रशक्ति-सम्बन्धी दुर्बलता के उदाहरण में, जहाँ पर पित्र्यक अपसारी है, युग्मानेकगुणी व्यक्ति, जिनमें बीमारी का अपसारी गुण विद्यमान हो तथा जो स्वाभाविक पित्र्यक द्वारा दबा या छिपा रहता है, अपने बाहरी आकार (वाह्यसमरूप-Phenotype) में वीमारी को नहीं दिखलायेंगे। परिणामतः इसमें तथा ऐसे ही अन्य उदाहरणों में प्राकृतिक चुनाव प्रभाव नहीं डाल सकता, जब तक कि युग्मैकगुण (समयुग्मिक, होमोजाइगस) दशा में असामान्यता नहीं प्रकट होती। इस बीमारी में जव कि एक ही मनुष्य में दो अपसारी पित्र्यक मिलते हैं, जिस स्थिति में वह मूर्ख होगा, तभी प्राकृतिक चुनाव अपना कार्य आरम्भ कर सकता है। इस प्रकार प्राकृतिक चुनाव, प्रभावी उत्परिवर्तनों की अपेक्षा, अपसारी उत्परिवर्तनों को हटाने में अधिक सुस्त है।

मनुष्य में उत्परिवर्तन के उदाहरण

कोकेन[1] ने शरीरसम्बन्धी उत्परिवर्तन को लेकर मनुष्य में उत्परिवर्तन के अनेक

१. ई० ए० कोकेन (E. A. Cockayne) पूर्वलिखित, पृष्ठ ३४

उदाहरण दिये हैं। शरीरसम्बन्धी में मैरी सीले[1] का उदाहरण है जो लगभग ८ वर्ष की बच्ची थी तथा जिसका पिता भूरे रंग का और माता श्वेत रंग की थी। उसके चेहरे का रंग काला था तथा उसके सिर के एक भाग में लम्बे काले केश तथा दूसरी ओर छोटे घुंघराले तथा हलके रंग के केश थे। उसकी माता ने बतलाया कि उसके शरीर का रंग दो प्रकार का था, एक ओर भूरा तथा दूसरी ओर साफ़ रंग था।

मोट्रम[2] ने हांगकांग के एक आदिवासी बच्चे की उसी प्रकार की घटना बतलायी है जिसके शरीर का एक भाग श्वेत तथा दूसरा भूरा था।

जे० बी० एस० हल्डेन[3] ने एक उत्परिवर्तन की ओर ध्यान आकर्षित किया है जिससे पैर में काफ़ी छाले पड़ गये थे। यह शरीरसम्बन्धी उत्परिवर्तन न होकर, जिनका वर्णन अभी हमने किया है, जननिक गुण का उत्परिवर्तन है, जैसा कि अनेकों पीढ़ियों में उसके पारेषित होने से प्रमाणित होता है। यह निम्नलिखित वंशक्रम से स्पष्ट है जिसमें उसकी पित्रागति दिखलायी गयी है तथा जो कि हल्डेन की खोजों पर आधारित है।

यह बहुत कुछ F_1 पीढ़ी के पांचवें बच्चे में प्रभावी उत्परिवर्तन होने के समान दीखता है जिसमें इस गुण के पित्र्यकों के जोड़े के लिए युग्मानेकगुण दशा होगी तथा जोड़े में से एक इस प्रभावी असामान्यता में उत्परिवर्तित हो गया। इस युग्मानेकगुणी दशा के फलस्वरूप सभी वंशजों में यह बीमारी नहीं मिलेगी। इस स्त्री (प्रथम पीढ़ी की पांचवीं) में यह प्रभावी था, इसकी स्थापना इस तथ्य से होती है कि यह बहुत ही दुर्लभ दशा है। यह मानना अनुचित होगा कि उसके बच्चों तथा पोतों के पति-पत्नी उसे अपसारी रूप से युग्मानेकगुणी तरीके से ले गये, जैसा कि आवश्यक होगा यदि इसकी पित्रागति को अपसारी रूप में देखें। परिणामतः हम उसे एक प्रभावी उत्परिवर्तन का उदाहरण मानने को बाध्य होते हैं।

इसी प्रकार के अनेक उदाहरण दिये जा सकते है, और पाठकगणों का ध्यान

१. Mary Seeley

२. ब्रिटिश मेडिकल जर्नल (British Medical Journal), १९३२ पृष्ठ ८०४

३. न्यू पाथ्स इन जेनेटिक्स (New Paths in Genetics), १९४२

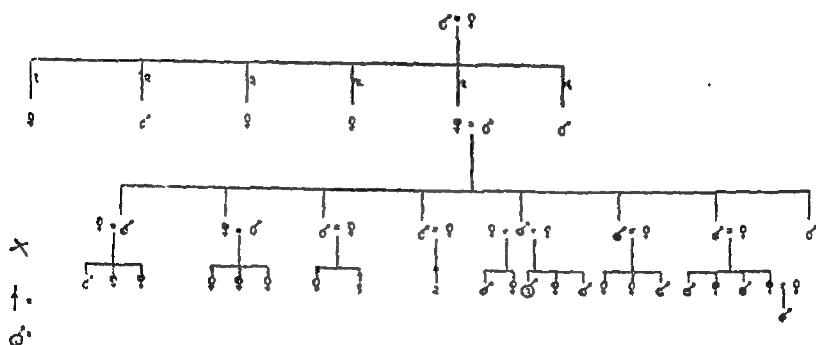
इस विषय में मानव-जननिक के प्रकाशित साधारण साहित्य की ओर आकर्षित किया जाता है।[1]

चित्र नं० १२०

एक असामान्यता के लिए उत्परिवर्तन की जननिक पित्रागति, जिसने छालों से युक्त पैर का रूप ग्रहण किया

(हल्डेन द्वारा)

जनन P_1 जनन F_1 (प्रथम पंक्ति), जनन F_2 (दूसरी पंक्ति), जनन F_3 (तीसरी पंक्ति),



नीचे का प्रथम संकेत = अन्य सन्तति, जिसका लिंग नहीं दिया गया, तथा उसके नीचे की संख्या वह है जितनी कि सन्ततियाँ रही होंगी।

दूसरा संकेत = दो नर।

लिंग-ग्रथित उत्परिवर्तन

जो उत्परिवर्तन देखे तथा लिखे गये हैं, वे कभी कभी लिंग-ग्रथित होते हैं।

१. जैसे कि जे० बी० एस० हल्डेन के म्युटेशन इन मैन, प्रोसीडिंग्स आफ़ दि एट्थ इन्टरनेशनल कांग्रेस आफ़ जेनेटिक्स, हेरेडिटास (Hereditas), परिशिष्ट भाग १, १९४९, पृष्ठ २६७, दि म्युटेशनरेट आफ़ दि जीन फार हेमोफीलिया ऐण्ड इट्स सेग्रीगेशन रेशियोज़ इन मेल्स ऐण्ड फीमेल्स, एनल्स आफ़ जेनेटिक्स, १९४७, भाग १३, पृष्ठ २६२, (Wolff. Zeitschrift fur Rassenbiol, १९१३, भाग १३; सी स्टर्न, प्रिन्सिपिल्स आफ़ ह्यूमन जेनेटिक्स, १९५१, पृष्ठ ४०४

चित्र नं० १२१—यूरोप के शाही कुलों में अविरक्त स्राव की लिंग-ग्रथित पित्रागति का उदाहरण

रानी विक्टोरिया = राजकुमार एलबर्ट

(... 'Hugo Iltis' के जर्नल आफ हेरेडिटी पर आधारित, १९४८)

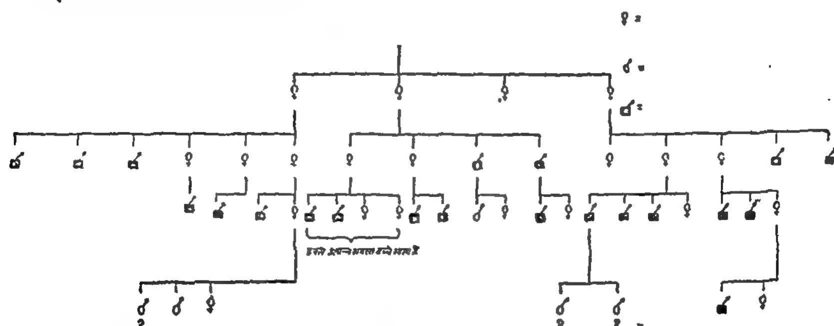
१. ... के प्रिन्सिपिल आफ ह्यूमन जेनेटिक्स (Principle of Human Genetics) में बतलाया है कि जमनी ... रानी विक्टोरिया अविरक्त स्राव से मुक्त थी तथा जर्मनशाही वंश में भी इसकी शिकायत नहीं थी।

शाही लिंग-ग्रथित उत्परिवर्तन

एक बहुत रोचक तथा प्रसिद्ध लिंग-ग्रथित उत्परिवर्तन है जिससे कि यूरोप के शासक कुलों में अधिरक्तस्राव की उत्पत्ति हुई। यह स्वयं रानी विक्टोरिया को हुआ अथवा उनके पिता को, यह अनुमान का विषय है। यह स्पष्ट रूप से विदित होता है कि उन्हें यह अपनी माता से नहीं मिला। यह वंशक्रम चित्र[1] नं० १२१ में चित्रित है।

चित्र नं० १२२

अधिरक्तस्राव के पोषण का दूसरा उदाहरण जिससे पित्रागति के लिंग-ग्रथित गुणों की पुष्टि होती है
(स्टेबेल द्वारा, आर० सी० पुनेट के मेण्डेलिज्म से, १९१९, पृष्ठ २०४)



पहला संकेत--स्त्री जो अधिरक्तस्राव से मुक्त अथवा देखने में मुक्त परन्तु जो वाहक का काम कर सकती है
दूसरा संकेत--अधिरक्तस्राव से पूर्ण रूप से मुक्त
तीसरा संकेत--अधिरक्तस्राव वाला पुरुष

[टिप्पणी --

यह कहना सम्भव नहीं है कि विवाह के बाद भी कोई स्त्री अधिरक्तस्राव से, यदि वह कुल में है, मुक्त है, परन्तु यदि मुक्त नहीं तो वह अपने पुत्रों में उसे पारेषण करेगी।]

१. कुछ स्थानों पर पूर्ण सत्यता सन्देहास्पद है क्योंकि हम सदैव इसी विचार में रहे कि जर्मनी के वर्तमान शाही कुल में अधिरक्त स्राव की पित्रागति रानी विक्टोरिया की पुत्री राजकुमारी विक्टोरिया की ओर से नहीं हुई।

हमारे समक्ष उत्परिवर्तनों के आधार पर यह स्पष्ट है चूँकि वे अब भी बराबर हो रहे हैं, (हालाँकि वह साधारण प्रजनन की क्रिया के विपरीत प्रकार है) वे सदा ही बराबर होनेवाले कारक रहे होंगे इसलिए मानव जनसंख्या के गुणों पर थोड़ा या अधिक प्रभाव डालनेवाले कारक की दृष्टि से उनकी अवहेलना नहीं की जा सकती।

उत्परिवर्तनों की उत्पत्ति में क्ष-रश्मियों (X–ray) का प्रभाव

ऐसा विश्वास किया जाता है कि उत्परिवर्तनों की उत्पत्ति में क्ष-रश्मियों का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ सकता है। यदि ऐसा है तब, जैसा कोकेन[1] तथा अन्य लोगों ने बतलाया है, दवाओं में क्ष-रश्मि के प्रयोग का अध्ययन रोचक होगा। यदि इस प्रकार से उत्पादित परिवर्तन अपसारी हैं, तो वे ७०–१०० वर्षों तक प्रकट नहीं होंगे जिससे उस समय तक अच्छे या बुरे परिवर्तन स्वयं ही हो चुके होंगे, इससे पहले कि हमें वंशानुगति पर डाक्टरी में प्रयुक्त क्ष-रश्मि के प्रभाव की कोई चेतावनी मिल सके। हालांकि, आशा देनेवाली बात यह है कि मनुष्य कहाँ तक विकिरण (रेडियेशन) को सहन कर सकता है इसका पता चल गया है, और यह देखा जा चुका है कि वह उससे अधिक है जितना कि साधारण रूप से डाक्टरी इलाज में प्रयोग में लाया जाता है।

पारमाणविक विकिरण तथा उत्परिवर्तन

इस स्थान पर हम इस तथ्य की ओर इंगित कर सकते हैं कि कुछ वैज्ञानिकों का, जिनमें पिल्किंगटन (Pilkington) भी हैं जिनके विचारों का अभी संक्षिप्त वर्णन किया गया है, यह सामान्य मत है कि पारमाणविक विकिरण का प्रभाव उत्परिवर्तनों को उत्पन्न करने के रूप में घातक हो सकता है, जो सदैव अपसारी होते हैं तथा पूर्णतः हानिकारक भी। अन्य लोगों ने, जैसे सर जान कोक्राफ्ट ने इस बात से इनकार किया है कि पारमाणविक बमों से तथा अन्य परीक्षणों से उत्पन्न विकिरण की मात्रा घनत्व की उस सीमा तक पहुँच सकती है जिससे ऐसा प्रभाव पड़ सके।[2]

१. ई० ए० कोकेन (E. A. Cockayne), पूर्वलिखित, पृष्ठ ३४

२. जहाँ पर परमाणु बम का विस्फोट हो, उसके निकट यदि कोई व्यक्ति ४५० रंटजन एकक—विकिरण शक्ति का माप—या इससे अधिक सहन कर ले तो उसकी मृत्यु हो जायगी। लगभग २०० एककों के सहन से मानव में उत्परिवर्तन की प्राकृतिक गति दुगुनी, अथवा तिगुनी हो जायगी—उत्परिवर्तन जो कि स्वयं हानिकारक है। सी० स्टर्न, (C. Stern), पूर्वलिखित, पृष्ठ ४३७-३८ तथा ४५०

हल्डेन ने गणना की है कि यदि किसी परमाणुवम के विस्फोट से ५०००० मनुष्य मर जायँ तथा वचे हुए १० लाख को कुछ नहीं से ४५० रंटजन एकक तक विकिरण प्राप्त हो, जिससे २० रंटजन विकिरण का औसत हो तो यह घातक उत्परिवर्तन के कारण मृत्यु की उत्परिवर्तन-सम्वन्धी गति को वहुत अधिक नहीं वढ़ा देगा।

इससे यह भी देखा जा सकता है कि अणु वम के विस्फोट तथा पारमाणविक कलों से होनेवाले विकिरण के सम्वन्ध में जो वाद-विवाद चल पड़ा है उससे सचमुच एक घवराहट नहीं तो अनावश्यक आशंका अवश्य उत्पन्न हो गयी है। तिस पर भी, इसके पहले कि मनमाने तौर से कोई राय कायम कर ली जाय, काफ़ी सीखने को वाकी है। जो हो, एक तरह से यह भी अच्छा ही है कि अधिक विकिरण से उत्परिवर्तन का भय हमारे मस्तिष्क में वना रहे, वनिस्वत इसके कि उसके प्रभावों की हम लापरवाही से उपेक्षा करते रहें।

अव फिर हम उत्परिवर्तनों तथा उनके होने के प्रश्न की ओर झुकते हैं।

व्यत्यसन एक प्रकार का उत्परिवर्तन है

पित्र्यकों के गुणों में रासायनिक परिवर्तन से तथा पित्र्यसूत्रों के टूटने से होनेवाले व्यत्यसन (क्रासिंग ओवर) से और उनके भाग गलत पित्र्यसूत्रों में जुड़ जाने से तो उत्परिवर्तन होते ही हैं। पर ये अन्य प्रकार से भी हो सकते हैं।

पित्र्यसूत्रों की वृद्धि एक प्रकार का उत्परिवर्तन है

पौधों तथा प्राणियों में कभी-कभी देखा गया है कि साधारणतया एक कोश में दो पित्र्यसूत्र होते हैं और फिर अचानक ये तीन वन जाते हैं।

इस प्रकार से युग्मक (जाइगोट) में, माता-पिता में से एक का दूसरे की अपेक्षा अधिक पित्र्यसूत्रों वाला असन्तुलित कोश (सेल) मिलता है। मनुष्यों में ४९ तक पित्र्यसूत्र मिलते हैं। कभी-कभी यह दशा गलत अर्ध-सूत्रण (Meiosis) के कारण होती है, जव कि कोश क्रमशः २३ तथा २५ पित्र्यसूत्रों में विभक्त हो जाता है। इस दशा में एक साधारण मनुष्य से संग करने में ४९ पित्र्यसूत्रों के युग्मक की ही सम्भावना न मिलेगी वल्कि स्वाभाविक ४८ के वजाय ४७ का ही युग्यक होगा।

इस प्रकार के परिवर्तन के फलस्वरूप वहुधा निषेचित कोश नष्ट हो जाता है परन्तु यदि व्यक्ति जीवित रह जाय तो वह विलकुल असाधारण होगा।

अर्ध-सूत्रण में आकस्मिक घटना से उत्परिवर्तन

अर्ध-सूत्रण के समय पित्र्यसूत्र के टूटने तथा गलत भागों के एक साथ जुड़ने के अति-

रिक्त, जिनका वर्णन पिछले अध्याय में चित्र सहित किया गया है, और भी अनेक आकस्मिक घटनाएँ हो सकती हैं। उदाहरण के लिए अर्धसूत्रण में दो पित्र्यसूत्र जुड़ सकते हैं तथा इस क्रिया में एक का एक भाग टूटकर सदैव के लिए कोष के आसपास के कोषद्रव्य (Cytoplasm) में विलीन हो जाता है। जब यह होता है तब गुथे हुए पित्र्यसूत्रों के जोड़े अपना वास्तविक कार्य करने के लिए, एक दूसरे से फिर अलग होकर साधारण रूप में जोड़ा बनायेंगे, पर इस बार अनियमित प्रकार से जोड़ा बनेगा, क्योंकि जो कुछ हुआ है उसके परिणामस्वरूप पित्र्यसूत्र के जोड़े में अवश्य ही एक अथवा उन दोनों के उस हिस्से की कमी रहेगी जो कि साथ में विशिष्ट पित्र्यक लिये रहता है तथा जो अब पूर्ण रूप से उस नस्ल के लिए नष्ट हो गये।

यदि प्रत्येक पित्र्यसूत्र से थोड़ा-थोड़ा भाग विभिन्न छोरों से टूटता है तब परिणाम यह होगा कि जोड़े का शायद ही कोई हिस्सा एक दूसरे के समान हो।

ऐसा होने पर एक बहुत ही अ-साधारण दशा की उत्पत्ति होगी।[१]

इस तथ्य के आधार पर यह विचार करना चाहिए कि अपने बच्चों को दूध पिलानेवाले प्राणियों, मुख्यतः मनुष्यों में, जिनकी स्थिति संपरीक्षण तथा अन्वेषण के उपयुक्त नहीं है, यह निश्चय करना सम्भव नहीं कि उत्परिवर्तन भिन्नयुग्मिक पित्र्यकों (Allelomorphic genes) की बनावट में परिवर्तन से होते हैं, अथवा, जो कि ऐसे परिवर्तनों के लिए सदैव बतलाया जाता है, यह टूटने तथा उसी तरह के अन्य कारणों से सम्भावित पित्र्यसूत्रसम्बन्धी असामान्यता के इस प्रकार के कारण हैं जैसा कि छोटे जीवों पर आधारित हमारे ज्ञान द्वारा पता चलता है।

मनुष्य के उद्विकास में उत्परिवर्तन

विभिन्न प्रकार के मनुष्यों तथा उनकी जातियों के उद्विकास में उत्परिवर्तन के महत्त्व पर सदैव अधिक जोर दिया जाता है। परन्तु यदि वास्तव में जीववैज्ञानिकों का साधारण अनुभव यही हो कि उत्परिवर्तन अवश्य ही हानिकारक हैं तथा जो उदाहरण हमने दिये हैं वे नियम के अपवाद नहीं है, तब इस तथ्य को इस सिद्धान्त से मिलाना कठिन होगा कि उत्परिवर्तन वास्तव में ही उद्विकास के साधन हैं।

१. सी० स्टर्न के प्रिन्सिपिल्स आफ़ ह्यूमन बायलॉजी, १९५०, पृष्ठ २० म इसका एक चित्र तथा इसके अतिरिक्त टूटने से बननेवाली अन्य व्यवस्थाओं को देखिए।

पिछले एक अध्याय में हमने व्यत्यसन की चर्चा की है तथा इसमें पित्र्यसूत्रों का टूटना[1] देखा है। इनका परिणाम अवश्य ही उत्परिवर्तन है क्योंकि उनके द्वारा नये प्रकार के पित्र्यसूत्रों का जन्म होता ह तथा ऐसे उदाहरणों में नये संयोजनों का निर्माण सम्भव होता है। यह देखना सरल है कि नये प्रकार की जातियों के उद्विकास में इस प्रकार के उत्परिवर्तनों का (यदि वे हानिकारक नहीं हैं तो) क्या भाग होगा। परन्तु इस प्रकार के उत्परिवर्तन (जिनमें कि चमकीले पदार्थ[2] में किसी भी कारण रासायनिक परिवर्तन भी होते हैं) मनुष्य के विकास में कोई आवश्यक तथा वड़ा भाग नहीं ले सकते, यदि ये उत्परिवर्तन सदैव नहीं, परन्तु साधारणतया हानिकारक हों। यह स्पष्ट है कि इस प्रकार के परिवर्तन जो कम कार्य-क्षमता तथा वास्तविक हानिकारक दशाएँ उपस्थित करते हैं, उद्विकास में सहायक नहीं हो सकते।

इसलिए हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि यदि उत्परिवर्तन, चाहे वे पित्र्यकों तथा पित्र्यसूत्रों के चमकीले पदार्थ (रासायनिक) में परिवर्तन के कारण हों अथवा टूटने या अन्य किसी अनिश्चित कारण से हुए हों, आज पूर्णरूप से घातक हैं, जैसा कि साधारण मत है, तो उन्हें उद्विकास के साधनरूप में देखना कठिन प्रतीत होता है।

अधिक आशा केवल उस असामान्य क्रिया से होती है जिससे एक अन्य पित्र्यसूत्र जुड़ जाता है तथा जिसका अधिक प्रभाव प्रकार नदलने में हो सकता है, यदि अपने पित्र्यसूत्रों की वृद्धि के वाद भी वंशशाखा विनष्ट होने से बची रह सके।

उद्विकास के अस्त्र के रूप में उत्परिवर्तन की क्रिया वैसी ही है जैसी कि आज हम पुरापाषाण (Palaeolithic) युग में जाति वनने के काल में देखते हैं, यदि कभी वैसा हुआ होगा जो ऊपर वतलाये हुए सभी तथ्यों के प्रकाश में काफ़ी सन्देहास्पद है।

उत्परिवर्तनों की प्रगति

इसलिए उस प्रकार के उत्परिवर्तनों का जिनसे हम परिचित हैं (मक्खियों अथवा मनुष्यों में उत्परिवर्तन के प्रभावों को देखकर जिनके कुछ उदाहरण भी दिये गये है) तथा जिन सभी को आज हानिकारक वतलाया जाता है, उद्विकास में हाथ था या नहीं, जैसा कि हमने देखा है कि वास्तव में ऐसा होना सम्भव नहीं यदि वह हानिकारक थे, फिर भी आज-कल सम्परीक्षण में उत्परिवर्तनों का बार-बार होना एक बड़े महत्त्व का विषय है!

१. इसके साथ पित्र्यसूत्रों के क्रम की पुनर्व्यवस्था भी समझनी चाहिए।

२. रंजितक, Chromatin

प्रथम तो चूँकि इसका बार-बार होना सहायक उत्परिवर्तनों की प्रगति बतलाने में निर्देशक हो सकता है, उत्परिवर्तनों की हानिकारकता के प्रमाण होने पर भी, हम यह जानते हैं कि प्रारम्भिक पुरापाषाण युग में मनुष्य के जाति-निर्माण के विकास में यह अवश्य ही सम्बद्ध रहे होंगे।

दूसरे इसलिए भी कि समस्त जनसंख्या में प्रकृतिसम्बन्धी दशाओं को बतलाने के लिए हमें उसकी प्रगति तथा उसका प्रभाव जानना चाहिए तथा कहाँ तक वह जनसंख्या घातक उत्परिवर्तनों से उत्पन्न जीव-वैज्ञानिक बनावट के हानिकारक परिवर्तनों को प्राकृतिक चुनाव द्वारा नष्ट करने में सफल हो सकी है।

जैसा कि हमने बतलाया है, अधिरक्तस्राव के उत्परिवर्तन की बारम्बारता के सम्बन्ध में हल्डेन ने हिसाब लगाया है कि लगभग ५० सहस्र पीढ़ियों में एक ऐसा उदाहरण मिलता है।

कोपेनहेगेन के एक चिकित्सालय में एक कान्ड्रोडिस्ट्रोफिक (Condrodystrophic) बौनेपन के साधारण प्रभावी उत्परिवर्तन की प्रगति का अनुमान १२,००० पीढ़ियों में एक बार होने का लगाया गया था।[1]

चूँकि, प्रत्येक व्यक्ति के दो साथी अथवा भिन्नयुग्मिक पित्र्यक होते हैं जिनमें से एक इस प्रकार की दशा उत्पन्न करने में सम्बन्धित होता है, इसका अभिप्राय है कि उत्परिवर्तन २४,००० पित्र्यकों में से एक में हुआ है।

साधारण रूप से यह परिणाम निकाला जा सकता है तथा यह देखा भी जा चुका है कि कान्ड्रोडिस्ट्रोफी, हेमोफीलिया से एनीरीडिया (Haemophilia to aniridia) तक में उत्परिवर्तन की प्रगति की भिन्नता २५ सहस्र से ८० सहस्र पीढ़ियों में एक बार के हिसाब में से मिलती है।[2]

प्राकृतिक चुनाव तथा उत्परिवर्तन की प्रगति में प्राकृतिक सन्तुलन

इस तथ्य की ओर ध्यान देते हुए कि इन असामान्य उत्परिवर्तनों की प्रगति प्राकृतिक रूप से इतनी सन्तुलित है, हम साधारण रूप से कह सकते हैं कि उनके घातक प्रभाव असामान्यताओं के उत्पन्न होते ही उन्हें नष्ट कर देते हैं। इसलिए, उदाहरण स्वरूप

१. सी० स्टर्न, प्रिन्सिपिल्स आफ़ ह्यूमेन जेनेटिक्स, १९५०, पृष्ठ ४०७

२. जे० बी० एस० हल्डेन (J. B. S. Haldane) म्युटेशन इन मैन, प्रोसीडिंग्स, आठवीं इन्टरनेशनल कांग्रेस आफ़ जेनेटिक्स, हेरेडिटास, परिशिष्ट भाग, १९४९, पृष्ठ २६७

अधिरक्तस्राव वाले अधिक लोगों के प्रसवन का कोई मौका नहीं मिल पाता तथा ऐसा दीखता है कि हमारी जनसंख्या को प्रभावित करने के लिए तथा प्रकृतिसम्बन्धी असामान्यताओं द्वारा उसमें कोई विशेष कमी करने के लिए उत्परिवर्तन की प्रगति को काफ़ी आगे बढ़ाने की आवश्यकता पड़ेगी।

उत्परिवर्तन की उत्पत्ति में विभासन की प्रगति

हमारा यह ज्ञान कि क्ष-रश्मि (एक्सरे) से उत्परिवर्तन-सम्बन्धी परिवर्तन हो सकते हैं, जिससे कि क्ष-रश्मि से विभासन के प्रभाव की तथा परमाणु-बमों के संपरीक्षणों के प्रभाव की थाह लगाने में सहायता मिली है, जिसके कारण हम इससे उत्पन्न ख़तरे को समझने लगे हैं तथा उनके सम्परीक्षणों से सम्बन्धित बड़े अधिकारियों द्वारा इसका खण्डन हमें इस नतीजे पर पहुँचाता है कि वर्तमान उत्परिवर्तनसम्बन्धी गति पर प्रभाव डालने के लिए स्वाभाविक विभासन की गति को हजार गुना से भी अधिक बढ़ाना पड़ेगा। इसके सिवा, अधिकतर लोगों का मत इसके विरुद्ध है कि मनुष्य में होनेवाले उत्परिवर्तनों का मुख्य कारण प्राकृतिक विभासन है।

इसलिए यदि वातावरण पारमाणविक धूल से अनावश्यक रूप से बोझिल हो जाता है, जिससे विभासन की गति इतनी बढ़ जाय कि जीवन पर, मुख्यतः मनुष्य के जीवन पर, उसका असर पड़े तो उत्परिवर्तनों सम्बन्धी परिवर्तन प्राचीन समय की अपेक्षा अधिक भिन्न होने की सम्भावना बढ़ सकती है। यह भी हो सकता है कि यदि ऐसी बात कभी हुई तब ये परिवर्तन बहुत हानिकारक ही हो सकते हैं। उस अवस्था में इसकी बहुत कम आशा होगी कि उनके कारण जो व्यक्ति उत्पन्न होंगे वे जीवित रहें अथवा यदि वे जीवित रहने में सफल हुए तो वे जीवन-संग्राम में इतने अयोग्य सिद्ध होंगे जिससे यह माना जा सकता है कि उसका अन्त हो जाना ही अधिक सम्भावित है। अवश्य ही, यदि पूरा-का-पूरा प्रदेश प्रभावित हो जाता है तब जनसंख्या का बड़ा भाग नष्ट हो सकता है। परन्तु स्पष्ट है कि ऐसा करने के लिए विभासन की गति प्राकृतिक गति की अपेक्षा १००० गुना बढ़ानी पड़ेगी।

चूंकि ऐसा सम्भव नहीं है कि पूर्व काल में विकिरण (रेडियेशन) की गति कभी भी इतनी रही होगी, हम उचित रूप से मान सकते हैं कि ज्ञात अथवा सन्देहास्पद कारणों से सदैव ही उत्परिवर्तन की गति २५००० से ८०००० में एक के हिसाब से रही होगी तथा इसी आधार पर मनुष्य में हुए प्रगतिशील परिवर्तनों के सम्बन्ध में अनुमान लगाया जा सकता है।

तिस पर भी हमें इस तथ्य को न भूल जाना चाहिए कि हम केवल अनुमान लगा रहे

हैं कि उस उद्विकास में उत्परिवर्तनों का हाथ था, क्योंकि जैसा कि हमने ज़ोर देकर बतलाया है उत्परिवर्तन, जहाँ तक हमें उनकी जानकारी है, निःसन्देह हानिकारक हैं तथा मानव अथवा जातियों की उन्नति में वे कारणस्वरूप न रहे होंगे। भूतकाल में समय-समय पर कुछ परिवर्तन जीवित पदार्थों की समरूप आकृति में हुए हैं। साथ ही ये सदैव धीरे-धीरे नहीं हुए हैं परन्तु कभी-कभी ऊपर की ओर शीघ्रता से प्रगति हुई है तथा यह मानना उचित है कि ये बड़े रूप में आन्तरिक जननिक परिवर्तनों को सूचित करते हैं, निःसंदेह ही जो उत्परिवर्तनों के समान, जैसा कि हमने अपने निरीक्षणों में देखा है, जननिक रूप से कार्य करते हैं। इस प्रकार के बड़े जननिक परिवर्तन, उत्परिवर्तन हो सकते हैं परन्तु वैसे नहीं जैसे हम उन्हें जानते है तथा जैसे आजकल प्राकृतिक अथवा कृत्रिम रूप से प्रयोगशाला में होते हैं।

इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि यदि उत्परिवर्तन, उद्विकास के लिए कारण समान होते, तब हमें मानना चाहिए कि आजकल पाये जानेवाले स्वाभाविक रूप से हानिकारक उत्परिवर्तनों से भिन्न, भूतकाल में एक नये प्रकार के लाभदायक उत्परिवर्तन हुआ करते थे जो जीवित पदार्थों की जाति या प्रकार बनने के समय सहायक होते थे।

अन्त में, जब कि हम उत्परिवर्तनों के विषय में अपने विचार बदलने को हमेशा तैयार हैं, हम सोचते हैं कि मनुष्य तथा उसकी जातियों के उद्विकास में उनके प्रभावों पर पूर्वकाल की अपेक्षा भविष्य में अधिक पूर्ण रूप से अनुसन्धान करना चाहिए तथा हमारा यह विचार नहीं है कि रासायनिक परिवर्तनों के कारण उत्परिवर्तनों की दोहाई दे देना ही पूर्णतः अभी तक हुए जातियों के विकास के प्रत्येक अगले कदम की व्याख्या है। यह हो सकता है कि व्यत्यसन आदि यंत्रवत कारणों से उत्पन्न उत्परिवर्तनों का होना उस समय बहुत महत्त्वपूर्ण कारक रहा होगा जब कि मानव-समाज का युवाकाल था और मनुष्यों की संख्या कम थी तथा जब प्राकृतिक चुनाव को छोटे एककों की स्थापना को प्रोत्साहन देने का पूर्ण अवसर था, जिनमें जननिक प्रसरण आदि आकस्मिक पृथक्करण द्वारा नये तथा इच्छित पुनःसंयोजन बन गये थे।

तृतीय खण्ड

परिस्थिति तथा भौगोलिक निश्चयवाद के दावे और जुड़वाँ तथा मानव-जनन के अन्य पहलुओं में वंशानुगति के अध्ययन पर आधारित उनके प्रमाण।

तृतीय खण्ड की भूमिका

जननिक नियमों के प्रयोग के प्रकाश में, जिनका वर्णन हम कर चुके हैं, मनुष्य के जातिगत गुणों की व्याख्या करने के पूर्व, परिस्थिति के प्रभाव सम्बन्धी दावों से उत्पन्न समस्याओं को सुलझाना आवश्यक है।

हम पौधों तथा पशुओं में वंशानुगति के प्रभाव का चाहे जितना वर्णन करें तथा मनुष्य में भी वंशानुगति-सम्बन्धी क्रियाओं का स्पष्ट उदाहरण बतलाएं, फिर भी वर्षों पुराना दावा बना रहता है कि जीवित पदार्थों, मुख्यतः मनुष्य पर, बाह्य उद्दीपनों के परिवर्तनकारी प्रभाव भी पड़ते हैं। ये प्रभाव मुख्य रूप से परिस्थिति के होते हैं, हालां कि इस सम्बन्ध में सामाजिक प्रभावों की भी पूर्णरूप से अवहेलना नहीं की जा सकती। फिर भी इस समय हम अपने उद्देश्य के लिए मनुष्य पर पड़नेवाले परिस्थिति के शक्ति-शाली प्रभाव के सम्बन्ध में किये गये मुख्य दावों तक ही अपने को सीमित रखेंगे।

इसलिए, हम सबसे पहले पूर्वकाल से वर्तमान समय तक के परिस्थितिवादियों के दावों के वर्णन से विषय का आरम्भ करेंगे तथा विशेष रूप से इस सम्बन्ध में जातीय जननिक के मूल तथ्यों से उनके दृष्टिकोण कहाँ तक समान तथा असमान हैं, यह देखते हुए भौगोलिक निश्चयवादियों के मतों की व्याख्या करेंगे।

इसके पश्चात् हम परिस्थिति तथा वंशानुगति के सम्पूर्ण विषय की व्याख्या करेंगे जिसमें समान तथा असमान जुड़वों के एवं समान माता या पिता के बच्चों के पारिवारिक इतिहास से प्राप्त सामग्री से इसका क्या सम्बन्ध है, इस पर भी विशेष रूप से विचार किया जायगा।

पंद्रहवाँ अध्याय

परिस्थिति तथा भौगोलिक निश्चयवाद

किसी भी ऐसी रचना में जो कि मानव जातियों की जटिलता के अध्ययन से सम्बन्ध रखती है, एक ऐसे नियम के जानने तथा प्रतिज्ञापन करने की आवश्यकता उत्पन्न होती है कि जातियों की उत्पत्ति क्यों और कैसे हुई। साथ ही ऐसी पुस्तक में एक जातीय समूह से दूसरे की विभिन्नताओं की भी व्याख्या करना आवश्यक होता है।

हमारी पुस्तक जननिक अध्ययन पर आधारित है इसलिए हमारे लिए वंशानुगति पर विचार करना महत्त्वपूर्ण है।

तिसपर भी चूँकि एक ऐसा मत है जो परिस्थिति की परिवर्तनकारी क्षमता के विचार पर आधारित है, इस दृष्टिकोण की माँगों पर विचार करना अच्छा होगा तथा उस प्रमाण की परीक्षा बाद में की जायगी जो कि मुख्यतः उस सामग्री पर आधारित है, जिसकी व्याख्या ऐतिहासिक तथा जातियों सम्बन्धी भूगोल के इन सामान्य निष्कर्षों की अपेक्षा अधिक विस्तार से की जा सकती है। इन निष्कर्षों से उत्पन्न दार्शनिक धारणाओं का खण्डन वैसे ही सामान्य तर्कों से किया जा सकता है।

अत्यन्त प्राचीनकाल से ही परिस्थितिवादी मिलते हैं

यह बतलाना निरर्थक है कि प्राचीनकाल से ही एक ऐसी धारणा थी कि मनुष्यों की विभिन्नता के निर्माण में परिस्थिति का शक्तिशाली हाथ होता है।

हिप्पोक्रेटीज़[1] ने (४२० ई० पूर्व)—अपनी रचना "आन एयर्स, वाटर्स तथा प्लेसेज़" में उत्साहहीन पूर्वनिवासी तथा अधिक शक्तिशाली किन्तु निर्धन पश्चिम-निवासियों की विभिन्नता का कारण भौगोलिक बतलाया है। उसके कथनानुसार पश्चिमी लोग अपनी शोचनीय परिस्थिति के कारण अच्छी दशाओं में स्थित अपने पड़ोसी एशिया-निवासियों की अपेक्षा अधिक कठिन परिश्रम करने को बाध्य हुए। उसने यह

१. Hippocrates

भी कल्पना की कि स्थलविशेष की प्राकृतिक स्थिति के कारण ही ठंडे ऊँचे प्रदेशों में, सूखे निचले प्रदेशों के दुवले, सख्त, साफ़ रंग के मनुष्यों की अपेक्षा, लम्बे, अनुद्दण्ड किन्तु वहादुर मनुष्य होते हैं।

अरस्तू ने (३८४-३२२ ई० पूर्व) अपनी "पालिटिक्स" में लगभग ऐसे ही विचार प्रकट किये हैं। उसके अनुसार यूरोप के ठण्डे प्रदेशों में वहादुर किन्तु साथ ही वौद्धिक एवं प्राविधिक रूप से पिछड़े कमज़ोर लोगों की उत्पत्ति होती है, जो कि इन परिस्थितियों के कारण ही स्वतन्त्रता-प्रेमी तो थे परन्तु राजनीतिक योग्यता न होने के कारण वे अपने पास-पड़ोस के लोगों पर शासन नहीं कर सके। जव कि पूर्व के लोग वुद्धिमान् तथा प्राविधिक रूप से निपुण होते हुए भी निम्न भावना के थे इसलिए दासता तथा अत्याचार से पीड़ित हुए। यूनान के निवासी इन दोनों छोरों के मध्य में होने के कारण दोनों क्षेत्रों की अच्छाई से लाभ उठाने में सफल हुए।

हम पोलीबियस[१] को (२०३-१२१ ई० पूर्व) लिखते पाते हैं कि मनुष्यों में जलवायु से प्रभावित होने की एक अनिवार्य प्रवृत्ति मिलती है तथा मनुष्यों में आकार, रंग और साथ ही आदतों की जो अत्यन्त विभिन्नताएँ दिखलाई देती हैं, वे इन्हीं कारणों से हैं। यह धारणा, जैसा कि हमने अभी वतलाया है, साधारण रूप से अव भी मानी जाती है तथा उष्ण कटिवन्ध में काले लोगों और शीत कटिवन्ध में श्वेत लोगों के सामान्य वितरण से इस मत को स्पष्ट रूप से वल मिलता है जिसकी चर्चा हम वाद में फिर करेंगे।

स्ट्रेबो ने (६३ ई० पूर्व ३६ ई० पश्चात्) अपनी भौगोलिक व्याख्या में ऐसे मतों को स्वीकार किया है क्योंकि उसके अनुसार रोम की उन्नति के लिए इटली (Italy) की वनावट, प्राकृतिक दशा तथा जलवायु उत्तरदायी है।

वाद के १६वीं तथा १७वीं शताव्दी के फ्रान्स के परिस्थितिवादी

वाद के लेखकों में इन्हीं मतों के माननेवाले थे जिनमें से अधिकांश फ्रान्स के थे। १६ वीं शताव्दी के जे० वोदां[२] (J. Bodin) ऐसे ही दर्शनशास्त्रियों में थे। उन्होंने उत्तरी देशान्तर को वहाँ के निवासियों की निर्दयता, क्रूरता तथा पराक्रमशीलता का कारण वतलाया है। इसी तरह उन्होंने अधिक शीतोष्ण देशान्तरों को उत्तरी निवासियों की अपेक्षा वहाँ वालों के अधिक कौशलपूर्ण होने का कारण माना है तथा दक्षिण

१. Polybius

२. Les Six Livres de la Republique, Lib. V. Cap. I.

के देशान्तर में रहनेवालों में कम उत्साह, साथ ही अधिक छल तथा विद्वेष का पाया जाना वहाँ की स्थिति के फलस्वरूप बतलाया है। हालाँकि उनकी प्रशंसा में उन्होंने स्वीकार किया है कि उनमें सत्य तथा असत्य के बीच निर्णय करने की क्षमता होती है।

सत्रहवीं शताब्दी में मान्टेस्क[1] (Montesquicu) का विश्वास था कि उत्तरी भाग के लोगों को मजबूत शरीर के, बहादुर तथा सत्य बोलनेवाले और दक्षिणवालों की तरह छली अथवा शंकास्पद न बनाने के लिए वहाँ का जलवायु उत्तरदायी था। परन्तु उसका विश्वास था कि यदि उत्तर के लोग दक्षिण के शक्तिहीन बना देनेवाले जलवायु में बस जाते तब शीघ्र ही उनकी शक्ति समाप्त हो जाती। इसलिए यह प्रश्न नहीं उठ सकता कि उष्ण कटिबन्ध वाले देशों में सदैव ही स्थिर सभ्यताएँ मिलेंगी। मान्टेस्क के अनुसार अफ्रीका की तरह के बंजर प्रदेश गणतन्त्र की उत्पत्ति करते हैं तथा डोरियन्स जैसे उपजाऊ प्रदेश में राजतंत्र मिलता है। इसी तरह द्वीपसमूहों का भी वहाँ के निवासियों के चरित्रों पर विशेष प्रभाव पड़ता है।

१९ वीं शताब्दी के परिस्थितिवादी

इन लेखकों के पश्चात् हम जर्मनी तथा फ्रान्स के बादवाले लेखकों को देख सकते हैं जिन्होंने अपने विचारों को इन परिस्थितीय आधारों पर विकसित किया है।[2]

इस प्रकार कार्ल रिटर[3] के (१७७९-१८५९) मत ने साधारणतया गम्भीर होते हुए भी इस दृष्टिकोण के विकास में सहायता दी है। उदाहरण के लिए जब वे खुल-कर मत व्यक्त करने लगते थे तो उन्होंने बतलाया कि तुर्की-निवासियों की सँकरी आँखें मरुस्थलीय परिस्थिति के प्रभाव के कारण थीं।

रायटर १८४९ में यह बतलाने में समर्थ हुए कि डच लोगों में कफ़ का मिलना उनकी भौगोलिक दशाओं के कारण था। इसी तरह फ्रेडरिक लेपले[4] (१८००-८२),

१. स्पिरिट आफ् लाज (Spirit of laws), बुक् (Book) XIV, अध्याय २, ४, ५, बुक XVIII, अध्याय १, ५

२. जी० टैथम (G. Tatham) के एनवाइरनमेन्ट एण्ड पासीबिलिज्म इन ज्योग्रेफी इन ट्वेन्टिएथ सेन्चुरी Environment and Possibilism in Geography) ग्रिफ़िथ टेलर द्वारा संकलित, न्यूयार्क तथा लन्दन, १९५३, पृष्ठ १३०

३. Carl Ritter

४. Frederick Leplay

तथा एडमन्ड डेमोलिन्स का कार्य भी उसी दिशा में मिलता है। डेमोलिन्स[1] लिखते हैं कि—

"पृथ्वी के धरातल पर पायी जानेवाली जनसंख्या में वहुत विभिन्नता है। यह विभिन्नता किसने उत्पन्न की है? साधारणतया जो उत्तर दिया जाता है वह है 'जाति' (रेस) ने; परन्तु जाति से कुछ स्पष्ट नहीं होता क्योंकि यह खोजना अव भी वाकी रह जाता है कि जातियों की उत्पत्ति कैसे हुई। मनुष्यों तथा जातियों में विभिन्नता मिलने का प्रथम तथा सवसे निश्चित कारण वह भिन्न मार्ग है जिसे मनुष्यों ने (अपने देशान्तर-गमन के समय) अपनाया। यह मार्ग ही है जिससे अलग-अलग जातियों तथा सामाजिक प्रकार की उत्पत्ति हुई है। पृथ्वी के मार्गों ने, शक्तिशाली धातु के भभके की भाँति, इनमें से निकलनेवाले लोगों को एक ढंग से या दूसरे ढंग से परिणत कर दिया है।"

"यह उपेक्षा का विषय नहीं रहा है कि मनुष्यों ने एक मार्ग अथवा दूसरा मार्ग लिया, जैसे एशिया में घास के मैदानों का मार्ग, या साइवेरिया-टुन्ड्रा का मार्ग अथवा अमेरिका में घास के मैदानों का मार्ग या अफ्रीका में वनों का मार्ग। अलक्ष्य रूप से तथा अनिवार्य रूप से इन मार्गों ने तातार, मंगोल, लैप, एस्क्वीमाक्स, रेडस्किन, भारतीय अथवा नीग्रो प्रकारों का निर्माण किया। इस कथन के विपरीत कुछ नहीं कहा जा सकता। यह देखा जायगा कि यह एक सुप्रतिष्ठित नियम है। यह भी उदासीनता का विषय नहीं है कि मनुष्य अरेविया तथा सहारा के मरुस्थलों के मार्गों से अथवा दक्षिणी तथा पूर्वी एशिया के मार्गों से चले। अलक्ष्य तथा अनिवार्य रूप से इन मार्गों ने अरब निवासी, तथा असीरिया (Assyria) और मिस्री प्रकार को अथवा मीड्स तथा फ़ारस वालों या चीनियों, जापानियों अथवा हिन्दुओं के प्रकार को वनाया है।"[2]

डेमोलिन्स के विचार काफी विस्तार से उद्धृत किये जा सकते हैं जिनमें उन्होंने भौगोलिक परिस्थिति को, मानव के जातिसम्वन्धी विभागों के साथ ही उनकी मानसिक, स्वभावसम्वन्धी तथा मनोवैज्ञानिक विशेषताओं की और अन्त में मानव के सामाजिक संघटन की उत्पत्ति का एकमात्र कारण वतलाया है।

१. Edmond Demolins, Essai de geographie sociale, Comment la route cr' ecletype sociale, 1901-3.

२. जी० टैथम (G. Tatham) से ज्योग्रफ़ी इन दि ट्वेन्टिएथ सेन्चुरी (Geography in the Twentieth Century) में, पूर्वलिखित, पृष्ठ ३९

कुमारी सेम्पल के विचार

डेमोलिन्स के पश्चात् ही ई० सी० सेम्पल[1] उसी निश्चयता के दृष्टिकोण को लेकर आगे बढ़ी हैं, हालाँकि वे उस सीमा तक नहीं गयीं। जैसा कि टैथम ने उनकी सन् १९११ में प्रकाशित रचना "इनफ्लुवेन्सेज़ ऑफ ज्योग्रेफिक एवाइरनमेण्ट" के विषय में कहा है—"हालाँकि मानव-भूवृत्त सिद्धान्तों के कथन के लिए इसकी योजना की गयी पर यह (जैसा कि शीर्षक से स्पष्ट है) एक पुराने विषय की, याने मानव पर प्राकृतिक परिस्थिति के प्रभाव की समीक्षा है। यह पुस्तक इस कल्पना से आरम्भ होती है कि ऐसे प्रभावों का अस्तित्व है जिनसे कुछ सीमा तक वैज्ञानिक पक्षपातहीनता नष्ट हो जाती है।" इस प्रकार वे मनुष्य के विषय में कहती हैं—"पर्वतों पर पृथ्वी ने उसकी टाँगों की मांसपेशियाँ लोहे की बनायी हैं जिससे वह ढालों पर चढ़ सके तथा तटवर्ती प्रदेशों में उसने टाँगों को कमजोर और कोमल बनाया है, परन्तु इसके स्थान पर उनकी छाती तथा बाँहों का अच्छा विकास किया है जिससे वह डाँड़ अथवा पतवार चला सके।"

कुमारी सेम्पल ने अधिकांश भौगोलिक निश्चयवादियों के समान ही मानव की शारीरिक बनावट पर भूगोल के प्रभाव की बात तक ही अपने को सीमित नहीं रखा वरन् यह भी बतलाया है कि उसने मनुष्य के मानसिक तथा मनोविज्ञान सम्बन्धी दृष्टिकोण को भी प्रभावित किया है तथा वास्तव में उसके विभिन्न धर्म भी प्रकृति के प्रभाव के कारण ही हैं। इस प्रकार "बुद्ध भगवान् का जन्म हिमालय की उष्णतापूर्ण तराइयों में हुआ तथा गर्मी और आर्द्रता से उत्पन्न थकावट से संघर्ष करने के बाद उन्होंने अपने स्वर्ग को मोक्ष (या निर्वाण) के रूप में माना है, जहाँ समस्त कार्यों तथा व्यक्ति के जीवन का अन्त हो जाता है।"[2] वे भी उस मत को मानती हैं कि अद्वैतवाद की उत्पत्ति मरुस्थलों में हुई, जैसा कि उन अध्यात्मवादियों ने कहा है जो कि यहूदी धर्म को अन्य की उत्पत्ति बतलाते हैं—"इतिहास का प्रमाण हमें यह दिखलाता है कि एक ऐसा सिद्धान्त भी है कि धर्म की विशिष्ट प्रतिभा मरुस्थल में उत्पन्न होती है।"

देशान्तर तथा जलवायु के प्रभाव पर उनके विचार पूर्ण रूप से परिस्थितिवादी पद्धति पर हैं तथा उनमें पूर्व लेखकों की ध्वनि का आभास मिलता है। इसीलिए हमें उनके निम्नलिखित विचार मिलते हैं—

१. E. C. Semple
२. जी० टैथम से, पूर्वलिखित, पृष्ठ ४१

"यूरोप के उत्तरी निवासी भावुक होने की अपेक्षा उद्योगशील, गम्भीर वृत्ति के एवं विचारशील हैं तथा उत्तेजनावाले होने की अपेक्षा सावधानी से काम करनेवाले हैं। दक्षिण में भूमध्यसागरीय प्रदेश के लोग सरल प्रकृति के, अत्यन्त आवश्यकता के समय छोड़कर अन्य समयों में अदूरदर्शी, प्रसन्न, भावमय तथा कल्पनाशील गुणों के होते हैं और यही गुण विषुवत क्षेत्रीय नीग्रो लोगों में गम्भीर जातीय दोषों में परिणत हो जाते हैं। यदि सुवर्ण रंग के ट्युटन्स जातीय लोग भूमध्यसागरीय भूरी जाति से साफ होकर बने हैं, जैसा कि बहुत से जाति-वैज्ञानिक मानते हैं,, तब स्वभाव की यह विपरीतता जलवायु[1] के कारण ही है!"

वर्तमान निश्चयवादी—

प्रोफेसर एल्सवर्थ हण्टिंगटन तथा ग्रिफ़िथ टेलर

भूगोलवेत्ताओं में से निश्चयवादी मत के माननेवालों में हमारे समय में ग्रिफ़िथ टेलर[2] तथा एल्सवर्थ हण्टिंगटन[3] के नाम[4] उल्लेखनीय हैं।

बहुत कम भूगोलवेत्ता आज इस दर्शन के पक्ष में हैं। इसके भौगोलिक कारणों का निरीक्षण हम बाद में करेंगे। तिस पर भी जो लोग इसके माननेवाले हैं, उन्होंने अपने पूर्व वैज्ञानिकों सहित साधारण विचारों को बहुत प्रभावित किया है जिससे आजकल की सामाजिक दशा तथा राजनीतिक सिद्धान्तों की मुख्य विचार-धाराओं पर पूर्ण अथवा अपूर्ण रूप से उन सिद्धान्तों का प्रभाव पड़ा है जिनमें यह माना गया है कि परिस्थिति प्रभावकारी शक्ति है।

फिर भी ग्रिफ़िथ टेलर की स्थिति में अपने पूर्वजनों की तुलना में कई बातों में परिवर्तन हो गया है। उदाहरण के लिए हम उन्हें यह कल्पना करते हुए पाते हैं कि स्वर्ण रंग के नार्डिक उसी वर्ग से उत्पन्न हुए हैं जिससे मेडिटेरेनियन लोग। ये पिछले लोग इसलिए काले हो गये कि स्वर्ण रंगवाले उस परिस्थिति के अनुकूल नहीं थे "तथा

१. पूर्वलिखित, पृष्ठ ६२०

२. Griffith Taylor ३. Ellsworth Huntington

४. उनके साथ उनके जीववैज्ञानिक साथी, उपार्जित गुणवादी, भी लिये जा सकते हैं, जो कि उसी सिद्धान्त के माननेवालों का, कि प्राप्त किये गये गुणों का वाह्य उद्दीपनों द्वारा पारेषण होता है, एक छोटा समूह है।

प्रागैतिहासिक देशान्तरगमन के कारण सहस्रों वर्षों में नष्ट हो गये।"[1] यह मत वास्तव में शुद्ध परिस्थितिवाद का त्याग ही है, क्योंकि भौगोलिक निश्चयवादी जाति में परिवर्तन होने का यह कारण स्वीकार न करता कि भूगोल ने वंशानुगति से उत्पन्न परन्तु परिस्थिति के प्रतिकूल होने के कारण किसी विशेष प्रकार को प्राकृतिक चुनाव द्वारा नष्ट कर दिया। उसने यह घोषित कर दिया होता कि परिस्थिति ने ही एक नये प्रकार का निर्माण किया।

रुको और जाओ—निश्चयवाद

इसलिए हम कह सकते हैं कि प्रोफेसर ग्रिफ़िथ टेलर ने, जिन्होंने अपने मत को "रुको और जाओ, निश्चयवाद" कहा है, भौगोलिक प्रभाव के विशुद्ध जीववैज्ञानिक पहलू में निश्चयवाद का त्याग कर दिया है। इस विषय के अन्य पहलुओं, विचारों में उन्होंने इसका त्याग नहीं किया, यह दूसरी बात है तथा इनमें वे अब भी निश्चयवादियों के मतों को माननेवाले हैं। हालांकि, यहाँ पर भी, टेथम[2] तर्क करेंगे कि उन्होंने अपने शुद्ध निश्चयवादी दृष्टिकोण में काफी सुधार कर दिया है या उसे त्याग ही दिया है।

जाति-निर्माण के क्षेत्र में स्वर्गीय प्रोफ़ेसर एल्सवर्थ हण्टिगटन के कार्य पूर्ण निश्चयवादी बने रहे हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि शरीर के आकार[3] के विषय में लिखते समय वे कहते हैं—

"किसी दिये हुए समूह के मनुष्यों के शारीरिक आकार तथा कुछ सीमा तक उनके स्वभावसम्बन्धी गुणों की पित्रागति में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में परिवर्तन हो सकता है। इस प्रकार के परिवर्तन नयी परिस्थितियों के कारण हो सकते हैं जैसे कि हवाई (Hawaii) में जापाननिवासियों तथा न्यूयार्क में इटली अथवा रूस के आप्रवासितों में हुआ है।"

आगे चलकर इसकी व्याख्या करने की आवश्यकता पड़ेगी क्योंकि इसका सम्बन्ध

१. ग्रिफ़िथ टेलर, रेशियल ज्योग्रफी इन ट्वेन्टिएथ सेन्चुरी (Racial Geography in Twentieth Century) पृष्ठ ४३८

२. पूर्वलिखित, पृष्ठ १५९

३. मेनस्प्रिंग्स आफ़ सिविलाईजेशन (Mainsprings of Civilization) न्यूयार्क तथा लन्दन, १९४५, पृष्ठ ६३

प्रो० फ्रैन्ज़ बोआस[1] के कथनों से है। ये मानवशास्त्रियों में उपार्जित गुणवाद के जो कि भौगोलिक निश्चयवाद का जीववैज्ञानिक पर्याय है, व्याख्याताओं में से एक हैं।

फिर भी, हण्टिंगटन निश्चयवादियों के स्थान से काफ़ी आगे बढ़ गये हैं तथा यह स्वीकार करते हैं कि संभवतः अपने चुनाव संबंधी प्रभाव से, सामाजिक कारण भी, उतने ही बड़े परिवर्तन कर सकते हैं जितने बड़े उन्होंने परिस्थिति द्वारा बतलाये हैं, क्योंकि ऊपर दिये हुए अवतरण के साथ ही वे कहते हैं —

"भौतिक परिस्थिति में कोई स्पष्ट विभिन्नता न होने पर भी वे हो सकते हैं परन्तु सामाजिक रीतियों में होनेवाले परिवर्तनों के साथ सामंजस्य बनाये रखते हुए, जैसे लड़कियों को अपना पति चुनने की स्वतन्त्रता अथवा किसी नयें विचार का समावेश, जैसे गर्भनिरोध का विचार। इस प्रकार येल (Yalc) के विद्यार्थियों में गर्भरोध की नयी सामाजिक रीति ने तिकोने की अपेक्षा चौकोर आकार के मनुष्यों अथवा उनकी पत्नियों को अधिक प्रभावित किया है। सम्भवतः शारीरिक गठन की विभिन्नता से सम्बन्धित स्वभाव की विभिन्नता के कारण ऐसा हुआ।

इसलिए हम यह प्रश्न कर सकते हैं कि परिस्थितिवादियों के भौगोलिक मत की धीरे-धीरे क्यों इतनी अवनति हो गयी तथा उसकी सीमा क्यों इतनी संकुचित रह गयी कि अभी तक अपने को निश्चयवादी कहलाने वाले लोग या तो जाति के निर्माण में परिस्थिति के परिवर्तनकारी प्रभाव को पूर्ण रूप से अस्वीकार कर दें अथवा यदि वे इस सीमा तक जाने को तैयार न हों तो परिस्थिति के साथ-साथ वैसे ही अन्य शक्तिशाली कारकों का होना स्वीकार करें।

सम्भवतः इस प्रश्न का दोहरा उत्तर है।

प्रथम यह कि उनका घटते जाना उपार्जित गुणवाद के उतार के साथ-साथ चल रहा है, क्योंकि वैज्ञानिक प्रमाणों के प्रकाश में जीव-वैज्ञानिक मतवालों में से उस सिद्धान्त के अनुयायी कम ही मिलते हैं[2]। इसके विषय में हमें कुछ समय बाद काफ़ी कहना है जब कि हम परिस्थिति के प्रभाव से सम्बन्धित जीव-वैज्ञानिक प्रमाण पर आधारित कुछ मुख्य तत्त्वों की चर्चा करेंगे।

दूसरा कारण भूगोल के क्षेत्र में ही मिलता है जहाँ पर सम्भववाद नाम का एक

१. Prof. Franz Boas

२. यह देखना शेष है कि रूस में उपार्जित गुणवाद के पुनरुत्थान के पश्चात् वहाँ पर भौगोलिक निश्चयवाद का, इसी के समान पुनर्विकास होता है या नहीं।

प्रतिद्वन्द्वी सिद्धान्त, जिसको माननेवाले अधिक लोग हैं, उसका स्थान ग्रहण करता जा रहा है ।

सम्भववाद (Possibilism)

स्थूल रूप से सम्भववाद का मत, निश्चयवाद के आवश्यक पहलुओं को छोड़कर अन्य पहलुओं से सम्बन्धित रहा है । हमारी दृष्टि से आवश्यक पहलू वह है जिसका सम्बन्ध मनुष्य के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक कार्यों के विकास पर पड़नेवाले भौगोलिक प्रभाव से है।

इस मत की उत्पत्ति प्राकृतिक विज्ञान की अपेक्षा सीधे इतिहास के क्षेत्र से हुई तथा उस पर मनुष्य की चुनाव की स्वतन्त्रता के सिद्धान्त का काफी प्रभाव पड़ा है।

इस दृष्टिकोण का फारे[1] ने अपनी ज्योग्रेफिकल इन्ट्रोडक्शन टु हिस्ट्री में, वाइडल डेला ब्लाश[2] तथा ब्रुने[3] ने फ्रान्स में और इसाइया बोमैन[4] तथा अन्य ने अमेरिका में समर्थन किया।

इनके सिद्धान्तों ने मनुष्य पर पृथ्वी के प्रभाव की अपेक्षा पृथ्वी पर मनुष्य के प्रभाव पर जोर दिया है।

सम्भववादी दर्शन का मुख्य विचार यह है कि परिस्थिति अनुमोदक है, आज्ञा देनेवाली नहीं।

जिस प्रकार यह प्रतीत होता है कि बाद के निश्चयवादी कभी कभी दो लहजे में बोलते हैं और यह विचार त्याग देते हैं कि मनुष्य तथा उसके समाज के उद्विकास में परिस्थिति का पूर्ण प्रभाव पड़ता है, ठीक उसी प्रकार जब हम सम्भववादियों को बोलते हुए पाते हैं तब उनकी भाषा से स्पष्ट परिस्थितिवादियों का मत प्रकट होता है, जिस प्रकार कि वाइडल डिला ब्लाश **'परिस्थिति के श्रेष्ठ प्रभाव'** के बारे में कहता है तथा ब्रुने भी उसी प्रकार की भाषा का प्रयोग करता है।

ये तथ्य हमारे मस्तिष्क में शंका उत्पन्न कर देते हैं कि सम्भववाद ने जो इतना अधिक निश्चयवाद का स्थान ले लिया है, क्या यह, जैसा कि मानववैज्ञानिक अथवा

१. Febvre.
२. Vidal de la Blache.
३. Brunhes.
४. Isaiah Bowman.

जननिकशास्त्र का ज्ञाता कहेगा, ठीक कारण से हुआ है। कारण, यह स्पष्ट है कि भूगोलवेत्ताओं के कुछ समूहों में साधारणतया भूतकाल में तथा अब भी, कम प्रावैधिक शिक्षा-प्राप्त मनुष्यों के समान, कुछ ऐसी प्रवृत्ति मिलती है कि वे मनुष्यों की वर्तमान विभिन्नता में परिस्थिति का प्रभाव देखते हैं।

जहाँ तक वे ऐसा करते हैं वे जीव-विज्ञान में उपार्जित गुणवाद के माननेवालों के साथी हैं, परिणामतः अब भी भौगोलिक निश्चयवादी बने रहते हैं।

सम्भववादियों ने मुख्यतः दार्शनिक दृष्टिकोण से आलोचना की है और पूछा है कि क्या मनुष्य अपने कार्यों के लिए स्वतन्त्र है? इस प्रकार वे वर्तमान तथा निकट भूतकाल के दर्शनों की साधारण प्रवृत्ति बतलाते हैं, जो कि आर्मीनियावाद (Arminianism) तथा उसके 'स्वतन्त्र इच्छा के सिद्धान्त' से मिलती-जुलती अथवा उससे उत्पादित हुई। निश्चयवादी लोगों के प्रति उनका आक्षेप उसी प्रकार का है, जैसे कि आर्मीनिया निवासियों का कैल्विनवादियों के पूर्वनिर्धारित भाग्य या प्रारब्ध[1] के सिद्धान्तों के प्रति था।

जहाँ तक ऐसा है, वास्तव में इसका अर्थ यह नहीं निकलता, जैसे हम आगे देखेंगे, कि जाति-विज्ञान के प्रमाण की जननिक रूप से व्याख्या सम्भववाद के पक्ष में है। इसलिए हो सकता है कि वंशानुगति के तथ्यों की अधिकांश वैज्ञानिक चाहे कितनी ही व्याख्या करें कि वे परिस्थितिवादियों के इस विश्वास के विरुद्ध हैं कि परिस्थिति में सक्रिय परिवर्तन की शक्ति है, फिर भी इसके विपरीत जातीय जननिक विज्ञान से उत्पन्न दार्शनिक सिद्धान्त भौगोलिक निश्चयवादियों के अधिक समीप हो सकते हैं तथा वे मनुष्य की अपनी स्वतन्त्र इच्छा को कार्यान्वित करने की सम्भावना को सीमित करते दिखलाई पड़ते हैं।

इसकी इससे अधिक व्याख्या करने से हम अपने अनुसन्धान के क्षेत्र से बाहर निकल जायँगे, फिर भी इन तथ्यों की ओर ध्यान आकर्षित करना आवश्यक था, क्योंकि हमारी छानबीन में उनका विशेष महत्त्व है। प्रथम दृष्टि में यह कहा जा सकता है कि चूँकि भौगोलिक निश्चयवादियों का मत इतने स्पष्ट रूप से अवनत हो रहा है इसको निर्णयकारी प्रमाण के रूप में ले सकते हैं कि स्वयं भूगोलवेत्ताओं की श्रेणियों में ही

१. पिछली शताब्दी में काल्विनवाद जितना बदनाम हो गया था, उसे देखते हुए किसी को सम्भववाद जैसे सिद्धान्त की, जो उसके विरोधियों से अधिक मिलता-जुलता है, सफलता पर आश्चर्य नहीं होता।

वंशानुगति की परिवर्तनकारी शक्ति के सिद्धान्त का खण्डन हो गया है, इसलिए उससे मिलते-जुलते उपार्जित गुणवाद की भी थोड़ी सी अवनति दिखलाने के सिवाय उद्विकास में परिस्थिति के प्रभाव की अधिक व्याख्या करने की कोई आवश्यकता नहीं।

चूंकि, ऐसा प्रतीत होता है कि भूगोलवेत्ताओं ने, जो सम्भववादी मन के हैं उन्होंने भी परिस्थिति के सर्जनशील महत्त्व का पूर्ण रूप से त्याग नहीं किया है तथा निश्चयवादियों पर उनकी सफलता में ऐसे दार्शनिक परिणाम मिलते हैं जिन्होंने उस सफलता पर काफ़ी प्रभाव डाला है, इसलिए हम जातिविज्ञान के विकास में परिस्थिति की क्रियाशील शक्ति के प्रश्न को समाप्त कर देने के सम्बन्ध में निश्चयवादियों की हार को स्वीकार नहीं कर सकते।

इसके अतिरिक्त चूंकि निश्चयवादियों के सिद्धान्तों का, इन्हीं दृष्टिकोणों ने जीवन के अनेक क्षेत्रों में प्रचलन है तथा हमारे राजनीतिक और सामाजिक मतों के विकास में इनका काफ़ी प्रभाव है, यह ठीक नहीं प्रतीत होता कि व्याख्या यहीं समाप्त कर दी जाय तथा आगे न ले जायी जाय, जहाँ हम जननिक एवं जाति-विज्ञान[1] के अधिक कड़े तथा आग्रहशील नियमों के अन्तर्गत, जातियों और नये प्रकार के मनुष्यों के निर्माण में परिस्थिति के प्रभाव की परीक्षा कर सकें।

१. जो कि विज्ञान की एक शाखा है जिसे हम जातीयजननिक विज्ञान कहते हैं, जब हम जातिविज्ञान को जननिक विज्ञान के साथ लेते हैं।

सोलहवाँ अध्याय

उपार्जित गुणों की पित्रागति के विरुद्ध प्रमाण

हम निश्चयवादी दर्शन के विकास का क्रम देख चुके जो पूर्व काल से भौगोलिक परिस्थिति के कुछ स्पष्ट कारकों पर आधारित रहा है तथा हमने अभी तक इस समस्या की व्याख्या के लिए मनुष्य तथा अन्य जीवित पदार्थों के जननिक पित्रागति के वर्तमान ज्ञान से निश्चय किये गये तथ्यों का प्रयोग करने का कोई प्रयत्न नहीं किया है। जो कुछ हमने देखा उससे वंशानुगति के ज्ञान के विना मतों की अनिश्चितता स्पष्ट है जहाँ जाति के बनने में निर्माणकारी शक्ति के रूप में भौगोलिक निश्चय के पक्ष अथवा विपक्ष में निश्चित रूप से कहना कठिन है। फिर भी हम यह सुझाव देने का साहस करते हैं कि जब जीव-विज्ञान के तथ्यों को, हम भौगोलिक परिस्थिति के विस्तृत सिद्धान्तों पर आधारित अधिक साधारण ज्ञान के साथ देखते हैं, तब कोई सन्देह नहीं रहता, जैसा कि पाठक स्वयं ही देख सकते हैं, कि भौगोलिक निश्चय की सर्वव्यापक शक्ति पर निरन्तर विश्वास रखने के लिए कोई स्थान नहीं रह जाता, जहाँ तक इसका अभिप्राय है कि जाति का निर्माण भूगोल द्वारा हुआ है।

भौगोलिक निश्चयवाद तथा उपार्जित गुणवाद

भौगोलिक परिस्थितिवादियों द्वारा जो तर्क उपस्थित किये जाते हैं, वास्तव में, वे जीव-विज्ञान के कतिपय क्षेत्रों में उपार्जित गुणवाद (लामार्किज्म) के नाम से काफ़ी समय पहले से प्रचलित थे। यह तथ्य स्वयं महत्त्वपूर्ण है कि यह सिद्धान्त त्याग देना पड़ा है तथा आज अमेरिका तथा रूस में नवोपार्जित गुणवाद (Neo-Lamarkian) के माननेवालों के अतिरिक्त मुश्किल से बहुत थोड़े वैज्ञानिक इसे मानते हैं। इसका कारण यह है, जैसा कि हम किसी अन्य स्थान में बतला चुके हैं, कि अनेक प्रसवनों के सम्परीक्षण के उपरान्त भी उपार्जित **गुणों की पित्रागति** का कोई प्रमाण नहीं मिलता, जब कि अनेकों में, पूर्ण रूप से उसके विपरीत ही मिलता है।

यह सम्भव नहीं है कि प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक के निश्चयवादियों के विचारों को लेकर उनकी समालोचना की जाय। इसलिए, मुख्य रूप से हम अधिक

विस्तृत उदाहरणों की अपेक्षा कम साधारण प्रस्तावनाओं को लेना ठीक समझते हैं, जहाँ पर पित्रागति, परिस्थिति की तुलना में अधिक निर्णायक है।

इसलिए हम भौगोलिक निश्चयवादियों के केवल कुछ मुख्य तथा स्पष्ट दावों या कथनों की समालोचना करने तक ही अपने को सीमित रखेंगे और फिर इनमें तथा आगे के पृष्ठों में वंशानुगति के आवश्यक प्रमाणों की कुछ विस्तार से परीक्षा करेंगे।

जलवायु तथा रंग

इस प्रकार हमने देखा कि ई० पू० दूसरी शताब्दी में पोलीबियस का कथन था कि मनुष्यों में आकार और रंग की विभिन्नता का मुख्य कारण जलवायु है। यदि यह एक पौराणिक मत ही होता तो हम बिना किसी व्याख्या के इसे छोड़ देते। परन्तु, आश्चर्य है कि यह ऐसा मत है जो साधारणतया ग्रहण किया जाता है, मुख्यतः जहाँ रंग का सम्बन्ध है। उदाहरणार्थ किसी प्रदेश के रंग तथा वहाँ के निवासियों की रंग की आवश्यकता में स्पष्ट सम्बन्ध है। इस प्रकार बहुत से लोग भूतकाल में तथा कुछ आजकल भी यह तुरन्त कह उठते हैं कि श्वेत रंग का मनुष्य यदि उष्ण कटिबन्ध में रहता है तो वह अपने ही जीवनकाल में परिस्थिति के अनुकूल बनने के प्रयत्न से गहरे भूरे रंग का हो जाता है। इसके सिवा परिस्थिति का यह प्रभाव हम उस समय भी देखते हैं जब कि अधिक मात्रा में दूध पानेवाले पाठशाला के विद्यार्थी, उन विद्यार्थियों की अपेक्षा कद में अधिक बढ़ जाते हैं जिनको दूध इतना नहीं मिलता। तब यह परिणाम निकाला जाता है कि इन आंकड़ों से परिस्थिति के प्रभाव का व्यावहारिक प्रदर्शन हो जाता है।

फिर भी, यह सब स्पष्ट भ्रम है। धूप से सांवर पड़े हुए रंग वाले मनुष्यों के भी श्वेत त्वचा के बच्चे होते हैं तथा उष्ण कटिबन्ध में एक सहस्र पीढ़ियों के पश्चात् भी यह तथ्य नहीं बदलेगा, जैसा कि जननिक विज्ञान के तथ्यों से, जितना ही उनका अध्ययन किया जाता है, उतना ही यह स्पष्ट हो जाता है।

लेबानान में बेथलेहेम[1] के ड्रूसेज (Druses, निवासियों से तथा भारत के

१. विलहेम सीगलिन (Wilhelm Sieglin) Die blonden Haare der Indogermani schen. Volker des Altertums म्यूनिख, १९३५, पृष्ठ १२६, "इन हिज स्टेप्स" (In his Steps", लन्दन, १९३९, खण्ड १, पृष्ठ १० को भी देखिए—"बेथलेहेम की बहुत-सी स्त्रियों की आँखें नीली तथा आकार यूरोप निवासियों समान है जिससे इस वंश में धर्मयुद्ध में सहायता देनेवालों (क्रूसेडर्स) का मिश्रण प्रकट होता है।"

(अब पाकिस्तान के) उत्तर-पश्चिमी प्रदेश के पठानों में, कुछ में दो सहस्र वर्षों से अधिक होने पर भी, **स्वर्ण केश तथा नीली आँखें पायी जाती हैं।** इसी तरह कुछ सीमा तक जातीय मिश्रण के उपरान्त भी वे मनुष्य तथा जातियाँ जो कि भारत पर काकेशिया (Caucasian) के आक्रमणकारियों से सम्बन्धित हैं, अन्यों की अपेक्षा साफ़ रंग की दिखलाई पड़ती हैं।

यदि परिस्थिति में (इसके सिवाय कि वह प्राकृतिक चुनाव द्वारा अनुपयुक्त तत्त्वों का नाश कर दे) मनुष्यों के प्रकारों में परिवर्तन करने की शक्ति होती तो ये श्वेत तथा अधिक श्वेत मनुष्य बहुकाल पूर्व ही विलीन हो गये होते।

इसके उपरान्त भी परिस्थितिवादियों को इसकी व्याख्या करनी है कि काली जातियाँ, जैसे कि कांगो के नीग्रो, क्यों उसी परिस्थिति में रहती हैं जिसमें कि बोर्नियो (Borneo) के पीले पुनान (Punan) तथा अमेज़न (Amazon) में पीलापन लिये हुए भूरे रंग के निवासी रहते हैं अथवा क्यों एक ही कटिबन्ध में काले फीजी-निवासी तथा श्वेत समोआनिवासी रहते हुए पाये जाते हैं।

परिस्थिति तथा कद

उदाहरणार्थ, देशान्तरगमन में जो कद की वृद्धि दिखलाई पड़ती है वह भूगोल द्वारा जातिगत गुणों में उस तरह मुख्य रूप से परिवर्तन होने का प्रमाण नहीं है जिस तरह भौगोलिक परिस्थितिवादियों तथा उपार्जित गुणवादियों ने माना है।

इस प्रकार से ऊँचाई या कद में वृद्धि का मिलना अच्छी परिस्थितियों के प्रति मनुष्यों के सामूहिक सक्रिय होने का उदाहरण है। परन्तु रहने की दशाओं में ऐसा सुधार होने से कोई मनुष्य अपनी जाति के गुणों की निश्चित सीमा से आगे नहीं बढ़ जायगा।

साधारणतया ब्रिटेन तथा अन्य जगहों के औद्योगिक शहरों में जीवन की दशाएँ ऐसी थीं कि १९वीं शताब्दी में शारीरिक अवस्था में अवनति हुई है, इसलिए औद्योगिक अंग्रेज़ का शारीरिक स्वास्थ्य जैसा होना चाहिए उससे कम मिलता है। परिणामतः, इसमें आश्चर्य नहीं कि उनका ढाँचा उनकी जाति के औसत कद से कम हो। अच्छे पोषण से कद की वृद्धि में तुरन्त प्रभाव पड़ता है, यह इंग्लैण्ड के तथा अन्य देशों के औद्योगिक क्षेत्रों में नवयुवकों की पीढ़ी में देखा जाता है, परन्तु इस प्रकार का सुधार इसीलिए संभव हुआ कि अच्छी परिस्थिति ने उन्हें जाति के औसत कद तक बढ़ने का मौका दिया।

यही परिस्थिति का कार्य है कि वह जाति के विकास को संकुचित अथवा प्रोत्साहित कर सकती है पर वह जाति का **निर्माण** नहीं करती।

कद का वंशानुगत आधार

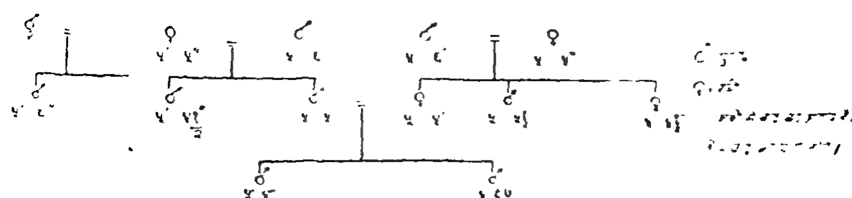
फिर भी साधारण से विशेष की ओर आकर हम सुझाव देते हैं कि निम्न चित्र, जो कि सहस्रों उदाहरणों में एक है, इस विचार का पूर्णतः खण्डन कर देता है कि कद मूल रूप से वंशानुगति पर नहीं, परन्तु परिस्थिति पर आधारित है।[1]

इस चित्र में यह देखा जायगा कि जो कुल या परिवार लम्बे मनुष्यों से प्रारम्भ हुए उनमें लम्बे पुरुष तथा स्त्रियों का प्रसवन होता रहा, जब कि उन कुलों में बिलकुल विपरीत मिलता है जिनका प्रारम्भ छोटे मनुष्यों से हुआ।

लम्बे मनुष्योंवाले कुल में केवल एक छोटे कद का है तथा काफ़ी सम्भव है कि वह खराब पोषण अथवा बाल्यावस्था में बीमारी के कारण हो।

बहुधा विपरीत दशाओं के कारण लोग अपने स्वाभाविक कद से छोटे होते हैं जैसा कि औद्योगिक क्षेत्र के अंग्रेज़ों में होता है जिनकी चर्चा हम अभी कर चुके हैं।

चित्र नं० १२३
छोटे कद का वंशानुगत आधार



टिप्पणी—५' ६' से कम ऊँचाई के पूर्वजों के वंशजों में कोई एक भी उस कद तक भी नहीं पहुँचता। इस चित्र की अगले चित्र की लम्बे समूहवालों की सन्तति से तुलना कीजिए।

परिस्थिति से प्रभावित बौनों का ढांचा

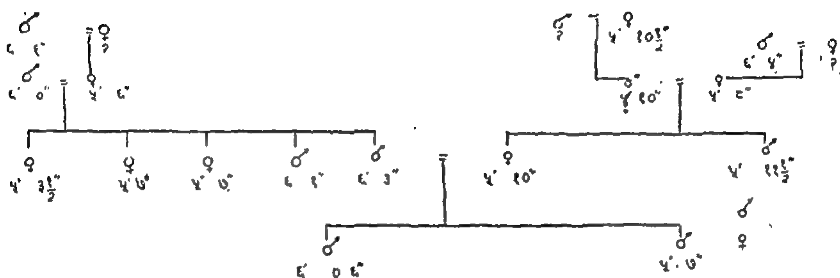
इस प्रकार के रुद्ध विकास का अन्य उदाहरण बहुत सी बौनी वन्य जातियों में मिलता है, जो वास्तव में जितना छोटा होना चाहिए उससे, खराब परिस्थितीय दशाओं के कारण, अधिक छोटी हैं। टोर्डे[2] ने खोज की कि कसाई नदी के बांटो बटवा बौने, जो वनों को दो पीढ़ी पूर्व ही त्याग कर कृषक हो गये थे, साधारण बौनों से लम्बे थे।

१. पापनो तथा जानसन (Popinoe and Johnson), इयूजेनिक्स, पृष्ठ १४, ए० एस० २. Torday.

यहाँ तक परिस्थिति के परिवर्तन से उनके कद में सुधार हुआ है। तिस पर भी वे अपने पड़ोसी वशुंगो लोगों के समान नहीं थे जो लम्बी जातीय सन्तति में थे।

चित्र नं० १२४

लम्बे कद का वंशानुगत आधार



पुरुष तथा स्त्री के सूचक संकेत वही हैं जो चित्र नं० १२३ की दाहिनी ओर दिये हैं।

अंकों से कद का आशय है
? कद का पता नहीं

टिप्पणी—इस वंश में सबसे छोटा पुरुष पिछले चित्र के सबसे बड़े से बड़ा है। एक छोटी स्त्री का (५" ३ १।२") बालावस्था में बीमारी के कारण अवरुद्ध विकास हुआ है।

किसी भी जीव-वैज्ञानिक को, जब तक कि वह उपार्जित-गुणवादी (लामार्कियन) न हो, पिटर्ड[1] के इस कथन से सहमत होने में कोई कठिनाई नहीं होगी—

"हमें यह विश्वास दिलाना व्यर्थ है कि मूल रूप से जो जातियाँ छोटे कद की थीं, उनसे लम्बी जातिवालों का निर्माण हुआ है—जब तक कि अचानक कोई उत्परिवर्तन न हुआ हो। ऊँचाई को यदि शरीर की बनावट के गुणों के औसत स्वरूप देखा जाय तो वह वंशानुगति के कारण[2] है।"

१. यूजीन पिटर्ड (Eugene Pittard), पूर्वलिखित, पृष्ठ ३७

२. यह महत्त्वपूर्ण है कि कुक्कुटों का बौनापन जो छोटी जाति की उत्पत्ति करता है, वंशानुगति के कारण है।

वंशानुगति तथा दीर्घायु

यह न केवल कपाल के आकार, त्वचा के रंग तथा कद तक के सम्बन्ध में ही सत्य है परन्तु यह दिखलाया जा सकता है कि परिस्थिति नहीं बल्कि वंशानुगति ही अन्य विभिन्न लक्षणों के लिए अधिक महत्त्वपूर्ण है, यों देखने में चाहे उनका सम्बन्ध वंशानुगति की अपेक्षा हमारे पास की परिस्थितियों से अधिक जान पड़े।

उदाहरणार्थ, सांख्यिकीय जाँचों से पता चलता है कि यद्यपि परिस्थिति भी महत्त्वपूर्ण है, फिर भी यह जानने के लिए कि हम में से प्रत्येक कितने वर्षों जीवित रहेगा, वंशानुगति अधिक प्रभावकारी है।

पोपनो तथा जानसन[1] आँकड़े देकर बतलाते हैं कि बालमृत्यु का औसत उन वंशों में राष्ट्रीय औसत से कम है जिनमें दीर्घायु होने की वंशानुगत प्रवृत्ति मिलती है। वे उन उदाहरणों के विषय में जिनको उन्होंने उद्धृत किया है, बतलाते हैं—

"इस जनसंख्या में जिसमें कि असाधारण रीति से बालमृत्यु की गति कम मिलती है, ऐसा नहीं है कि उसे बच्चों के बचाव के आन्दोलन की सहायता मिली हो अथवा उसे वर्तमान वैज्ञानिक ज्ञान की सहायता ही मिली हो। उसकी मातायें अधिकांशतः निर्धन ही थीं, उनमें से बहुत सी अज्ञान तथा बहुधा कठिनाई में ही रहीं, वे किसान तथा कार्यकर्त्री थीं। उनके बच्चे बिना किसी डाक्टर, बिना शुद्ध दूध, बिना बर्फ़ के, बिना किसी सफ़ाई के तथा बहुधा साधारण भोजन ही पर रहे हैं। परन्तु उनको एक लाभ था जो किसी भी मात्रा में प्रयोगात्मक विज्ञान उन्हें नहीं दे सकता और वह था अच्छी वंशानुगति का।"

उन्हें वंशानुगति से असाधारण रूप में अच्छी शारीरिक गठन मिलती थी।[2] बहुत से उदाहरणों में यह भी बतलाया गया है कि पाठशालाओं के बालक यदि चश्मा लगाते

१. पूर्वलिखित, पृष्ठ ४०७

२. एच० एच० हिब्स (H. H. Hibbs) का यह मत (इनफ़ैन्ट मार्टेलिटी Infant Mortality न्यूयार्क, १९१६) कि औद्योगिक केन्द्रों में बच्चों की अधिक मृत्यु अपूर्ण साधनों तथा खराब निवासस्थान के कारण होती है, पूर्ण रूप से तथ्यों द्वारा ठीक नहीं उतरता—हालाँ कि अवश्य ही स्वाभाविक रूप से ये कारण भी बच्चों की मृत्यु के कारण हैं, परन्तु यदि ये कारण गौण कोटि के नहीं तो वंशानुगति पर आधारित कारणों के अतिरिक्त ही माने जा सकते हैं। जैसा कि पोपनो तथा जानसन ने पूर्व लिखित पृष्ठ ४११, में बतलाया है—

हैं तो अपने माता-पिताओं के ही कारण।[1] इस सम्बन्ध में कार्ल पियर्सन (Karl Pearson) के कार्यों से भी वही परिणाम निकलते हैं।

वंशानुगति तथा मानसिक गुण

मानसिक गुणों में भी ऐसा प्रतीत होता है कि परिस्थिति नहीं, परन्तु वंशानुगति अधिक प्रभावशाली शक्ति है। कुमारी पेरिन[2] (Miss Perrin) ने डिक्शनरी आफ् नेशनल बायोग्राफ़ी तथा हूज़ हू में १५५० जोड़े पिताओं तथा पुत्रों पर अनुसन्धान किया है। उसने देखा कि. . .अनिश्चयता का गुणांक पिता तथा पुत्र के व्यवसाय में, प्रथम समूह में ·७६ तथा बाद वाले में ·७५ है। हम जानते हैं कि यदि सांख्यिकीय ढंग से बतलाया जाय तो पित्रागति का गुणांक लगभग ·५ होगा। परिणामतः हम शुद्ध तथ्यों के तर्क से ही इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि मनुष्य के व्यवसाय की पसन्द दो-तिहाई वंशानुगत झुकाव पर तथा एक-तिहाई परिस्थितीय दशाओं पर निर्भर होती है।

ये आँकड़े भारत ऐसे देश के लिए विशेष महत्त्व के हैं जहाँ का सामाजिक संघटन वर्णव्यवस्था पर आधारित है। हम देखेंगे कि नैतिक आधार पर हम चाहे जितना इस प्रथा को बुरा कहें, जिससे मनुष्य अपने पिता के व्यवसाय के लिए ही प्रेरित होता है,

"शाही तथा उनके शाही सम्बन्धियों के रहने का स्तर नीचा नहीं है परन्तु फिर भी उनमें बच्चों की मृत्यु की गति बहुत अधिक है—यह, जहाँ पर माता या पिता की मृत्यु युवावस्था में हो गयी हो, वहाँ पर १००० में ४०० के लगभग है।"

कार्ल पियर्सन, ई० सी० स्नो, तथा ईथेल, एम० एल्डरटन (Karl Pearson, E. C. Snow and Ethel M. Elderton) के कार्य यह बतलाने में सफल हुए हैं कि जहाँ पर राष्ट्र का काफ़ी धन खर्च करके बालमृत्यु को कम किया गया है वहाँ पर जो बच्चे प्रथम कुछ वर्षों में मृत्यु से बचा लिये जाते हैं, बाद के वर्षों में वे मृत्यु के शिकार होते हैं। क्योंकि उनमें साधारण परिस्थिति में भली भाँति जीवित रहने की शक्ति नहीं रहती।

१. पोपनो तथा जानसन, पूर्वलिखित, पृष्ठ १३–१४।

जहाँ तक वंशानुगत आँख की खराबी का सम्बन्ध है, यह सम्भव है कि वह केवल एक एकक कारक मान ली जाय तथा उसे साधारण नेत्रज्योति के ऊपर प्रभावी समझना चाहिए।

२. बायोमेट्रिका (Biometrika) III, १९०४, पृष्ठ ४६७

तिस पर भी बात यह है कि यदि उसे स्वतन्त्र चुनाव का अवसर मिलता तो अधिकतर उदाहरणों में वह उसी को पसन्द करता।

वंशानुगति तथा मानसिक अस्वस्थता

यदि हम मानसिक अस्वस्थता पर ध्यान दें तो देखेंगे कि वंशानुगति एक प्रभाव-शाली शक्ति है।

साइज़ोफ़्रेनिया[1] एक साधारण मानसिक बीमारी है तथा यह १०० में एक मनुष्य में देखी गयी है। इसको कभी कभी डेमेन्शिया प्रेकाक्स[2] कहते हैं। यह पागलपन का प्रारम्भिक रूप है और साधारणतः २० से ३०-३५ वर्ष तक की उम्र में मिलता है। इसकी विशेषता रोगी का विभाजित व्यक्तित्व है जिसके कारण, बढ़ी हुई हालतों में, मनुष्य को पागलखाने तक में रखना पड़ता है। लक्जेमबर्गर[3] तथा वान वर्मुअर[4] के कार्यों से पता चलता है कि सम्बन्धियों से रहित मनुष्यों में साइजोफ़्रेनिया होने की सम्भावना ·८५ प्रतिशत तथा सम्बन्धियों युक्त व्यक्तियों में साइज़ोफ़्रेनिया से मिलते-जुलते मानसिक लक्षणों में २·९ प्रतिशत मिलती है, परन्तु पीड़ितों के ५००० भाइयों के अध्ययन में यह संख्या १०·८ प्रतिशत तथा ९·७ प्रतिशत मिलती है और पीड़ितों के १५९५ बच्चों में संख्या और भी अधिक हो जाती है जो क्रमशः १६·४ प्रतिशत तथा ३८·६ प्रतिशत मिलती है।

सम्बन्ध में दूरी होने के साथ साथ इस प्रतिशतता में बराबर कमी होते जाना महत्त्व-पूर्ण है, क्योंकि पोते ३ प्रतिशत तथा १३·८ प्रतिशत, चचेरे भाईबहन १·८ तथा १०·२ प्रतिशत, भतीजे-भतीजियाँ १·८ तथा ५·१ प्रतिशत और भतीज-पोते, भतीज-पोतियाँ १·६ प्रतिशत तथा १·९ प्रतिशत थे।[5] शिथिलता लानेवाला पागलपन १०० में से एक में होता है तथा जहाँ तक देखा जा सकता है, इसका बनावटसम्बन्धी आधार है जो सम्भवतः पित्रागति में किसी प्रभावी पित्र्यक के[6] कारण है।

१. Schizophrenia

२. Dementia praecox

३. Fortschrift. Erbpathol. १९३७, भाग १

४. Erbpathologie, Steinkopff १९३७

५. कुछ ने यह परिणाम निकाला है कि साइज़ोफ़्रेनिया केवल एक अप्रभावी पित्र्यक के कारण है।

६. सी० स्टर्न (C. Stern) पूर्वलिखित, पृ० ४८९

अभी तक हमने जिन प्रमाणों को देखा—उनसे स्पष्ट होता है कि वंशानुगति की शक्ति काफी प्रभावशाली है, जब कि उसकी परीक्षा ऐसे प्रमाणों के प्रकाश में की जाती है, जिनका ठीक ठीक विश्लेषण किया जा सके। इसलिए यदि हेरन[1] अपनी पुस्तक "दि इन्फ़्लुयेन्स आफ़ अनफेवेरबुल होम एनवाइरनमेन्ट एण्ड डिफ़ेक्टिव फिज़ीक ऑन दि इन्टेलिजेन्स ऑफ स्कूल चिल्ड्रेन" में मानसिक स्थिति, योग्यता तथा पोषण में दाँतों की दशा, स्वच्छता इत्यादि में कोई सम्बन्ध न पा सके तो कोई आश्चर्य नहीं है।

उपार्जित गुणों के पारेषण का कोई प्रमाण नहीं

यह सिद्ध करने के लिए कि परिस्थितीय दशाओं से उपार्जित गुणों की पित्रागति होती है, इस समस्या को उस दृष्टिकोण से देखा जाता है कि अच्छे गुण प्राप्त किये जाते हैं इसलिए उनका पारेषण होता है, तथा दूसरी पीढ़ी में इस प्रकार से सुधार हो जाता है और वह उद्‌विकास के मार्ग में आगे पहुँचा दी जाती है। यह मत लेमार्क का तथा उनके अनुयायियों का है।

इस मत के माननेवाले शायद ही कभी इस बात पर ध्यान देते हैं कि यदि यह ठीक होता तो इसके विपरीत भी ठीक हो सकता था। इस प्रकार प्रथम महायुद्ध में फ़ौजों की गर्जनावाली बीमारियाँ सैनिकों के बच्चों में पारेषित हो जातीं। इसी तरह अन्य दोष तथा बुराइयाँ जो मनुष्य ग्रहण कर लेता है, जिनमें प्रतिकूल आर्थिक दशाओं के परिणाम भी शामिल हैं, बाद की सन्ततियों में फैल जातीं, किन्तु जैसा कि हमें साधारण निरीक्षण से मालूम है, बात ऐसी नहीं है।

अधिकांश अमेरिकानिवासियों के पूर्वज अमेरिका में निर्धन आप्रवासितों की भाँति आये परन्तु उनकी सन्ततियों में कोई चिह्न ऐसा नहीं मिलता जिससे यह सिद्ध हो कि उनमें उनके पितामहों, प्रपितामहों तथा अगणित पूर्वजों की निर्धनता के फल-स्वरूप, जो यूरोप के गाँवों तथा शहरों की कठिन स्थितियों को छोड़कर वहाँ गये थे, कोई अयोग्यता है।

जनसंख्या के इतने बड़े अनुपात में उन निर्धन आप्रवासितों से उत्पन्न होने का एक ही प्रभाव उन गुणों पर पड़ता है जो उस कृषकवर्ग की वास्तविक प्रकृति को प्रति-

१. डेविड हेरन (David Heren) "दि इन्फ़्लुयेन्स आफ़ अनफ़ेवरेबुल होम एनवाइरनमेंट एण्ड डिफ़ेक्टिव फिजीक आन दि इन्टेलिजेन्स आफ़ स्कूल चिल्ड्रेन" युजीनिक्स लेबोरेटरी, लन्दन, मेमोरियल सिरीज, नं० ८ (VIII)

फलित करते हैं जिससे वे आये हैं।[1] यह प्रभाव उनकी सांस्कृतिक पित्रागति की निर्धनता (कमी) में भी देख पड़ता है, जिससे अंशतः इस बात का भी पता चल जाता है कि उनके समाज के अधिकतर लोगों में क्योंकर वह प्रवृत्ति पायी जाती है जिसे हम शीघ्रातिशीघ्र धनी बन जाने की प्रवृत्ति कह सकते हैं। परन्तु इसका कारण यह नहीं है कि अमेरिका की धरती से ये गुण उपार्जित किये गये हैं या अमेरिका की परिस्थिति ने ही वहाँ के मनुष्यों की मानसिक तथा स्वभावसम्बन्धी प्रक्रियाओं को बदल दिया है। यह बिलकुल सांस्कृतिक या कहिए कि संस्कृति के अभाव की पित्रागति है और भौतिक, मानसिक तथा स्वभावसम्बन्धी पित्रागति से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

जैसा कि शीनफ़ेल्ड ने विश्वस्ततापूर्वक बतलाया है, "एक ऐसी स्त्री से उत्पन्न बच्चे जो कि अपनी बाल्यावस्था में सुन्दर रही हो, परन्तु किसी घटना, कठिनाई आदि के कारण जिसने अपनी सुन्दरता खो दी हो, लेश भर भी उनसे भिन्न नही होंगे, जैसे वे तब होते जब वह चित्रजगत की रानी बन जाती।"[2] उपार्जित गुणों की पित्रागति (इनहेरिटेन्स) के विरुद्ध किये गये प्रमाणों के साथ हम इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए कह सकते है कि चीननिवासी अपने बच्चो के पैर हजारों वर्षों से बाँधते रहे हैं पर वे उत्पत्ति के समय अब भी कुरूप नही होते; इसी प्रकार यहूदियों में लगभग ३००० से ४००० वर्षो से खतना होता आया है परन्तु अब भी उनके बच्चे बिना खतना के ही उत्पन्न होते हैं। मुसलमानो के यहाँ भी यह रिवाज काफी लम्बे समय से चला आ रहा है, हालाँ कि इतने समय से नही जितना कि यहूदियो के यहाँ। सारे संसार की जगली जातियाँ अगणित पीढियो में लाखो वर्षों से आकृति तथा अंगसम्बन्धी अंग के काटने का रिवाज अपनाती आयी है परन्तु इन प्रथाओ ने पित्रागति पर किसी प्रकार का भी प्रभाव नहीं डाला है।

जैसा कि काफी समय पूर्व वीज़मैन (Weisman) ने दिखला दिया है—जब उसने कई पीढ़ियों तक चूहों की पूँछ काटी, तब भी कोई चूहा बिना दुम के नहीं उत्पन्न

१. इस प्रकार से मध्य तथा पूर्वी मध्य यूरोप के किसानों की प्रसन्न तथा दिखावे की प्रकृति एक प्रधान विशेषता है जो कि अंशतः अमेरिका की जनता के दिखावेपन तथा बहिर्मुखी गुणों की व्याख्या करती है।

२. अमराम शीनफेल्ड (Amram Scheinfeld) दि न्यू यू एण्ड हेरेडिटी. चैटो एण्ड विण्डस (The New You and Heredity, Chatto and Windus) लन्दन, १९५२, पृष्ठ १८

हुआ, कोई ऐसी विधि नहीं है जिससे कि यदि मनुष्य अथवा प्रकृति द्वारा शरीर के जीवित या बाह्यांग पर कोई काररवाई की जाय तो वह किसी भी प्रकार से प्रजनन सम्बन्धी गुणों को बदल सके।

यदि ऐसा सोचा जाता है कि जितने तर्क अभी तक हमने साधारण जाति-विज्ञान तथा जननिक विचारों की दृष्टि से दिये हैं वे भौगोलिक परिस्थिति के उद्भवसम्बन्धी प्रभावों को अस्वीकार करने के लिए अपर्याप्त हैं जो कि उपार्जित गुणों के पारेषण के सिद्धान्त द्वारा कार्य करते हैं, तब इनका जुड़वों के अधिक विस्तृत अध्ययन के साथ विचार करना चाहिए।

अवश्य ही मनुष्य के उद्विकास में भूगोल के प्रभाव के लिए स्थान है। इसकी व्याख्या हम आगे करेंगे। वास्तव में भौगोलिक प्रभाव का महत्त्वपूर्ण स्थान है परन्तु वह सर्जनात्मक रूप से कार्य नहीं करता, जो स्वयं मनुष्य की बनावट में परिवर्तन करता हो और वही वंशानुगति द्वारा पारेषित हो जाता हो।

सत्रहवाँ अध्याय

जुड़वों के अध्ययन से वंशानुगति के महत्त्व के और अधिक प्रमाण

अब यदि हम उन प्रमाणों की ओर जायँ जो कि जुड़वों के अध्ययन से मिलते हैं तथा जिन पर अब बहुत सा साहित्य उपलब्ध है, तो हम देखेंगे कि जिन परिणामों पर हम पहुँचे हैं उनसे ये काफ़ी हद तक मेल खाते हैं।

परिस्थिति तथा एकरूपधारी जुड़वे

वास्तव में यह कहना निरापद होगा कि यदि जातियों के विकास में परिस्थिति के प्रभावों को सम्पूर्ण रूप से नहीं तो मुख्य कारण के रूप में लिये गये तर्क की असफलता दिखलाने की अभी और आवश्यकता हो, तो यह चार्ल्स डार्विन के चचेरे भाई तथा सुजनन विज्ञान के प्रवर्तक गाल्टन (Galton) और उनके अनुयायियों द्वारा किये गये जुड़वों के अध्ययन में मिलता है।

गाल्टन ने यह तर्क किया है कि यदि परिस्थिति का प्रभाव तथा जीवन अनुभव सचेतन की प्रकृति परिवर्तित कर सकता है तो यह समान जुड़वों के उदाहरण में प्रदर्शित किया जा सकता था।

इस प्रकार के जुड़वाँ (यमल) एक ही अण्डाणु से उत्पन्न होते हैं तथा यदि ये विभिन्न दशाओं में पाले जाते हैं तब इन दोनों व्यक्तियों में जो कि प्रारम्भ में प्रकृति की दृष्टि से समान हैं, अलग अलग परिस्थिति के अनुभव के अनुसार एक दूसरे से भिन्नता हो सकती है। दूसरी ओर साधारण जुड़वाँ जो कि विभिन्न अण्डाणु से उत्पन्न हैं यदि एक ही परिस्थिति में पाले जायें तो उन्हें एक दूसरे के समान हो जाना चाहिए।

गाल्टन ने लगभग ८० जोड़े समान जुड़वों के इतिहास का संग्रह किया, जिनमें से ३५ के बारे में एक एक ब्यौरा प्रामाणिक आधार पर रखा गया, जिनसे विदित हुआ कि बच्चे बचपन में बिल्कुल समान थे। पृथक्करण के पश्चात् देखा गया कि वे अन्तिम समय तक निश्चित रूप से अपरिवर्तित रहे।

जब कि साधारण जुड़वों में एक दूसरे से उतनी ही विभिन्नता पायी जाती थी जितनी कि समान जुड़वों में समानता मिलती थी।

एच० एच० न्युमैन (H. H. Newman), एफ० एन० फ्रीमैन (F. N. Freeman) तथा के० जे० होलज़ंगर[1] (K. J. Holzunger) ने जो कार्य किये हैं वे महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि उन्होंने यह बतलाया है कि जब समान जुड़वाँ साथ साथ तथा अलग अलग पाले गये तो वज़न के अतिरिक्त बहुत ही कम महत्त्वपूर्ण औसत विभिन्नता—ऊँचाई, वजन तथा सिर की लम्बाई-चौड़ाई के विषय में—मिली, जहाँ पर अंक वैसे ही थे जैसे नं० ३ तालिका में दिये गये हैं।

वज़न की विभिन्नता कोई महत्त्वपूर्ण नहीं है क्योंकि वज़न ऐसी वस्तु है जिस पर पोषणसम्बन्धी दशाओं का बहुत शीघ्र प्रभाव पड़ता है तथा यह विभिन्नता असम्भावित नहीं है।

जब ये परस्पर सम्बन्धित गुणांकों (को एफीशेण्टस्) में परिणत किये जाते हैं तो परिणाम कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि जितना कि प्रथम दृष्टि में पता चलता है, परिस्थिति का उससे कहीं कम प्रभाव पड़ता है, जैसा कि साथ में दी हुई तालिका नं० ४ में तुलना से विदित होता है।

समानता के गुणांकों का प्रमाण

पित्रागति नियम (मेण्डेलियन लॉ) के अनुसार बच्चे पूर्ण रूप में अपने माता-पिता के आकार में प्रजनित नहीं होते, हालाँ कि उनके समस्त गुण वंशानुगत होते हैं तथा पूर्वजों के प्रकारों से आते हैं। परिणामतः जब हम इस समानता अथवा सादृश्य के (जिसको हमने अभी व्यवसाय के पसन्द करने में वंशानुगत झुकाव के सम्बन्ध में बतलाया है) गुणांक को सांख्यिकीय रूप में प्रदर्शित करते हैं, तब यह आशा नहीं की जा सकती कि यदि ० किसी समानता को नहीं तथा १ पूर्ण समानता को प्रदर्शित करता है तब बच्चे ठीक अपने माता-पिता के समान नं० १ में प्रजनित होंगे।

भाइयों की समानता के गुणांक में ठीक यही सत्य है।

१. ट्विन्स (Twins), ए स्टडी आफ़ हेरिडिटी एण्ड एनवाइरनमेन्ट (A study of Heredity and Environment), यूनिवर्सिटी आफ़ शिकागो प्रेस (University of Chicago Press), १९३७.

हम देखते हैं कि पित्रागति तथा भाइयों में समानता का गुणांक (कोएफीशेंट) सब ˙५ तथा ˙६ के पास मिलता है। इस प्रकार से भाइयों तथा वहनों में आँखों के रंग की समानता ˙५२, कद की ˙५१, कापालिक देशना की (जिसमें सिर की लम्बाई तथा चौड़ाई का अनुपात है) ˙४९ तथा केशों के रंग की ˙५९ है।

यह सब परिस्थिति की तुलना में वंशानुगति का अधिक महत्त्व सिद्ध करने में सहायक होते हैं क्योंकि उनसे विदित होता है कि साधारणतया, कम से कम ˙५ से अधिक दिखलाई देनेवाला साम्य, वंशानुगति से सम्वन्धित मिलता है तथा शेष के लिए हमारी जननिक विद्या काफ़ी अंशों तक वतलाने में सहायक होगी। परिणामतः परिस्थिति के आँकड़े, यदि वास्तव में उनका अस्तित्व है अथवा वह जो कुछ भी है, ˙५ से वहुत कम होना चाहिए जव कि जातीय अंक उससे काफ़ी अधिक है।

वंशानुगति तथा जुड़वों में शरीरसम्बन्धी गुण

अन्य वच्चों की अपेक्षा समान जुड़वों में परिस्थिति तथा वंशानुगति के प्रभाव पर जो अनुसन्धान हुए हैं, इनको केवल शारीरिक गुणों तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए, जिनके वारे में अभी हमने वतलाया है।

इस प्रकार से रक्त-दवाव (याने *Blood Pressure*) तथा नाड़ी की गति के सम्वन्ध में यह देखा गया है कि समान जुड़वों में ऐसी दशाओं में क्रमशः ६३ प्रतिशत तथा ५६ प्रतिशत की समानता मिलती है, जवकि असमान जुड़वों में यह क्रमशः ३६ प्रतिशत तथा ३४ प्रतिशत मिलती है।[1]

वंशानुगति का प्रभाव स्पष्ट है। प्रथम मासिक धर्म दूसरा महत्त्वपूर्ण शरीरसम्वन्धी गुण है।

समान जुड़वों में प्रथम मासिकधर्म के समय के अन्तर २–८ मास दिखलाया गया है तथा असमान जुड़वों में १२ मास है। अन्य सपितृक वच्चों में १२˙९ महीने में तथा माता-पुत्री के सम्वन्ध में १८˙४ महीने और असम्वन्धित स्त्रियों में १८˙६ महीने[2] का है।

उन दो व्यक्तियों के जीवनविस्तार में काफ़ी समानता मिलती है जो समान

१. मलकोवा (Malkova) के कार्य पर आधारित, प्रोसीडिंग्स आफ़ मैक्सिम गोर्की (Proceedings of Maxim Gorki), मेडिकल वायलोजिकल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, ३, १९३४, सी० स्टर्न (C. Stern) से प्रोद्धरित, पूर्वलिखित, पृष्ठ ४७७/८

२. Petri, Zeitschrift, Morph. V. Anthropology, ३३, १९३४

जुड़वाँ हैं। कालमैन तथा सैन्डर[1] (Kallman and Sander) के अन्वेषणों ने यह सिद्ध कर दिया है, जिनसे पता चलता है कि जब कि समान जुड़वों में ६० वर्ष से आयु अधिक वालों में जीवनविस्तार का अन्तर ३६·९ मास था, असमान जुड़वों में यह ७८·३ था।

जुड़वों में वंशानुगति तथा खेलों सम्बन्धी शारीरिक शक्ति

वंशानुगति का प्रभाव अन्य अनेक गुणों में—बच्चे के चलना शुरू करने से बाद की खेलने की शक्ति तक, दिखलाया जा सकता है। इस प्रकार एक अध्ययन[2] में यह देखा गया था कि समान जुड़वों में ६९ प्रतिशत में चलने की सदृशता थी जब कि असमान जुड़वों में केवल ३५ प्रतिशत थी। एक दूसरे अध्ययन[3] में अंक इनसे मिलते जुलते थे जो क्रमशः ६७ तथा ३० प्रतिशत थे। जब कि कुछ जुड़वों के जोड़ों में कूदने की ऊँचाई में यह देखा गया कि समान जुड़वों में औसत अन्तर १·७५ तथा असमान में यह अन्तर ७·६ सेन्टीमीटर था।

जुड़वों में वंशानुगति तथा चिकित्सासम्बन्धी दशाएँ

चिकित्सासम्बन्धी दशाएँ प्रत्यक्ष रूप से वंशानुगति द्वारा काफ़ी निकटता से नियन्त्रित हैं जैसा कि इस सम्बन्ध में (जिनमें से कुछ की व्याख्या हम अन्य स्थान पर कर चुके हैं) न केवल साधारण जननिक अध्ययन से ही परन्तु मुख्यतः समान जुड़वों के अध्ययन से स्पष्ट है जहाँ पर परिस्थिति के प्रभाव से इसका सम्बन्ध महत्त्वपूर्ण है।

उदाहरणार्थ, चेचक के विषय में जो सभी अथवा लगभग सभी बच्चों को हो सकती है, यदि वे छूतवाले क्षेत्र के निकट आ जाते हैं, इसका विस्तार जुड़वों के समान जोड़ों में असमान की अपेक्षा अधिक होगा। (८७ प्रतिशत की अपेक्षा ९५ प्रतिशत तुलना करने पर मिलता है)

१. 'इन जर्मनी' (In Germany), वी० वर्शुअर (V. Verschuer) द्वारा, १९२७, सी० स्टर्न (C. Stern) पूर्वलिखित, पृष्ठ ४८० से प्रोद्धरित

२. बोसिक (Bossik) द्वारा, यू० एस० एस० आर० (U. S. S. R.) १९३४ सी० स्टर्न, पूर्वलिखित, पृष्ठ ४८० से प्रोद्धरित

३. मिरेनोवा (Mirenova), प्रोसीडिंग्स, मैक्सिम गोर्की मेडिकल बायलोजिकल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, १९३४, ३

साधारण रूप से मानसिक गुणों की पित्रागति पर किये गये अनुसन्धान से निकले परिणामों का जुड़वों के अध्ययन से भी समर्थन होता है।

इस प्रकार से साइजोफ्रेनिया के उदाहरण में, जैसा कि हमने दिखलाया है अवश्य ही वंशानुगति का आधार होना चाहिए, हम पाते हैं कि स्टर्न[1] वान वर्शुअर से लक्जेम्वर्जर[2] तक रोज़नाफ़[3], प्लेसेट[4] तथा ब्रश[5] के कार्यों के आधार पर इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि असमान तथा समान जुड़वों में मानसिक अस्वस्थता क्रमशः ११ प्रतिशत तथा ६८ प्रतिशत है। जैसा कि स्टर्न बतलाते हैं—

"समान तथा असमान जुड़वों में सदृशता की बारम्बारता में काफ़ी अन्तर है . . .। यह बहुत कम ठीक जान पड़ता है कि परिस्थिति में अधिक समानता, जुड़वों में साइजोफ्रेनिया के अधिक सादृश्य के लिए उत्तरदायी है।"

वह, कालमैन द्वारा बतलाये हुए एक उदाहरण की ओर ध्यान आकर्षित करता है, जहां समान जुड़वाँ बहनें जन्म के उपरान्त विभिन्न घरों में अलग अलग कर दी गयीं तथा एक-दूसरी से शायद ही कोई सम्बन्ध रहा हो। १५ वर्ष में एक ने जो कारखाने में कार्य करती थी, एक अवैध बच्चे को जन्म दिया तथा दूसरी एक परिवार की सुरक्षित शरण में एक घरेलू नौकरानी की भाँति रही। परन्तु दोनों को साइजोफ्रेनिया हो गया, एक को बच्चे के जन्म के उपरान्त ही तथा दूसरी को डेढ़ वर्ष पश्चात्। जैसा कि उसने ठीक ही बतलाया है, उसमें बीमारी की शारीरिक बनावट-सम्बन्धी पृष्ठभूमि का संकेत मिलता है। स्पष्ट रूप से परिस्थिति का प्रभाव अवैध गर्भाधान वाले उदाहरण में यह हुआ कि बीमारी और भी शीघ्र हुई।

उन्मत्त उदासी के साथ पागलपन एक दूसरे प्रकार की मानसिक बीमारी है जिसमें जुड़वों के प्रमाण महत्त्वपूर्ण हैं। जर्मनी में लक्ज़ेम्वर्जर तथा अमेरिका के रोजनाफ़,

१. सी० स्टर्न (C. Stern) पूर्व लिखित, पृष्ठ ४८८
२. Luxemberger
३. Rossanoff
४. Plesset
५. अमेरिकन जर्नल आफ़ साइकियेट (American Journal of Psychiat), ९१, १९३४

हैन्डी तथा प्लेसेट ने असमान जुड़वों में कम सादृश्य तथा समान जुड़वों में अधिक सादृश्य दिखलाया है।

जुड़वों में वंशानुगति तथा क्षीण बुद्धि

क्षीण बुद्धि उस मानसिक अस्वस्थता के साथ निकटता से सम्बन्धित है जिसकी व्याख्या हम अभी तक करते रहे हैं। यह मानसिक पीड़ित के, जिसका जड़ (मूढ़) के अन्तर्गत वर्गीकरण हुआ है, तथा साधारण बुद्धि के लोगों के मध्य की अवस्था है। बुद्धिपरीक्षा में इन लोगों को ५० से ७० नम्बर तक मिलते हैं। पश्चिमी देशों में, जिनके कुछ आंकड़े हमारे पास हैं, उनकी संख्या नगण्य नहीं होती। साथ ही हमारा विश्वास है कि ये लोग इस विषय में निराले नहीं हैं।

जड़ता तथा बुद्धि की क्षीणता दोनों ही जन्म (Natal) के पूर्व तथा पश्चात् मस्तिष्क में चोट लगने के परिणामस्वरूप हो सकते हैं। परन्तु इन कारणों को अलग कर दें तो जननिक में जननसम्बन्धी प्रमाण से पित्रागति का ज्ञान हो सकता है जिसके फलस्वरूप ऐसी दशा उससे अधिक होनी चाहिए जितनी कि सम्पूर्ण जनसंख्या में साधारणतया मिलती है। यदि हम जुड़वों द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रमाणों को देखें तो यह सिद्ध हो जाता है। उदाहरणार्थ, डेनमार्क में क्षीण बुद्धि वाले जुड़वों के एक समूह में से, जिसमें से सभी परिस्थितीय कारण हटा दिये गये थे, यह देखा गया कि १५ जोड़े असमान जुड़वों में केवल एक जोड़े में क्षीण-बुद्धिपन की सदृशता मिली। जब कि १६ समान जुड़वों में १४ में सादृश्य पाया गया।[1]

क्षीण बुद्धि से साधारण बुद्धि की ओर जाने में जुड़वों के अध्ययन से वही प्रभाव प्रदर्शित होता है जो अधिकांश में वंशानुगति के कारण माना जायगा।

एच० एच० न्युमैन (H. H. Newman), एफ० एन० फ्रीमैन (F. N. Freeman) तथा के० जे० होलजिगर[2] (K. J. Holzinger) ने बिनेट बुद्धिपरीक्षा का उपयोग करके साथ पाले गये समान जुड़वों, अलग अलग पाले गये समान जुड़वों, असमान जुड़वों तथा अन्य समान माता-पिता वाले बालकों का सम्बन्ध गुणांक दिलाया है, जैसा कि तालिका नं० ५ में दिया गया है।

१. सी० स्टर्न (C. Stern) पूर्वलिखित, पृष्ठ ४९४

२. ए स्टडी आफ़ हेरेडिटी एण्ड एनवायरनमेण्ट (A Study of Heredity and Environment) शिकागो युनिवर्सिटी प्रेस, १९३७

यहाँ पर हमारा अभिप्राय जुड़वों के सम्वन्ध में अधिक विस्तार से वुद्धिपरीक्षा पर विचार करना नहीं है। जव कि स्पष्ट है कि अनुकूल शैक्षिक तथा सामाजिक दशाओं से मस्तिष्क, लाभ तथा ऐसी कम दशाओं से हानि उठा सकता है, सावारण नियम के अनुसार यदि समान जुड़वों को विश्वविद्यालय की शिक्षा दी जाय तो उन्हें वुद्धिपरीक्षा में, उनकी अपेक्षा जिन्हें ऐसी शिक्षा नहीं मिलती, अधिक नम्वर मिलना चाहिए। तिस पर भी तालिका नं० ५ के आंकड़ों से पता चलता है कि ऐसी परिस्थितियों में भी सम्वन्धित जुड़वों की वुद्धि में अन्तर साथ पाले गये समान जुड़वों तथा भाइयों के जोड़े तथा अन्य समान मातापितावाले वच्चों के स्तर के मध्य में आता है।

तालिका नं० ५

वुद्धिपरीक्षा के सम्वन्ध में साथ साथ पाले गये समान जुड़वों तथा अलग अलग पाले गये समान जुड़वों के मध्य में परस्पर-संवन्ध गुणांक (विनेट वुद्धिपरीक्षा)

	माध्यमिक अन्तर	ठीक किया हुआ माध्यमिक अन्तर	सम्वन्ध गुणांक
५० समान जुड़वाँ साथ साथ पाले हुए	५·९	३·१	०·८८१
१९ समान जुड़वाँ अलग अलग पाले हुए	८·२	६·०	०·७६७
५२ असमान जुड़वाँ साथ साथ पाले हुए	९·९	८·५	०·६३१
४७ जोड़े समान मा वाप के वच्चे	९·८		

(न्युमैन, फ्रीमैन तथा होलजिंगर से)

[यह देखा जायगा कि परस्पर-सम्वन्ध गुणांक से पता चलता है कि समान जुड़वों में अलग अलग पाले जाने के वावजूद, असमान जुड़वों की अपेक्षा, जो कि साथ साथ पाले गये हों, समानता का अधिक ऊँचा गुणांक मिलता है।]

समस्या के इस पहलू के निरीक्षण को समाप्त करते हुए हम टरमैन के अनुभव को प्रोद्धरित कर सकते हैं जो कहता है कि अलग अलग पाले जाने पर भी समान जुड़वों की वुद्धि में अधिक अन्तर होने की वात का पता नहीं चलता।

परिस्थिति से सम्बन्धित वंशानुगति तथा स्वभाव

भावना तथा स्वभाव, व्यक्तियों के मानसिक गुणों के एक अन्य रूप को प्रकट करते हैं। न्युमैन, फ्रीमैन तथा होल्जिंगर[1] द्वारा देखे गये व्यक्तियों के इतिहास से विदित होता है कि विभिन्न परिस्थितियों में पाले गये, समान जुड़वों के आधार रूप गुणों में प्रत्यक्ष समानता मिलती है।[2]

अपराध, वंशानुगति तथा परिस्थिति

अपराध तथा उसकी ओर प्रवृत्ति, मानसिक अभिव्यक्ति का विशेष प्रकार है, इस लिए वंशानुगति तथा परिस्थिति के दृष्टिकोण से उसकी परीक्षा की जा सकती है। बँधी हुई धारणा के आधार पर हम मानते हैं कि अपराध मुख्यतः परिस्थिति का परिणाम होता है। यदि किसी मनुष्य को निर्धनता में, भूखे अथवा लगभग भुखमरी की दशा में, निम्न तथा खराब वातावरण में पाला जाय, तो यह स्वतः सिद्ध-सा प्रतीत होगा कि वह अपराध करने के लिए प्रेरित होगा ही। निस्सन्देह यही आधार है जिस पर इस विषय के लगभग समस्त सामाजिक विधान बने हैं।

फिर भी, जुड़वों के अध्ययन से स्पष्ट है कि बात ऐसी नहीं है।

जर्मनी, हालैण्ड तथा अमेरिका में किये गये कार्य से प्रकट है कि जहाँ असमान जुड़वों में ३४ प्रतिशत सादृश्य रहता है, वहाँ समान जुड़वों में ७२ प्रतिशत अर्थात् उसकी अपेक्षा कहीं अधिक रहता है।

अवश्य ही, इस विषय में अपराधी प्रवृत्तिवाले घर में सभी बच्चों पर परिस्थिति का प्रभाव पड़ता है तथा जहाँ तक समान जुड़वों का सम्बन्ध है, यदि एक बच्चा किसी

१. पूर्वलिखित

२. हम 'डने इन्डिविडुअल विल टेम्परामेन्ट टेस्ट प्रोफाइल्स' (Douney Individual will Temperament Test profiles) से प्रभावित नहीं होते जिसमें भावना तथा स्वभाव की परीक्षा की जाती है, क्योंकि बहुत से गुण जो इतने आवश्यक नहीं हैं जितने अन्य, बराबरी की श्रेणी में रख दिये गये हैं। शीघ्र निर्णय की क्षमता ऐसी बात है जो अध्ययन द्वारा काफी प्रभावित हो सकती है तथा विरोध की प्रतिक्रिया भी उसी के समान प्रभावित होती है और साथ साथ नैतिक शिक्षा तथा अनुशासन इत्यादि का भी उन पर प्रभाव पड़ता है। इसलिए हमें यह देखकर आश्चर्य नहीं होता कि ये कृत्रिम परीक्षा-विधियाँ बुद्धिपरीक्षा से कम ठीक परिणाम बतलाती हैं।

अपराधी प्रवृत्तिवाली परिस्थिति का अनुभव करता है तो दूसरा भी उतना ही करेगा। पर यह सब कारक असमान तथा समान जुड़वों के अपराध की घटनाओं में देख पड़नेवाली अत्यधिक असमानता का कारण समझाने में असमर्थ हैं। जैसा स्टर्न कहते हैं—"जुड़वों के जोड़ों के विस्तृत अध्ययन से परिस्थितीय व्याख्या के ठीक प्रमाणित होने का समर्थन नहीं होता।"[1]

वंशानुगति तथा स्थूलचरण (Clubfoot)

मानसिक दशाओं पर पड़नेवाले वंशानुगति के प्रभाव को छोड़कर, जो कि इस प्रकार के गुण हैं जिनको हमने पूर्ण अथवा अपूर्ण रूप से परिस्थिति के कारण समझा होता, यदि हम इन तथ्यों पर पुर्नविचार न करते जिनकी व्याख्या हमने अभी की है, हम कुछ ऐसी शारीरिक दशाओं पर विचार कर सकते हैं जो परिस्थिति के परिणाम-स्वरूप मालूम होती हैं।

इन दशाओं में स्थूलचरण जैसी घटनाएँ हैं। सम्भवतः यह उन दशाओं के कारण है जिनसे भ्रूणावस्था में ही कुछ क्षति पहुँचती है तथा यह जुड़वों में से एक को हो सकता है दूसरे को नहीं। इसलिए प्रथम दृष्टि में ऐसा प्रतीत होगा कि यह ऐसी घटना का स्पष्ट उदाहरण है जो परिस्थितीय आधार से उत्पन्न हुई है। किन्तु यहाँ भी उसी तरह समान जुड़वों में २३ प्रतिशत तथा असमान जुड़वों में केवल २ प्रतिशत सादृश्य देखा गया है।

इससे हम इस परिणाम पर पहुँचने को वाध्य हो जाते हैं कि जननिक ढंग की कुछ शारीरिक निर्वलता के कारण एक वच्चे में, दूसरे की अपेक्षा क्षति शीघ्र होने की सम्भावना हो जाती है। परिणामतः जहाँ पर समान जुड़वों में से एक की यह दशा हो जाती है, उस दिशा में निर्बलता की उचित सम्भावना मिलती है, इसलिए असमान जुड़वों की अपेक्षा, जिनकी जननिक वनावट एक ही नहीं है, समान जुड़वों के जोड़े में उसी प्रकार की अधिक क्षति पहुंच सकती है।

वंशानुगति, परिस्थिति तथा तपेदिक

ऐसा समझा जाता था कि तपेदिक की वीमारी वंशानुगत होती है तथा यदि यह किसी सदस्य को हुई तो परिवार में काफ़ी घबराहट फैल जाती थी। साथ ही जिस

१. सी० स्टर्न, पूर्व लिखित, पृष्ठ ४९१

कुल में यह बीमारी देख पड़ती थी, उस कुल में विवाह करने में वास्तविक भय समझा जाता था।

ये भय इस खोज से काफ़ी शान्त कर दिये गये कि वास्तव में वंशानुगति के कारण नहीं, वल्कि अणु-जीव (micro-organism) के कारण यह रोग होता है।

फिर भी जुड़वों के अध्ययन से निकले हुए प्रमाण, उन अधिक सुविधाजनक परिणामों का समर्थन नहीं करते, जो तपेदिक के कीटाणु की खोज से निकले हैं। यह सत्य है कि वास्तविक बीमारी वंशानुगत नहीं होती परन्तु यह भी स्पष्ट है कि निर्वलता की पूर्व प्रवृत्ति अवश्य मिलती है जिससे रोग का प्रतिरोध करने की शक्ति कम हो जाती है। इस प्रकार जब कि असमान जुड़वों में, जहाँ पर दोनों जुड़वों में बीमारी मिलती है, यह २५ प्रतिशत में पायी जाती है तथा उसका कारण जितनी परिस्थिति हो सकती है उतनी ही वंशानुगत दशाएँ। जब हम समान जुड़वों पर आते हैं तब बीमारी में सादृश्य के आंकड़े दोनों में से प्रत्येक जुड़वाँ में लगभग ६५ प्रतिशत तक मिलते हैं। असमान तथा समान जुड़वों में यह अन्तर अधिकतर वंशानुगति के कारण ही होना चाहिए।

इस प्रकार के तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि जब हम माता-पिता तथा बच्चों में बीमारी के क्रम पर किये गये कार्यों के परिणामों पर विचार करते हैं तब बीमारी के आँकड़े उन वच्चों में अधिक मिलते हैं जिनके माता-पिता में यह हो चुकी थी, वनिस्वत उन वच्चों के जिनके मा-बाप इससे मुक्त थे। परन्तु यह पूर्ण रूप से बीमार माता-पिता की निकट परिस्थितीय दशाओं के कारण ही नहीं है, जैसा कि अन्यथा समझ लिया जा सकता है।

इसके विपरीत, निम्न आँकड़ों से यह प्रत्यक्ष है कि इसमें परिस्थितीय कारक के साथ साथ छिपा हुआ वंशानुगत कारक भी है। पर्ल (Pearl) ने ये अंक तैयार किये हैं जो कि साथ में दी हुई तालिका नं० ६ में दिये गये हैं।

वंशानुगति तथा सूखा रोग (रिकेट्स)

सूखा रोग एक ऐसी दशा है जो पूर्ण रूप से विटामिन डी की कमी के कारण होती है, इसलिए यह विना किसी संकोच के परिस्थितीय दशाओं से सम्वन्धित समझी जायगी। स्पष्ट है कि यदि वच्चे के खाने में विटामिन डी तथा सूर्य के प्रकाश की कमी है, सूखा रोग होने की सम्भावना की जा सकती है। यह एक ऐसी घटना है जहाँ परिस्थिति स्पष्ट निर्णायक के रूप में दिखलाई पड़ती है। फिर भी यह निश्चय है कि वंशानुगति अव भी सर्वप्रथम विचारणीय है। क्योंकि जब कि असमान जुड़वों में सादृश्य केवल २२ प्रतिशत में मिलता है, समान जुड़वों में लगभग ८८ प्रतिशत में मिलता है।

यह उदाहरण किसी अन्य की तरह ही इस वात पर जोर देता है कि परिस्थिति के कार्यो का वास्तविक स्वरूप क्या है। भौगोलिक परिस्थितियों द्वारा प्रकृति कुछ नियन्त्रित दशाएँ तथा सीमाएँ निर्धारित करती है जिन्हें जीवित पदार्थ विना कुछ मूल्य चुकाये पार नहीं कर सकते तथा यह मूल्य इतना अधिक हो सकता है कि पूर्ण नाश की आवश्यकता पड़ जाय, परन्तु उसे उन जीवित पदार्थों की वंशानुगति के आधार पर ही कार्य करना होता है जिसके लिए यह परिस्थिति प्रस्तुत करती हैं।

तालिका नं० ६

तपेदिक से प्रभावित वच्चों का प्रतिशत, जहाँ कि एक या दोनों माता-पिता प्रभावित हैं उनकी उनसे तुलना जहाँ पर माता-पिता में से कोई प्रभावित नहीं है

प्रभावित माता-पिता	प्रभावित वच्चों का लगभग प्रतिशत
माता-पिता में से कोई नहीं	८ %
माता	१३ %
पिता	१४ %
दोनों	३४ %

[५४६ जोड़े माता-पिता तथा २४८० वच्चों के अध्ययन पर आधारित।]

वंशानुगति तथा बहुमूत्रता

वहुमूत्रता 'मेटावोलिज्म' (Metabolism) की असामान्य दशा के कारण होती है, परन्तु फिर भी जुड़वों के अध्ययन से पता चलता है कि वंशानुगति एक मुख्य कारक है, क्योंकि असमान जुड़वों में ३७ प्रतिशत तथा समान जुड़वों में लगभग ८४ प्रतिशत इसका सादृश्य मिलता है।

वंशानुगति तथा महामारी (epidemics)

केवल महामारी के ढंग के रोगों में भी, जो कि किसी एक अथवा दूसरे समय में थोड़ा बहुत सभी को हो सकते हैं, वंशानुगत कारक के सम्बद्ध होने के कुछ प्रमाण मिलते हैं क्योंकि इसमें भी असमान तथा समान जुड़वों के सादृश्य में अन्तर पाया जाता है। उदाहरणार्थ असमान तथा समान जुड़वों में चेचक के लिए क्रमशः ८७ तथा ९५ प्रतिशत तथा स्कारलेट ज्वर के लिए क्रमशः ४७ तथा ६४ प्रतिशत सादृश्य मिलता है।[१]

वंशानुगति तथा कैन्सर

निःसंदेह कैन्सर का भी जिसके जननिकविज्ञान के विषय में अभी हम काफ़ी नहीं जानते, वंशानुगत आधार है, जैसा कि इस तथ्य से स्पष्ट है कि एक विशेष क्षेत्र में एक प्रकार के कैन्सर के सम्बन्ध में असमान जुड़वों में २४·२ प्रतिशत सादृश्य मिलता है परन्तु समान जुड़वों में यह ५८ प्रतिशत है।[२]

इसलिए इस बीमारी के होने की सम्भावना काफ़ी सीमा तक वंशानुगत कारकों पर निर्भर है।

परिस्थिति, वंशानुगति तथा पोष्य बच्चे (फोस्टर चिलड्रन)

जुड़वों के अध्ययन के साथ पोष्य बच्चों का प्रश्न भी आता है।

हम यह मान सकते हैं कि पोष्य पुत्र जब किसी सामाजिक स्तरवाले घर में जाते हैं तो उनका बुद्धिस्तर उस घर के अन्य बच्चों की अपेक्षा मध्यमान के आसपास होगा। बात यह है कि वंशानुगति यदि एक नियंत्रक कारक है तो स्वाभाविक रूप से उत्पन्न उस घर के बच्चे अपने माता-पिता के बुद्धिस्तर के अनुसार भिन्न होंगे, जो कि साधारणतया व्यवसायी वर्ग वालों से श्रमिकों तक कम होता जायगा।

वास्तव में ऐसा होता है, जो साथ में दी गयी तालिका से स्पष्ट है।

१. स्थूल चरण, तपेदिक, सूखा रोग, बहुमूत्रता, चेचक तथा स्कारलेट ज्वर के आँकड़े, वान वर्शुअर (Von Versehuer) के कार्य पर आधारित हैं। Ergebr. Allgem. Pathol. १९३२, भाग २६ तथा Beitrag. Zur Klinik, d. Tuber Kul. १९४१, भाग ९७, सी० स्टर्न (C. Stern) की एक तालिका से प्रोद्धरित, पूर्व लिखित

२. मैकलिन (Macklin), जर्नल आफ़ हेरेडिटी, १९४०, ३१

तालिका नं० ७

निम्नलिखित सामाजिक स्तरों में पोष्य बच्चों तथा घर के बच्चों के बुद्धि-सूचक अंकों की तुलना

बच्चों की संख्या	ग्रहण किया हुआ या उसी घर का बच्चा	सम्बन्धित घर का वर्ग	बुद्धिसम्बन्धी अंक	
			ग्रहण किये हुए बच्चे का	घर के बच्चे का
४३	ग्रहण किया हुआ	व्यवसायी वर्ग	११२·६	
४०	घर का	,, ,, ,,		११८·६
३८	ग्रहण किया हुआ	व्यापारी मनुष्य	१११·६	
४२	घर का	,, ,, ,,		११७·६
४४	ग्रहण किया हुआ	कुशल व्यापारिक तथा लिपिक कर्मचारी	[illegible]०·६	
४३	घर का	,, ,, ,,		१०६·९
४५	ग्रहण किया हुआ	अर्ध कुशल	१०९·४	
४६	घर का	,, ,, ,,		१०१·१
२४	ग्रहण किया हुआ	अकुशल कर्मी	१०७·८	
२३	घर का	,, ,, ,,		१०२·१

यह ध्यान देने योग्य है कि ग्रहण किये हुए बच्चे घर के बच्चों की अपेक्षा मध्य-मान के (जो कि ११०·५ के लगभग है) निकट हैं तथा यह स्पष्ट प्रमाण है कि विभिन्न सामाजिक स्तरों के बुद्धिसूचक अंकों के अन्तर में वंशानुगति मुख्य कारक है।

अठारहवाँ अध्याय

वंशानुगति के महत्त्व के अन्य प्रमाण—समान जुड़वों के हाथों में रेखाएँ बनने से

हाथों की रेखाओं तथा चिह्नों की वनावट से न केवल उनकी पित्रागति का ही पता चलता है, परन्तु यह भी कि असमान जुड़वों की अपेक्षा समान जुड़वों में वे अधिक एक से होते हैं। इस प्रकार यह तथ्य उन प्रवृत्तियों का समर्थन करता है जिनकी चर्चा हम पिछले दो अध्यायों में करते आये हैं। चूँकि ये चिन्ह काफ़ी जातिवैज्ञानिक अभिरुचि के हैं तथा परिणामस्वरूप हमने वाद में उसी दृष्टिकोण से अध्ययन के लिए एक सम्पूर्ण अध्याय ही दिया है, अतः जुड़वों तथा एक ही माता या एक ही पिता के वच्चों के सम्वन्ध में इन लक्षणों के विषय पर पुनर्विचार करना वांछनीय जान पड़ता है। इससे क्रमशः वंशानुगति तथा परिस्थिति के प्रभाव के प्रमाणों की विस्तृत जानकारी होगी।

ऐसा समझा जाता है कि एक-युग्मिक (अथवा समान जुड़वों) के हाथ की रेखाओं तथा अन्य वनावटों में अन्य दो व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक समानता मिलेगी। घटनाओं से यह वात सिद्ध भी हो जाती है।

साथ ही "कम होते हुए सम्वन्धोंवाले वच्चों की तुलना में समानता की क्रमशः कमी देखी जा सकती है। इस प्रकार से एक जोड़े समातृक या सपितृक (समान माता या समान पितावाले) वच्चों तथा भ्रातृ-सदृश जुड़वाँ जोड़ों में, एक-युग्मिक जुड़वें जोड़े की अपेक्षा बहुत कम समानता होती है। माता-पिता तथा वच्चों में, औसतन, समातृक या सपितृक वच्चों की अपेक्षा कम समानता मिलती है तथा उसी जाति के असम्वन्धित व्यक्तियों में और भी कम, जव कि सवसे अधिक अन्तर विभिन्न जातिवालों के रूपों की तुलना में मिलता है।"[1]

१. एच० कमिन्स तथा सी० मिडलो (H. Cummins and C. Midlo), फिंगर प्रिन्ट्स, पाम्स एण्ड सोल्स फ़िलाडेलफिया, १९४३, पृष्ठ २१०

मनुष्य के हाथ की बनावट में परिस्थिति का प्रभाव

जे० डब्लू० मैकआर्थर[1] ने देखा कि समान (या एक-युग्मिक, मोनोजाइगोटिक) जुड़वों के उदाहरण में उनके हाथ की बनावट का अन्तर (standard deviation) २०·८ प्रतिशत प्रामाणिक विचलन होता है। चूँकि एक ही अण्डे से प्रत्येक जोड़े की उत्पत्ति होती है, इसलिए दोनों व्यक्ति समान होने चाहिए। उनमें यदि कोई विभिन्नता होती है तो वह गर्भावस्था से आगे तक किसी एक या दूसरे प्रकार के परिस्थितीय कारण से होती है।

वास्तव में हम इसको परिस्थिति के आपेक्षिक प्रभाव के एक स्पष्ट उदाहरण के रूप में ले सकते हैं जो व्यक्ति के बाह्य अथवा समरूपी गुणों पर प्रभाव डालते हैं तथा ऐसी अवस्था में उसमें यह सम्भावना हो सकती है कि परिस्थिति केवल बाह्य गुणों को बदल सकती है जो कि लगभग २०%है, जब कि अवश्य ही, जहाँ तक हम जानते हैं यह आन्तरिक जननिक ढाँचे सम-पित्र्यक (genotype) को किसी भी सीमा तक प्रभावित नहीं करती।

हाथ की बनावट का जननिक आधार

गाल्टन (Galton) का विचार था कि सूक्ष्म उभरे भाग तथा हाथ के अन्य गुण, जीव-वैज्ञानिक अथवा जननिक, एककों को प्रदर्शित करते हैं। परिणामतः ऐसी बनावट की पित्रागति से प्रमाणित होता है कि मानव-वंशानुगति सूक्ष्मतम पैमाने पर कार्य करती है। फिर भी, हाथों तथा पैरों के नमूने की बनावट की जटिलता से विदित होता है कि सम्भवतः उसमें पित्र्यकों की बहुत बड़ी संख्या सम्बद्ध है। वास्तव में, इसके लिए संतोष का कोई कारण नहीं है कि मानव पित्र्यकों तथा उन पित्र्यसूत्रों की जिनसे कि वे सम्बन्धित हैं बहुत शीघ्र तालिका बनायी जा सकती हैं तथा उनकी पहचान हो सकती है।

फ्रेन्सिस गाल्टन[2] ने उँगलियों की छाप के जननिक आधार की प्रथम स्थापना की है। इनकी रचना के पश्चात् एच० एच० विल्डर (H. H. Wilder) की रचना आती है जिसने दो परिवारों के अध्ययन के नमूने की पित्रागति को बतलाया है।

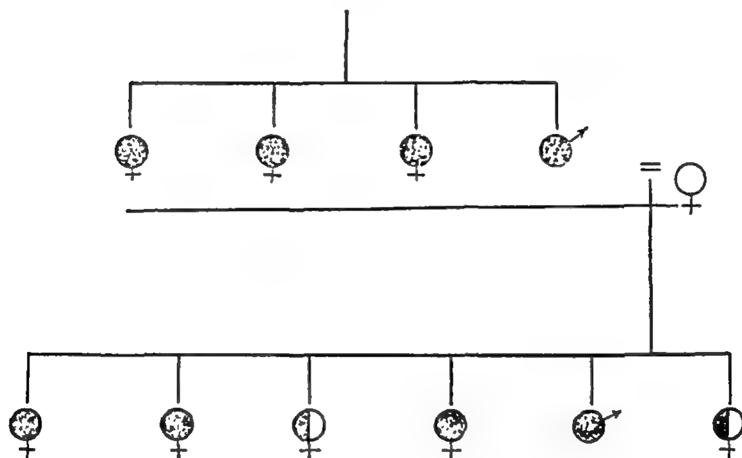
१. रिलायबिलिटी आफ़ डरमेटोग्लीफ़िक्स इन ट्विन डागनोसिस, ह्यु मेन बायलोजी, १९३८, भाग १०, पृष्ठ १२

२. फिंगर प्रिन्ट्स (Finger Prints London), १८९२

प्रथम एक कुल में हथेली के उभरे भागवाला (thenar eminence) आकार था (अँगूठे के नीचे 'वीनस' का उभरा भाग जो कि १५–२० प्रतिशत काकेशियनों में मिलता है) जो कि पिता की प्रत्येक वहिन में मिलता था। पिता ने किसी दूसरे आकारवाली से विवाह किया।

चित्र नं० १२५

हाथ की बनावट के वंशानुगत गुण को सिद्ध करते हुए हथेली के उभरे भाग (thenar eminence) का वंशक्रम



(एच० एच० विल्डर द्वारा)

स्त्रियां जिनके दोनों हाथों में उभरे भाग (thenar eminence) हैं।

स्त्रियां जिनके केवल बायें हाथ में उभरा भाग है।

स्त्रियां जिनके हाथ में उभरा भाग नहीं है।

पुरुष जिनके दोनों हाथों में उभरे भाग हैं।

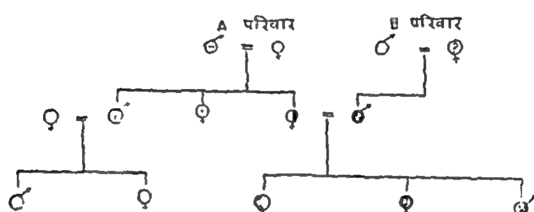
यह काकेसायड में विरली बनावट है तथा ऊपर की स्थिति अकस्मात् ही नहीं बल्कि अवश्य ही वंशानुगति के कारण है।

उत्पन्न वच्चों में एक पुत्र था जिसके दोनों हाथों में पिता के हाथ की जैसी रेखाएँ थीं, तीन लड़कियों के दोनों हाथों में थीं तथा दो लड़कियों के केवल वाएँ हाथ में थीं। साथ में दिया हुआ चित्र (चित्र नं० १२५) यह वात स्पष्ट कर देता है।

विल्डर (Wilder) के दूसरे कुल में ऐड़ी का ऐसा नमूना था जो १ प्रतिशत व्यक्तियों से अधिक में नहीं मिलता। फिर भी इस कुल में १२ मनुष्यों में से (जिनमें से

चित्र नं० १२६

विरल एड़ी (rare calcar) के नमूने की पित्रागति का वंशक्रम



(एच० एच० विल्डर से)

पुरुष जिनकी दोनों एड़ियों में प्राथमिक विरल नमूना है।

पुरुष जिनकी परीक्षा नहीं हुई।

पुरुष जिनकी दाहिनी एड़ियों में विरल नमूना है।

मनुष्य जिनकी दायीं एड़ी में विरल नमूना तथा बायीं एड़ी में प्राथमिक विरल नमूना है।

पुरुष जिनकी एड़ी का नमूना नहीं है।

स्त्रियाँ जिनकी बायीं एड़ी में प्राथमिक विरल आकार है।

वे स्त्रियां जिनकी परीक्षा नहीं हुई।

स्त्रियाँ जिनकी दोनों एड़ियों में विरल नमूना है।

स्त्रियाँ जिनकी दाहिनी एड़ी में विरल नमूना तथा बायीं एड़ी में प्रायमिक आकार है।

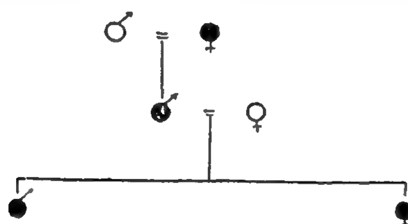
स्त्रियाँ जिनकी बायीं एड़ी में विरल नमूना तथा दाहिनी एड़ी में प्राथमिक आकार है।

२ की परीक्षा नहीं की गयी) ७ में किसी न किसी रूप में यह थी जैसा कि साथ में दिये हुए वंशक्रम से (चित्र नं० १२६) से पता चलता है।

वंशक्रम से यह अनुमान होता है कि नमूने का प्रकार अपसारी है, क्योंकि A कुल का संग करने में जहाँ पर वावा में प्राथमिक चिह्न मिलते हैं, यदि उसके पूर्व की पीढ़ी (पुरुष) तक नहीं, जिसकी परीक्षा नहीं की गयी, तो यह पोतों की पीढ़ी तक समाप्त हो जाती है।[1]

चित्र नं० १२७

हथेली के वायें ऊँचे भाग (hypothenav eminence) पर घूंसे के उभरा भाग (the bulb of percussion) के चक्र की पित्रागति का वंशक्रम



(ए० सेवीडाली से)

♀ (काला) = स्त्री जिसकी गदेली के वायें ऊँचे भाग में चक्र है।

♀ = स्त्री जिसकी गदेली के वायें ऊँचे भाग मे चक्र नही है।

♂ (काला) = पुरुष जिसकी गदेली के वायें ऊँचे भाग (hypothenav eminence) में चक्र है।

♂ = पुरुष जिसकी गदेली के वायें ऊँचे भाग मे चक्र नहीं है।

एक अन्य छोटे वंशक्रम[2] में हथेली के वायें ऊँचे भाग (hypothenav eminence) में (घूँसे के उभरे भाग (the bulb of percussion) चक्र के पारेपण का पता चलता है, जहाँ पर कि काला पित्रागति को प्रदर्शित करता है।

१. कमिन्स तथा मिडलो (Cummins & Midlo) पूर्व लिखित, पृष्ठ २१७, दूसरे मत को मानते हैं तथा वे कहते हैं कि "उसमें विना नमूनेवाले के ऊपर नमूनेवाली वनावट के प्रभावी होने की सम्भावना मिलती है" अवश्य ही, यह ऐसा हो सकता है परन्तु कुल के उन दोनों व्यक्तियों में नमूने के होने न होने पर बहुत कुछ निर्भर है—जिनकी परीक्षा नहीं की गयी।

२. ए० सेविडाली (A. Cevidalli) के द्वारा Contributo allo Studio delle linee papillari in rapporto alla erditarieta. Bol. Soc. Med. Chir. di Modena, 1911. भाग १३, पृष्ठ ५४७.

यह कुछ महत्त्व का विषय है कि हीन्डेल (Heindl) ने कुछ ऐसे प्रमाणों को पाया है जिससे पता चलता है कि किसी एक विशेष कुल के जिन लोगों की उँगली की छाप एक सी थी, उनके शरीर के अन्य गुण भी समान थे।[1]

इससे हाथों तथा पैरों में रेखाओं की वनावट तथा साधारण शारीरिक गुणसम्वन्धी नियंत्रण करनेवाले पित्र्यकों में ग्रथन का अनुमान होता है। यह इस विषय को और भी परिस्थिति के क्षेत्र से हटाकर वंशानुगति की ओर ले जाता है।

एच० ग्रुनवर्ग[2] ने देखा है कि समान (एक-युग्मिक monozygotic) जुड़वों के लगभग ८० प्रतिशत में उँगलियों के आकार मिलते हैं जो मैकआर्थर (Mac Arthur) के कार्य से प्रमाणित होता है तथा उसे भी यही संख्याएँ, लगभग ८१ प्रतिशत, मिली थीं, परन्तु असमान (अनेक-युग्मिक) जुड़वों में यह केवल ६३·४ प्रतिशत मिली।

उसने यह भी पाया कि जिन माता-पिता के गाँठ (loop, लंबवृत्त) थी उनके ८०·९ प्रतिशत वच्चों में भी वह थी तथा जव माता-पिता में चक्र था तव ७०·८ प्रतिशत के वच्चों में यह मिलता था।

इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि पित्रागति का प्रमाण मिलता है।

ई० एसेन मोलर[3] (Eo. Essen-Moller) ने देखा कि जहाँ तक समान जुड़वों की वात थी, जुड़वों के जोड़ों में या तो चक्र विलकुल नहीं था या दोनों में एक या अधिक लगभग ८५·७ प्रतिशत में मिलता था तथा अन्य जुड़वों में ६५·८ प्रतिशत में मिलता था।

ग्रुनवर्ग का विश्वास है कि गाँठ, चक्र तथा गुम्वद की उत्पत्ति से सम्वद्ध पित्र्यक X X पित्र्यक हैं जो कि प्रभावी हैं तथा x x अपसारी गुणों के साथ हैं और Y Y भी y y की अपेक्षा प्रभावी हैं। ये आकार निम्न जननिक संयोजनों का निर्माण करते हैं——

१. कमिन्स तथा मिडलो द्वारा प्रोद्धरित, पूर्व लिखित, पृष्ठ २१८, हिन्डेल से, System and Praxis der Daktyloskopie, तीसरा संस्करण, वर्लिन तथा ल:ग, १९२७.

२. Die Vererbung der Menschlichen, Tastfiguren Zeischrift unfur Indukt Abst V. Vererbungs-Lehre, भाग ५०, पृष्ठ ७६–९६, १९२९, कमिन्स तथा मिडलो, पूर्व लिखित से उद्धरित

३. Empirische "Ahnlichkeits diagnose bei Zwillingen, हेरेडिटाज (Hereditas) भाग २७, पृष्ठ १–५०, १९४१, कमिन्स तथा मिडलो, पूर्व लिखित से उद्धरित

X X Y Y गाँठदार वनावट का
X X Y y चक्रदार वनावट का
X X y y चक्रदार वनावट का
X x Y Y गाँठदार वनावट का
X x Y y गाँठदार वनावट का
X x y y चक्रदार वनावट का
x x Y Y गाँठदार वनावट का
x x Y y गाँठदार वनावट का
x x y y गुम्वददार वनावट का

यह सुझाव दिया जाता है कि Y तथा Y Y क्रमशः X तथा X X पर प्रभावी हैं परन्तु Y के ऊपर X X तथा यदि किसी जोड़े का प्रभावी पित्र्यक अनुपस्थित है तव दूसरे का प्रभावी स्पष्ट हो जाता है तथा यदि सभी प्रभावी अनुपस्थित हैं तव गुम्वद एक दोहरे अपसारी गुण के रूप में आता है।[1]

जातिसंकरण के प्रमाण

पशुओं की भाँति मनुष्यों में भी पित्रागति के जननिक नियंत्रण का काफ़ी प्रमाण जातीय प्रसंकरण में मिलता है। यह स्पष्ट रूप से उंगलियों, हथेलियों, तथा तलुओं में वने हुए नमूनों के विषय में भी मिलता है।

उदाहरण के लिए जमाइका में काले, भूरे तथा श्वेत मनुष्यों के विषय में डेवनपोर्ट तथा स्टेगर्डा[2] (Davenport and Steggerda) द्वारा अध्ययन किया गया है।

इनके अध्ययनों में ऐसा विचार किया गया कि जहाँ तक उनकी उँगलियों की छाप का सम्वन्ध है, भूरे लोग अपने माता-पिता के वर्ग में मध्यम थे। इस प्रकार से उँगलियों पर चक्र मिलनेवालों में श्वेत २२ प्रतिशत, काले ३० प्रतिशत तथा माध्यमिक भूरे २५ प्रतिशत मिलते हैं।[3]

१. कमिन्स तथा मिडलो, पूर्व लिखित, पृष्ठ २१९–२२०

२. सी० वी० डेवनपोर्ट तथा एम० स्टेगर्डा (C. B. Davenport and M. Steggerda) रेस क्रासिंग इन जमाइका (Race Crossing in Jamaica) कामेकी संस्था (Comequie Institution) वाशिंगटन, पवलिक, १९२९, भाग ३९५

३. हाथों के अन्य आकारों के विषय से सम्बन्धित कुछ अनियमित वातें हैं जिनका वर्णन यहाँ पर आवश्यक नहीं है। इनमें भूरे माध्यमिक नहीं हैं परन्तु कालों की अपेक्षा

उँगली की छाप के चक्र तथा जुडवें

ई० एसेन-मोलर (E. Essen moller) ने उँगलियों की छाप जैसी सूक्ष्म वस्तु पर विचार करके वतलाया है कि जुड़वों की उँगलियों पर एक अथवा अधिक चक्र होने अथवा कोई चक्र न होने का जहाँ तक प्रश्न है, साधारण दो-अण्डक (dizygotic) जुड़वों में लगभग ६५·८ प्रतिशत में समानता है जब कि समान अथवा एक-अण्डक (monozygotic) जुड़वों में इसकी वारम्वारता ८५·७ प्रतिशत थी। यदि यह कहा जाय कि वंशानुगति का प्रभाव हाथ के नमूनों पर नहीं पड़ता, तब इस प्रकार बार-म्वार देख पड़नेवाली समानता का और क्या कारण बताया जा सकता है ?

वास्तव में यद्यपि ज्ञान की वर्तमान अवस्था में विषय की जटिलता के कारण जननिक विज्ञान का विषय चाहे समझ में न आये, इसमें कोई सन्देह नहीं कि नमूनों के मुख्यतः वंशानुगति के कारण हैं, जब कि यह जोर देकर कहा जा सकता है कि—(१) जब माता पिता दोनों की उँगलियों में दोहरे लम्ववृत्त (गाँठें) हों तो साधारणतया बच्चों के भी ये होते हैं। (२) जब दोहरी गाँठें दोनों माता-पिता के नहीं होतीं तो वच्चों के भी नहीं होतीं तथा (३) यदि केवल माता-पिता में से एक में हैं तो कुछ बच्चों में मिलेंगी तथा कुछ में नहीं मिलेंगी।[1]

उँगलियों के नमूने के अध्ययन से के० वोनेविक[2] (K. Bonnevic) ने दिखलाया है कि परस्पर सम्वन्ध के गुणांक से पता चलता है कि असम्वन्धित मनुष्यों में यह ०·२७, साधारण जुड़वों में ०·५४, समातृक या सपितृक वच्चों में ०·६० जब कि समान जुड़वों में ·९२ है। वंशानुगति के महत्त्वपूर्ण प्रभाव का इससे स्पष्ट प्रमाण कुछ और नहीं हो सकता।

ऐसा होते हुए भी, हमारे अध्ययन से उन मतों के लिए वहुत थोड़ा स्थान रह जाता

अधिक हैं। जहाँ तक हमारे वर्तमान ज्ञान का सम्बन्ध है जब कि यह दशाएँ स्पष्ट रूप से नियमविरोधी हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं कि अन्त में उनकी व्याख्या हो सकेगी तथा वे उँगलियों की छाप के स्पष्ट संकेतों को निरर्थक नहीं कर देती जहाँ कि यह निश्चित है कि व्यक्तियों की सम्भावित उँगलियों की छाप के प्रकार में वंशानुगति नियन्त्रक कारक है।

१. कमिन्स तथा मिडलो, पूर्व लिखित, पृष्ठ २२१

२. स्टडीज आन पैपिलरी पैटर्न्स आफ़ ह्युमेन फिंगर्स (Studies on papillary patterns of human fingers) जर्नल आफ़ जेनेटिक्स, भाग १५, पृष्ठ १

है जो किसी भी परिस्थिति में समान द्वारा समान की उत्पत्ति में वंशानुगति के महत्त्व को कम करने अथवा उनकी अवहेलना करने का प्रयत्न करते हैं।

इसलिए जननिक अध्ययन से अथवा पित्रागति के अध्ययनों से, जिनका हमने विवेचन किया है, एक ओर तो उपार्जित गुणों के पारेषण के सिद्धान्तों के लिए और दूसरी ओर उसके प्रतिरूप भौगोलिक मत के लिए स्थान शेष नहीं रहता जो अनेक वर्षों से भौगोलिक निश्चयवादियों का सिद्धान्त रहा है।

फिर भी, इन सब तथ्यों के उपरान्त भी, भौगोलिक निश्चयवादी अपने जीव-वैज्ञानिक शास्त्रों के उपार्जित गुणवादी मित्रों सहित उन मतों के प्रतिपादन से रोके नहीं जा सके हैं, जिनमें वंशानुगति के अत्यधिक प्रमाणों के होते हुए भी, यह दिखलाने का प्रयत्न किया गया है कि परिवर्तनशील जीवित पदार्थों को परिस्थिति अब भी बदलती रहती तथा उनमें परिवर्तन करती है और इस प्रकार नये प्रकारों तथा नयी जातियों की उत्पत्ति करती है।

इन सिद्धान्तों की मीमांसा हम अगले अध्याय में करेंगे, हालाँकि हमारा मत है कि जननिक अध्ययनों द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रमाणों से यह बात अन्तिम रूप से निश्चित हो जाती है कि वंशानुगति एक प्रभावशाली शक्ति है।

जैसा कि हमने पहले कहा है, भौगोलिक परिस्थिति का स्थान है, उसका अपना कार्य है, परन्तु यह उस प्रकार का नहीं है जैसा कि परिस्थितिवादी बतलाते हैं। उसका स्वरूप क्या है, इसकी चर्चा समय आने पर हम करेंगे।

उन्नीसवाँ अध्याय

जाति तथा वंशानुगति से सम्बन्धित भौगोलिक परिस्थिति तथा निश्चयवाद (DETERMINISM) के महत्त्व की अन्तिम व्याख्या

सोलहवें अध्याय में हमने जातिवैज्ञानिक तथा जननिक ढंग के उन साधारण तर्कों की संक्षिप्त व्याख्या की थी, जो अपनी सर्जनात्मक क्रियाशीलता से, उपार्जित गुणों के पारेषण के सिद्धान्त द्वारा मनुष्य की जातियों के विकास को बदल देने की परिस्थिति की शक्ति पर, शंका करते मालूम पड़ते हैं। इसके बाद के दो अध्यायों में हमने वंशानुगति के विस्तृत अध्ययन तथा विशेष रूप से जुड़वों के तुलनात्मक अध्ययन से मिलनेवाले प्रमाणों पर तथा परिस्थिति और वंशानुगति की आपेक्षिक शक्ति पर विचार किया।

प्रथम दृष्टि में, जननिक अध्ययनों के आधार पर इस प्रश्न के सम्बन्ध में जाति-वैज्ञानिक दृष्टिकोण, भौगोलिक निश्चयवादियों का कथन मानने को तैयार न होगा, क्योंकि उनके द्वारा प्रतिपादित प्रारम्भिक सिद्धान्त, जननिक विज्ञान की प्रक्रिया तथा जातीय विकास के, जैसा कि सामान्यतः उसका अर्थ लिया जाता है, विरुद्ध हैं।

इसलिए जब इन सबके ऊपर हमारे पास उन अध्ययनों के प्रमाण हैं जिनका सीधा सम्बन्ध परिस्थिति की शक्ति की परीक्षा करने से है तथा जिनके परिणाम परि-पोपकों (नरचरिप्ट) के परिणामों के प्रतिकूल हैं, तब यह पता चलता है कि यदि वैज्ञानिक तथ्य हमारे निर्देशक हैं, तो केवल यह परिणाम निकाला जा सकता है कि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में मनुष्यों के जातिगत गुणों के पारेषण में वंशानुगति ही मुख्य प्रभावशाली शक्ति है।

तिस पर भी, इस विषय का अन्त करने के लिए यह आवश्यक है कि वादविवाद जाति-विज्ञान के क्षेत्र में ले आया जाय तथा उसी के प्रकाश में भौगोलिक निश्चय-वादियों के मुख्य तर्कों का निरीक्षण किया जाय। यही हमने अगले पृष्ठों में करने का प्रयत्न किया है।

इसके फलस्वरूप हमें सभी सम्बद्ध विज्ञानों में परिणाम की एक आधारभूत एकता का संकेत मिलता दिखलाई पड़ता है, अतः साधारणतया इस प्रश्न के सम्बन्ध में, उनके परिणाम निर्णयकारी समझे जा सकते हैं। हालाँकि नव उपार्जितगुणवादी (neo

Lamarkian) विचारों पर, एक वैज्ञानिक मत अथवा दार्शनिक विश्वास की भाँति जोर दिया जाय तो अवश्य ही कुछ लोग इन परिणामों को उस तरह पूर्ण नहीं समझेंगे जिस तरह हमने सुझाया है।

फिर भी, चाहे जो हो, अब हम निश्चयवादियों के तर्कों की परीक्षा करेंगे तथा पाठकगणों को परिणाम स्वयं निकाल लेने के लिए छोड़ देंगे।

परिस्थिति तथा बढ़ा हुआ कद

कई स्पष्ट तथ्यों में से एक यह भी है कि शरीर की बाढ़ प्रभावित होती है—एक तो भौगोलिक परिस्थिति के द्वारा एवं अच्छे पोषण से, जो अच्छी परिस्थितियों से और बढ़ जाता है, दूसरे कठिन परिश्रम के घंटों में कमी हो जाने से विशेष कर कम उम्र में जब कि शरीर बढ़ रहा हो।

इसलिए विलर्मे[1] ने जो तर्क उपस्थित किया कि अच्छी परिस्थिति विकास में सहायक होती है तथा बुरी दशाओं में कद का बढ़ना रुक जाता है, उसे हम अपने अनुभव में स्वयं प्रमाणित देखते हैं।

इससे साधारणतया यह परिणाम निकाला जाता है कि इन कारकों को नियन्त्रित करने से जातीय तथा सामाजिक सुधार किया जा सकता है।

समाज-सुधार के सम्बन्ध में यह ठीक है, इसमें कोई सन्देह नहीं, हालाँकि सामाजिक उन्नति भी जातिसम्बन्धी सुधार से लाभदायक रूप में प्रभावित हो सकती है, परन्तु यह मान लेना कि इससे जातिगत सुधार भी हो सकता है, वास्तव में विवादास्पद वस्तु को ही सत्य समझ लेना है।

संक्षेप में लम्बे और छोटे कद तथा लोगों के रहने की दशाओं में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इस प्रकार के कुछ तथ्यों की परीक्षा के उपरान्त, जो कि जातिवैज्ञानिक के क्षेत्र में आते हैं, यह काफ़ी स्पष्ट हो जाता है।

उदाहरणार्थ, अंग्रेज मध्य श्रेणी के लोगों की ऊँचाई की गणना ६९·१४ इंच (१·७५७ मीटर) तथा श्रमिक वर्ग की ६५·७ इंच (१·७०५ मीटर) की गयी[2] है।

१. Villerme.

२. फाइनल रिपोर्ट्स (Final Reports), ब्रिटिश एसोसियेशन आफ एडवान्समेंट आफ साइन्सेज (British Association of Advancement of Sciences) १८८३, पृष्ठ १७

डा० जान बेडो[1] ने भी बतलाया है कि खानों में काम करनेवाले, आसपास रहनेवाले अन्य श्रमिकों से भी छोटे थे। उसी लेखक तथा रावर्ट्स[2] (Roberts) ने बतलाया है कि कारखानों तथा शहरों के काम करनेवाले, शहर से बाहर रहनेवाले देहाती कार्यकर्ताओं की अपेक्षा छोटे थे।

बेल्जियम[3] (Belgium) में तथा साथ ही रूस[4] (Russia) में भी यही बात सत्य मालूम होती है।

पहली बात तो यह महत्त्व की है कि अधिक आराम करनेवाले वर्गों का कद श्रमिकों के कद से अधिक ऊँचा होता है।

दूसरे, जहाँ तक इन उदाहरणों का सम्बन्ध है, यह भी उतने ही महत्त्व का है कि श्रम करनेवाले वर्गों में भी, जो मुख्यतः उत्तरी यूरोप के थे, शहर के लोग १९ वीं शताब्दी के घने औद्योगिक शहरों की बुरी दशाओं में रहने के कारण देहातों के लोगों की अपेक्षा अवश्य ही छोटे कद के थे, जिससे हम परिणाम निकाल सकते हैं कि यह पोषण तथा रहन-सहन के नीचे स्तर के कारण था।

इस सम्बन्ध में न केवल यही दो तथ्य कद तथा उत्तम रहन-सहन के सम्बन्ध का महत्त्व बतलाते हैं परन्तु एक तीसरा तथ्य भी निकलता है जो उतने ही महत्त्व का है।

ये आँकड़े उस समय लिये गये हैं जब कि सभी पश्चिमी देशों में, जहाँ तक रहने की स्थिति तथा श्रम के घंटों का सम्बन्ध है, औद्योगिक दशाएँ आज की अपेक्षा बहुत खराब थीं। वास्तव में वे आजकल की अपेक्षा तन्दुरुस्ती के नीचे प्रमाप वाले लोगों को प्रदर्शित करते हैं।

१. Dr. John Bedoe, स्टेचर एण्ड बल्क आफ़ मैन इन ब्रिटिश आईल्स (Stature and Bulk of Man in British Isles), लन्दन, १८७०, पृष्ठ १४८

२. ए मैनुअल आफ ऐन्थ्रोपोमेट्री (A. Manual of Anthropometry), लन्दन, १८७८, तथा जर्नल आफ दि स्टेटिस्टिकल सोसाइटी आफ लन्दन (Journal of the Statistical Society of London), १८७६

३. हाउजे (Housz'e) बुलेटिन आफ़ सोशल एन्थ्रोपोलोजी (Bulletin of Social Anthropology), ब्रुसेल्स (Brussels), १८८७

४. एनुचिन (Anuchin) "O Geograficheskom" लैनिनग्राड (Leningrad) १८८९, ज्योग्रेफिकल डिस्ट्रीब्युशन आफ स्टेचर इन रश। (Geographical Distribution of Stature in Russia)

पिटर्ड[1] ने बतलाया है कि यूरोप की उत्पत्ति के अमेरिका-निवासी, जिन लोगों से वे आये हैं, उनकी अपेक्षा अधिक लम्बे कद के पाये जाते हैं। इसकी उसने सम्भवतः सत्य ही विवेचना की है कि यूरोप की अपेक्षा अमेरिका में यान्त्रिक उन्नति पहले ही हुई है, इसीलिए बालिग होने के पूर्व अधिक श्रम के कारण रुक जानेवाली बाढ़ से बचे रहकर यहाँ के मनुष्यों को विकास के लिए अधिक समय मिला।

वह यह भी बतला सकता था कि उपजाऊ तथा प्राकृतिक पदार्थों से भरपूर देश में आप्रवासितों ने जो ऊँचे स्तर के जीवन का उपभोग किया यह भी एक अन्य कारक था जो कि उसी ओर सहायक था। जब कि आप्रवासितों के कद में तथा अमेरिका में उत्पन्न हुए उनके बच्चों के कद में फर्क होने का तथ्य यह है कि ये आप्रवासित लोग यूरोप के पददलित वर्गों से आये थे तथा ये वही लोग थे जिनका पोषण ठीक नहीं था और शरीर के विकास के समय उनके कार्य करने के घंटे भी अधिक थे।

ये सारे तथ्य बड़े मनोरंजक हैं अवश्य, परन्तु अब हम अपने प्रारम्भिक विषय को देखें जिससे हटकर हमने इस तथ्य को समझने का प्रयत्न किया था कि परिस्थिति के प्रभाव की जातिवैज्ञानिक कसौटी को प्रभावित करनेवाले ठोस प्रमाण हैं, तो मालूम होगा कि वे किसी खास बात की स्थापना नहीं करते। हालाँकि, यह स्वीकार किया जाता है कि जातियों में प्रकृति से ही जो परिवर्तन के प्रकार मिलते हैं, ये तथ्य बहुधा उनके निर्देशक माने जाते हैं।

फिर भी इन तथ्यों में जो कुछ है उससे कहीं अधिक उससे निकालना कितना गलत है, यह सरलता से जाना जा सकता है।

परिस्थिति लम्बी **जाति** (रेस) की नहीं, परन्तु एक लम्बी **पीढ़ी** (जेनरेशन) की उत्पत्ति करती है, बस यहीं सब कुछ है परन्तु दोनों में अन्तर बहुत अधिक है। फिर भी, हमें ध्यान रखना चाहिए कि यदि हम श्रेणी तथा श्रेणी के बीच में परिस्थिति के प्रभाव का अध्ययन करें तो, मालूम होगा कि एक अन्य कारक, जातीय कारक, भी इसके बीच में आता है।

डेनकिर[2] (Deniker) ने बतलाया है कि यूरोप में हम ऊँची तथा नीची श्रेणी के लोगों के कद की विभिन्नता में जातीय बनावट की विभिन्नता भलीभाँति देख सकते हैं, क्योंकि महाद्वीप के अधिकांश भाग में, ऊँचे कदवाली नार्डिक जाति

१. पूर्वलिखित, पृष्ठ १५
२. पूर्वलिखित, पृष्ठ ३१–३२

समाज के ऊर्ध्वार्ध भाग में अधिक मिलती है और अल्पाइन तथा मेडिटेरेनियन जैसी छोटे कद की जातियां निचली श्रेणी में मिलती हैं।[1]

परिस्थिति तथा जातियों का मिश्रण

स्थायी रूप से जातीय प्रकारों को परिवर्तित करने में परिस्थिति के प्रभाव के पक्ष में एक दूसरा तर्क भी उपस्थित किया जाता है। वह है यहूदियों में अनेक प्रकार के गुणों का मिलना जिसको कि वोआस (Boas)[2] तथा थोड़े से अन्य लोगों ने परिस्थिति के कार्य का परिणाम वतलाया है।

जैसा कि पिटर्ड[3] ने कहा है, जाहिरा तौर से जातीय मिश्रण ही उनकी व्याख्या है जिसका यहूदियों के इतिहास में स्पष्ट संकेत मिलता है।

अमेरिका की परिस्थिति तथा उससे उत्पन्न कहे जानेवाले जातिसम्वन्धी परिवर्तन

प्रोफेसर फ्रैन्ज़ वोआस ने भी दावा किया है कि परिस्थिति ने अमेरिका के आप्रवासितों के भौतिक प्रकारों को, विशेष रूप से कपाल के अनुपातों के सम्वन्ध में भलीभाँति प्रभावित किया है तथा इस सम्वन्ध में उन्होंने यहूदियों के उदाहरण को प्रोद्धरित किया है।

१. ब्रिटेन (Britain) में यह कारक उतना नहीं लागू होता जितना कि जातीय इतिहास की विभिन्नता के कारण यूरोपीय महाद्वीप में। महाद्वीप के अनेक भागों में नार्डिक जाति वाले, विजेताओं की उच्च श्रेणी के रूप में थे किन्तु इंग्लैण्ड में, जहाँ तक कि देश के पूर्वी भाग का सम्वन्ध है, उन्होंने खुद ही उस प्रदेश को वसाया, पहले केल्टों ने, फिर ऐंग्लो-सैक्सनों ने तथा अन्त में कुछ भागों को डेन्स (Danes) ने वसाया। नार्मन आक्रमण के ऐतिहासिक, भाषासम्वन्धी तथा सांस्कृतिक काफी परिणाम हुए हैं परन्तु वे वहुत थोड़े जाति-वैज्ञानिक महत्त्व के थे क्योंकि नार्मन लोग अधिकांशतः नार्डिक उत्पत्ति के जर्मन लोग थे जो कि स्वयं ऐंग्लो-सैक्सनों के समान थे।

२. फ्रैन्ज बोआस (Franz Boas) चेन्जेज आफ़ वाडीफ़ार्म आफ डिसेन्डेन्ट्स आफ़ इम्मीग्रान्ट्स (Change of Body form of Descendants of Immigrants), १९१२

३. पूर्वलिखित, पृष्ठ १४

फिर भी प्रोफेसर के० पीयर्सन तथा एल० एच० सी० टिपेट[1] ने इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित किया है कि ब्रिटिश तथा मध्य यूरोप के यहूदियों की कापालिक देशनाएँ बहुत समान हैं तथा यूरोप के विभिन्न देशों में सैकड़ों वर्ष रहने के पश्चात् भी वह बात नहीं हो सकी जिसका फ्रैन्ज़ बोआस ने अमेरिका में केवल एक पीढ़ी में हो जाने का दावा किया है।

वास्तव में यह तथ्य कि यहूदी जातीय प्रकार (जिससे मतलब ऐशकेनाजायक, 'Ashkenazaic' से है, जो कि आधार रूप में आर्मेनायड जाति के गुणों से प्रभावित है) साधारण निरीक्षण द्वारा ही सारे संसार में सरलता से पहचाना जा सकता है, एक अच्छा प्रमाण है कि परिस्थिति, वास्तव में जाति-वैज्ञानिक गुणों को विभिन्न प्रकार तथा आकारों में परिणत नहीं करती।

प्रोफेसर रगेल गेट्स ने इस विषय के अनेक कार्यकर्ताओं के मतों का संक्षिप्त विवरण दिया है, जिसका एकत्रित प्रभाव देशान्तरगमन के बतलाये गये प्रभाव का अर्थात् कपाल[2] के आकार पर नयी परिस्थितियों के प्रभाव का निराकरण कर देता है।

सम्भवतः आंशिक रूप से और बहुत थोड़ी मात्रा में देशान्तरगमन के कारण जो परिवर्तन बतलाये जाते हैं तथा जननिक उत्पत्ति से जिनका सीधा सम्बन्ध नहीं है, वे वास्तव में कपाल के आकार पर बढ़े हुए कद के प्रभाव के कारण हैं।

प्रोफेसर आर० ए० फिशर (Professor R. A. Fisher) ने बतलाया है कि यूरोप तथा जापान में छोटी श्रेणी के लोगों की अपेक्षा ऊँची श्रेणी में लम्बे कद तथा लम्बे सिरवाले लोग मिलते हैं।

फिर भी, जहाँ तक यूरोप का सम्बन्ध है ऊँची तथा नीची श्रेणियों में इस प्रकार का अन्तर मुख्य रूप से इस कारण से नहीं बतलाया जा सकता, क्योंकि यह अधिकांशतः जननिक है अर्थात् नार्डिक तथा डाइनारिक तत्त्व उच्च लोगों में, सामान्य जनता की अपेक्षा अधिक प्रदर्शित होते हैं।

फिर भी, ऐसा भी हो सकता है कि लम्बा कद वास्तव में सकरे कपालों की उत्पत्ति

१. ऑन दि स्टेबिलिटी ऑफ दि सिफालिक इण्डिसीज विद दि रेस (on the Stability of the Cephalic Indices with the Race.), बायोमेट्रीका (Biometrika), १६, पृष्ठ ११८

२. आर० आर० गेट्स (R. R. Gates) ह्यूमैन जेनेटिक्स (Human Genetics), १९४६, जिल्द दो, पृष्ठ १३८३

करता हो। यदि ऐसा है तो, उदाहरणार्थ अमेरिका, कनाडा तथा आस्ट्रेलिया की रहन-सहन की अच्छी दशाएँ अधिक लम्बी पीढ़ी की उत्पत्ति कर सकेंगी और इससे सकरे कपाल की उत्पत्ति होना भी बहुत संभव है। परन्तु यह चीज स्थायी अथवा जननिक महत्त्व की नहीं है। यदि जीवन की ऊँचे स्तर की दशाएँ हटा दी जायँ तो पीढ़ी पुनः अपने प्रारम्भिक प्रकार में परिणत हो जायगी। कोई भी जननिक शास्त्री बाह्य समरूप (फेनोटाइप) पर परिस्थिति के प्रभाव के सम्बन्ध में आपत्ति नहीं करना चाहता, परन्तु अपने कार्य के अनुभव द्वारा वे उन प्रमाणों को अस्वीकार करने को बाध्य हैं जो कई क्षेत्रों में यह दिखलाने के लिए अभी तक दिये गये हैं कि बाह्य उद्दीपन द्वारा किसी सम पित्र्यक में कोई मूलभूत परिवर्तन की उत्पत्ति की जा सकती है।

यह सब चाहे जो हो, कद की वृद्धि द्वारा, जो स्वयं देशान्तर गमन के पश्चात् सुधरी हुई परिस्थिति के कारण है, कपाल का इस तरह सकरा हो जाना किसी बड़े महत्त्व का नहीं है।

यह अवश्य ही इतने महत्त्व का नहीं है कि प्रोफेसर बोआस या और किसी के द्वारा उठाये गये इस दावे का औचित्य सिद्ध कर दे कि परिस्थिति ने काफी सीमा तक किसी जातीय प्रकार को बदल दिया है। कद में इस प्रकार के परिवर्तन दीर्घ कपालों (dolichocephals) को माध्यमिक कपालों (mesaticephals) में अथवा इन्हें पृथु कपालों (brachycephals) में परिणत नहीं कर सके।

बढ़े हुए कद के कारण कपाल के सकरे होने के सिद्धान्त के सम्बन्ध में प्रसंकर शक्ति के सम्भावित प्रभाव को न भूल जाना चाहिए।

प्रसंकर शक्ति जिसकी व्याख्या हम अधिक विस्तार से अंन्य स्थान में करेंगे, अन्य गुणों के साथ साथ लम्बे कद की उत्पत्ति भी कर सकती है तथा इस प्रकार कपाल का सकरापन हो सकता है। चूँकि परिस्थिति द्वारा कपाल के आकार में परिवर्तन की बात अक्सर ऐसे उदाहरणों से ली जाती है जिनमें यह परिवर्तन उन देशों में बस जाने के बाद होता है जहाँ जातीय मिश्रण हो रहा है तथा इसलिए जहाँ पर प्रसंकर शक्ति एक महत्त्व का कारक है, वहाँ इसकी सम्भावना को न छोड़ देना चाहिए।

भौगोलिक निश्चयवाद द्वारा बोआस का समर्थन

बोआस (Boas) ने यह सिद्ध करने के प्रयत्न में जो कार्य किया है कि आप्रवास से जातीय गुणों में मूल रूप से परिवर्तन हो जाता है, उस कार्य को भौगोलिक निश्चयवाद के एक प्रमुख समर्थक, येल विश्वविद्यालय के स्व० प्रोफेसर एल्सवर्थ हंटिंगटन ने लिया। ऐसा करते समय उन्होंने जननिक क्षेत्र में कार्य करनेवालों के विचारों की अव-

हेलना की है, जिसके कुछ उदाहरण हम प्रोद्धरित कर चुके हैं। उन्होंने एक अतिशयता-पूर्ण दावा भी किया है कि "प्रारम्भ की संदिग्धावस्था के बावजूद बोआस ने एक ठोस, युग-निर्माणकारी उन्नति की ओर कदम बढ़ाया है।"[1] वास्तव में यदि यह सत्य होता तो यह युग-निर्माण से भी अधिक होता, क्योंकि यह डार्विन, मेण्डल तथा अन्य जननिक शास्त्रियों के आज तक किये गये अन्वेषणों को नष्ट कर देता और मानव-शास्त्रियों तथा जातिवैज्ञानिकों द्वारा किये गये सम्पूर्ण परिश्रम के मूल आधारों को अप्रमाणित कर देता।[2]

हवाई में जापानी प्रवासी

इसकी पुष्टि करने के लिए हण्टिंगटन इसके आगे भी जाते हैं तथा हवाई में जापानी आप्रवासितों पर लिखित शेपीरो (Shapiro) के ग्रंथ से उद्धरण देते हैं, जिसके अन्वेषण आप्रवासित माता-पिताओं तथा उनके बच्चों के शारीरिक आकार के अन्तर की ओर संकेत करते हैं।

इसके साथ साथ उन्होंने पिछले १५० वर्षों में स्विटजरलैण्ड तथा ५० वर्षों में अन्य स्थानों में होनेवाली कद की वृद्धि के आँकड़ों के लिए बोलेस[3] (Bowles) को उद्धृत किया है।

शेपिरो का कार्य मुख्यतः शारीरिक अनुपात तथा उनसे मिलनेवाली देशनाओं से सम्बन्धित है। किसी अन्य स्थान पर हमने बतलाया है कि जननिक प्रभाव मापों में

१. मेनस्प्रिंग्स आफ़ सिविलाइजेशन (Mainsprings of Civilization), न्यूयार्क एण्ड लन्दन, १९४५, पृष्ठ ५४

२. इस स्थान पर यह कहा जा सकता है कि सारे भौगोलिक निश्चयवादी, स्व० प्रोफेसर एलसवर्थ हन्टिंगटन के मतों से सहमत नहीं हैं। उदाहरण के लिए प्रोफेसर ग्रिफ़िथ टेलर इस सम्बन्ध में प्रोफेसर फ्रैन्ज बोआस के विचारों से असहमत हैं, जैसा कि उन्होंने अपने एक 'रेशिल ज्योग्रफ़ी' (Racial Geography) लेख में ज्योग्रफ़ी इन दि ट्वेन्टिएथ सेन्चुरी (Geography in the Twentieth Century) में बतलाया है, लन्दन (London) मेथुअन (Methuen), १९५३

३. न्यु टाइप्स आफ़ ओल्ड अमेरिकन्स एट हार्वर्ड ऐण्ड ऐट ईस्टर्न वुमेन्स कालेजेज (New Types of old Americans at Harvard and at Eastern women's Colleges) हार्वर्ड यूनीवर्सिटी (Harvard University), १९३२

प्रदर्शित नहीं होते वरन् आकार द्वारा अधिक सरलता से देखे जा सकते हैं। यह वात इसे इस दिशा में सीमित कर देती है, अन्यथा यह कार्य वड़े महत्त्व का है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि मुख्यतः यह कार्य हवाई में जापानी आप्रवासितों के वंशजों के कद की अथवा आकार तथा वजन की वृद्धि वतलाता है।

शारीरिक अनुपात, स्वभाव तथा प्रवसन

प्रोफेसर एल्सवर्थ हंटिंगटन स्वीकार करते हैं कि शारीरिक अनुपात तथा स्वभाव में सम्वन्ध मिलता है। अधिकांश प्रौढ़ भौतिक मानव-वैज्ञानिकों ने इस विषय पर कभी सन्देह नहीं किया था, जिनका विशेष ध्यान प्रारम्भ में चाहे कपाल के सम्वन्ध में रहा हो, यह जानते थे कि प्रत्येक कपाल के प्रकार में एक विशेष शारीरिक आकार से सम्वन्धित होने की प्रवृत्ति मिलती है।

इसलिए यदि, जैसा कि हंटिंगटन मानते हैं, ऐसा कोई सम्वन्ध है तव स्वदेश की औसत जनसंख्या तथा औसत आप्रवासितों के अन्तर का कारण चुनाव भी माना जा सकता है।

यह समझने के लिए कोई कल्पना करने की आवश्यकता नहीं है कि स्वदेश में चाहे जितनी कठिनाइयाँ हों परन्तु हर व्यक्ति ऐसा नहीं है जो उत्प्रवासी वनने को तैयार हो। उत्प्रवासन में पिछले को भूल जाने की, अपने को मूल स्थान से अलग करने की तथा सभी सुरक्षा को छोड़ने की आवश्यकता पड़ती है, जैसी भी वह रही हों, जो उस स्थान में रहने से मिलती हैं जहाँ पर कुछ लोग उसे जानते हैं तथा जहाँ उसके रक्त-सम्वन्धी तथा नातेदार रहते हों। उत्प्रवासन के लिए प्रवासी में साहसिक प्रवृत्ति तथा काफी सीमा तक घर में रहनेवाले औसत मनुष्यों से अधिक आत्म-निर्भरता होनी चाहिए। इसलिए, इसके लिए हिम्मत चाहिए, मुख्यतः उन दशाओं में, जव कि यह कार्य कुछ लोगों को वाहर वसाने की राज्य की किसी योजना के अन्तर्गत न हो रहा हो।

इसलिए यह स्पष्ट है कि उत्प्रवासियों में कुछ निश्चित स्वभावसम्वन्धी गुणों का होना अन्तर्निहित है। स्वभाव तथा शरीर की वनावट में घना सम्वन्ध होने के कारण यह परिणाम निकलता है कि उत्प्रवासन में जो एक विशिष्ट प्रकार के स्वभाव का चुनाव करना पड़ता है, उसके साथ ही एक विशेष प्रकार के शारीरिक आकार का भी चुनाव आवश्यक है।

इसलिए इसमें आश्चर्य नहीं कि हवाई द्वीपसमूह में जापान के जो आप्रवासी गये वे वास्तव में अपने देश की जनसंख्या से एक विशेष दिशा में थोड़ा भिन्न थे। परिणामतः उनके निकट-वंशजों में वही अन्तर वने रहेंगे।

साथ ही इसमें भी कोई आश्चर्य नहीं कि, जिन कारकों की हमने अभी व्याख्या की है उनको पूर्ण रूप से छोड़ दिया जाय तो भी, प्रवासितों के वच्चे अपने माता-पिता की अपेक्षा अधिक लम्बे तथा शरीर के भारी हों और उनमें कुछ अन्य गुणों के सम्बन्ध में भी थोड़ा अन्तर मिले। कारण यह है कि अभी जिन कारकों की व्याख्या की है उनके अतिरिक्त देशान्तर-गमन में बहुत से नये कारक भी शामिल रहते हैं।

प्रथम तो देशान्तर-गमन की प्रवृत्ति सदैव निर्धनता से अधिक अच्छी दशाओं की ओर बढ़ने की होती है।

आस्ट्रेलियानिवासियों के तथा अन्य उदाहरण इससे मिलते जुलते हैं। उन लोगों ने देशान्तर-गमन से अपनी स्थिति काफी सुधार ली है तथा उसी के साथ अपनी शारीरिक दशा की भी उन्नति कर ली है।

इसलिए, जो बच्चे पुरानी स्थिति के वजाय नयी तथा अच्छी परिस्थिति में बढ़ते हैं, वे पुराने समय की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह जाति के पूरे कद तक बढ़ेंगे। परन्तु यहाँ यह केवल अधिक अच्छे पोषण द्वारा परिस्थिति के कार्य करने तथा वाह्य समरूप पर उसके प्रभाव डालने का उदाहरण है। समपित्र्यक अप्रभावित रहता है। कम से कम इसका कोई प्रमाण नहीं कि उसमें परिवर्तन हुआ हो।

कद की वृद्धि, खुराक तथा पेशा

हण्टिंगटन[1] (Huntingtan) कद में साधारण वृद्धि के प्रमाणों का विवेचन करने के पश्चात्, जिसके सम्वन्ध में हमने भी मध्यकाल से वर्तमान समय तक बढ़ते चलने की चर्चा अन्य स्थान पर की है, केवल खुराक, स्वास्थ्य, व्यायाम तथा पेशे में सुधार को ही उसके लिए उत्तरदायी ठहराने के विचार को अस्वीकार करते हैं।

इसके विषय में शेपिरो ने भी उनका समर्थन किया है और इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित कर उक्त तर्क का खण्डन किया है कि अमेरिका के ओजार्क में तथा उस देश के दक्षिणी राज्यों में, जहाँ पर रहने की दशाएँ विशेष रूप से खराब हैं, संयुक्त राज्य अमेरिका के कुछ सव से लम्बे कद के लोग पाये जाते हैं। उनका कथन है कि "हालाँ कि चाहे यह दावा किया जा सकता है कि ये लोग पित्रागति द्वारा लम्बे कदवाले

१. पूर्वलिखित, पृष्ठ ५५

वर्ग से आये, तथ्य यह है कि बहुत खराब दशाएँ होते हुए भी ये लोग अब भी अपने यूरोप के पूर्वजों से अधिक लम्बे हैं।"[१]

फिर भी इस तर्क में उचित से अधिक बातें सत्य मान ली गयी हैं।

प्रथम तो, उनकी परिस्थिति की खराबी को उनके पूर्वजों की परिस्थिति तथा कद से तुलना करके सिद्ध करना आवश्यक है। यह केवल सम्भव ही नहीं है परन्तु काफी सम्भावित भी है कि उनके परदादाओं की रहने की दशाएँ आजकल मिलनेवाली दशाओं से कहीं अधिक खराब रही हों। यही कारण था कि ये लोग संयुक्त राष्ट्र अमेरिका को गये।

कद तथा प्रसंकर शक्ति

यदि केवल तर्क के लिए ही हम यह बात मान लें कि अच्छा पोषण इसके लिए उत्तरदायी नहीं है, तब भी एक आवश्यक बात छूट जाती है कि केवल यह तथ्य कि यूरोप से ओजार्क में लोगों ने देशान्तरगमन किया अथवा जापानी आप्रवासी जापान से हवाई (Hawaii) टापू गये, यह बतलाता है कि साधारणतया अन्तर्विवाह करने की परिधि बढ़ गयी और यहीं प्रसंकर शक्ति (Hybrid vigour) का विषय सामने आता है जो कि ऐसी व्याख्या के समय अक्सर छोड़ दिया जाता है।

प्रसंकर शक्ति के विषय की व्याख्या हमने अन्य स्थान में कुछ विस्तार से की है इसलिए यहाँ पर अधिक विस्तृत वर्णन करने का विचार नहीं है। फिर भी संक्षेप में हण्टिंगटन तथा शेपिरो के विचारों को स्पष्ट करने के लिए कुछ कहना आवश्यक है, यद्यपि वह कैसे होता है उसे हम आगे की व्याख्या के लिए छोड़ देंगे। ऐसी घटनाओं में उसकी विशिष्ट महत्ता पर अधिक जोर देना अनुचित नहीं है।

विवाह के क्षेत्र को बढ़ाये बिना, जहाँ से पति अथवा पत्नियाँ मिलती हैं, किसी प्रकार का देशान्तर-गमन नहीं हो सकता। जब कि पहले एक ही गाँव के पुरुष तथा स्त्री विवाह करते थे, देशान्तर-गमन के पश्चात्, पुरुष एक ऐसी स्त्री से विवाह कर सकता है जिसके माता-पिता निकटवर्ती गाँव के हों अथवा पुरुष के अपने माता-पिता के घर से अधिक दूर के प्रान्त के हों।

इस प्रकार से विभिन्न भिन्न-युग्म (allelomorphs) के आने से, जननिक

१. अमराम शेनफील्ड (Amram Scheinfield) से प्रोद्धरित, दि न्यु यू एण्ड हेरेडिटी (The New You and Heredity), लन्दन, १९५२, पृष्ठ १०४

वनावट का विस्तार हो जाता है। परिणामतः वहुत सी घटनाओं में प्रसंकर शक्ति का निर्माण होता है।

इसलिए यदि बच्चे अपनी उत्पत्ति के देशोंवाली पैतृक पीढ़ी की अपेक्षा वड़े न हों, तो यह आश्चर्य की वात होगी।

परिणामतः इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि वे वड़े हैं तथा नये प्रदेश में उत्पन्न होने से अपने पूर्वजों के कद की अपेक्षा, उनका कद वड़ा होने का जो परिवर्तन मिलता है उससे यह किसी प्रकार भी सिद्ध नहीं होता कि स्वयं परिस्थिति द्वारा ही यह सचेतन परिवर्तन हुआ है।

ऐसी सव घटनाओं में सम-पित्र्यक (जीनोटाइप) नयी परिस्थिति के असर से विलकुल अप्रभावित रहते हैं।

इस प्रकार से यद्यपि कोई भी जातिवैज्ञानिक जो अपने विषय को समझता है तथा कोई भी जननिकशास्त्री यह स्वीकार नहीं कर सकता, जैसा कि हंटिंगटन तथा शेपिरो ने भी नहीं किया है कि केवल अच्छी स्वास्थ्यसम्वन्धी दशाएं, व्यायाम, खुराक इत्यादि ही पूर्णतया वढ़े हुए आकार के लिए उत्तरदायी हैं, फिर भी वे उस प्रसंकर शक्ति के प्रभाव की अवहेलना नहीं कर सकते जो कि माध्यमिक काल से आजकल तक धीरे-धीरे मनुष्यों की गतिविधि की स्वतन्त्रता से उत्पन्न हुई है।

उत्प्रवासियों के वंशजों में कद की वृद्धि के वास्तविक कारण

इसलिए, इसके विपरीत जो कुछ कहा जा सकता है उसके होते हुए भी अच्छे पोषण के वढ़ते हुए लाभों में एक यह भी है कि यह सम्वन्धित जातीय प्रकारों की सम्भावित सीमा के अन्दर अच्छे कद तथा वजन की वृद्धि उत्पन्न करने में एक आवश्यक कारक है। प्रसंकरोर्जा (हेटेरोसिस) ने भी काफी व्यावहारिक रूप से तथा वहुधा विस्तार से वाह्य समरूप को प्रभावित किया है जिससे कि कद में परिवर्त्तन हुआ।

इस प्रकार मनुष्य के विकास तथा कद से सम्वन्धित जटिल एवं परस्पर विरोधी-से प्रतीत होनेवाले इस तत्त्व की व्याख्या उस ज्ञान के आधार पर की जा सकती है जो हमें जातियों की आधारभूत समरूपी वनावट पर पड़नेवाले पोषण के प्रभाव के सम्बन्ध में होता है। इसके साथ ही प्रसंकरोर्जा (हेटेरोसिस) की जानकारी से भी उसकी व्याख्या हो सकती है जैसा कि वह वाह्य समरूप को प्रभावित करती है चाहे हम इस वात की व्याख्या कर रहे हों कि शहर तथा देहात के लोगों में अथवा आप्रवासितों तथा स्वदेश की जनसंख्या में इतनी विभिन्नता क्यों है। बढ़े हुए कद की वात हमारे जननिक ज्ञान से मेल खाती है और इससे इस मत का समर्थन कदापि नहीं होता कि वंशानुगति का

सिद्धान्त किसी भी मात्रा में "नये मानव विज्ञान" द्वारा परिवर्तित किया जा रहा है। यह "नव्य मानव विज्ञान" प्रभावतः ऐसा सिद्धान्त है जो उन सभी बातों को अस्वीकार करता है जो जाति-विज्ञान की शास्त्रीय व्याख्या पर वैज्ञानिक रूप से भली भाँति आधारित है।

अमेरिका में फ्रैन्ज बोआस ने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका (United States of America) में यहूदी आप्रवासितों के कपाल के अनुपात पर जो कार्य किया है तथा उस कार्य को स्व० प्रोफेसर एल्सवर्थ हण्टिंगटन द्वारा जो समर्थन प्राप्त हुआ है, उसका प्रयत्न वास्तव में इस क्षेत्र के प्रारम्भिक लेखकों ने पहले ही शुरू कर दिया था। मुख्यतः जर्मनी में ऐसा हुआ जहाँ पर सामान्यतः परिस्थितीय दशाओं को दक्षिणी जर्मनी तथा मध्य यूरोप की जनसंख्या के चौड़े कपालों का कारण बतलाया है। इनमें से बहुतों ने पर्वतीय दशाओं तथा स्थान की अधिक ऊँचाई के आधार पर इसे समझाने का प्रयत्न किया है।

कपाल के आकार पर जलवायु का प्रभाव

जो हो, इन समर्थकों में एक महान् जातिवैज्ञानिक स्व० प्रोफेसर सर विलियम फ्लिंडर्स पेट्री (Professor Sir William Flinders Petrie) का नाम उल्लेखनीय है।[1]

उन्होंने परिस्थिति के प्रभाव का समर्थन करने में जलवायु की शक्ति का महत्त्व माना और यह सुझाव दिया कि कपाल का आकार समताप रेखाओं पर आधारित है।

इस मत के समर्थन में उन्होंने यह तथ्य प्रोद्धरित किया है कि लम्बार्डी (Lombordy) पर ५६८ ई० पूर्व में लैंगोबार्ड (Langobard) की लम्बे कपालवाले नार्डिक लोगों की ऐंग्लोसैक्सन जाति ने हमला किया था, परन्तु फिर भी आज लम्बार्डी यूरोप के सबसे छोटे कपालवाले क्षेत्रों में से एक है।

फिर भी यह तथ्य, जैसा कि पेट्री (Petrie) ने सोचा था, परिस्थितीय नियंत्रण के कारण नहीं है वरन् पूर्णतया मूल लैंगोबार्ड-निवासियों की जातीय अवनति के कारण है।

१. माइग्रेशन्स (Migrations) जर्नल आफ दि रायल एन्थ्रोपोलोजिकल इन्स्टीट्यूट (Journal of the Royal Anthropological Inst.) भाग ३६, हक्सले भाषण, १९०६

हमारे मत से प्रोफेसर पार्सन्स[1] निःसन्देह ही ठीक कहते हैं जब वे पेट्री के विचारों की समालोचना करते समय उसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि "हम यह बिना विचार किये नहीं रह सकते कि पेट्री अपने उत्साह में कुछ तथ्यों को छोड़ गये हैं जिन पर भी, कोई निर्णय देने के पूर्व, विचार करना आवश्यक था। जिस बात पर उन्होंने पूरा जोर नहीं दिया है वह है कि इटली के उत्तरी शेष भागों की भाँति लम्बार्डी, आल्प्स के काफ़ी निकट है, जो कि छोटे सिरवाली अल्पाइन जाति (Alpine race) का केन्द्र था। अन्य बात जो उन्होंने नहीं बतलायी यह है कि अल्पाइन जाति पिछले १२०० वर्षों से अल्पाइन केन्द्र से उत्तर तथा दक्षिण की ओर अपने लम्बे सिरवाले पड़ोसियों की ओर बराबर फैलती रही है।"

इस सबके उपरान्त यह बात भी बतलायी जा सकती है कि अल्पाइनवालों का चौड़ा कपाल, नार्डिक तथा मेडिटेरेनियन के सकरे कपालों पर प्रभावी है। इसीलिए इस प्रकार की नार्डे-अल्पाइनो-मेडिटेरेनियन मिश्रित जनसंख्या में चौड़े कपालवाले प्रकार का ब.ह्य समरूपी प्रकटीकरण उसके समपित्र्यक से अधिक होगा।

इसलिए वास्तव में, उत्तरी इटली के लोग इतने अधिक अल्पाइनप्रभावित नहीं हैं जितना कि उनके कपाल के अनुपात से पता चलता है।

इसके आगे यदि यह भी जोड़ दिया जाय कि नार्डिक जातीय प्रकार गरम जलवायु के लिए कम उपयुक्त है और यह वर्तमान औषधियों, स्वच्छता के प्रयत्नों तथा उनके मलेरिया जैसे रोगों के नियन्त्रण के पूर्व मुख्य रूप से सत्य था, तो हम देखेंगे कि जहाँ तक लम्बे कपालों से चौड़े कपालों में वस्तुतः परिवर्तन हुआ है, जिससे कोई जातिवैज्ञानिक इनकार नहीं करता, ऐसा अंशतः जनसंख्या के नार्डिक तत्त्वों के विरुद्ध विपरीत चुनाव के कारण हुआ।

इस प्रकार, सन्तानोत्पादन की विभिन्न गति, जिससे नार्डिक की अपेक्षा अल्पाइन लोगों की शीघ्र वृद्धि हुई, फिर नार्डिक के विपरीत, बीमारी द्वारा विरुद्ध चुनाव होना तथा अन्त में कपाल के प्रभुत्व द्वारा जनसंख्या के नार्डिक तत्त्वों का ढक जाना और नार्डिक के ऊपर अल्पाइन रंग का प्रभाव (तथा जहाँ तक कि रंग का सम्बन्ध है मेडिटेरेनियन का) यह सब लम्बार्डी के लोगों के आकार में, नार्डिक से अल्पाइन में, परिवर्तित होने के कारण है।

१. दि अर्लियर इनहैबिटेन्ट्स आफ़ लन्दन (The Earlier Inhabitants of London), पृष्ठ ५५, १९३७

जब हमारे पास इतनी स्पष्ट व्याख्या है तब पता चलता है कि प्रोफेसर सर विलियम फ्लिन्डर्स पेट्री (Prof Sir William Flinders Petrie) द्वारा प्रतिपादित किये गये सिद्धान्त कितने अनावश्यक और सचमुच कितने वाहियात हैं।

लम्बे कपालों की तथाकथित प्राचीनता

बहुत से लेखक, जिनमें भौगोलिक निश्चयवादी भी हैं, लम्बे कपाल को प्राचीन बतलाते हैं, परन्तु वे मानव जातियों के उद्विकास को यूरेशिया (Eurasia) के मध्य में मानते हैं और दावा करते हैं कि चौड़े सिरवालों की उत्पत्ति बाद में हुई और इन्होंने धीरे-धीरे लम्बे सिरवालों को बाहर की ओर भगा दिया।

इससे भूगोलवेत्ताओं ने यह परिणाम निकाला कि लम्बे सिरवालों से जो सभ्यता की अच्छी बातों की उत्पत्ति हुई है, वह उनकी जातिगत योग्यता के कारण नहीं वरन् भौगोलिक सुविधाओं के कारण हुई है।

इस दृष्टिकोण में दो बातें हैं।

प्रथम तो लम्बे कपालवाली जातियों की प्राचीनता।

दूसरे, किसी सभ्यता को यदि लम्बे सिरवालों ने विकसित किया तो वह उनकी वंशानुगति के कारण नहीं हो सकती वरन् विभिन्न समय में सुविधाजनक भौगोलिक परिस्थितियों के कारण है।

वास्तव में तर्क के रूप में लम्बे कपाल की तथाकथित प्राचीनता का इतना महत्त्व है कि इसके आधार पर अनेक बड़ी सभ्यताओं के गुणों को वंशानुगति न बताकर परिस्थिति के कारण बतलाया जाता है और यही कारण है कि अनेक भौगोलिक लेखकों ने लम्बे कपालवालों के अपरिपक्व गुणों पर अधिक जोर दिया है।

कारण यह है कि यदि ये जातियाँ इतनी प्राचीन हैं कि ये सभ्यता की उत्पत्ति नहीं कर सकतीं तब इसका श्रेय भौगोलिक दशाओं को मिलना चाहिए।

हम निश्चयपूर्वक यह परिणाम नहीं निकालते कि अवश्य ही ऐसी प्रवृत्तियाँ पूरी तरह समझी गयी थीं तथा जान-बूझकर सभी अथवा अधिकांश निश्चयवादियों द्वारा इनका दुरुपयोग किया गया, परन्तु हमें विश्वास है कि कुछ उदाहरणों में, उनकी विचारधारा पर उनका प्रभाव पड़ा है इसलिए संक्षेप में ऐसे अभिकथनों की चर्चा करना आवश्यक है।

इस मत के माननेवाले विद्वानों में मुख्य प्रोफेसर एल्सवर्थ हंटिंगटन[1] हैं जिन्होंने

१. मेनस्प्रिंग्ज आफ़ सिविलाइजेशन, न्युयार्क तथा लन्दन, १९४५, पृष्ठ ५८

जब कि यह माना है कि "विश्व इतिहास में मेडिटेरेनियन तथा नार्डिक जातियों के लम्बे सिरवाले लोग वास्तव में एशिया के अल्पाइन तथा मंगोलायड चौड़े सिरवालों की अपेक्षा अपने कार्यों में अधिक प्रसिद्ध रहे हैं", तिस पर भी वे कहते हैं कि "यह विशिष्टता, फिर भी आन्तरिक योग्यता की अपेक्षा अधिकांशतः सुविधाजनक भौतिक परिस्थितियों के कारण है। समस्त युग के कुछ महान् लोगों में, लुई पाश्चर (Loius Pasteur) तथा विक्टर ह्यूगो (Victor-Hugo) की तरह, चौड़े सिरवाले अल्पाइन थे।"

वास्तव में कोई भी यह सोच सकता है कि केवल उनकी इस स्वीकारोक्ति के प्रकाश में ही इन भौगोलिक निश्चयवादियों के मतों की तर्कहीनता सिद्ध हो जाती है।

चूँकि यह मत उन्हीं के द्वारा प्रतिपादित किया गया है इसलिए प्रश्न यह नहीं है कि चौड़े कपाल के लोग अधिक बुद्धिमान्[१] हो सकते हैं अथवा नहीं, परन्तु यह कि विकास की प्रारम्भिक दशा में लम्बे सिरवाले प्राचीन हैं या नहीं।

संक्षेप में तथ्य यह है कि केवल चीन की सभ्यता को छोड़कर, जो कि समय की दृष्टि से बाद की हो सकती है तथा मध्य अमेरिका के मय तथा इनका (Mayas and Incas) की, जो कि अवश्य ही बाद की है, सबसे अधिक प्राचीन सभ्यताएँ पूर्णरूप से अथवा अंशतः लम्बे कपालवाले लोगों के कारण हैं जो कि सभी काकेसायड जातियाँ हैं। इस प्रकार से मिस्र, अमेरिका, बेबीलोनिया, यूनान, मेडिटेरेनियन बेसिन तथा भारत में सिन्धुघाटी की सभ्यताएँ उन लोगों की हैं जो कि मुख्यतः मेडिटेरेनियन जाति से आये हैं तथा यूनान और रोम में कुछ नार्डिक और कुछ डाइनारिक जाति का मिश्रण भी मिलता है।

बाद की ये सभ्यताएँ, जिन्होंने आर्यसभ्यता तथा इन्डो-यूरोपियन भाषाओं को जन्म दिया और जो कि पूर्व में भारत की आर्यसभ्यता से लेकर समय पाकर यूरोप में ईसाइयों तक फैली हुई हैं, अधिकतर नार्डिक जाति से सम्बन्धित हैं क्योंकि चाहे काकेसायड लोगों की अन्य कोई भी जाति शामिल हो, सब में उसी की सामान्य सन्तति (कॉमन स्ट्रेन) मिलेगी। जिन देशों में काकेसायड लोग रहते थे वहाँ की भूमि की भौगोलिक दशाएँ विभिन्न प्रकार की थीं जो कि भारत तथा मेसोपोटामिया में गरम से

१. किसी जातिवैज्ञानिक अथवा जननिक शास्त्री ने यह कभी नहीं कहा है कि वे नहीं थे, इसलिए पाश्चर तथा ह्यूगो तथा और अनेकों के नाम लेना निरर्थक है जिनको कि हम बतला सकते थे।

लेकर मेडिटेरेनियन की तथा ठंडे शीतोष्ण तक की मिलती हैं। परन्तु उनमें एक समान कारक के रूप में वह जातीय समूह रहा है जिसमें लम्बे सिरवाले सबसे महत्त्वपूर्ण रहे हैं। इसलिए, प्रोफेसर एल्सवर्थ हंटिंगटन का कथन केवल सत्य ही नहीं है वरन् उनके अपने इस सिद्धान्त को भी अयोग्य ठहराता है कि जहाँ तक इन सभ्यताओं का प्रश्न है, ये केवल आन्तरिक जातीय गुणों के कारण नहीं बल्कि भौगोलिक कारणों से विकसित हुई हैं।

अधिक प्राचीन जातियाँ लम्बे कपालवाली हैं

इन सब लेखकों का मुख्य आधार यह है, जैसा कि प्रोफ़ेसर ग्रिफिथ टेलर[1] ने तथा अन्य लेखकों[2] ने एक से अधिक बार जोर देकर कहा है, कि सभी प्रारम्भिक प्रकार के मनुष्य लम्बे कपालवाले थे।

दूसरे, बात केवल ऐसी ही नहीं है परन्तु, जैसी कि आशा करनी चाहिए, सबसे अधिक प्राचीन जातियाँ, जातियों के मानव-भूवृत्त-सम्बन्धी वितरण के सिद्धान्तों के आधार पर, महाद्वीपों के छोर में (जैसे कि केप आफ़ गुड होप) केपहार्न तथा तसमानिया में मिलती हैं। साथ ही वे दुर्गम पर्वतों, वनों तथा द्वीपों के शरण मिलनेवाले स्थानों में भी मिलती हैं जो कि यूरेशिया के मध्य से महाद्वीपों के किनारे के भागों तक फैले हुए हैं।

जब कि, भूभाग के मध्य में, जैसा कि उनका विचार है बाद में उत्पन्न होनेवाली चौड़े कपाल की जातियाँ पायी जाती हैं जिनको उन्होंने मनमाने तौर से अल्पाइन्स[3] कहा है।

१. क्लाइमेटिक साइकिल्स एण्ड इवोल्युशन (Climatic cycles and Evolutions) ज्योग्रेफ़िकल रिव्यू (Geographical Review), दिसम्बर १९१९, भाग ८, पृष्ठ २८८ तथा इवोल्युशन एण्ड डिस्ट्रीब्युशन आफ़ रेस (Evolution and Distribution of Race) कल्चर एण्ड लैंगवेज (Culture and Language) ज्योग्रेफ़िकल रिव्यु १९२१, भाग २, पृष्ठ ५५

२. एल्सवर्थ हंटिंगटन, दि केरेक्टर आफ़ रेसेज (The Character of Races. Chas. Scrbner's), न्युयार्क, १९२४

३. उन जातीय समूहों के लिए जिनके लिए जातिवैज्ञानिक को अल्पाइन, पूर्वी बाल्टिक, डाइनारिक, आर्मेनायड (चौड़े सिरवाले काकेसायड के लिए) तथा मंगोलायड (एशिया के चौड़े सिरवाले तथा पीले लोगों के लिए) वर्गीकरण का प्रयोग करना पड़ता है।

लम्बे सिर तथा लम्बे सिर

फिर भी, प्रागैतिहासिक भूतकाल के प्राचीन निवासियों के साथ लम्बे कपाल-वालों का तथा सभ्यता के विकास से महाद्वीपों के छोरों का जो सम्बन्ध है, उसका यह सब बहुत छिछला संश्लेषण है।

बहुधा लम्बे कपालवालों की प्राचीनता के विषय में जो एक बात छोड़ दी जाती है वह यह है कि लम्बे सिरवाले भी कई वर्ग के मिलते हैं। काकेसायड (Caucasoid) वर्ग के बचे हुए दीर्घ कपालवाले (dolichocephalic) लोग प्रारम्भिक लम्बे कपालवाले मनुष्यों से उतने ही विकसित हुए हैं जितने चौड़े सिरवाले मंगोलायड हैं। ये शरीर-रचना-सम्बन्धी तथ्य हैं जिनकी पूर्णतया अवहेलना की गयी है।

जातियों के विकास में भौगोलिक परिस्थिति का कार्य

स्वभावतः भूगोल का एक अपना स्थान है परन्तु लम्बे कपाल की विशिष्टता, जैसा कि हंटिंगटन ने बतलाया है, "अधिकांशतः स्वाभाविक योग्यता के बजाय भौतिक परिस्थिति की सुविधा के कारण है," ऐसी बात नहीं है। किसी कलाकार के हाथ पीछे की ओर बाँध दिये जायँ तथा खींचने अथवा रंगने के सम्पूर्ण साधनों से उसे वंचित कर दिया जाय तब उसे अपनी कलात्मक योग्यता प्रदर्शित करने का बहुत थोड़ा अवसर मिलेगा अथवा बिलकुल ही नहीं मिलेगा, परन्तु यदि उसे हाथों की स्वतन्त्रता, पेन्सिल, कुछ ब्रश तथा रंग दे दिये जायँ तब उसकी बुद्धि का प्रदर्शन हो सकेगा।

ऐसा ही मानव के लिए भी है। कोई जातीय समूह चाहे उच्च कोटि की कला, प्राविधिक ज्ञान तथा विचारों के योग्य हो परन्तु यदि उसे प्राचीन वनों अथवा ध्रुव प्रदेशों (Arctic) में एकान्त में रख दिया जाय, तब उसका प्रदर्शन उस कोटि का नहीं होगा। यदि प्रकृति उसको भूमध्यसागरीय, पश्चिमी तथा उत्तर-पश्चिमी यूरोप में पहुँचा दे, जो कि सभ्यता के विकास के लिए सबसे अच्छे प्रदेश हैं, तो उसकी बुद्धि की प्रखरता प्रकट होगी, जैसा कि उन्हीं प्रदेशों में नार्डिकों तथा मेडिटेरेनियनों के साथ हुआ है। परन्तु यह "अधिकांशतः स्वाभाविक योग्यता की अपेक्षा सुविधाजनक भौतिक परिस्थिति के कारण" नहीं हुआ।

इसके विपरीत भूगोल ने इतना ही किया कि स्वाभाविक योग्यता को स्वयं प्रदर्शित करने का अवसर दिया।

यही भौगोलिक परिस्थिति का कार्य है।

यह बहुत महत्त्वपूर्ण है किन्तु है यह नकारात्मक ही; सकारात्मक या सर्जनात्मक शक्ति नहीं। सकारात्मक शक्ति, वंशानुगति में मिलती है तथा जितने तथ्यों का हमने

निरीक्षण किया है, वे न केवल इसका समर्थन करते हैं परन्तु भौगोलिक निश्चय-वादियों के मत को पूर्ण रूप से अप्रमाणित कर देते हैं।

कोई भी मानवशास्त्री भूगोल के उस महत्त्वपूर्ण कार्य की अवहेलना नहीं कर सकता जो उसने जातियों के चुनाव में, विद्यमान जातियों तथा उनकी योग्यता के विकास में तथा परिणामतः जिन सभ्यताओं की उत्पत्ति हुई है, उनमें प्रकृति के छाँटनेवाले हथियार के रूप में किया है। फिर भी हमें भूगोल के सम्बन्ध में बढ़ चढ़कर दावा नहीं करना चाहिए। वास्तव में उसका कार्य नकारात्मक या अप्रत्यक्ष रूप का है। वंशानुगति में ही सर्जनात्मक शक्ति मिलती है जिससे मनुष्य उन्नति कर सकता है; हालाँ कि, बिना उस छँटनी के जो कि भौगोलिक परिस्थिति से मिलती है, न तो ऊँचे प्रकार के मनुष्यों के उद्विकास के लिए आवश्यक चुनने की शक्ति वह पा सकता और न इनकी उत्पत्ति हो जाने पर उसे अपने आपको प्रदर्शित करने का अवसर ही मिलता।

कद की वृद्धि के अन्य कारण

जब जातियों तथा व्यक्तियों का नयी परिस्थितियों से सम्पर्क होता है, तब कद की जो वृद्धि होती है उसके विषय में हमने जो कहा है वह सम्पूर्ण नहीं है, परन्तु उसका उद्देश्य देशान्तरगमन होने पर जो घटनाएँ होती हैं उनके लिए काफी कारण प्रस्तुत करना है, जो कि एक ओर तो भूगोल तथा दूसरी ओर बहुत कठोर जननिक शास्त्र के कारकों के अनुरूप हो। जो हो, उन कारकों की व्याख्या के बिना जो कि देशान्तर गमन से उत्पन्न होते हैं तथा उसके विकास पर प्रभाव डालते हैं, इसे यहीं पर छोड़ देना अवांछनीय होगा।

अभी तक परिस्थिति के प्रभाव की व्याख्या करते समय हमने मुख्यतः परिस्थिति से उत्पन्न रहन-सहन की अच्छी दशाओं की चर्चा की है। हम यह भी स्वीकार कर चुके हैं कि वाह्य समरूपों को प्रभावित करने में और इस प्रकार लम्बे तथा बड़े कदवाले लोगों की उत्पत्ति करने में यह एक कारक हो सकता है अथवा जहाँ पर इसके विपरीत दशाएँ मिलती हैं इसके विपरीत हो सकता है। इसके साथ हमने प्रसंकर शक्ति के प्रभाव को भी रख दिया है।

परिस्थिति के साथ कतिपय अन्य कारक भी कार्य करते हुए मिल सकते हैं, जिनमें से निम्नलिखित कुछ महत्त्व के हो सकते हैं।

यह काफ़ी सम्भव है कि सूर्य का अधिक प्रकाश, जैसा कि उदाहरणार्थ संयुक्त राष्ट्र अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया में मिलता है, कम सूर्य का प्रकाश मिलनेवाले उत्तर-पश्चिमी यूरोप से आये हुए लोगों के विकास को प्रभावित कर सकता है। इससे 'विटा-

मिन डी' (vitamin D) में जो वृद्धि होगी उसका प्रभाव वाढ़ पर अच्छा पड़ेगा। इसलिए सिर्फ इस कारण से ही समुद्रपार गये इन नये राष्ट्रों में कद तथा शरीर की वनावट में वृद्धि होने की आशा की जायगी।

साथ ही धरती के खनिज पदार्थ, जो कि पीने के पानी को प्रभावित करते हैं तथा भौगोलिक परिस्थिति से उत्पन्न वहुत से अन्य सूक्ष्म प्रभाव उसी प्रकार हमारी वाढ़ को रुद्ध अथवा विकसित कर सकते हैं, जिस प्रकार अपनी इच्छानुसार प्रकाश तथा कृत्रिम और प्राकृतिक खाद देकर हम पौधों के विकास को नियन्त्रित करते हैं। महत्त्वपूर्ण होने पर भी ये सव कारण केवल वाह्य समरूपों (phenotype) को ही प्रभावित करते हैं तथा उनका पारेषण नहीं होता। यदि वे पारेपित हो सकते हैं तो परिपोषण (nurture) के समर्थकों को हमें वतलाना चाहिए कि समपित्र्यक (genotype) किस प्रकार प्रभावित होता है।

इसलिए, हम फिर उसी तथ्य पर आ जाते हैं, जैसा कि जननिक अनुसन्धानों से पता चलता है, जव कि परिस्थिति में वंशानुगत तत्त्वों को किसी अन्य रूप में परिवर्तित करने की थोड़ी अथवा विलकुल क्षमता नहीं है, वह उस क्षेत्र को प्रभावित कर सकती है जिसमें जाति कार्य करती है, जैसा कि कद के सम्वन्ध में हमने अभी देखा है।

इस प्रकार जैसा प्रोफेसर क्रू[1] (Prof. Crew) ने वतलाया है, पशुओं में यह साधारणतया देखा गया है कि एक ही वंशशाखा की भेड़ का आकार तथा उसके मांस का स्वाद, जलवायु की दशाओं के अनुसार काफी भिन्न मिलता है।

उदाहरण के लिए सुअरों में कुछ वच्चे मातृक-गलग्रन्थि (thyroid) की लघु-इंद्रिय-क्रिया (hypofunctioning) के कारण, पूर्णतया केशरहित उत्पन्न होते हैं। इसका उपचार, इस उदाहरण में पशुओं को हरा भोजन तथा आयोडीन देकर परिस्थिति में परिवर्तन करने से होता है।

इसलिए, यह स्पष्ट है कि यदि खाने में वाह्य अथवा परिस्थितीय दशाओं के कारण मूलभूत तत्त्वों की कमी होती है, जैसा कि हमने देखा है, तव कद की वृद्धि में रुकावट होती है।

१. एफ़० ए० ई० क्रू (F. A. E. Crew), M. D. D. Sc. Ph. D. F. R. SE. एनिमल जेनेटिक्स (Animal Genetics) एडिनबर्ग, १९२५, पृष्ठ १३९

यह कई बार वतलाया जा चुका है कि ये दशाएँ जननिक नहीं हैं और न यह वंशानुगति पर कोई ऐसा प्रभाव ही छोड़ती हैं कि यदि एक वार फिर पुरानी दशाएँ स्थापित कर दी जायँ तो सदैव पुनः वही साधारण तथा जाने हुए जातीय प्रकारों की उत्पत्ति होगी।

उपार्जित गुणवाद तथा भौगोलिक निश्चयवाद की उत्पत्ति के कारण

यह मत कि परिस्थिति तथा अन्य वाहरी कारण जीवित पदार्थों के तथा मनुष्यों के सचेतन कीटाणुओं में परिवर्तन कर सकते हैं, तथा जो उन विभिन्न सिद्धान्तों का आधार है, जिन्होंने बिना वैज्ञानिक प्रमाण के लोगों का ध्यान आकर्षित किया है और हमारी समस्त सामाजिक विचारधारा तथा हमारे राजनीतिक सिद्धान्त एवं दर्शन शास्त्र का आधार वन गये हैं तथा जिन्हें शुरू शुरू में लेमर्क ने स्थापित किया, यह समझने के पहले निर्मित हुआ था कि कीटाणुकोश शरीरकोश से विभाजित होते हैं।

जैसा कि प्रोफेसर क्रू[1] ने वतलाया है, जब इन दोनों कोशीय वनावटों की भिन्नता स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो गयी, तव स्वभावतः इस खोज से एक पीढ़ी के लोगों को धक्का पहुँचा, जिनका अस्पष्ट विचार था कि जननकारी तत्त्व (reproductive elements) शरीर की एक शाखा मात्र है।

वास्तव में यह कहा जा सकता है कि यदि कीटाणु सचेतन तथा पित्रागति की विधि की खोज कुछ समय पहले हो गयी होती तो उपार्जित गुणों के पारेषण-सिद्धान्त तथा उसी पर आधारित उसके प्रतिरूप भौगोलिक निश्चयवाद के सिद्धान्त का प्रतिपादन ही न किया जाता।

परिस्थिति जातीय प्रकारों को प्रभावित नहीं कर सकती, इसके अन्तिम प्रमाण

गिनी सुअरों पर कासेल तथा फिलिप्स[2] (Castle and Philips) ने परीक्षण किया था जिसमें उन्होंने काले के अंडाशयों को सफ़ेद में डाल दिया तथा सफ़ेद

१. क्रू, पूर्वलिखित, पृष्ठ ३३९

२. डब्लू० ई० कासेल तथा जे० सी० फिलिप्स (W. E. Castle and J. C. Phillips) फरदर एक्सपेरीमेन्ट्स आन ओवेरियन ट्रान्सप्लान्टेशन इन गिनी पिग्ज (Further experiments on ovarian Transplantation in Guinea-pigs) साइन्स, १९१३, ३८, पृष्ठ ७८४

मादा का सफ़ेद नर के साथ मेल कराया। उससे केवल काली सन्तति की उत्पत्ति हुई जिससे यह सिद्ध होता है कि शरीर के कोश तथा ऊतियों का भी कीटाणुकोशों अथवा वंशानुगति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

इसलिए यदि, शरीर के कोशों का थोड़ा अथवा कोई आन्तरिक प्रभाव नहीं होता तब परिस्थिति का कैसे हो सकता है जो उनके द्वारा ही कार्य कर सकती है ?

उपार्जित गुणों के पारेषण के कथित प्रमाण

यह तर्क किया जा सकता है कि उपार्जित गुणों के पारेषण के कुछ प्रदर्शनों का ठीक से मूल्यांकन नहीं किया गया।

अवश्य ही यदि यह सत्य है तो इसका अर्थ होगा कि शरीर के कोश, कीटाणुकोशों को प्रभावित कर सकते हैं।

उपार्जित गुणवाद के लिए सबसे हानिकारक दावे वे हैं, जो लिसेन्को (Lysenko) तथा मास्को एकेडमी आफ साइन्सेज़ (Moscow Academy of Sciences) द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं। ये दावे, स्पष्ट रूप से झूठे और बनावटी नहीं तो, पूर्णतया असत्य हैं, यह रूस के बाहर समस्त जातिवैज्ञानिक शाखाओं के किसी भी वैज्ञानिक की इस सम्बन्ध में की गयी व्याख्या से प्रकट होता है। इसलिए यहाँ हम उनकी अधिक विवेचना नहीं करना चाहते।

दूसरी ओर समय समय पर उनके लेखकों के सम्बन्ध में अधिक प्रतिष्ठितता के दावे किये जाते हैं। इस प्रकार के प्राचीन दावों में से एक फलों की मक्खी ड्रोसोफीला के सम्बन्ध में है।

इस उदाहरण में यह बतलाया गया है कि कुछ गुण कुछ अंशों तक वंशानुगति से स्वतन्त्र रूप से कार्य करते मिलते हैं जिसके फलस्वरूप कुछ लोगों ने इसको परिस्थिति का उससे अधिक महत्त्व प्रमाणित करने के लिए प्रयुक्त किया है जितना जननिक शास्त्री मानते हैं।

यह देखा गया है कि जिन फलों को ये मक्खियाँ खाती हैं यदि उन पर अधिक आर्द्रता होती है तो उनका पेट अधिक बड़ा हो जाता है परन्तु यदि भोजन सूखा होता है तो ऐसा नहीं होता।

अब यह आगे दिखलाया जायगा कि ऐसे भी उदाहरण हैं जिनमें बाह्य रूप से साधारण दीखनेवाली नस्लों में छिपे रूप से अथवा अपसारी रूप से अन्य गुण भी होते हैं। परन्तु यह जननिक गुण है, परिस्थिति द्वारा उत्पादित नहीं तथा जैसा कि क्रू (Crew) इस विशेष उदाहरण में बतलाते हैं, फल की मक्खियाँ, जिनकी बनावट

स छिपी असामान्यता को ले जाने योग्य नहीं है, असामान्य मक्खियों की उत्पत्ति नहीं करतीं।

यहाँ भी वंशानुगति की क्रिया दृष्टिगोचर होती है जो कि अपने केवल थोड़े से निश्चित तत्त्वों के सम्बन्ध में ही उस असाधारण परिस्थिति द्वारा किञ्चित् प्रभावित होती है जिसमें वह कार्य करती है।

समय-समय पर वैज्ञानिक कार्यकर्ताओं के छोटे समूह मिलते हैं जैसे गायर तथा स्मिथ[1] (Guyer and Smith) जिन्होंने उपार्जित गुणवाद की उपकल्पना (Hypothesis) की स्थापना के लिए अधिक ठोस प्रयत्न किये हैं।

परन्तु इन सब में शंका का कारण मौजूद है कि इन लोगों ने क्या सचमुच वही उदाहरण लिये हैं जो असंदिग्ध रूप से उपार्जित गुणों की पित्रागति के प्रमाणों की स्पष्ट स्थापना करते हैं।

साथ ही, और यह वहुत महत्त्वपूर्ण है कि, वहुत प्रयत्न के पश्चात् जो थोड़ा सा तथ्य प्रमाण के रूप में वतलाया गया है उसके विपरीत हमारे पास राशि राशि ऐसे प्रमाण हैं कि, साधारण तथा सहज नियम के रूप में, उपार्जित गुणों की पित्रागति नहीं होती।

उपार्जित गुणों के पारेषण में "विश्वास करने की इच्छा"

इस विषय की समालोचना करते हुए क्रू[2] (Crew) कहते हैं "यह वतला देना चाहिए कि जननिक शास्त्री विशिष्ट उपार्जित गुणों की स्पष्ट पित्रागति के प्रदर्शन की अपेक्षा और किसी को अधिक महत्त्व नहीं दे सकते। उपार्जित गुणों की पित्रागति की सम्भावना के विरुद्ध कोई पूर्वनिर्धारित मत नहीं है। परन्तु यह समझना आवश्यक है कि उपार्जित गुणों की पित्रागति में 'विश्वास की इच्छा' मानव के व्यवहार में एक समझने लायक प्रवृत्ति है और यह ऐसी चीज़ है जिसे रोकना आवश्यक है।"

१. एन० एफ़० गेयर तथा ई० ए० स्मिथ (M. F. Guyer and E. A. Smith) स्टडीज ऑन साइटोलिसिन्स। II. ट्रान्समिशन आफ़ इन्ड्युस्ड आई डिफेक्ट्स, (Studies on Cytolysins. II. Transmission of Induced Eye Defects.) जर्नल आफ़ एक्सपेरीमेंटल जूलोजी, १९२०, ३१, पृष्ठ १७१, फर्दर स्टडीज आन इनहेरिटेन्स ऑफ आई डिफेक्ट्स इंडयूस्ड इन रैबिट्स (Further studies on Inheritence of Eye Defects Induced in Rabbits) जर्नल आफ़ जूलोजी, १९२४, ३८, पृष्ठ ४४९

२. क्रू, पूर्वलिखित, पृष्ठ ३५१

हम यह सोचे विना नहीं रह सकते कि भौगोलिक निश्चयवाद तथा उसके जननिक प्रतिरूप उपार्जित गुणवाद के पीछे 'विश्वास की इच्छा' एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण शक्ति है।

उन्नीसवीं तथा वीसवीं शताव्दी में भौतिक धन तथा सामग्री का अपरिमित विस्तार होता रहा है और इसमें प्रत्येक स्थान पर नये मनुष्यों ने शक्ति प्राप्त की है। वास्तव में यह स्वतः-निर्मित मनुष्य का युग है।

विश्व-इतिहास में शायद ऐसा युग कभी नहीं था जव कि मनुष्य भूतकाल के आभारी होने में इतने असहिष्णु थे, केवल परिवर्तन के लिए ही परिवर्तन के इतने इच्छुक तथा समस्त उत्पादक शक्तियों के ऊपर शासन करने के लिए इतने उतावले थे (intolerent) जितने आज हैं ।

हमारी राय में इन मानसिक प्रवृत्तियों से ही शायद उस असहनशीलता की उत्पत्ति हुई है जो आज के मनुष्य के मन में वंशानुगति की शक्ति के प्रति विद्यमान है। यहाँ तक कि उसमें भौतिक मानवविज्ञान तथा जातिविज्ञान के अध्ययन को अनुत्साहित करने की भी प्रवृत्ति मिलती है, जो कि मनुष्य के वंशानुगत गुणों के जननिक आधारों के प्रति उदासीन नहीं हैं और न हो सकते हैं।

जव कि वर्तमान समय में समस्त मानवसमाज इन साधारण विचारों से सहमत है, दो वड़े राष्ट्रीय क्षेत्रों तथा उनसे प्रभावित स्थलों में सवसे अधिक यह चीज पायी जाती है।

हमारी राय में यह 'विश्वास की इच्छा' ही इस महत्त्वपूर्ण तथ्य का कारण है कि अमेरिका तथा रूस नव-उपार्जित गुणवादी विचार के केन्द्र हैं। पहले उदाहरण में तो हमारे समक्ष ऐसा नया पूँजीवादी देश है जिसे वंशानुगति की शक्ति के प्रति नियमित अरुचि है—वादशाहों तथा सम्पन्न जनों से पित्र्यकों तक मानो स्वभाव से ही अरुचि है और है अपनी प्रारव्ध को अपने हाथों से ठीक करने तथा भूतकाल के नियमों की दासता स्वीकार न करने की उत्कट इच्छा। जव कि दूसरी ओर एक ऐसा देश है जो ऐसे राजनीतिक सिद्धान्त से ओतप्रोत है जो उपार्जित गुणवाद के इस दर्शन पर आधारित है कि मनुष्य जो कुछ भी है अपनी सामाजिक तथा आर्थिक दशाओं के परिणामस्वरूप है तथा मनुष्य एक नये तथा क्रान्तिकारी प्रकार के जीवन के लिए "सामाजिक रूप से तैयार" किया जा सकता है।

इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि ये देश मुख्यतः प्रतिक्रिया के केन्द्र हैं और इसीलिए अन्य देशों की अपेक्षा नव-उपार्जित गुणवाद के गढ़ हैं।

अमेरिका के आप्रवासितों के सम्बन्ध में प्रोफेसर वोआस का कार्य, उनको परि-

वर्तित करने में परिस्थिति की कही जानेवाली बड़ी शक्ति तथा प्रोफेसर एल्सवर्थ हंटिंगटन के मतों को, जान में अथवा अनजान में, ऐसे ही विचारों से अनुप्रेरित समझना चाहिए।

फिर भी, उपार्जित गुणवाद के समर्थन में बतलाये गये कुछ सम्परीक्षणों पर पुनः विचार करते समय ध्यान रखना चाहिए कि इनमें से अधिकांश सम्परीक्षणों ने, जिनमें उपार्जित गुणों की पित्रागति की बात प्रमाणित करने का (वास्तव में इतने कम परिणाम के साथ) प्रयत्न किया है, सम्बद्ध नस्लों को ऐसी कठिन दशाओं में रखने का प्रयास किया है जिनको कि वास्तविक जीवन में मिलने की सम्भावना कम है।

इसलिए ऐसा प्रतीत होगा कि उपार्जित गुणों की पित्रागति ऐसी दशाओं में ही हो सकती है जो साधारणतया मनुष्यों के लिए घातक होगी---इस प्रकार व्यावहारिक मतलब के लिए इस प्रश्न ने जितना शायद उपयुक्त है उससे अधिक समय तथा ध्यान आकर्षित किया है।

अतः यह स्पष्ट है कि हमें उन्नीसवीं शताब्दी के दर्शन के प्रभावशाली विचारों को त्याग देना चाहिए, जो कि परिस्थितीय दशाओं से प्रभावित होकर नये गुण उपार्जित किये जा सकते हैं, उपार्जित गुणवाद के इस सिद्धान्त पर आधारित हैं, क्योंकि तथ्य हमें केवल इस परिणाम तक पहुँचायेंगे कि वंशानुगति अथवा जाति की शक्ति की सत्यता स्वीकार की जाय; हालाँ कि उसके साथ ही परिस्थिति का भी अपना एक बहुत आवश्यक प्रभाव है तथा वह है, प्रत्येक पीढ़ी में वंशानुगति की शक्ति के विकास को प्रभावित करना। परन्तु जहाँ तक कीटाणु-प्राणरस में परिवर्तन करने और उसके द्वारा भविष्य के निर्माण की योग्यता का प्रश्न है, यदि वास्तव में उसमें है तो, उसका कार्य शायद बहुत ही कम है।

इस निर्णय पर पहुँचकर हम मुख्य वैज्ञानिकों के---जैसे अमेरिका के मारगन (Morgan), हालैण्ड के दि राइस (de Vries), डेनमार्क के जोहानसेन (Johansen), जर्मनी के कोरेन्स तथा बार (Corens and Baur), स्काटलैण्ड के क्रू (Crew), इंग्लैण्ड के हाल्डेन (Haldane)---तथा अधिकांश देशों के जीववैज्ञानिकों, प्राणिशास्त्रियों (Zoologists) और मानववैज्ञानिकों के बहुमत के अनुयायी बन जाते हैं।

मनुष्य के सम्बन्ध में भूगोल का कार्य

मनुष्य के विकास में भूगोल का क्या हाथ है? जैसा हमने पहले अनेकों बार जोर देकर बतलाया है, उसका कार्य नकारात्मक किन्तु फिर भी बहुत महत्त्वपूर्ण है,

क्योंकि यह निश्चय करता है कि मनुष्य कहाँ रह सकता है तथा कौन से मनुष्यों एवं जातियों की उन्नति इस स्थान पर होगी या कौन यहाँ नष्ट हो जायँगी। भूगोल छाँटनेवाले उपकरण के समान है जो जीवित पदार्थों से उन रूपों का नाश कर देता है जो वंशानुगति द्वारा अधिक मात्रा में उत्पादित होते हों तथा जो परिस्थिति के प्रतिकूल हों। परन्तु भूगोल किसी नये प्रकार की उत्पत्ति नहीं करता और न जीवन की प्रकृति को देखते हुए ऐसा कर ही सकता है। उसका प्रभाव घातक से लगाकर अनुज्ञात्मक तक हो सकता है।

भूगोल के त्रिगुणात्मक कार्य; सुजननिक (Eugenics) दुर्जननिक (Dysgenic) तथा मानसिक

जितना बतलाया जा चुका है उससे स्पष्ट है कि भूगोल के कई प्रभाव हो सकते हैं। ये सब बड़े महत्त्व के हैं परन्तु मनुष्य में मिलनेवाली जननिक प्रक्रिया को ये नियन्त्रित नहीं करते बल्कि उसके द्वारा कार्य करते हैं। प्राकृतिक चुनाव के यंत्र के रूप में भूगोल निर्बल प्रकारों को छाँटकर अलग कर दे सकता है तथा इस प्रकार सुजनन के स्वाभाविक प्रकार के पीछे एक शक्ति बन जाता है और जाति में से निर्बल तत्त्वों को नष्ट करके, शक्तिशाली तथा योग्य सन्ततियों की उत्पत्ति करता है। परन्तु इन सन्ततियों का निर्माण वह नहीं करता, वे तो हमेशा से ही वहाँ पर थीं। इसने केवल अच्छी सन्ततियों के साथ मिश्रित निर्बलों को हटा दिया और इस प्रकार सन्तति के सम्पूर्ण औसत को ऊँचा कर दिया।

दूसरी ओर भूगोल इसकी विपरीत दिशा में भी कार्य कर सकता है और दुर्जननिक (डिसजेनिक) शक्ति का यंत्र बनकर जातीय ह्रास तथा संहार की ओर ले जाता है, जिसमें निर्बल जीवित रहते हैं तथा ऊँची और अच्छी सन्ततियों का नाश हो जाता है।

फिर भी वैकल्पिक क्रम से, भूगोल एक तीसरे प्रकार का भी कार्य करता है और वह है मस्तिष्क पर प्रभाव डालना। भौगोलिक निश्चयवादियों के चाहे जितने मतों को हम पायें हम सभी विचारों का समर्थन नहीं कर सकते, न केवल इस दृष्टि से कि वास्तव में वे क्या कहते हैं, वरन् इस दृष्टि से भी कि उनका तात्पर्य क्या रहता है। यह तात्पर्य जाति-विज्ञान के जननिक आधार के सम्यक् ज्ञान के इतना विपरीत होता है कि हम प्रोफेसर एस० एस० विशर[1] (Prof. S. S. Visher) से सहमत होते हैं, जब वे

१. क्लाइमेटिक इनफ्लुयेन्सेज (Climatic Influencs) ज्योग्रफी इन दि ट्वेन्टिएथ सेन्चुरी (Geography in the Twentieth Century) लन्दन, १९५३, पृष्ठ १९६

एल्सवर्थ हंटिंगटन के योगदान की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं—जहाँ उन्होंने सभ्यता पर जलवायु का प्रभाव दिखलाया है।

यह स्वतः सिद्ध है कि मनुष्य के रहने योग्य स्थिति की अन्तिम सीमा पर रहनेवाले एस्किमो लोग भी ऐसी हालत में होंगे जहाँ परिस्थिति का प्रभाव उनके मस्तिष्क को सुस्त कर देता है जिससे कि सांस्कृतिक गतिहीनता उत्पन्न हो जाती है। उसी प्रकार से दूसरे छोर की चरम सीमा पर अति घने और सबसे अधिक नीची सतहवाले भूमध्यरेखा-स्थित दलदलों तथा वनों में इसी प्रकार का कुछ मिलना चाहिए।

इसके विपरीत, जैसा कि प्रोफेसर हंटिंगटन ने दिखलाया है, यह निःसन्देह ही सत्य है कि घर के बाहर का ५०° से ६०° फ० का औसत तापक्रम ऊँची सभ्यताओं के लिए सहायक है।

इससे इस तथ्य के कारण का पता चल सकता है कि, उदाहरण के लिए, क्यों नार्डिक लोग पिछले ३००० से ४००० वर्ष तक, अपेक्षाकृत पिछड़े हुए रहे।

साइबेरिया के मैदान के ठंडे पश्चिमी भाग में रहने के कारण उनकी शक्ति मुख्यतः जीवन को किसी तरह बनाये रखने के लिए ही आवश्यक थी, सभ्यता के विकास की ओर ध्यान देना उनके लिए संभव ही कहाँ था?

फिर भी एक बार हिमयुग के पश्चात् जब बर्फ कम हुई, और जब लोगों ने अपने आपको अपेक्षाकृत कम कठोर जलवायु में पाया, विशेष कर जब कि वे यूरोप में पश्चिम की ओर चलकर, भूमध्यसागर, ऐटलान्टिक सागर तथा उत्तरी सागर के सबसे अच्छे जलवायु के प्रदेश में पहुँचे, तब नार्डिकों ने जलवायुसम्बन्धी सरल दशाओं का अनुभव किया और वे लोग सभ्यता के विकास में शीघ्र उन्नति कर सके।

यद्यपि यह सब सत्य है तथा हम प्रोफेसर हंटिंगटन तथा अन्य लोगों के साथ इस बारे में सहमत हैं कि ये सब विकास भूगोल के कारण हुए, फिर भी इस विचार का समर्थन नहीं किया जा सकता कि भूगोल से नार्डिक जाति की विशिष्टता तथा उसकी सभ्यता की उत्पत्ति हुई है।

हुआ यह है कि उक्त जातीय वर्ग को जिसमें अपनी उद्विकास सम्बन्धी प्रगति के कारण आवश्यक जननिक गुण थे एक ऐसे प्रदेश में बसने का अवसर मिला जिसमें अत्यन्त प्राचीनकाल से वंशानुगत द्वारा पारेपित पित्रागत बौद्धिक गुण, पूर्ण विकसित हो सकते थे।

इसलिए, हालाँ कि प्रोफेसर हंटिंगटन उचित ही ५०°–६०° फ० तक संसार में सबसे उत्तम प्रदेशों के महत्त्व की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं, यह सिद्ध नहीं होता कि यदि कोई अन्य जातीय वर्ग वहाँ पर जाकर बस गया होता तो भी वही परिणाम

निकलता। वास्तव में, निग्रायड लोग पुरा-पाषाण काल में भूमध्यसागरीय भूभागों तक पहुँच गये थे, फिर भी उससे निग्रायड जाति की कोई विशेष उन्नति नहीं हुई। साथ ही प्रोफेसर ग्रिफिथ टेलर जैसे अन्य भौगोलिक निश्चयवादियों ने अपनी मानवजाति की मानव-भूवृत्तीय वितरण की योजना में, निग्रायड तथा निग्रिटो लोगों का मूल स्थान सम शीतोष्ण प्रदेश माना है। हम नहीं कह सकते कि उससे हम यह कल्पना करने को प्रेरित होते हैं कि उन प्रदेशों में काले लोगों की सभ्यता का जन्म हुआ।

केप आफ़ गुड-होप का जवलायु भी भूमध्यसागर के जलवायु से अधिक भिन्न नहीं है इसलिए हम होटेनटाट्स तथा वुशमैन (Hottentots and Busman) से सांस्कृतिक दृष्टि से कुछ उन्नतिशील होने की आशा कर सकते, यदि सम-तापक्रम वाली रेखाओं में ही सर्जनात्मक शक्ति होती। दूसरी ओर टसमानिया में जहाँ पर नीग्रिटो (Negrito) जनसंख्या है और जलवायु की उत्तर-पश्चिमी फ्रान्स जैसी सबसे उत्तम दशाएं भी हैं, फिर भी वे नीग्रिटो के जीवन-स्तर को ऊँचा करने में असफल रहीं जो कि सब स्थानों में नीचा है।

इसलिए, मुख्य बात यह है कि उचित जातीय सन्ततियों को ऐसे भौगोलिक प्रदेशों में जाना चाहिए जो उनकी योग्यता के लिए सबसे अधिक सहायक हों।

प्रोफेसर हंटिंगटन के इस मत में काफ़ी तथ्य हो सकता है कि गृह-निर्माणविद्या की उन्नति, अधिक उपयुक्त भोजन, अधिक गर्म कपड़े तथा कार्य में सहायक अन्य दशाओं से ठंडे देशान्तरों की उन्नति होना सम्भव हो जाता है, इसलिए भूमध्यसागर से उत्तरी यूरोप तक सभ्यता का विकास हुआ।

जहाँ तक यह सत्य है, यह उस बात को सिद्ध करता है जिसे हम कहना चाहते हैं। क्योंकि यहाँ पर मनुष्य ने अपनी सहज प्रतिभा तथा बौद्धिक योग्यता का प्रयोग करके, गर्म कपड़ों और उचित घरों को बनाकर, उत्तरी प्रदेशों द्वारा डाली गयी भौगोलिक बाधाओं को जीत लिया है।

इसलिए यह परिणाम निकलता है कि परस्पर प्रभाव डालने वाली दो बड़ी शक्तियाँ हैं—पृथ्वी तथा उसके ऊपर का जीवन। यही हमारे लिए भूगोल एवं मानवशास्त्र है। मनुष्य को अपनी परिस्थिति के साथ मिल जुलकर चलना चाहिए। यह कभी कभी उसे रोक सकती है या नष्ट कर दे सकती है और किसी समय उसके अनुकूल रुख भी ग्रहण कर सकती है। फिर भी मनुष्य उसकी रचना नहीं है। उसकी बनावट पित्रागत है जिसकी सामग्री से उसका विकास होता है। भूगोल की प्रत्यक्ष शक्ति एक

ओर चुनाव के रूप में उद्विकास को छाँटनेवाले उपकरण के रूप में और दूसरी ओर निष्क्रिय तथा अनुमोदक के रूप में अपना कार्य करती है।

इसलिए भूगोल स्वयं निश्चय नहीं करता कि क्या हो सकता है अथवा क्या होगा, क्योंकि उसे वंशानुगति द्वारा प्रस्तुत पूर्वनिश्चित सामग्री के दायरे के भीतर ही अपना चुनाव कार्य करना पड़ता है।

शब्द-व्याख्या

जाति-विज्ञान (Ethnology) तथा जाति-जननिक विद्या (Ethno-genetic) में प्रयुक्त महत्त्वपूर्ण प्राविधिक तथा अन्यविशेप रूप से व्याख्यायोग्य कुछ शब्दों की संक्षिप्त परिभाषा नीचे दी जाती है।

अपसारी (Recessive)

गुणों, कारकों अथवा पित्र्यकों के लिए प्रयोग किया गया शब्द, जो कि संकरण की प्रथम पीढ़ी में नहीं दिखलाई पड़ते। यह प्रभावी (dominant) का उलटा है।

अभिवर्ण (चमकीले रंग का पदार्थ, रंजितक chromatin)

यह धव्वा डालनेवाला एक प्राणरसीय पदार्थ है। यह अभिवर्ण त्वचा, आँखों तथा बालों के रंग के लिए उत्तरदायी है। जव उसका विभाजन नहीं हो रहा हो तव एक कोश की न्यष्टि में अभिवर्ण एक जाल की भाँति लगता है। जव कोश का विभाजन होता है तव अभिवर्ण पदार्थ अनेक भागों में वँट जाता है जिसे पित्र्यसूत्र (chromosome) कहते हैं। (पित्र्यसूत्र देखिए)।

अभिजनन (Breed) **(प्रसवन)**

पशु-प्रसवन में कृत्रिम रूप से, अथवा मनुष्य में प्राकृतिक चुनाव, आकस्मिक चुनाव तथा जननिक परिवर्तन से होने वाले परिणाम को कहते हैं, जिसमें शुद्ध अभिजनन दो या अधिक जातियों के संकरण के कुछ गुणों का पृथक्करण होता है तथा साथ ही पैत्रिक सन्ततियों से पित्रागत पित्र्यकों से पुनः संयोजन होता है।

इस प्रकार से यदि पीत केश तथा नीली आँखों वाली जाति का काले केश तथा भूरी आँखों वाली जाति से संकरण किया जाय और यह मान लिया जाय कि केश तथा आँखों के गुण ग्रथित नहीं हैं तव कुछ समय वाद संकरण से पीत केश तथा नीली आँखें, काले केश तथा भूरी आँखें, पीत केश तथा भूरी आँखें तथा काले केश एवं नीली आँखें लिये हुए व्यक्ति मिलेंगे।

प्रथम दो प्रारम्भिक दो जातियों के तद्गुणी (अथवा लिये प्रकार) हैं। यदि यह दो नष्ट हो जायँ और केवल दो नये प्रकार जीवित रहें और अपने वितरण तथा संख्या में वढ़ जायँ जिससे कि वे सरलता से पारस्परिक अन्तः प्रसवन कर सकें तव वे दो नये अभिजनन वन जायँगे।

हम, अल्पाइन, डाइनारिक-आर्मेनायड तथा पूर्वी बाल्टिक वालों को जातियाँ नहीं, परन्तु इस प्रकार अभिजनन (नस्लें) समझते हैं।

अमेरिन्ड जाति (Amerind Race)

अमेरिका महाद्वीप के मूल निवासियों के लिए इस शब्द का प्रयोग किया जाता है जो कि मंगोलायड जाति की प्रारम्भिक शाखा है ।

अर्धसूत्रण (Meiosis)

कीटाणु अथवा प्रजनन-कोशों में कीटाणु विभाजन की क्रिया जिसमें कि जन्युओं (gametes) के निर्माण के लिए पित्र्यसूत्र आधे रह जाते हैं, जो कि विपरीत लिंग-वाले से जब मिलते हैं तब जातियों के पित्र्यसूत्रों की वही संख्या स्थापित कर देते हैं जैसी कि प्रारम्भिक कोशों में मिलती है।

इस क्रिया से सूत्रभाजन (mitosis) का भ्रम न होना चाहिए।

अलिंग सूत्रसम्बन्धी ग्रथन (Autosomal Linkage)

जब गुण उसी पित्र्यसूत्र में मिलते हैं जो कि लिंग-पित्र्यसूत्र नहीं है ।

लिंग-ग्रथन देखिए

अल्पाइन (Alpine)

एक जातीय अभिजनन जो कि काकेसायड (Caucasoid) जातियों की एक शाखा है जो कि मध्य फ्रान्स के पहाड़ी क्षेत्रों से पूर्व की ओर दक्षिण जर्मनी तक, स्विटजरलैंड, उत्तरी इटली से पूर्वी यूरोप तक, मुख्य रूप से अल्पाइन प्रदेशों तथा पर्वतों में विकसित हुई है ।

आँखों का रंग (Eye Colour)

इनके अनेकों वर्गीकरण हैं। इनमें डा० बेडो (Dr. Beddoe) का सबसे शास्त्रीय है जिसमें कि हलकी आँखें (light eyes)—नीली अथवा धूसर काली आँखें (dark eyes)—पीली लालपन लिए हुए भूरी अथवा काली; अन्य लेखक (वर्तमान लेखक सहित, पीली) लालपन लिए हुए को मध्यम कह कर अलग कर देते हैं तथा इन वर्गों का और भी उप-विभाजन करते हैं।

आँखों-बालों के रंग की देशना (Eye-hair-Colour Index)

यह डा० कोलिगनन (Dr. Collignon) की है और इसे हलके बाल (L. H.) तथा आँखें (L. E.) तथा काले बाल (D. H.) और आँखों (D.E.) के प्रतिशत को लेकर निकाला जाता है, उससे निम्नलिखित देशना बनती है।

$\frac{(LH) + (LE)}{2} - \frac{(DH)-(DE)}{2}$ अन्य के ऊपर एक की अपेक्षिक अधिकता।

आँखों के रंग की देशना (Eye-Colour Index)

डा० वेडो (Dr. J. Beddoe) ने इसका आविष्कार किया है तथा काली-हलकी देशना से निकाला है।

आँख का तारा (Iris)

मानव की आँख का रँगा भाग जो पुतली को घेरे रहता है।

ईथियोपियन (Ethiopian)

नीग्रायड (Negroid) अथवा मेलेनीसियन (Melanesian) अथवा काली जाति के लिए प्रयुक्त पुराना शब्द।

उत्परिवर्तन (Mutations)

पित्र्यकों अथवा पित्र्यसूत्रों में अनपेक्षित परिवर्तनों को उत्परिवर्तन कहते हैं जिसमें जारी न रहनेवाली विभिन्नता मिलती है।

उन्मत्त उदासी (Maniac depression)

एक प्रकार का पागलपन जो शरीर की बनावट पर आधारित है।

उप-जातियाँ (Sub-races)

जातियों के उपविभाग।

जैसे मेडिटेरेनियन जाति दो प्रकारों में विभाजित की जा सकती है, एक तो पश्चिमी या मुख्य मेडिटेरेनियन जाति तथा दूसरी पूर्वी मेडिटेरेनियन जाति।

उपार्जित-गुणवाद (Lamarkism)

फ्रान्स के प्रकृतिवादी (पदार्थशास्त्रज्ञ) शिवेलियर दे लेमार्क (Chevalior de Lamark) ने (१७४४–१८२९) यह सिद्धान्त चलाया। उन्होंने उपार्जित गुणों की पित्रागति के मत का प्रतिज्ञापन किया जिसने कुछ सीमा तक चार्ल्स डारविन पर प्रभाव डाला परन्तु जो मेण्डेल के कार्य द्वारा पूर्णतया अग्राह्य ठहरा दिया गया है। मुख्यतः जर्मनी के प्रतिष्ठित जीववैज्ञानिक वीजमैन (Weismann) ने अपने प्रदर्शनों द्वारा उसे गलत सिद्ध कर दिया है।

डारविन का पैनजेनेसिस (Pangenesis) का सिद्धान्त इससे सम्बन्धित है।

ऊँचाई देशना, चौड़ाई के सम्बन्ध में (Altitudinal Index, in relation to breadth)

सिर अथवा कपाल की ऊँचाई को एक सौ से गुणा करके चौड़ाई से भाग देने पर यह मिलता है। कपाल की ऊंचाई की देशनाओं को देखिए।

ऊँचाई देशना, लम्बाई के सम्बन्ध में (Altitudinal Index, in relation to length)

सिर अथवा कपाल की ऊँचाई को एक सौ से गुणा करके लम्बाई से भाग देने पर यह मिलता है। कपाल की ऊंचाई की देशनाओं को देखिए।

एंडालूसियन (Andalusian)

कुक्कुटों का एक प्रसव जो कि काले, सफेद तथा नीले होते हैं। नीले अपूर्ण प्रभावी हैं जिनका अन्तःप्रसवन होने पर पित्रागति (मेण्डालियन सिद्धान्त) के अनुपात में, २५ प्रतिशत काले, ५० प्रतिशत नीले तथा २५ प्रतिशत सफेद, तद्गुणी रूप में मिलते हैं।

यह अपूर्ण प्रभुत्व का शास्त्रीय उदाहरण है।

एक-युग्मिक जुड़वाँ (Monozygotic Twins)

'जुड़वाँ' देखिए।

एटलाण्टिक जाति (Atlantic Race)

यह शब्द कुछ मानव भूवृतज्ञाताओं द्वारा गलत तथा अस्पष्ट रूप में प्रयोग किया जाता है जिसमें सभी चौड़े कपाल वाली जातियाँ सम्मिलित की जाती हैं। जैसे कि मंगोलायड जातियाँ, जो कि काकेसायड जातियों की एक शाखा है और मुख्यतः आयरलैण्ड (Ireland), पश्चिमी स्काटलैण्ड (Western Scotland), स्वीडेन में डलोर्ना (Dalorna), जर्मनी के वेस्टफेलिया में कहीं-कहीं, कार्नवाल (Cornwall), ब्रिटेनी (Brittany) से यूरोप के पश्चिमी तट तक, डर्डोगोयर में (Dordogire), फ्रान्स के मैसिफसेण्ट्रल ('Massif Centrale') के पश्चिम में और उत्तरी अफ्रीका के बर्बर (Berbers) लोगों में पायी जाती हैं।

इसमें आदि मेधावी मानव (Cro-Mognon Man) से कुछ समानता मिलती है—जो कि इस जाति की प्रारम्भिक शाखा के हो सकते हैं जिनमें लम्बा कद, छोटा निचला चेहरा, ठीक प्रकार से विकसित भ्रकुटि (Supraorbital ridges) अथवा मस्तिष्क का बड़ा आकार मिलता है।

आँखें साधारण नीले रंग की, त्वचा बहुत गौरवर्ण, कम उम्र की स्त्रियों मे श्वेत तथा लाल मिला हुआ रंग और काले बाल मिलते हैं।

शरीर की गठन नार्डिक की अपेक्षा दृढ़ है।

जर्मन तथा स्कैन्डिनेवियन लेखकों ने उसे वेस्टफ़ेलिया के आधार पर फेलिक (Faelic) एटलान्टिश तथा डर्लेनियन और हूटन (Hootan) ने अप फ्राम दि एप्स (up from the Apes) में उसे केल्टिक (Keltic) कहा है।

काली जातियाँ (Black Races)

मेलानायड जातियों (Melanoid Races) के लिए प्रयुक्त शब्द है।

कापालिक देशनाओं की ऊँचाई (Height of Skull Indices)

कपाल में खड़ी ऊँचाइयों का वर्गीकरण, लम्बाई तथा चौड़ाई की तुलनात्मक देशनाओं में नीचे दिया है—

	ऊँचाई-लम्बाई देशना	ऊँचाई-चौड़ाई देशना
Platycephalic	–६७	–८३
Mesocephalic	६७–७०	८३–८५
Hypsicephalic	७०+	८५+

कापालिक देशना (Cephalic Index)

जहाँ तक कि मानवमितीय (anthropometrical) नियमों का दावा है—कापालिक देशना, जो —और कुछ सीमा तक यह उचित ही है—जाति-विज्ञान की मुख्य सहायक कही गयी है, यह चौड़ाई को एक सौ से गुणा कर लम्बाई से भाग देकर निकाली जाती है।

सिर तथा कपाल मुख्यतः दीर्घ कपालसम्बन्धी (dolichocephalic), माध्यमिक कपाल सम्बन्धी (mesaticephalic) तथा पृथु-कपाल सम्बन्धी (brachycephalic) अर्थात् लम्बे, माध्यमिक तथा चौड़े (अथवा छोटे) वर्गों में विभाजित होते हैं। इन प्रकारों की विभाजनरेखा के सम्बन्ध में बड़ी अनिश्चितता है। हम लम्बे कापालिक अथवा दीर्घ कपालवाले ७८ से कम तथा पृथु कापालिक ८१ अथवा ८२ से अधिक को समझते हैं।

काकेसायड (Caucasoid)

साधारणतया, इस पुस्तक में निरन्तर श्वेत जाति के लिए इसका प्रयोग हुआ है जो कि होमो योरोपिअस (Homo Europacus) भी कहलाती है। सर्जी (Sergi) ने योराफ्रिकन तथा डिक्सन (Dixon) ने उसे कैस्पियन भी कहा है। इसमें हलके भूरे से पीले और कालापन लिये हुए तथा श्वेत तक सम्मिलित हैं। इन सब में घुंघराले वालों की प्रवृत्ति मिलती है। यह मुख्यतः, यूरोप, उत्तरी अफ्रीका, निकट-पूर्वी प्रदेश, पश्चिमी मध्य एशिया तथा दक्षिण-पूर्वी भारत में मिलती है। न्यूजीलैण्ड के पालीनेशियन तथा मावरीज मुख्यतः इसी प्रकार के हैं। हमारी राय में ऐस्कीमो निवासियों में उसी वंशक्रम का आधारभूत तत्त्व मिलता है। यह पूर्व की ओर मिश्रित रूप में पूर्वी एशिया के मंचुओं में मिलती है। उत्तरी-पूर्वी अमेरिण्ड निवासियों में भी कुछ काकेसायड तत्त्व मिलते थे।

कारक (Factor)

कीटाणुकोश में एक पदार्थ का नाम जिससे कि कीटाणुकोश में विशिष्ट गुण विकसित होता है जैसा कि बौनेपन के विपरीत लम्बापन है। ए० डी० डर्वीशायर (A. D. Derbyshire), ब्रीडिंग एण्ड दि मेण्डेलियन डिस्कवरी, लन्दन, १९१३, पृष्ठ २७६। सदैव नहीं परन्तु साधारणतया मेण्डल का प्रारम्भिक शब्द कहा जाता है जो कि वाद में पित्र्यक (जीन्स) कहलाया है।

कीटाणु कोश (Germ Cell)

जन्यु (gametes गैमीट) को ही कहते हैं।

केल्टिक जाति (Keltic Race)

एटलाण्टिक जाति देखिए।

केल्टिक (Celtic)

केल्टिक लोगों की सेण्टम आर्यभाषाओं, संस्कृति तथा राष्ट्रीयताओं से सम्बन्धित जो कि प्रारम्भ में सम्भवतः नार्डिक अथवा मुख्यतः नार्डिक लोग थे। ये पहले मध्य यूरोप में थे परन्तु अव उनके तत्त्व यूरोप के उत्तर-पश्चिम तटीय भागों में स्काटलैण्ड के गाल्स (Gauls, Erse) मैन्क्स (Manx), वेल्स निवासी, कार्नवालनिवासी तथा ब्रिटेनी (Brittany) के लोगों में मिलते हैं। इन सभी में कुछ अन्य जातीय तत्त्व भी हैं जिनको उन्होंने आत्मसात् कर लिया है।

केशों का रंग (Hair colour)

डा० वेडो (Dr. Beddoe) ने ब्रिटिश वालों के रंग के महत्त्वपूर्ण विवेचन में

निम्न केशों के रंग को लिया—

लाल; साफ अथवा हलका भूरा; भूरा; काला अथवा गहरा भूरा; काला; अवश्य ही, साफ़ रंग को स्वर्ण केशों से पृथक रखना चाहिए। स्वर्ण केश सुनहले या भूरापन लिये सुनहले हों। प्लैटिनम ब्लैण्ड वे हैं जो कि श्वेतता लिये पीले हों।

केशों का आकार (Hair-form)

केशों के आकार को निम्न प्रकार में विभाजित किया गया है—

ऊर्ण केश (Ulotrichi)—छल्लेदार केश (Frizzy hair)। अफ्रीका में नीग्रो, वैन्टू, बुशमैन, नेग्रिल्लो तथा एशिया एवं मैलेनेशिया (Melanesia) में नेग्रिटो लोगों में मिलते हैं।

स्निग्ध केश (Leiotrichi)—सीधे केश। मध्य तथा उत्तरी एशिया एवं अमेरिका के आदिवासियों में देख पड़ते हैं।

निजीर केश (Cymotrichi)—लहरदार केश वाले (Wavy haired)—(अ) आस्ट्रालायड (Australoid), (आ) जापान के एनस (Ainus), (इ) पोलीनेसिया निवासी तथा (ई) मुख्य काकेसायड लोग सम्मिलित हैं।

कैस्पियन (Caspian)

स्व० प्रोफेसर रोनाल्ड डिक्सन तथा ग्रिफिथ टेलर (Prof. Ronald Dixon and Griffith Taylor) ने काकेसायड के लिए इस शब्द का प्रयोग किया है।

गौर वर्ण, स्वर्ण केश (Blond

स्वर्ण केशों वाले काकेसायड, नार्डिक तथा पूर्वी बाल्टिक (Caucasoids, Nordic and East Baltic) वालों से अभिप्राय है।

ग्रथन तथा अलगाव (Coupling and repulsion)

यह वैसा ही है जैसा कि ग्रथन (Linkage), देखो ग्रथित गुण।'

ग्रथित गुण (Linked characters)

ये सदैव एक साथ मिलते हैं तथा उसी एक ही पित्र्यसूत्र (Chromosome) पर स्थित होने के कारण ग्रथित होते हैं।

लिंगग्रथन (Sex Linkage) और अलिंग-सूत्रसम्बन्धी ग्रथन (Autosomal Linkage) देखिए।

घुंघराले बाल (curly hair)

यह लहरवाले बालों का उन्नत प्रकार है और कभी कभी छल्लेदार बालों (frizzy hairs) के संकरण से ये मिलते हैं।

चितकवरा भेड़ का बच्चा (Roan)

माता-पिता के रंगों के बीच का रंग जो कि पशुओं तथा घोड़ों में मिलता है और अपूर्ण प्रभाविता का फल है। नीले एंडालूसियन कुक्कुट में नीला रंग उसी के समान है। उदाहरण के लिए लाल पशु की उत्पत्ति लाल तथा सफेद पशु के संकरण से होती है।

चिपट नासा (*Platyrrhine*)

नासा, नाक देखिये।

छल्लेदार बाल (Frizzy hair)

केशों का आकार देखिये।

छल्लेदार केश (Wooly hair)

यह कभी-कभी छल्लेदार (frizzy hair) केशों के लिए प्रयुक्त होता है।

केश-आकार देखिए।

जन्यु (Gametes)

नर अथवा मादा का प्रजनन-कोश जो कि शारीरिक कोशों की भांति पित्र्यसूत्रों की आधी संख्या से बनता है।

जाति (Race)

किसी किस्म का एक सचेतन या जीविज (आरगैनिक) उपविभाग, जिसके सम्पूर्ण सदस्य उन्हीं पूर्वजों से तथा रक्त से सम्बन्धित, समान जातीय गुणवाले पूर्वजों के ही गुणवाले होते हैं तथा उद्‌विकास के कारण होनेवाले परिवर्तन ही उनमें होते हैं।

इस प्रकार से काकेसायड वर्ग की नार्डिक, मेडिटेरेनियन तथा एटलान्टिक, ये तीन जातियाँ हैं।

जातिकशिका (Ethnomonads)

इस शब्द का प्रयोग इस पुस्तक में यूनीजेन (Unigen) के साथ साथ, जिसे कुछ लोग जातीय एकक कहते हैं उस अर्थ में किया गया है। यह 'एथनास' और 'मोनास' से लिया गया है, जिनका अर्थ क्रमशः लोग तथा एकक है।

उदाहरण के लिए फीजी-निवासी अथवा आइसलैण्डनिवासी, जाति-कशिका (ethnomonadic) हैं जो कि काफी समान, अन्तः प्रसूत तथा स्थिर जनसंख्या वाले हैं। ये, उदाहरण के लिए, मैक्सिको निवासियों से भिन्न हैं।

जाति-विज्ञान (Raciology)

जाति-विज्ञान (Ethnology) देखिए।

जाति-विज्ञान (Ethnology)

संस्कृति से सम्बन्धित मनुष्य का सम्पूर्ण तुलनात्मक अध्ययन, उसके प्रकारों (जातियों) तथा संस्कृतियों को (जैसे लोग और राष्ट्र) ध्यान में रखते हुए।

जाति-वृत्त (Ethnography)

कभी-कभी जाति-वृत्त का प्रयोग जातिविज्ञान (ethnology) के अर्थ में ही किया जाता है परन्तु हमने उसका प्रयोग जातिविशेष, या विशिष्ट देश के निवासियों अथवा क्षेत्र-विशेष के वर्णनात्मक अर्थ में किया है। प्राक्कथन देखिए।

जातीय शास्त्र (Racial Science)

जाति-विज्ञान (Ethnology) देखिए।

जातीय एकक (Ethnic unit)

किसी समूह के लिए जो कि न जाति और न अभिजाति है परन्तु जिसमें कि अन्तः-प्रसवन अथवा अपने व्यक्तियों की कुछ समान उत्पत्ति द्वारा जननिक स्थिरता मिलती है, जैसे पुराने राष्ट्रीय समूह, जैसे यहूदी अथवा आयरिश, इंग्लिश, स्पेनिश इत्यादि हैं।

जातीयवाद, जातित्ववाद (Racialism)

जाति-विज्ञान अथवा जातीय शास्त्र पर आधारित वतलाये गये मत और राज-नीतिक दर्शन—परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है, यह जातिविज्ञान के कुछ पहलुओं की केवल एक संक्षिप्त व्याख्या है।

जुड़वाँ, एक-युग्मिक (Twins, monozygotic)

समान जुड़वों के लिए प्रयुक्त।

जुड़वाँ, भाई-सम्बन्धी (twins, fraternal)

जुड़वाँ जो कि समान अथवा युग्मैकगुणी नहीं है।

जुड़वाँ, समान (Twins, identical)

एक ही अण्डे से उत्पन्न जुड़वाँ हैं; कभी कभी युग्मैकगुणी कहलाते हैं।

जैन्यस (Xanthous)

हलके के अर्थ में। परन्तु कभी-कभी अस्पष्ट रूप में मंगलायड अथवा पीतवर्ण अथवा मंगोलायड जातियों के लिए इसका प्रयोग होता है। (ए० सी० हेडन के दि स्टडी आफ़ मैन, १८९८, पृष्ठ ७४ देखिए)

जैन्थोक्रोइक (Xanthocroic)

यह उत्तरी यूरोप के 'अतिश्वेत', जैसे कि नार्डिक (Nordic) के लिए आता है।

ट्युटानिक (Teutonic)

उन जर्मन तथा गोथिक लोगों की आर्य भाषाओं, संस्कृतियों तथा राष्ट्रीयता सम्बन्धी, जो कि मूल रूप में नार्डिक (Nordic) अथवा मुख्यतः नार्डिक थे और अब उत्तर-पश्चिमी अथवा मध्य यूरोप में स्थित हैं। भाषा की दृष्टि से ये स्कैन्डिनेवियन या गोथेनिक, नार्वेजियन, डेनिश, स्वीडिश तथा आइसलैन्डिक ऐंग्लो-सैक्सन तथा निचली जर्मन (इंगलिश तथा फ्रीजियन) और ऊँची जर्मन (जर्मन तथा डच) में विभाजित है।

डलार्नियन जाति (Dalarnian Race)

एटलान्टिक जाति देखिए।

डाइनारिक जाति (Dinaric Race)

वह जाति जो यूरोप के दक्षिण-पूर्वी पर्वतीय प्रदेशों में तथा मुख्यतः डाइनारिक आल्प्स (Dinaric Alps) से उत्तर-पूर्वी फ्रांस तक, दक्षिण-पश्चिमी वेल्जियम, जर्मनी तथा उत्तर में एवर्डीनशायर तक (जहाँ पर उसके चिन्ह आवादी में देखे जा सकते हैं), डेनमार्क में, कार्पेथियन में (Carpathians) और पश्चिम की ओर आल्प्स पहाड़ पर तथा स्विटजरलैण्ड में पायी जाती हैं। जर्मनी तथा आस्ट्रिया के वहुत से फ़ौजी परिवारों में इसकी विशेषताएँ मिलती हैं।

इस जाति के लोग लम्बे तथा गठीले वने होते हैं। साथ ही लम्बे से माध्यमिक चेहरा, लम्बी नाक, जो तथाकथित रोमनिवासियों की नाक से मिलती जुलती सी प्रतीत होती हो, छोटे कपाल, माध्यमिक से लम्बी काली आँखें तथा वालवाले मिलते हैं। जर्मनी तथा उत्तरी देशों के वहुत से प्रसंकर प्रकारों में वाल तथा आँखें हलके रंग की हैं।

डी० डी० (D. D.)—यह प्रभावशाली युग्मैकगुण का चिह्न है।

ड्रुसेज (Druses)

फिलस्तीन के लेवनान में एक वन्य जाति, जो कि जनसंख्या में कंजी आँखों तथा हल्के वालों के अनुपात के लिए प्रसिद्ध है। साधारणतया यह आक्रमणकारियों के कारण वतलायी जाती है परन्तु यह अधिकांशतः अरेमाइट्स (Aramites) के कारण है जो कि मिस्री यादगारों (monuments) को देखते हुए, अधिकांश में नार्डिक थे।

तद्युरूपी (Reversion)

दो प्रकारों के संकरण से तीसरे की उत्पत्ति को कहते हैं जो कि भूतकाल के इन दोनों के किसी पूर्वज का गुण लिये हो।

दीर्घ-कापालिक (Dolchocephalic)

कापालिक देशना (cephalic index) देखिये।

दीर्घ नासा (Leptorrhine)

नाकसम्बन्धी देशना देखिए।

द्वियुग्मिक जुड़वाँ (Dizygotic Twins)

भ्राता सम्वन्धी जुड़वाँ देखिये।

द्वैधीकरण (Duplex)

उन आँखों के लिए इसका प्रयोग होता है जिनमें कि आँख के तारे (iris) के आगे भूरे रंग की एक परत होती है जिससे नीले के स्थान पर दूसरे प्रकार की रंगीन आँखें मिलती हैं। एक अन्य अर्थ में भी इसका प्रयोग किया जाता है जब कि कहा जाता है कि किसी एक दिये हुए गुण के उत्पादन में पित्र्यक के भिन्नयुग्मिक जोड़े के दोनों पित्र्यकों से सम्बन्ध है।

नव-उपार्जित गुणवाद (Neo Lamarkism)

उपार्जित गुणवाद का पुनःकथन तथा पुनरुत्थान १९वीं शताब्दी में मुख्यतः अमेरिका में हुआ और वर्तमान समय में भी मुख्यतः अमेरिका तथा रूस में प्रचलित है।

नाकों के प्रकार (Nose types)

फ्रान्स के महान् मानवशास्त्री टोपीनर्ड (Topinard) ने अपने Elements de' 'Anthropologie Generale' में जो प्राचीन वर्गीकरण स्थापित किया वह आज भी उतना ही ठीक है। वह इस प्रकार है—

१. सीधी, समानान्तर आधार के साथ।
२. उद्बुज (convex) दबे हुए आधार के साथ।
३. गड्ढेदार अथवा उठे हुए आधार के साथ।
४. रोमन, ऊँची बँधी हुई अथवा वस्क (busque)।
५. टेढ़ी नाक (sinnous)।
६. चपटी नाक, चौड़ी मलेनेसियन प्रकार की।
७. सीधी, छोटी, चौड़ी नेग्रायड की भाँति।
८. चपटी, सीधे प्रकार, मंगलायड प्रकार की।

अधिक विस्तृत वर्गीकरण रूडोल्फ मार्टिन ने अपने (Lehrback der Anthropologie) में किया है।

नार्डिक (Nordic)

काकेसायड जाति की एक शाखा जो कि मुख्यतः उत्तरी सागर के चारों ओर स्थित है तथा ऊँचा कद, लम्बा-चेहरा, लम्बा और ऊंचा सिर, हल्की से माध्यमिक गठन, लम्बे से माध्यमिक, सकरी नाक, हलकी आँखें (नीली या धूसर), हल्के बाल (भूरे से सुनहले), हलकी त्वचा तथा लहरीले बाल आदि उसके कुछ गुण हैं।

नासा-आकारदेशना (Nasal form index)

इस देशना में नथुने के प्रकार के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है जो कि आकृति से भिन्न हैं।

नासा की ऊँचाई (Nasal height)

इसमें जड़ के केन्द्र बिन्दु से कोण में मिलनेवाले उस बिन्दु तक की, जो कि ऊपर के ओठ तथा सेप्टम (septum) से बनता है, रेखा को नापा जाता है।

नासा आयाम (Nasal length)

नाक की जड़ से छोर तक नापने से मिलता है।

नासा की गहराई (Nasal depth)

यह नथुने के छोर से उपनथुने के बिन्दु तक नापने से मिलती है।

नासाविस्तार (Nasal Breadth)

नथुने की सबसे अधिक चौड़ाई को नापने से मिलता है।

नासादेशना (Nasal Index)

नाक के अनुपातों का एक-दूसरे से सम्बन्ध। जीवित मनुष्यों की नाक की चौड़ाई को १०० से गुणा करके ऊँचाई से भाग दिया जाता है।

क्रेनियल नथुने की देशना चौड़ाई को १०० से गुणा करके, ऊँचाई से भाग देकर निकाली जाती है।

देशनाएँ तीन विभागों में बाँटी जाती हैं, चाहे कपाल अथवा सिर में हों—

वर्ग	देशनाएं	
	सिर की	कपाल की
लेप्टरहाइन	–७०	–४७ अथवा ४८
मेसरहाइन	७०–८५	४७ से ५१ अथवा ५३
प्लेटिरहाइन	–८५	५१ से ५३ तक

निकाला हुआ (Extracted)

यह शब्द तद्गुणी भाव के लिए प्रयुक्त किया जाता है। उदाहरण के लिए A A का a a से संकरण किया जाता है, प्रथम पीढ़ी (Fi) Aa की होगी। जब उनमें अन्तः-प्रसवन होता है तब दूसरी पीढ़ी F^2 की सन्तति में A A २५ प्रतिशत, Aa ५० प्रतिशत तथा aa २५ प्रतिशत मिलेगा। यह A A तथा aa व्यक्ति सन्तति के प्रारम्भिक माता-पिता से तद्गुणी (थ्रोबेक) हैं और इसी लिए ये निकाले हुए A A तथा निकाले हुए aa हो जाते हैं।

निश्चयवाद, भौगोलिक (Geographic Determinism)

यह सिद्धान्त कि मनुष्य की संस्कृति तथा सभ्यता का, साथ ही उसके भौतिक प्रकारों का विकास भौगोलिक परिस्थिति द्वारा निश्चित होता है, बादवाले पहलू में यह जीवविज्ञान के उपार्जित गुणवाद सिद्धान्त का भौगोलिक रूप है।

'रुको और जाओ', निश्चयवाद को देखिये।

नीग्रेसेन्स की देशना (Index Negrescence)

इसका आविष्कार डा० जान बेडो (Dr. John Beddoe) ने किया है। यदि D = काले बाल वाला हो, R = लाल बालवाला, F = हल्के बालवाला, तब निम्न सूत्र बनता है—

$$D + 2N - R - F = \text{देशना।}$$

पिंगल, असित केश (Brunets)

इसका, काले केशोंवाले काकेसायड (Caucasoids) से—मेडिटेरेनियन, अल्पाइन, डाइनारिक, आर्मेनायड, तथा अटलान्टिक से—अभिप्राय है।

यह शब्द साधारणतया काले केशों वाले मेलानायड तथा मंगोलायड (Melanoids and Mongoloids) के लिए प्रयुक्त नहीं किया जाता, क्योंकि उनके काले बाल भिन्न-जननिक उत्पत्ति के हैं।

पित्र्यसूत्र (Chromosome)

ये सूक्ष्म जन्तु हैं जिनकी जीवित पदार्थों की प्रत्येक जाति में बराबर संख्या मिलती है जो कि कोशों में मिलते हैं। शरीरकोशों में पित्र्यसूत्र जननकोशों अथवा कीटाणु-कोशों की अपेक्षा दुगुनी संख्या में मिलते हैं।

इनका यह नाम (अंग्रेजी) इसलिए रखा गया क्योंकि इनमें कुछ रंगों द्वारा रंगे जाने की क्षमता है (क्रोमो = रंग) जिसके कारण वे पहचाने जाते हैं तथा अणुवीक्षण यंत्र द्वारा उनका अध्ययन किया जा सकता है।

पूर्वी जाति (Eastern Race)

मेडिटेरेनियन जाति देखिए।

पूर्वी बाल्टिक (East Baltic)

पूर्वी बाल्टिक जाति, बाल्टिक सागर के पूर्व में पायी जाती है।

हालां कि उसका प्रभाव उक्त समुद्र के चारों ओर तथा सूदूर पूर्व और दक्षिण-पूर्व के लोगों तक में मिलता है।

यह अल्पाइन जाति (Alpine race) से मिलती जुलती है, सिर्फ इसकी त्वचा का, बालों का तथा आँखों का रंग हलका होता है। बाल रूपहले हलके रंग के तथा आँखें बहुत हलकी, सूक्ष्म, नीली तथा भूरी होती है।

पृथक्करण (Segregation)

प्रथम पीढ़ी के प्रसंकरों (hybrids) में जब अन्तःप्रसवन होता है, जैसे कि A a (जो कि माता-पिता A A तथा a a से मिलता है) और जिससे, २५ प्रतिशत A A, ५० प्रतिशत A a तथा २५ प्रतिशत a a की उत्पत्ति होती है, तो यह प्रारम्भिक माता-पिता के A A तथा a a गुणों का पृथक्करण कहलाता है।

पृथु कपाल (Brachycephalic)

कापालिक देशना (Cephalic index) देखिए।

पैलिओ एल्पाइन (Paleo Alpine)

कुछ मानव-भूवृत्तवेत्ताओं द्वारा अल्पाइन जाति के लिए इस शब्द का प्रयोग किया गया है, क्योंकि अल्पाइन शब्द वे मंगोलायड के लिए प्रयुक्त करते हैं।

ऐसे प्रयोगों को रोकना चाहिए क्योंकि इससे गड़बड़ी होती है, जब कि भली-भांति प्रचलित शब्द मौजूद हैं जो उनका प्रयोग दूसरे अर्थ में करते हैं।

पैनजेनेसिस (Pangenesis)

चार्ल्स डारविन ने पित्रागति की समस्या पर इस दृष्टिकोण से विचार किया कि बच्चों के कीटाणुकोशों में माता-पिता के गुण कैसे आ जाते हैं। उसने परिणाम निकाला कि प्रत्येक शरीरकोश से कुछ अंश अलग होकर कीटाणु कोश बनाते हैं।

इस प्रकार से यह मत, जिसको उसने पैनजेनेसिस (Pangenesis) कहा, उपार्जित गुणवाद के सिद्धान्त को, जो कि उपार्जित गुणों की पित्रागति में विश्वास करता है, अधिक बुद्धिसंगत बना देता है।

पैनेजैनेसिस, जैसा कि अब हम जानते हैं, पूर्णतया गलत था। गाल्टन द्वारा

नकारात्मक परिणाम निकलने पर तथा वीजमैन द्वारा उसके विरोध में जोरदार आवाज उठाने पर विद्वानों ने उसे अमान्य ठहरा दिया।

वीज़मैन ने बिलकुल विरोधी पक्ष लिया—यह नहीं कि शरीर के सचेतन अंग किस प्रकार कीटाणुकोशों को प्रभावित करते हैं, वरन् कीटाणुकोशों द्वारा शरीर के गुण किस प्रकार उत्पन्न होते हैं। मेन्डल के कार्य ने वीज़मैन का पूर्ण समर्थन किया और पैनजैनेसिस बिलकुल अस्वीकृत कर दिया गया।

प्रकार (Variety)

एक साधारण प्रकार की भिन्नता अथवा उपविभाग, जैसे कि किस्म या शाखा है। जैसे काकेसायड की एक किस्म मानी जाय तो उसको प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है, जो अर्थ-विस्तार में जाति से बड़े होंगे। प्रकार (Type) भी है।

प्रभावी (Dominant)

यह शब्द उन गुणों, कारकों अथवा पित्र्यकों (genes) के लिए प्रयुक्त होता है जो कि दो व्यक्तियों के संकरण से प्रथम पीढ़ी में प्रदर्शित होते हैं जिसमें केवल एक भिन्नयुग्म (allelomorph) पित्रागति से आता प्रतीत होता है तथा दूसरा या तो मिल जाता है अथवा अपसारी हो जाता है। इस प्रकार एक माता या पिता में से एक में A A प्रभावी पित्र्यक हैं तथा दूसरे में a a भिन्नयुग्म हैं, तब सन्तति A a होगी परन्तु केवल A के गुण समरूप में दिखलाई देंगे। इसलिए a का प्रभावी A है जो कि उसका अपसारी है।

प्राकृतिक चुनाव (Natural selection)

इस सिद्धान्त का प्रतिज्ञापन चार्ल्स डारविन ने किया है। संक्षेप में यह इस प्रकार बतलाया गया है—"वंशानुगति तथा परिवर्तन के कुछ सिद्धान्तों के साथ कार्य करते हुए अस्तित्व बनाये रखने के लिए प्रतियोगियों का युद्ध जिसके फलस्वरूप जातियाँ धीरे धीरे तथा लगातार बदलती रहती हैं।" आर० सी० पुनेट, एफ० आर० एस० मेन्डलिज्म, मैकमिलन एण्ड कम्पनी लिमिटेड, लन्दन, १९१९, पृष्ठ, १०

प्राणरस (Protoplasm), जीवद्रव्य

प्राणरस जीवन का आधार और जीवित कोशों का एक मुख्य भाग है।

फ, (F_1)—यह वह चिह्न है जो कि प्रथम पैतृक अथवा प्रसंकर पीढ़ी के लिए आता है। इसी तरह F_2, F_3 इत्यादि दूसरी तीसरी प्रसंकर पीढ़ी के लिए है।

फेनो-उग्रियन (Fenno-Ugrian)

फ़िनो उग्रियन लोगों की अनार्य (non-Aryan) भाषाओं, संस्कृतियों तथा

राष्ट्रीयताओं के लिए प्रयुक्त शब्द। इनमें ये लोग शामिल हैं—मध्य यूरोप में मगयार या हंगरीनिवासी, फ़िनलैण्ड के पश्चिमी फ़िन निवासी, वाल्टिक के फिन लोग, अथवा इथोनियानिवासी तथा लिवोनिया के लोग, दक्षिण-पूर्वी फिनलैण्ड के केरेलियन्स, पूर्वी फ़िन लोग अथवा उग्रियन तथा लेप लोग।

ये सब लोग मुख्यतः अथवा अंशतः काकेसायड हैं तथा हो सकता है कि भूतकाल में ये भाषाएँ गलती से तूरानिया अथवा मंगोल की समझी गयी थीं।

फैलिक (Faelic)

एटलान्टिक जाति (Atlantic Race) देखिए।

बहुमूत्रता (Diabetes Mellitus)

शरीर से सम्वन्धित असामान्य दशा परन्तु साथ ही वंशानुगत कारकों से भी सम्वन्धित।

भिन्नपित्र्यक (Diversigen)

इस पुस्तक में यह शब्द उन विजातीय जातिवैज्ञानिक एककों के लिए प्रयुक्त हुआ है जिनमें विभिन्न उत्पत्तियों के व्यक्ति सम्मिलित हैं जो एक समान भौगोलिक प्रदेश अथवा एक नये राजनीतिक एकक में कुछ ही दिन पूर्व एक दूसरे के साथ आये हैं। इन्होंने अन्तःप्रसवन आरम्भ किया अथवा एक ही विवाहक्षेत्र निर्धारित कर दिया जिससे कुछ समय वाद साधारण अन्तःप्रसवन होने लगेगा।

नये राष्ट्र तथा राज्य, जैसे कि नई दुनिया के हैं, जाति कणिका अथवा जातीय एककों (ethnic units) से भिन्न उन भिन्नपित्र्यक अथवा युग्मोभयगुण एकक के उदाहरण हैं जो प्राचीन समूह है तथा भली भांति अन्तःप्रसूत हैं और जिन प्रकारों का पुनः उत्पादन करते हैं उनके रूप में वे काफ़ी दृढ़ हैं तथा भिन्नपित्र्यक (diversigens) और अभिजाति (नस्ल) के मध्य में आते हैं।

इस शब्द का निर्माण लैटिन शब्द डाइवर्सी जेनेरिस (diversi generis) से करना पड़ा है जिसका अर्थ है विभिन्न वर्गो से आये हुए, क्योंकि साधारण अंग्रेजी शब्द विजात (mongrel), जिसका भी अर्थ वही है, वहुत से अन्य अप्रिय अर्थो में भी लिया जाता है जिनको इस शब्द के प्रयोग से मिश्रित नही करना चाहिए।

भिन्नयुग्म (Allelomorph)

(मेण्डल के) पित्रागति सिद्धान्त के जोड़े के गुणों में से एक। इसका विशेषण रूप 'भिन्न युग्मिक' उपयोगी है क्योंकि कथन में उसका प्रयोग जो इस प्रकार होता है कि गोल "गुण का सिकुड़े" गुण से वही सम्बन्ध है जो कि पित्रागति सिद्धान्त के जोड़े के

दोनों गुणों में से एक का दूसरे से होता है। उसे संक्षेप में इस प्रकार कह सकते हैं कि गोल सिकुड़े के प्रति भिन्नयुग्मिक है।

भौतिक मानवशास्त्र (Physical Ahthropology)

भौतिक रूप में मनुष्य का, उसके शरीर तथा ढाँचे की वनावट का तथा उसके सम्वन्धों का अध्ययन है।

मंगोलायड जातियाँ (Mongoloid Races)

मोटे काले बालोंवाले, पीली त्वचा के (अमेरिन्ड में लाल त्वचा के) चौड़े कपाल, आकृति चपटी, छोटे कदवाली जातियाँ, जिनके वितरण का केन्द्र पूर्वी मध्य एशिया है।

मध्य नासा (Mesorrhine)

नाकसम्वन्धी देशना देखिए।

माध्यमिक कापालिक (Mesaticephalic)

कापालिक देशना (Cephalic Index) देखिए।

माध्यमिक कापालिक (Mesocephalic)

उन सिरों का वर्णन है जो ऊँचाई-लम्वाई देशना अथवा ऊँचाई-चौड़ाइं देशना के सम्बन्ध में माध्यमिक लम्वाई के हों।

मानव-भूगोल (Human-Geography)

परिस्थिति के सम्वन्ध में विना जातियों में विभक्त मानव के सम्पूर्ण अध्ययन के तथा भौगोलिक परिस्थिति की दशाओं के प्रति उनकी क्रिया तथा परिस्थिति पर उनका प्रभाव है। इसलिए मानव भूगोल एक पारिस्थितिक अध्ययन है।

मानव-भूवृत्त (Anthropogeography)

मानव-भूवृत्त, मानव भूगोल (Human Geography) से इस वात में भिन्न है कि यह इस तथ्य के प्रति संकेत है कि समस्या पूर्णतया केवल परिस्थिति के सम्वन्ध में मनुष्य की ही नहीं है, परन्तु दो जातियों, उपजातियों, अभिजनन तथा जाति-वैज्ञानिक अन्य प्रकार के समूहों की भी है।

मानव-भूवृत्त, मानव-भूगोल की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक तथा सत्यतापूर्ण है।

मेडिटेरेनियन जाति (Mediterranean Race)

काकेसायड जातियों की एक छोटी किस्म, जो कि दो शाखाओं अथवा उपजातियों में मिलती है। पश्चिमी शाखा अथवा मुख्य भूमध्यसागरीय शाखा यूरोप तथा अफ्रीका के भूमध्यसागरीय तटों पर स्थित पायी जाती है। उसमें छोटा गठा कद, लम्बे कपाल

तथा चेहरे, काले केश और आँखें, लहरीले से लगाकर घुंघराले तक बाल, हल्का पीत वर्ण, माध्यमिक ऊँचाई की बहुत कुछ सीधी नाक मिलती हैं।

इस जाति का पूर्वी भाग जिसे जर्मन लेखक पूर्वी जाति (Oriental Race) कहते हैं, मेडिटेरेनियन से पूर्व की ओर अरेबिया, ईराक और आगे तक फैला पाया जाता है।

मेलेनस (Melanous)

काली त्वचावाले।

मेलानायड जाति (Melanoid Race)

इसके अन्तर्गत ऊर्णकेश (ulotrichic) काले छल्लेदार बाल, काली तथा गहरी त्वचावाली जातियाँ आती हैं जो नेग्रायड, नेग्रियेटो (जिनमें कि नेग्रिल्लोज भी हैं) तथा आस्ट्रेलायड, सम्मिलित कहलाती हैं।

मेलानोक्रोइक(Melanochroic)

दक्षिणी यूरोप के कम गौर वर्णवालों—मेडिटेरेनियन, सेमाइट तथा हेमाइट—के लिए, साथ ही भारत के अधिक काले काकेसायड लोगों तथा मेडिटेरेनियनों के लिए भी इसका प्रयोग किया गया है।

यथाक्रमिक मिलन (Assortative Mating)

समान की अपने ही समान का साथ करने की प्रवृत्ति। यह पशुओं में साधारण क्रम है और मनुष्यों में भी प्रायः ऐसा ही मिलता है। मनुष्यों की जातिगत विभिन्नता को बनाये रखने में यह एक महत्त्वपूर्ण कारक है।

युग्म, युग्मक (Zygote)

दो कीटाणुकोशों अथवा जन्युओं (gametes) के योग से निर्मित एक पूर्ण अण्ड।

युग्मोभय गुणी (Heterozygot)

युग्मानेकगुणी, जन्युओं का योग है और यह उन माता-पिता से मिलता है जो कि उसमें असमान कारकों का पारेषण करते हैं जिनमें से एक अपमारी (recessive तथा दूसरा प्रभावी (dominant) होता है।

युग्मक (Zygote) अथवा युग्मैकगुणी (homozygote) देखिए।

"DR" चिन्ह का प्रयोग युग्मानेकगुणी योग अथवा जन्यु का अर्थ व्यक्त करने के लिए किया गया है।

युग्मैकगुण (Homozygote)

युग्मैकगुण, जन्युओं का योग है जो उन माता पिता से मिलता है जो कि उनमें

समान कारकों का पारेपण करते हैं जिनमें से दोनों प्रभावी अथवा अपसारी हो सकते हैं।

DD चिन्ह एक युग्मैकगुणी को प्रदर्शित करता है। गुण दोनों माता-पिता से पित्रागत तथा प्रभावी हैं।

RR चिन्ह एक युग्मैकगुणी को प्रदर्शित करता है जिसके गुण दोनों माता-पिता से पित्रागत तथा अपसारी हैं।

यूनीजेन (एकपित्र्यक, Unigen)

इस पुस्तक में जाति के एकक अथवा जाति-कणिका (etnnomonad) के अर्थ में इसका प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ भिन्नपित्र्यक (diversigen) के विपरीत है। उनका तात्पर्य अन्त:प्रसावित व्यक्तियों के प्राचीन जातीय समूह से है जिन्होंने यथाक्रमिक मिलन, आकस्मिक चुनाव, जननिक परिवर्तन तथा प्राकृतिक चुनाव, इनमें एक-एक अथवा कई की संयुक्त क्रिया द्वारा करीब एक नये प्रकार की उत्पत्ति की है।

जितनी समानता भिन्नपित्रयक (diversigen) में है, उससे इसमें बहुत अधिक समानता है। इसमें नस्ल से कम तथा जाति से और भी कम समानता मिलती है।

यहूदियों के अन्त:प्रसवन तथा उनमें आर्मीनायड गुणों के कुछ हद तक मिलने के कारण उनकी राष्ट्रीयता को यूनीजेन कहना उचित होगा।

कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि यूनीजेन पूर्णतया एक ही जाति से निर्मित होता है। उस अवस्था में वह एक उपजाति होगा और न वह शुद्ध नस्ल की इस दशा को पहुँच सका है जिसे जातीय नस्ल कहा जाय। परन्तु इस तथ्य पर जोर देना आवश्यक है कि कुछ प्राचीन जातिवैज्ञानिक समूह हैं जिनको विजात (mongrel) कहकर हम टाल नहीं सकते तथा जिनमें जनसंख्या के अधिकांश व्यक्तियों में प्रकार की कोई समानता नहीं होती।

यूरेफ्रिकन जाति (Eurafrican Race)

यह शब्द प्रोफेसर जीसेप सर्जी ने (Prof. Giuseppe Sergi) मेडिटेरेनियन जाति (Mediterranean Race) के लिए प्रयुक्त किया है परन्तु इसका सम्पूर्ण काकेसायड जाति के लिए भी प्रयोग किया गया है।

रुधिरसम्बन्धी (Erythrism)

रटिलिज्म (Rutilism) अथवा लाल बाल।

रासेनविशेनशैफ्ट (Rassenwissenshaft)

जातीय-शास्त्र (जातिविज्ञान) के लिए जर्मन शब्द।

राशेनकुन्ते (Rassenkunte)

रासेनविशेनशँफ्ट (Rassenwissenshaft) देखिए।

राष्ट्रवाद (Nationalism)

जातित्ववाद (रेशलिज्म) का दूसरा रूप, जो कि राष्ट्र को वही अथवा वैसे ही गुण प्रदान करता है जो कि जातित्ववाद जाति को। इस प्रकार जर्मनी में नात्सी राज्य की अधीनता में राष्ट्रवाद तथा जातित्ववाद वास्तव में अभिन्न थे।

राष्ट्रीयता (Nationality)

यह शब्द एक राष्ट्र होने को प्रकट करता है जो कि एक राजनीतिक अथवा सामाजिक समूहन है जो जातिसम्वन्धी अन्तःस्थित प्रवृत्ति को सूचित करता है। यह अन्तः प्रवृत्ति यथाक्रमिक मिलन से भी प्रकट होती है जिसमें यह विश्वास करने की इच्छा सम्मिलित रहती है कि कोई समूह, जिससे किसी व्यक्ति का सम्वन्ध होता है, एक ही उत्पत्ति का है, या नहीं तो अपने सभी सदस्यों से सम्वन्धित है अथवा जो किसी न किसी प्रकार अपने प्रकार के लोगों से सम्बद्ध रहने की इच्छा को व्यक्त करता है, जिससे उसके सभी सदस्यों में अधिकार और कर्तव्य की भावना आ जाती है।

एक समान नाम रखने से, जैसे फ्रान्सीसी, जर्मन, अमेरिकन, राष्ट्रीयता का सिद्धान्त सम्भव हो सका। कभी कभी इसका निर्माण समान भाषा होने तथा हमारे समय में एक राज्य के रूप में समान राजनीतिक संघ द्वारा हो सका है, जहाँ पर सरहद के भीतर रहनेवालों में समान नागरिकता के कारण समान वन्धन की उत्पत्ति हुई।

पारिवारिक समूहों अथवा झुन्डों में रहना जातिसम्वन्धी अन्तःप्रवृत्ति का दूसरा रूप है।

वास्तव में यह शब्द लैटिन के नैस्कर (Nascor) से आया है जिसका अर्थ 'उत्पत्ति' है, तव उसे रक्त के रिश्ते से सम्वन्धित होना चाहिए तथा इसी लिए यह जाति ('रेस') के वरावर होगा। इसमें सन्देह नहीं कि, चाहे गलत ही क्यों न हो पर प्राचीन काल के लोगों ने राष्ट्र को जाति के भाव में लिया, क्योंकि वहुधा राष्ट्रीयता को वतलाने के लिए समान पूर्वजों की वात कही जाती थी। परन्तु आज इसी शब्द का ऐसा प्रयोग किया जाता है जिसमें जातिसम्वन्धी कोई वस्तु नहीं आती, चाहे किसी राष्ट्र के सदस्य अर्ध चेतन रूप से उसे जातीय शक्ति की भावना से युक्त वनाने का प्रयत्न क्यों न करें। जैसा कि हमने वतलाया है, जातीय अन्तःप्रसदन तथा पृथक्करण की सचेतन अन्तःप्रवृत्ति का यह दूसरा रूप है। परिणामतः जाति के लिए इसका प्रयोग नहीं होना चाहिए।

रुको और जाओ निश्चयवाद (Stop and go determinism)

वर्तमान भौगोलिक निश्चयवाद का प्रोफेसर ग्रिफिथ टेलर द्वारा पुनर्कथन (भौगोलिक निश्चयवाद देखिए)। वास्तव में यह उपार्जित गुणवादी विचारों के भौगोलिक निश्चयवाद का त्याग है (अध्याय १५ देखिए)।

लहरदार केश (wavy hair)

केश आकार देखिए।

लघुकपालिक (platycephalic)

उन सिरों का वर्णन है जो कि ऊँचाई लम्वाई देशना अथवा ऊंचाई-चौड़ाई देशना से नीचे हैं।

लिंग-ग्रथन (Sex Linkage)

जब कि गुण एक ही लिंग पित्र्यसूत्रों में मिलते हैं।

अलिंग सूत्र ग्रथन (Autosomal Linkage) देखिए।

लिंग-पित्र्यसूत्र (Sex-Chromosomes)

ये X X तथा X Y पित्र्यसूत्र हैं तथा ये प्रजननकोशों (reproductive cells) में मिलते हैं और निषेचन (fertilisation) होने पर संयोजनों के अनुसार सन्तति का लिंग निर्धारित होता है।

लेथो-लिथुआनियन (Letho-Lithuanian)

लिथुआनिया तथा लैटविया (अव रूस के अन्तर्गत) के वाल्टिक राज्यों की आर्य भाषा, संस्कृति तथा राष्ट्रीयता से अर्थ है।

लैटिन अथवा रोमैन्स (Latin or Romance)

यह रोमेन्स (Romance) लोगों की सेण्टम् आर्य जाति भाषाओं, संस्कृतियों तथा राष्ट्रवादिता को प्रकट करता है, जो कि प्रारम्भ में शायद नार्डिक थे परन्तु अब उनमें मेडिटेरेनियन, अल्पाइन, एटलान्टिक जातीय सन्ततियाँ शामिल हैं जो इटली, फ्रान्स, स्विटजरलैण्ड, स्पेन, पुर्तगाल में निवास करती हैं तथा पूर्व में रूमानिया के पृथु कपालिक (brachycephalic) लोग भी सम्मिलित हैं।

वर्ग (stock)

अभिजनन (नस्ल) या प्रसवन-समूह के लिए प्रयुक्त साधारण शब्द, जैसे किस्में, किस्मों का भेद, जाति या जाति का उपविभाग अथवा अनिश्चित जातीय समूह, जैसे कि ब्रिटिश अथवा फ्रान्सीसी वर्ग।

वृहत् कापालिक (Hypsicephalic)

यह वे सिर हैं जो कि ऊँचाई-लम्बाई देशना अथवा ऊँचाई-चौड़ाई देशना के सम्बन्ध में ऊंचे हैं।

समान जुड़वें (Identitical Twins)

जुड़वाँ देखिए ।

सम्भववाद (Possibilism)

भूगोलवेत्ताओं का एक सिद्धान्त जो निश्चयवाद के विरुद्ध है। उनका विश्वास है कि भूगोल द्वारा ही कुछ विकास सम्भव है परन्तु भगोल वाध्य नहीं करता।

समानता का गुणांक (Coefficiemt of Likeness)

मनुष्यों में समानता का सांख्यिकीय मूल्यांक 10 कोई समानता नहीं तथा I दो व्यक्तियों में पूर्ण समानता का प्रदर्शन करता है। इस प्रकार से माता-पिता और वच्चों में तथा भाइयों में यह ·५ है।

सांस्कृतिक मानवशास्त्र (Cultural Anthropology)

इसमें मनुष्य की कला, दस्तकारी, प्राविधिक विज्ञान तथा भाषा सम्मिलित है।

साइजोफ्रेनिया (Schizophrenia)

अस्वस्थ मानसिक अवस्था, साधारण मानसिक अव्यवस्था, कभी कभी डेमेन्शिया प्रेकाक्स कहलाती है जो कि प्रारम्भिक प्रकार का पागलपन है।

साधारण (Simplex)

आँखों के लिए प्रयुक्त शब्द, द्वैधीकरण (duplex) आँखों के विपरीत। साधारणतया, साधारण आँखें नीली अथवा धूसर (ग्रे) होती हैं परन्तु द्वैधीकरण में माध्यमिक से भूरी तक मिलती हैं।

साधारण आँखें वह हैं जिनमें भूरा रंग (चमकीला पदार्थ – chromatin) आँख के तारे (iris) के ऊपरी भाग में नहीं होता।

इस शब्द का प्रयोग उस समय भी किया जाता है जव कि यह कहा जाता है कि द्वैधीकरण (duplex) से भिन्न किसी गुण की उत्पत्ति में भिन्नयुग्मिक पिश्यकों के जोड़े में से एक का सम्बन्ध है।

सादृश्य (concordance)

किसी दी हुई जनसंख्या में किसी जाति के विशिष्ट जातीय गुणों में एक से अधिक मिलने पर इसका प्रयोग होता है।

इस प्रकार यदि हम कहें कि पूर्वी ऐंग्लिया (East Anglia) में वाल, आँख, त्वचा, कपाल और कद आदि जातीय गुणों की समानता है, तो यह जानते हुए कि जन-संख्या पूर्णतया नार्डिक है, इसका अर्थ होगा कि अधिकांश लोगों के स्वर्ण केश, कंजी आँखें तथा त्वचा, लम्वा कपाल और लम्वा कद होगा—जो सव नार्डिक जाति के गुण हैं। यदि वाल काले हों तव ये लोग असदृश होंगे।

सीधे केश (straight hair)

केशों के आकार को देखिए।

सेमेटिक (Semitic)

मानव का एक भाषावार तथा सांस्कृतिक विभाग जिसके अन्दर असीरिया, फोनीशिया, सीरिया (शाम), हीब्रू, अरामेइक, कनानान्टिश (Cananantish) तथा आजकल की अरेविया की भाषाएँ सम्मिलित हैं। इस वर्गीकरण में मेडिटेरेनियन जाति के पूर्वी भाग की जातियाँ सम्मिलित हैं।

सूखा रोग (Rickets)

विटामिन डी (Vitamin D) की कमी से उत्पन्न दशा जो वंशानुगति के आधार पर भी होती है।

सूत्रभाजन (Mitosis)

शरीरकोश के सभी पित्र्यसूत्रों का, उनका दो कोशों में विभाजन होने के पूर्व, समान भागों में अलग होना सूत्रभाजन है।

इस प्रकार, उदाहरण के लिए चार पित्र्यसूत्र वाले शारीरिक कोश में ये लम्वाई में वँट जाते हैं और आठ अर्ध पित्र्यसूत्र वनकर चार पित्र्यसूत्रों के दो जोड़े हो जाते हैं जो कि प्रारम्भिक कोश से वने इन दो नये कोशों की न्यष्टि वन जाते हैं।

इस क्रिया को सूत्र भाजन कहते हैं। इसे अर्धसूत्रण न समझ लेना चाहिए।

स्लाविक अथवा स्लावोनिक (Slavic or Slavonic)

साटेम-आर्य (Satem-Arya) भाषाओं सम्वन्धी स्लावोनिक लोगों की संस्कृति तथा राष्ट्रीयता—जिसमें पोल्स, स्लोवाक्स, स्लोविनीज, रूदेनियन्स, सर्वस, वेन्डस, मान्टेनेग्रियन्स, वल्गारियन्स, युक्रेनियन तथा अनेक रोमन समूह सम्मिलित हैं।

शरीरसम्वन्धी कोश (Somatic Cells)

सोमा (Soma) या वाडी (body) शरीर शव्द से लिया गया है जिसका अर्थ शारीरिक कोश, कीटाणु कोश (germ cells) से भिन्न है।

इनमें प्रजननकोशों की भाँति पित्र्यसूत्रों की संख्या दुगुनी है।

शुद्ध (Pure)

जातियों, नस्लों तथा व्यक्तियों के लिए प्रयोग किया जाता है जो आपस में अन्तः-प्रसवन होने पर अपने ही समान सन्तति उत्पन्न करते हैं।

श्वेतता (Albinism), धवलांगता

त्वचा, बाल तथा आँखों में रंग की कमी जो कि सभी जातियों में हो सकती है। यह एक रोगसम्बन्धी दशा है जो कि जननिक प्रकार से पारेषित होती है।

श्वेत जातियाँ (White races)

काकेसायड जातियों के लिए प्रयुक्त शब्द।

हथेली का उभरा भाग (Thenar eminence)

अँगूठे के नीचे हथेली का उभरा भाग।

हथेली का बायाँ ऊंचा भाग (Hypothenar-eminence)

घूँसे का उभरा भाग।

हेलेन-इलीरियन (Helene Illyrian)

यूनान की आर्य भाषाओं, संस्कृतियों तथा राष्ट्रीयता से सम्बन्धित।

होमो मंगोलिकस (Homo Mongolicus)

मंगोलायड जाति के लिए प्रयोग किया गया शब्द।

होमो एनाटिकस (Homo Anaticus)

मंगोलायड जाति (Mongloid Race) के लिए प्रयोग किया गया शब्द।

होमो यूरोपीयस (Homo Europaeus)

काकेसायड जातियों (Caucasoids) के लिए प्रयोग किया गया शब्द।

होमो एफ्रीकानस (Homo Africanus)

नेग्रायड जाति (Negroid) के लिए प्रयोग किया गया शब्द।

हेमिटिक (Hamitic)

मानव का एक भाषावार तथा सांस्कृतिक विभाग, जिसमें ऐसी भाषावाले सम्मिलित हैं जैसे प्राचीन मिस्र की तथा उत्तरी अफ्रीका की, तव की और अव की वर्वर भाषाएं। यह भाषा बोलनेवाले लोग तव और अव भी जातीय वर्गीकरण में मेडिटेरेनियन प्रकार से हेमिटिक (Hamitic) तक से भिन्न हैं। हम उन्हें जाति-वैज्ञानिक दृष्टि से कुछ मेलानायड (Melanoid) रक्त के साथ मेडिटेरेनियन मानते हैं।

पारिभाषिक शब्द-सूची

अंत: प्रसवन inbreeding
अंत: प्रसूत inbred
अणुजीव micro-organism
अतिजीवन survival
अतिजीवन का युद्ध struggle for survival
अतिमानव superman
अधिरक्त स्राव haemaphila
अनुभवजन्य empirical
अपसारी* recessive
अभिजनन* breeding
अभिवर्ण* chromatin, रंजितक
अभिजाति breed, दे० सन्तति
अर्धसूत्रण* meiosis
अवबोध conception
अवरोक्त latter
आधारक matrix (क्षेत्रवस्तु)
आनुवंशिकी genetics, दे० जननिक-शास्त्र
आप्रवासित, आप्रवासी immigrant
आवृत्ति (बारम्बारता) frequency
उत्परिवर्तन* mutation
उत्प्रवासन emigration
उत्प्रवासी emigrant
उद्विकास evolution, उद्भव
उपजाति sub-race; species दे० 'किस्म'
उपधारणा postulate
उपरिचर्म epidermis
उपार्जित गुणवाद* Lamarkism
ऊतक tissue, तन्तु
एक – अंडक – दे० एकयुग्मिक
एकक unit
एकपित्र्यक* unigen
एकयुग्मिक*monozygotic
"जोड़वाँ"* monozygotic twins
एकसंकर monohybrid
कापालिक देशना Cephalic index
कारक factoı, घटक; पित्र्यक*
किस्म species (उपजाति)
कीटाणुकोश gamete जन्यु
कोश (कोशिका) cell
कोशद्रव्य cytoplasm
क्ष-रश्मि X-ray
गलग्रंथि thyroid
गुणांक coefficient (गुणक)
ग्रथन linkage (सहवर्तिता)
ग्रथित गुण* linked characters
घात power, विस्तारचिह्न
चमकीला पदार्थ – दे० 'रंजितक'
चुनाव की बंधुता elective affinity
चिपटनासा* platyrrhine
जनकबीज, जनकबिंदु – दे० 'पित्र्यक'
जननग्रंथि gonad
जनन-विद्या genetics
जननिक जातिविज्ञान genetic ethnology
जननिक परिवर्तन genetic drift
जननिक विद्या,-शास्त्र genetics
जन्यव gametic
जन्यु gamete
जातिकशिका* Ethnomonads
जातिगत (जातीय) racial
जातित्ववाद* racialism
जातिविज्ञान* (प्रजातिविज्ञान) ethnology

जातिवृत्त ethnography
जातिसंकरण race-crossing
जातीय प्रकार ethnic type
जातीय शास्त्र* racial science,
दे० जातिविज्ञान
जीवमितीय biometrical
जीवविज्ञान biology
जीवन-विस्तार life span
जीविज organic
जुड़वाँ* twins
जुड़वाँ, समान या एकरूपधारी identical twins
जुड़वाँ, साधारण ordinary twins
डिम्व (स्त्रीवीज) ovum
तत्संकरण back crossing
तद्गुणी throw back
त्रिसंकर trihybrid
दीर्घ कपाल* dolichocephal
दुर्जननिक dysgeric
देशना index
देशान्तर-गमन migration
दो अंडक dizygotic
द्विसंकर dihybrid
धवलांग* albino, श्वेत
नवउपार्जित गुणवाद* Neo-Lamarkism
नस्ल breed (अभिजाति)
निचर्म dermis
निश्चयवाद* determinism
निषेकहीन डिम्व ovule
निषेचन fertilization
न्यष्टि nucleus
पदचिन्ह सदृश – दे० 'लुप्तप्राय पंख'
निर्वंश जीवशास्त्र palaeontology
पदार्थ वैज्ञानिक, – शास्त्रज्ञ naturalist
परिकल्पना hypothesis
परिस्थितिवाद environmentalism
परिस्थितिवादी environment list
पाटलक rosetted गुलाबरंग-रंजित
पारेषण transmission
पित्रागति inheritance
पित्रागति नियम (सिद्धान्त) Mendalism
पित्र्यक (जनकविंदु) gene
पित्र्यसूत्र* Chromosome
पुराजाति विज्ञान Palaeo-Ethnology
पुरापाषाण काल palaeolithic
पुरासात्विकी विभाग Palaeontology
पूर्वावयव premises (प्रतिज्ञावाक्य)
पृथक्करण* segregation (विसंयोजन)
पृथु कपाल* brachycephalic
पोष्य वालक foster child
प्रकृतिवादी naturalist (पदार्थ शास्त्रज्ञ)
प्रक्रिया mechanism
प्रजनन reproduction
प्रतिज्ञा वाक्य premises (पूर्वावयव)
प्रतिष्ठित साहित्य classical literature
प्रभावी* dominant
प्रवसन migration
प्रसंकर hybrid
प्रसंकर शक्ति hybrid vigour
प्रसंकरोर्जा heterosis (प्रसंकर शक्ति)
प्राकृतिक चुनाव* natural selection
प्राकृतिक शास्त्र natural science
प्राणरस* protoplasm जीवद्रव्य, आदि-जीवरस
प्राणिशास्त्री Zoologist
प्रादेशिक पृथक्करण regional segregation
प्राविधिक technical
वंधुता का सम्वन्ध affinity
वहुकोशीय mulit-cellular
वहुयुग्म – दे० भिन्नयुग्म
वाह्यसमरूप phenotype
भिन्नपित्र्यक* diversigen
भिन्नयुग्म* allelomorph (वहुयुग्म)
भिन्नयुग्मिक पित्र्यक allelomorphic genes
भिन्नरूप idiotype
भूदृश्य landscape

भौगोलिक निश्चयवादी geographical determinist
मध्य मान mean
मानव ईक्षीय anthroposcopical
मानव भूवृत्त* Anthropo-geography
मानव विज्ञान Anthropology
मुख्य वर्ग genus, प्रवर्ग
मूलजाति समूह stock, मूलवंश
युग्मक, युग्मकोश Zygote
युग्मानेक गुण (विषम युग्मीय) heterozygous
युग्मैक गुण* (समयुग्मिक) homozygous
रंजितक Chromatin (दे० अभिवर्ण*)
राष्ट्रवाद* Nationalism
रुको और जाओ निश्चयवाद* Stop and go determinism
रूप-वर्णनात्मक morphological
लघु-इंद्रिय क्रिया hypofunc.ioning
लघु कपालिक* platycephalic
लम्ब वृत्त loop (गांठ)
लामार्कवाद Lamarkism, उपार्जित गुणवाद
लिंग ग्रथन* sex linkage
लिंग पित्र्यसूत्र sex chromosomes
लुप्तप्राय पंख vestivigial wing
वंशक्रम pedigree
वंशानुगति heredity
वन्य जाति tribe
वर्ग stock (मूलवंश, मूलजातिसमूह)
विकिरण radiation
विजात समूह mongrel collection
विद्युत्कण electron
विभासन irradiation (रश्मीकरण)
व्यत्यसन crossing over
शरीर सूत्र विभाजन metosis, सूत्रभाजन
संकरज cross-breed
संकरण cross-breeding
संतति strain, दे० अभिजाति
संतुलित जाति-समूह unigen
संपरीक्षण experiment
संभववाद* possibilism
संयोजन combination
सवन्धुता kinship
सपितृक, समातृक बच्चे sibling समान माता या समान पिता के बच्चे
समजात, समांग homogeneous
समजातता, समजातित्व homogeneity
समविभाजन metosis दे० शरीर सूत्र विभाजन
समपित्र्यक genotype
समयुग्मिक homozygous
समरूपता homogenity
समान जुड़वाँ identical twins
समान माता पिता के बच्चे sibling
सुजननिक विज्ञान, सुजननविद्या eugenics
सूत्रभाजन* mitosis
स्थूल चरण club foot
हथेली का उभरा भाग thenar eminence
हिमनदी glacier

[नोट—तारकांकित शब्दों की व्याख्या 'शब्द-व्याख्या' में देखिए।]

चित्र नं० ९०

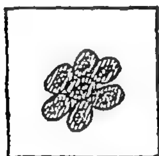
शरीर-सूत्र-विभाजन (Mitosis) का उदाहरण अथवा शरीर-कोशों का विभाजन, केवल पित्र्यसूत्रों को दिखलाते हुए।

 =कोश की न्यष्टि।

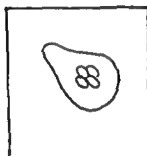
 =न्यष्टि के चारों ओर झिल्ली (मेम्ब्रेन)

 =पित्र्यसूत्र (क्रोमोसोम)

 =कोश (सेल)



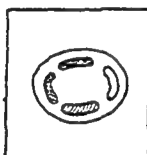
कोश अपनी प्रारम्भिक स्थिर दशा में।



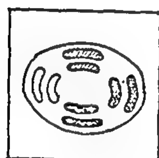
कोश में कार्य प्रारम्भ तथा पित्र्यसूत्रों के निर्माण का आरम्भ।



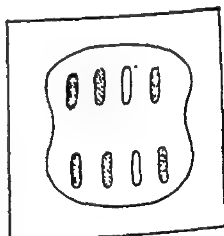
पित्र्यसूत्रों का बनना।



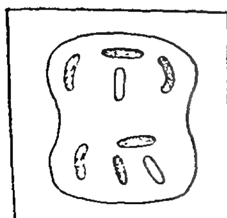
पित्र्यसूत्रों में शरीर सूत्र-विभाजन की क्रिया का होना।



पित्र्यसूत्रों का जोड़ों में बँटना।



पित्र्यसूत्र अब अपने को छाँट लेते हैं तथा प्रत्येक नवनिर्मित जोड़े का एक कोश विपरीत भाग में चला जाता है



पित्र्यसूत्रों का नये कोशों में बनना आरम्भ, प्रत्येक कोश में चार पित्र्य-सूत्र हैं।

(दे० पृ० १५३)

प्रजनन-कोशों की क्रिया इस प्रकार है।

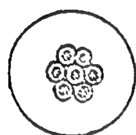
यह विदित है कि निषेचन (गर्भाधान, फर्टिलिजेशन) में नर तथा मादा के

चित्र नं० ९१

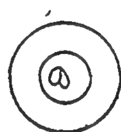
अर्धसूत्रण (meiosis) का उदाहरण अथवा वह विभाजन जिससे कीटाणु (जर्म) कोशों का निर्माण होता है; कोशों का चित्रण जो चार पित्र्यसूत्रों से आरम्भ होते हैं।

चिन्ह वही हैं जैसा कि पिछले चित्र में।

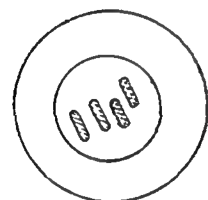
पित्र्यसूत्रों की जाली भिन्न है जिससे कि जोड़ों में दिखलाये जा सकें।



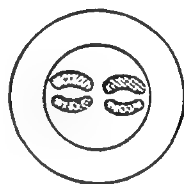
कोश प्रारम्भिग दशा में।



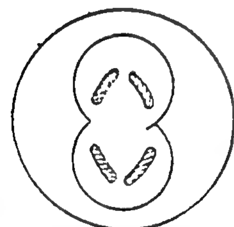
चार पित्र्यसूत्रों के पृथक्करण का प्रारम्भ जो कि जोड़ों में हैं।



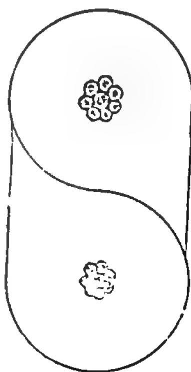
पित्र्यसूत्रों के दो जोड़े



कोश-विभाजन, अर्धसूत्रण का आरम्भ



अर्धसूत्रण लगभग पूर्ण अवस्था में।



दो नये अर्धकोशों का निर्माण हुआ है, प्रत्येक में पित्र्यसूत्रों की संख्या प्रत्येक की प्रारम्भिक दशा से आधी है। इससे प्रजनन कोशों की न्यष्टि (nucleus) का निर्माण होता है। इन अर्ध कोशों (हाफ सेल्स) को जन्यु (gametes) कहते हैं।

इस प्रकार से अर्ध सूत्रण (मियासिस) द्वारा कोशों का विभाजन होता है जिससे प्रजनन अथवा कीटाणु-कोश बनते हैं। इनमें प्रारम्भिक कोशों की अपेक्षा पित्र्यसूत्रों की संख्या आधी रहती है।

पित्र्यसूत्रों के मिलने से निषेचित स्त्रीबीज की न्यष्टि का निर्माण होता है। परन्तु इसमें इसके पूर्व कि ऐसा हो सके, पहले ही कोश-विभाजन हो चुकता है जिसे अर्धसूत्रण कहते हैं। इसमें पित्र्यसूत्रों के अर्ध भागों में बँटने तथा फिर कोशों का विभाजन होने के बजाय, जैसा कि शरीर के कोशों में होता है, जिसका उल्लेख अभी किया गया है, वे पित्र्यसूत्र ही वास्तव में विभाजित हो जाते हैं। इस प्रकार आधे पित्र्यसूत्र कोश के प्रत्येक ओर चले जाते हैं। वहाँ पर हमें प्रत्येक जन्यु (गैमीट) की (उन कोशों को कहते हैं जो कि निषेचन होने पर मिल जाते हैं) न्यष्टि मिलती है।

यह क्रिया दिये हुए चित्र नं० ९१ में अधिक स्पष्ट रूप से दिखलाई देगी।

इस क्रिया को अर्धसूत्रण (Meiosis) कहते हैं।

जब निषेचन होता है, नरजन्यु (गैमीट) मादाजन्यु से मिल जाता है तथा प्रत्येक में शरीर-कोशों में मिलनेवाले पित्र्यसूत्रों (क्रोमोसोम्स) की आधी संख्या रहती है। यदि यह क्रिया न हो तब ऐसा होगा कि नर-कोश का मादा-कोश से मिलन होने पर प्रत्येक कोश-विभाजन में मादा पित्र्यसूत्रों की संख्या दुगनी हो जायगी तथा फिर नर तथा मादा जन्युओं का संयोग होगा। इस प्रकार से मनुष्य में निषेचित स्त्रीबीज के २४ जोड़ा पित्र्यसूत्रों की अपेक्षा, जैसा कि होना चाहिए, अर्धसूत्रण की असफलता से ४८ जोड़े पित्र्यसूत्रों की उत्पत्ति होगी। इस तरह निषिक्त स्त्रीबीज में पित्र्यसूत्रों की ठीक संख्या बनाये रखने तथा साथ ही प्रत्येक माता-पिता से आधे पित्र्यसूत्रों की संख्या लेने के लिए, अर्धसूत्रण का होना आवश्यक है।

आकार में ये कोशजन्यु अणुवीक्षणीय होते हैं। शुक्राणु (नरबीज जो कि स्त्री-बीज ओवम अथवा डिम्बों का निषेचन करते हैं) डिम्ब के आकार का सहस्त्रवाँ भाग होते हैं। फिर भी आश्चर्य है कि इनके भीतर ही जीविज पित्रागति (आरगैनिक इनहेरिटेन्स) की प्रक्रिया होती है। स्त्रीबीज के कोश के विपरीत जिसमें अधिक पौष्टिक पदार्थ होता है तथा मध्य में न्यष्टि की स्थिति होती है, शुक्रकोश में एक सिर होता है, जो कि न्यष्टि है, तथा एक पूंछ भी जो कि मेढ़क के बच्चे की भाँति सिर को सीधा रखती है। अधिक बड़ा स्त्रीबीज (डिम्ब) जिसमें पौष्टिक पदार्थ होता है, इस सदैव घूमते रहनेवाले शुक्राणु से निषेचित होता है।

ऐसा कहा गया है कि कीटाणु-प्राणरस का आधार न्यष्टि में है जहाँ वह अत्यन्त जटिल स्थिति में रहता है। उसमें विकास की तथा जीवित बने रहने की बड़ी शक्ति होती है। इसको मुख्यतः पित्र्यसूत्रों में देखना चाहिए जिनसे न्यष्टि में रंजितक (क्रोमैटिन) बनता है, जिसमें सम्पूर्ण जीव के प्रारम्भिक एकक मिलते हैं।

इसमें बहुत कम सन्देह जान पड़ता है कि प्रसवन में जो तत्त्व पाये जाते हैं (जैसे कि आकार, रंग, स्वभाव इत्यादि) वे सब पित्र्यसूत्रों से ही मिलते हैं। वे गुण जो कि एक कोश के विभिन्न पित्र्यसूत्रों में मिलते हैं, संकरण के साथ (जैसा कि अगले अध्याय में देखा जायगा, जहाँ पर जाति की बनावट की व्याख्या की गयी है) पृथक हो जाते हैं।

पित्र्यसूत्र-ग्रथन (Chromosomal Linkage)

नर-मादा का संयोग होने पर एक पित्र्यसूत्र द्वारा जब एक अथवा अधिक गुणों का नियंत्रण होता है, तब इनका एक एकक में ग्रथन हो जाता है। इसका उदाहरण उस विवरण में मिलता है जो पहले दिया जा चुका है, जिसमें कि बेटसन तथा पुनेट ने खोज की है कि बैंजनी फूल तथा पराग के लम्बे दानेवाले एक मीठे मटर का जब दूसरी सन्ततियों (स्ट्रेन्स) से संकरण किया जाता है, तब उन गुणों का आपस में ग्रथन हो जाता है। स्पष्ट है कि ये दोनों गुण एक ही पित्र्यसूत्र में होने चाहिए। क्रू[1] ने दिखलाया है कि 'कोई पशु तथा पौधा ऐसा नहीं मिला है जिसमें ग्रथन-समूहों की संख्या, विभाजित न्यष्टि-कोश के पित्र्यसूत्र जोड़ों की संख्या से अधिक हो।' इसमें बहुत कम सन्देह रह जाता है कि इस प्रकार के ग्रथित गुण उन्हीं पित्र्यसूत्रों द्वारा नियन्त्रित होते हैं।

वंशानुगति का पित्र्यसूत्रक सिद्धान्त

पोमेस मक्खी[2] इतनी छोटी होती है कि हाथ का एक लेन्स उसे देखने के लिए आवश्यक है। वह बहुत अण्डे देती है, पर उसे देखना-समझना सरल है और उसका जीवन क्रम भी छोटा होता है। इस पर किये गये प्रोफेसर टी० एच० मार्गन[3] के अन्वेषणों के फलस्वरूप वंशानुगति के तत्त्वों को समझने में बड़ी सहायता मिली है। इन अन्वेषणों से **'वंशानुगति के पित्र्यसूत्रक सिद्धान्त'** का निर्माण हुआ, जिसके अनुसार **'वंशानुगति के मुख्य आधार पित्र्यसूत्र हैं तथा इन पर, प्रत्येक अपने पथ पर विशेष पित्र्यसूत्र पर, पित्र्यक (जीन) रहते हैं जिनकी सक्रियता कुछ विभिन्न गुणों को निश्चित**

१. एफ़० ए० ई० क्रू, (M. D., D. Sc., Ph. D., F. R. S. E.) एनीमल जेनेटिक्स (Animal Genetics), १९२५, पृष्ठ ८३

२. Drosophila melanogaster

३. कोलम्बिया विश्वविद्यालय (Columbia University)

करती हैं।' यह सिद्धान्त, जैसा कि आज वह प्रचलित है, अगणित प्रसवन संपरीक्षणों' के परिणामों पर आधारित है।

पोमेस मक्खी

पोमेस मक्खी के उदाहरण में आठ पित्र्यसूत्र हैं। ये मान्य परिपाटी के अनुसार निम्न प्रकार से स्थित हैं। यह देखा जा सकता है कि वे छोटाई-बड़ाई तथा आकार में भिन्न हैं, उसमें वक्र आकार से बड़े पित्र्यसूत्रों के दो जोड़े हैं, एक जोड़ा अत्यन्त छोटे गोल पित्र्यसूत्रों का है तथा मादा में एक जोड़ा सीधे पित्र्यसूत्र्य का, परन्तु नर में जोड़े के एक पित्र्यसूत्र के अन्त में कटिया जैसा आकार होता है।

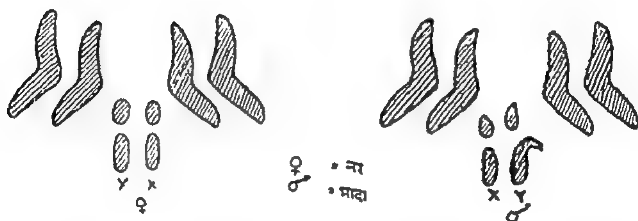
चित्र नं० ९२

पोमेस (Pomace) **मक्खी के पित्र्यसूत्र (ड्रोसोफीला मेलानोजास्टर--** (Drcsophila Melanogaster)

X X } = **मादा लिंग पित्र्यसूत्र** X Y } = **नर लिंग पित्र्यसूत्र**

♀ = **मादा**

♂ = **नर**



लिंग पित्र्यसूत्र (Sex Chromosomes)

नर तथा मादा पित्र्यसूत्रों में केवल यही अन्तिम चीज़ भिन्न है, इसलिए यह माना गया है कि यह सीधा जोड़ा लिंग पित्रसूत्र्य है। (X X पित्र्यसूत्र मादा तथा X Y पित्र्यसूत्र नर के हैं)

प्रजनन में यह पित्र्यसूत्र, जैसा कि बतलाया जा चुका है, आधे आधे होकर जन्यु

१. क्रू (Crew), पूर्व कथित, पृष्ठ ८८

(गैमीट्स) का निर्माण करते हैं, जिससे कि मातृक तथा पैत्रिक वंशज में जन्यु का क्रम इस प्रकार होता है, जैसा कि आगे दिये हुए मानचित्र नं० ९३ में दिखलाया गया है।

यदि नर तथा मादा ड्रोसोफीला का संग किया जाय तो यह स्पष्ट है कि पित्र्यसूत्रों का संयोजन इस प्रकार होगा कि मादा नं० १ जन्यु, जैसा कि आगे के नं० ९३ मानचित्र में दिखलाया गया है, नर के ३ अथवा ४ नं० जन्यु से संयुक्त होगा अथवा मादा जन्यु नं० २ नर के ३ अथवा ४ नं० से भी संयुक्त हो सकता है।

इस प्रकार से नं० १ जन्यु अथवा नं० २ ही सही, क्योंकि उनकी आकृति इस उदाहरण में समान ही है, यदि अगले चित्र के नं० ३ जन्यु से संयुक्त हो, जो कि नर जन्यु है जिसमें कि X पित्र्यसूत्र मिलते हैं, तब उसका वैसा परिणाम होगा जैसा कि अगले नं० ९४ के मानचित्र में दिखलाया गया है। इसमें यह देखा जायगा कि संयोग के कारण आठ पित्र्यसूत्रों के प्रारम्भिक युग्मक (ज़ाइगोट) का पुनर्निर्माण हुआ है। इसमें चूंकि, × पित्र्यसूत्र ही हैं वे प्रारम्भिक मादा मक्खी के संयोजन की उत्पत्ति करते हैं। यदि संयोग चित्र के नं० ४ से हो तब प्रजनित युग्मक (Zygote) प्रारम्भिक नर के पित्र्यसूत्रों की उत्पत्ति करेंगे।

चित्र नं० ९४ में यह सब स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ता है।

निषेचन में संयोजित होनेवाले जन्तुओं की संभावित संख्या

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रजनन में प्रारम्भिक माता या पिता का युग्मक (जाइगोट) दो भागों में बँट जाता है। इसके पश्चात् एक बार फिर एक माता या पिता के आधे युग्मक का दूसरे के उसी प्रकार के अर्धकोश से संयोग होता है तथाः पुनः पूर्ण युग्मक बन जाता है, जिस प्रकार से कि प्रारम्भ में निर्माण हुआ था। पिछले चित्र में स्पष्टता के लिए प्रत्येक उदाहरण में टूटने की क्रिया में हमने उन्हीं पित्र्य-सूत्रों को लिया है। परन्तु विचार करने से यह स्पष्ट हो जायगा कि ऐसा होने के लिए कोई एक ही निश्चित विधि नहीं है। परिणामतः हमारे सम्मुख उन दो जन्तुओं के उत्पन्न होने में, जिनमें कोश विभाजित होते हैं, आठ विभिन्न सम्भावित संयोजन आते हैं।

यह निम्न आठ संयोजनों से स्पष्ट हो जाता है, जिनमें १६ जन्युओं का बनना दिखलाया गया है। किसी किस्म में, जिसमें दो जोड़े पित्र्यसूत्र हैं, केवल चार सम्भावित संयोजन होंगे तथा दूसरे में तीन के साथ आठ होंगे तथा मनुष्य में उसके ४८ पित्र्यसूत्रों के कारण ९६ सम्भावित संयोजन हो सकते हैं।

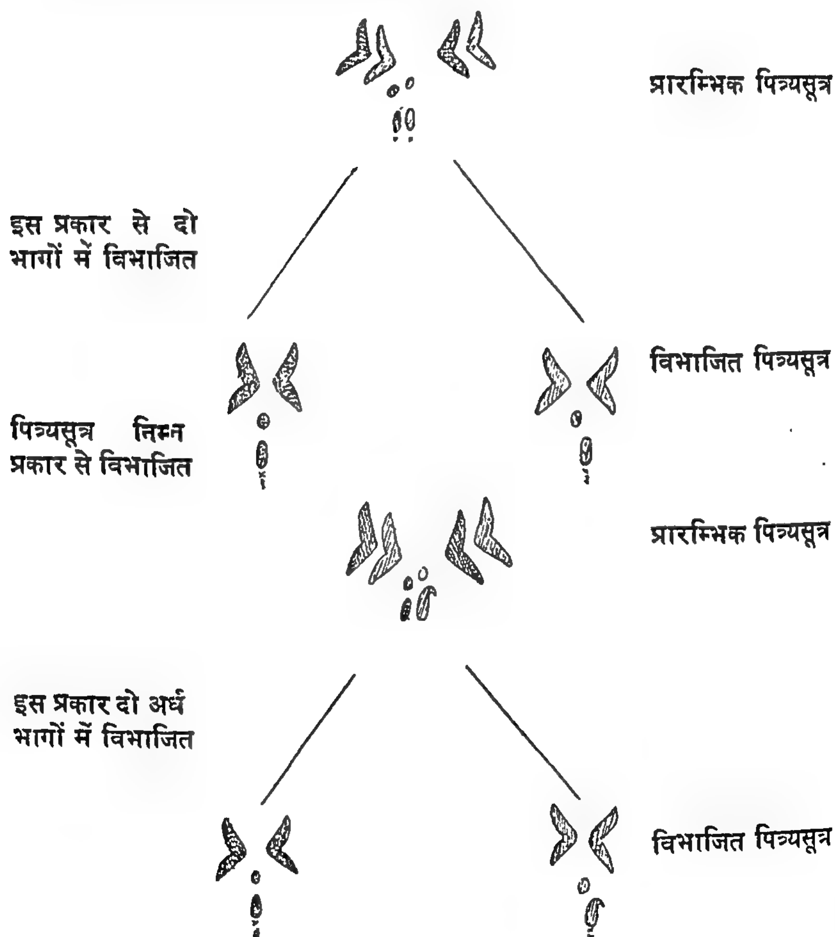
मेण्डल के कारकों की भाँति पित्र्यसूत्रों की क्रिया

मेण्डल के कारकों की भाँति पित्र्यसूत्र वर्ताव करते हैं, हालाँ कि मेण्डल के कारक पित्र्यसूत्र के समान नहीं हैं। परन्तु यह आगे बतलाया जायगा कि पित्र्यसूत्रों में जो

चित्र नं० ९३

पित्र्यसूत्र (Chromosome) विभाजन

पित्र्यसूत्र निम्न प्रकार विभाजित होता है—



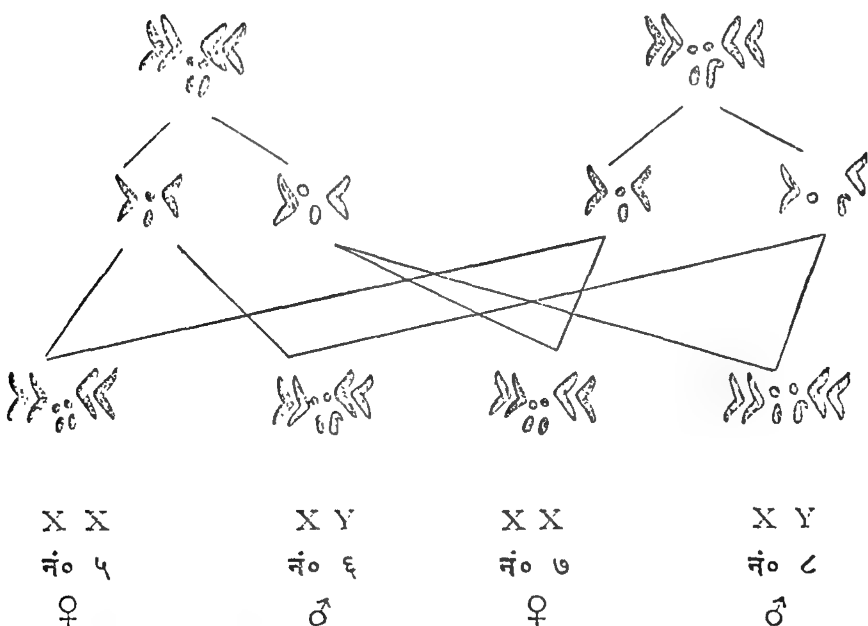
पित्र्यक (जीन्स) मिलते हैं वे कारकों के ही समान हैं। जहाँ तक पित्र्यसूत्र में पित्र्यक मिलते हैं, [दोनों] का वर्ताव समान है तथा इसलिए पित्र्यसूत्रों का वर्ताव भी मेण्डल

के कारकों के ही समान है। मेण्डल ने यह मान लिया था कि प्रत्येक माता-पिता ने एक कारक का योग दिया जिसमें से एक तो अपसारी (रिसेसिव) तथा दूसरा प्रभावी

चित्र नं० ९४

अर्ध सूत्रण (Meiosis) की क्रिया द्वारा पित्र्यसूत्रों (Chromosomes) का जन्युओं (Gametes) के रूप में पृथक् हो जाना तथा अंतःप्रसवन के पश्चात् पुनःसंयोजन का चित्रण। पोमेस (Pomace) मक्खी के आठ पित्र्यसूत्रों पर उदाहरण आधारित है।

प्रारम्भिक माता-पिता (सबसे ऊपर की पंक्ति)
अर्धसूत्रण अथवा कोशविभाजन द्वारा जन्यु-निर्माण (बीच की पंक्ति)
पूर्ण युग्मकोश में पुनःसंयोजन (अन्तिम या तीसरी पंक्ति)



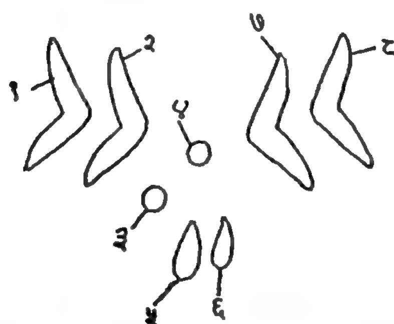
[नोट—नं० ५ से ८ तक प्रत्येक ने कोश के आधे भाग को ही वंशानुगति द्वारा प्राप्त किया जिनमें माता तथा पिता में से प्रत्येक से चार पित्र्य-सूत्र मिलते हैं। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति आधा अपने पिता तथा आधा माता से निर्मित होता है।]

(डामिनैण्ट) था और जब इनका विकास हुआ तब ये ऐसे तत्त्वों के रूप में पृथक् हो गये जिनमें से एक अभिव्यक्त तथा दूसरा अपसारित हुआ। इसलिए किसी पराग के कण से किसी निषेकहीन (ओव्यूल) डिम्ब के आकस्मिक निषेचन से १ : २ : १ का

चित्र नं० ९५

[अर्धसूत्रण के समय प्रत्येक जन्यु (गैमीट) में होनेवाले पित्र्यसूत्रों के १६ संयोजन।

मान लीजिए, प्रारम्भिक युग्मक (जाइगोट) के आठों पित्र्यसूत्र, कोश में निम्न प्रकार से अंकित हैं—



तब अर्धसूत्रण (मायोसिस) होते समय जब पहले के युग्मक के पित्र्य-सूत्र का जोड़ा जन्यु के निर्माण के लिए टूट जाता है, तब प्रत्येक जन्यु में पित्र्यसूत्रों के चार निम्न संयोजन हो सकते हैं।—

(१, ३, ५, ७)	(१, ३, ५, ८)	(१, ३, ६, ७)	(१, ३, ६, ८)
(१, ४, ५, ७)	(१, ४, ५, ८)	(१, ४, ६, ७)	(१, ४, ६, ८)
(२, ३, ५, ७)	(२, ३, ५, ८)	(२, ३, ६, ७)	(२, ३, ६, ८)
(२, ४, ५, ७)	(२, ४, ५, ८)	(२, ४, ६, ७)	(२, ४, ६, ८)

आठ विभिन्न संयोजन, जिसमें किसी एक जोड़े के पित्र्यसूत्र शामिल हो सकते हैं, अगले रेखा-चित्र में दिखलाये गये हैं।]

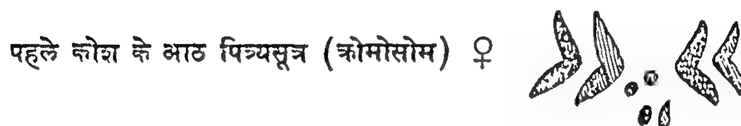
अनुपात प्राप्त होगा, जिसमें कि समपित्र्यक D D प्रभावी, (डामिनेण्ट) तथा अपसारित (रिसेसिव) D R, R R, इसी क्रम में मिलेंगे। यह देखा जायगा कि यही बात पित्र्यसूत्रों में भी होती है। हम एक व्यक्ति से आरम्भ करते हैं जिसमें जोड़े के पित्र्यसूत्र हैं, जोड़े का प्रत्येक पित्र्यसूत्र विभिन्न माता या पिता से आता है

तथा ये कोशों की प्रौढ़ता के साथ टूटते अथवा पृथक हो जाते हैं और पुनःसंयोजन के साथ युग्मक के निर्माण के लिए जोड़े में से प्रत्येक विभिन्न कोशों में चला जाता है।

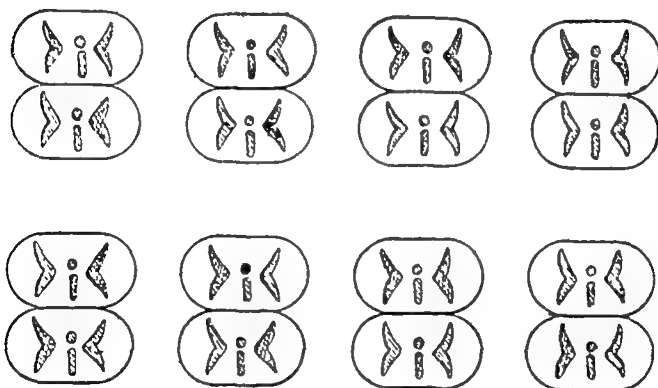
चित्र नं० ९६

अर्धसूत्रण के आठ विभिन्न संयोजनों का रेखा-चित्रण जिसमें ड्रोसोफीला के एक जोड़े का कोई भी पित्र्यसूत्र आ सकता है

पहले कोश के आठ पित्र्यसूत्र (क्रोमोसोम) ♀



अर्धसूत्रण के समय निम्न संयोजनों का निर्माण होता है—



(बैबकाक (Babcock) तथा क्लाउजेन (Claussen) द्वारा)

इसलिए जहां तक कि पित्र्यसूत्रों का एक जोड़ा, कारकों (Factors) के एक सेट से (उदाहरणार्थ पोमेस मक्खी में लम्बे तथा लुप्तप्राय पंख) तथा अन्य जोड़ा दूसरे कारकों से सम्बन्धित है, पित्र्यसूत्रों का संयोजन तथा पृथक्करण, प्रभावी होना तथा अपसारी होना इत्यादि ठीक उसी प्रकार होता है, जैसा कि हमने पिछले अध्याय में देखा है, जहां पर हमने मेण्डल के "कारकों" का अथवा वर्तमान शब्द "पित्र्यकों" का प्रयोग किया है। इस प्रकार से एकसंकर (Monohybrid), द्विसंकर

(Dihybrid) तथा पित्र्यसूत्रों के अधिक जटिल संयोग ठीक एक ही प्रकार से होते हैं।

परन्तु पित्र्यसूत्र तथा कारक, जैसा कि कहा जा चुका है एक ही चीज़ नहीं हैं क्योंकि पित्र्यक, पित्र्यसूत्रों (क्रोमोसोम) से उत्पन्न माने गये हैं तथा पित्र्यक (जीन्स) ही मेण्डल के कारण (फैक्टर्स) हैं।

नौवाँ अध्याय

जाति की बनावट का आधार

पिछले अध्यायों में हमने जाति की बनावट की खोज की व्याख्या तथा संक्षेप में इसकी बनावट का कुछ विवरण और वंशानुगति सम्बन्धी मेण्डल के नियमों की, जो कि उसके आधार हैं, व्याख्या की है।

अब हम इस विषय को अधिक व्यौरे के साथ तथा अधिक विस्तार से देखेंगे जिससे पाठकों को जीवित पदार्थो की सभी किस्मों में जातीय प्रकारों के प्रजनन की विधि का अच्छा ज्ञान हो जाय। जिन खोजों का संक्षिप्त वर्णन हमने किया है उनके वैज्ञानिक परिणाम तथा जिन नयी नयी बातों की ओर उन्होंने हमें प्रेरित किया है, उन्हें देखकर यह कहना सम्भव है कि प्रसवन-ज्ञान के आधार की निश्चित स्थापना हुई है, जिससे पूर्व काल में परिस्थितीय सिद्धान्तवादियों द्वारा असंतोषजनक रीति से बतलाये गये इस ज्ञान की स्पष्ट व्याख्या हो जाती है। अधिक श्रेय केवल उन्हीं लोगों को नहीं है जिनके नाम पहले दिये जा चुके हैं परन्तु पित्रागति सिद्धान्त (मेण्डलिज्म) के विशेषज्ञ, कैम्ब्रिज के डब्ल्यू० बेटसन[1] का तथा उनके सहायक आर० सी० पुनेट[2] का और अमेरिका के बी० सी० ड़ेवनपोर्ट[3] का नाम भी उल्लेखनीय है।

बाह्य समरूप (Phenotype) तथा समपित्र्यक (Genotype)

संक्षेप में हमने देखा है जिससे हम कह सकते हैं कि वर्तमान सिद्धान्तों का यह आधार है कि प्रत्येक जीवित पदार्थ दो भागों में विभाजित है। एक को हम देख सकते हैं तथा उसका मूल्यांकन कर सकते हैं। किसी हब्शी की काली त्वचा तथा मटर की हरी चिकनी आकृति बाह्य समरूप (फेनोटाइप) कहलाती है। इसके अतिरिक्त वंशानुगत आन्तरिक संघटन भी है जो निश्चित नियमों द्वारा पारेपित होता है। इसे समपित्र्यक (जीनोटाइप, गण-वैशिष्टयज्ञापक) अथवा भिन्नरूप (idiotype)

१. W. Bateson २. R. C. Punett ३. B. C. Devenport

कहते हैं। कठिन प्रसूत सन्तति में बाह्य समरूप तथा समपित्र्यक एक समान हो सकते हैं पर बहुधा वे भिन्न होते हैं।[1]



चित्र नं० ९७

(ए० डी० डर्बीशायर की पुस्तक 'ब्रीडिंग एण्ड दि मेण्डेलियन डिस्कवरी'— 'प्रसंकरण तथा मेण्डल के नियम की ख़ोज' से)

मनुष्यों में इन पुष्पों ही जैसी वंशानुगति की कार्यविधि मिलती है। इनकी वंशानुगति की समस्या ने प्रथम बार मठाधिकारी मेण्डल का ध्यान आकर्षित किया था जिसके अध्ययन के पश्चात् जाति की बनावट के विषय में हमारा ज्ञान विकसित हुआ।

दो गुलाबी पुष्प गुलाबी जाति के पौधे हैं। दो श्वेत पुष्प, श्वेत जाति के पौधे के हैं।
मध्य के दो पुष्प गुलाबी तथा श्वेत पुष्पों के संकरण के परिणाम हैं।

१. एफ़० ए० क्रू (F. A. Crew) के अनुसार 'बाह्य समरूप उन व्यक्तियों का एक समूह है जो एक ही तरह दिखते हैं, भले ही उनके कारकों का संघटन जुदा जुदा हो। यह पारिभाषिक शब्द किसी व्यक्ति के समस्त गुणों के योग को सूचित करने के लिए भी

बाह्य समरूप (फेनोटाइप)

यह बाह्य समरूप ही है जिस पर परिस्थिति का प्रभाव पड़ता है, जैसे कि उदाहरणार्थ एक गौर वर्ण का अंग्रेज़ जो बाह्य समरूप तथा समपित्र्यक के रूप में गौरवर्ण का है पर जो उष्ण प्रदेश में रहता है। उसकी समरूपता अपने को परिस्थिति के अनुकूल बना लेती है जिससे अस्थायी रूप से उसका रंग साँवला पड़ जाता है। परन्तु उसके समपित्र्यकत्व में परिवर्तन नहीं होता जिससे उसके बच्चे गौरवर्ण ही पैदा होते हैं।[1]

समपित्र्यक (जीनोटाइप)

यही सम-पित्र्यक है जो हमें परिस्थितियों से अप्रभावित पूर्वज-परम्परा से मिलता है। किन्तु यह वंशानुगत गुण एक एकक (यूनिट) नहीं है, अन्यथा मानव-शास्त्रीय अनुसंधान सरल हो जाता। यह बहुत से एककों के संयोजनों से बनता है जिनको मेण्डल ने कारक (फैक्टर्स) कहा है तथा जिन्हें हम पित्र्यक (जीन्स, जनकबीज) कहते हैं। प्रत्येक पित्र्यक अन्य से भिन्न है तथा, जैसा कि बतलाया जा चुका है, पित्र्यसूत्र नामक सचेतन वस्तु में स्थित रहता है। इन पित्र्यकों में स्वयं जीवित बने रहने तथा स्वयं बढ़ने की शक्ति होती है। इस प्रकार जब कोशविभाजन होता है, पित्र्यक बँटकर दो हो जाते हैं तथा प्रत्येक नये कोश में एक पित्र्यक मिलता है।

जातिगत गुणों का पित्र्यकों द्वारा नियन्त्रण

ये पित्र्यक कुछ विशेष गुणों पर नियन्त्रण रखते हैं। इस प्रकार केशों का रंग, केशों का आकार, त्वचा का रंग तथा आँखों का रंग, इनमें से प्रत्येक विभिन्न पित्र्यकों के

प्रयुक्त किया जाता है। जब कि समपित्र्यक शब्द व्यक्तियों के उस एक समूह के लिए भी प्रयुक्त होता है जिनमें कारकों का संघटन समान हो।'

एफ० ए० क्रू (F. A. Crew), एम० डी०, डी० एस० सी०, पी एच० डी०, एफ० आर० एस० ई०, एनीमल जेनेटिक्स (Animal Genetics), १९२५, पृष्ठ २८

१. यह भी अक्सर देखा जाता है कि उत्तरी अफ्रीका के बहुत से वन्य जाति के बच्चे जिनकी बन्धुता या रिश्ता उत्तरी भागों से है, कभी कभी साफ़ रंग के होते हैं जिससे मालूम होता है कि भिन्न रूप या समपित्र्यक में हल्के रंग की वंशानुगति के बीज भी निहित होते हैं।

सेट द्वारा नियन्त्रित है। व्यावहारिक दृष्टि से हम सोचने और कहने लगते हैं कि धवलांगता (ऐलबीनिज्म), आँखों के रंग इत्यादि के लिए एक अथवा अनेक पित्र्यक उत्तरदायी हैं, हालाँ कि वास्तव में यह समस्या कहीं अधिक जटिल हो सकती है। सभी उच्च जीवों में, जिनमें मनुष्य भी है, पित्र्यक दो दो की संख्या में मिलते हैं। प्रत्येक जोड़े में से एक माता तथा एक पिता से आता है। माता-पिता के पित्र्यक एक समान अथवा बिलकुल भिन्न हो सकते हैं।

प्रभावी तथा अपसारी पित्र्यक

इसके सिवा, जब इनमें से कुछ पित्र्यक एक साथ आते हैं तब उनमें से एक आकार पर अपना अधिक प्रभाव डालने में असमर्थ हो सकता है (बाह्य समरूप) जैसा कि अभी हम देख चुके हैं तथा वह अधिक प्रभावी पित्र्यकों के सम्मुख पीछे हट जाता है। परिणामतः हमें अपसारी तथा प्रभावी पित्र्यक मिलते हैं। उदाहरणार्थ धवलांगता का पित्र्यक अपसारी है, इसलिए कई स्थानों पर मौजूद रह सकता है जहाँ उसका कोई सन्देह नहीं हो सकता। यह उन सभी घटनाओं में सत्य है जहाँ कि एक पित्र्यक अपसारी तथा दूसरा प्रभावी है। किसी अपसारी पित्र्यकवाला कोई मनुष्य यदि (इस उदाहरण में धवलांगता के पित्र्यकवाला) उसी गुणोंवाली स्त्री से विवाह करता है, तब जो बच्चे उत्पन्न होंगे उनमें उन्हीं अपसारी गुणों के पाये जाने की सम्भावना होगी। दूसरे शब्दों में इस पुरुष तथा स्त्री में, उनके बाह्य समरूप अथवा बाहरी आकार से उन परिणामित अपसारी गुणों का कोई चिह्न नहीं मिलता जो कि अपने समपित्र्यक में उनके पास थे तथा जिनके विषय में वे सम्भवतः स्वयं अज्ञान थे।

अपूर्ण प्रभाव

कभी कभी हम ऐसा नहीं देखते कि पित्र्यकों का एक सेट स्पष्ट रूप से अपसारी पित्र्यकों पर प्रभावी है। अक्सर ऐसे संकरण का परिणामतः आकार माता-पिता के गुणों से नहीं मिलता। यह अपूर्ण प्रभाव का एक उदाहरण है, फिर भी यह प्रभाव तो है ही।

नीले एंडालूसियन का उदाहरण

इसका उत्तम उदाहरण नीले एंडालूसियन का है। फेन्सियर्स[१] ने (पचास वर्षों तक) यह खोजकर बतलाया है कि उनसे वे कभी भी एक शुद्ध नीली सन्तति का प्रस-

१. Fanciers

वन नहीं करा सके तथा जितना ही उन्होंने प्रयत्न किया उतनी ही सन्तति काली और चित्तीदार सफेद तथा साथ में नीली होती रही। इसका समाधान यही है कि नीले एण्डालूसियन देखने में शुद्ध काले तथा शुद्ध सफेद चित्तीदार के मध्य में हैं तथा जननिक रूप से माता-पिता के काले तथा सफेद दोनों गुण उनमें होते हैं। यह प्रसंकर है तथा इससे शुद्ध सन्तति न होगी। पशुओं में लाल रोन भी नीली एंडालूसियन के समान उदाहरण है तथा श्वेत शार्टहार्न (Shorthorn) और काली गैलोवे (Gallo-way) के संकरण से उत्पन्न नीली रोन भी। उसी प्रकार से भूरे बैल का किसी अन्य रंग की गाय से संकरण होने पर चित्तीदार प्रसंकर की उत्पत्ति होती है जब कि श्वेत तथा मटमैले रंग की श्वेत रंग से उत्पन्न सन्तति कभी कभी मध्य के रंगों की होती है।[1]

एबर्डीन-एंगस तथा हेयरफोर्ड के संकरण में अपूर्ण प्रभाव

यह अपूर्ण प्रभाव साथ में दिये हुए चित्र में भली-भाँति दिखाई पड़ता है जिसमें एबर्डीन-एंगस तथा हेयरफोर्ड के संयोग से उत्पन्न संकरों (जहाँ कि काला रंग एक साधारण प्रभावी रंग की भांति काम करता है) तथा लाल एवं काले शार्टहार्न के संकरों की तुलना की गयी है। रुपहली लोमड़ी तथा लाल लोमड़ी के संकरण से पहली पीढ़ी (F१) में धब्बेदार रंग मिलता है जब कि आगे की पीढ़ियों (F२) में एक लाल, दो धब्बेदार तथा एक रुपहले रंग की उत्पत्ति होती है।[2]

इस स्थान पर विलम्बित प्रभाव भी ध्यान देने योग्य है, जिससे मनुष्य के केशों के रंग के विषय में कुछ बातों का पता चलता है। उत्तरी यूरोप के बच्चों में यह देखा जाता है कि जैसे-जैसे वे बढ़ते जाते हैं उनके स्वर्ण केश भूरे होते जाते हैं। यह वैसी ही चीज है जैसी कुछ पक्षियों में होती है। यह देखा गया है कि यदि एक श्वेत लेगहार्न का पूर्ण काले लेगहार्न के साथ संकरण किया जाय तो प्रथम पीढ़ी (F१) उन पक्षियों की होगी जो कि काले धब्बोंवाले श्वेत रंग के हैं। प्रारम्भ में यह अपूर्ण प्रभाव के समान मालूम पड़ता है परन्तु बात ऐसी नहीं है, क्योंकि प्रथम पंख गिरने पर यह देखा जाता है कि पक्षी पूर्ण रूप से श्वेत हो जाता है।[3]

१. जेम्स विल्सन (James Wilson), पूर्व कथित, पृष्ठ ४०–४१

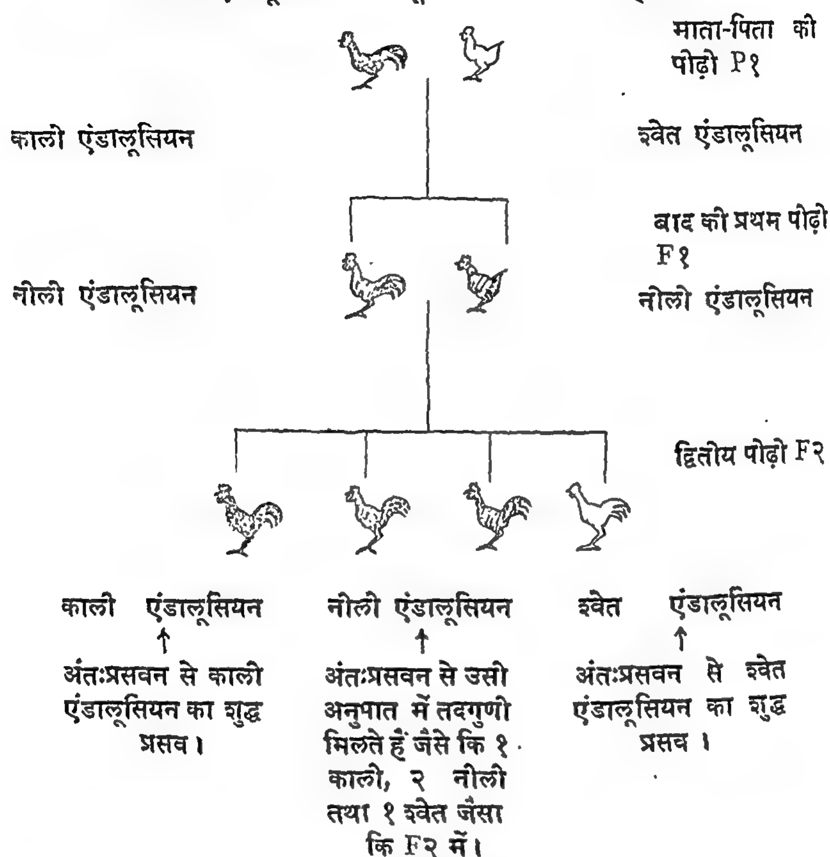
२. जे० डब्लू० मैकआर्थर (J. W MacArthur,) जेनेटिक्स इन फर फार्मिंग, ओ० ए० सी० रेव० (Genetics in Fur Farming O. A. C. Rev.) १९२३, ३५, २६७

३. क्रू (Crew) पूर्व कथित, पृष्ठ ५१—५२

वे सन्ततियाँ जिनमें पित्र्यकों के समान जोड़े मिलते हैं (अथवा भिन्नयुग्म या वहुयुग्म—'Allelomorph'—जिन्हें अब कभी कभी 'एलिलीज'—

चित्र नं० ९८

नीले एंडालूसियन में अपूर्ण प्रभाव का उदाहरण



(F२ पीढ़ी में हमने सब मुर्गे ही दिखलाये हैं परन्तु ये अनुपात मुर्गियों के लिए भी मुर्गों की भाँति लागू होते हैं।)

'Alleles' भी कहते हैं) और इसलिए जो नस्ल के अनुरूप शुद्ध प्रसव करती हैं, युग्मैकगुण[1] (समयुग्मिक) कही जाती हैं, जब कि उनको, जिनके विभिन्न जोड़ों में

१. Homozygous

चित्र नं० ११
पशुओं में अपूर्ण प्रभाव का उदाहरण

काले एवर्डीन (Aberdeen)	=	लाल हेयरफोर्ड (Hareford)		माता पिता की पीढ़ी (P_1)	श्वेत शार्टहार्न (Shorthorn)	=	लाल शार्टहार्न (Shorthorn)	
काले एवर्डीन × हेयरफोर्ड	=	काले एवर्डीन × हेयरफोर्ड		प्रथम पीढ़ी (F_1)	रोन श्वेत × लाल शार्टहार्न	=	रोन श्वेत × लाल शार्टहार्न	
शुद्ध काले	काले एवर्डीन × हेयरफोर्ड	= काले एवर्डीन × हेयरफोर्ड	शुद्ध लाल	द्वितीय पीढ़ी (F_2)	शुद्धश्वेत	रोन श्वेत × लाल शार्टहार्न	= रोन श्वेत × लाल शार्टहार्न	शुद्ध लाल
शुद्ध काले	प्रसंकर काले एवर्डीन –हेयरफोर्ड		शुद्ध लाल	तृतीय पीढ़ी (F_3)	शुद्ध श्वेत	प्रसंकर रोन, श्वेत-लाल शार्टहार्न		शुद्ध लाल
↑ शुद्ध प्रसव (ब्रीड)	↑ उसी अनुपात में तद्गुणी जैसा कि F_2 पीढ़ी में		↑ शुद्ध प्रसव (ब्रीड)		↑ शुद्ध प्रसव (ब्रीड)	↑ उसी अनुपात में तद्गुणी जैसा कि F_2 पीढ़ी में		↑ शुद्ध प्रसव (ब्रीड)

विभिन्न गुण मिलते हैं, युग्मानेकगुण[1] (विषमयुग्मीय) कहते हैं। इस प्रकार नीली एंडालूसियन में माता-पिता की काली तथा श्वेत सन्ततियाँ युग्मैकगुण हैं। प्रत्येक जोड़े में रंग का निर्णय करनेवाले पित्र्यक एक से हैं, जैसे कि आकार या वाह्य समरूप में मिलते हैं। परन्तु परिणामित एंडालूसियन प्रसंकर युग्मानेकगुण है क्योंकि पित्र्यक अब मिश्रित हो गये हैं जिनमें काले तथा श्वेत तत्त्व मिलते हैं। उसी प्रकार से धवलांग युग्मैकगुण वाला होता है जिसमें धवलांग के लिए ही पित्र्यक (जनकवीज, जीन्स) मिलते हैं। पर यदि किसी मनुष्य का यह वाह्य समरूप (फेनोटाइप) रंगा हुआ हो परन्तु जिसके भिन्नरूप में धवलांग है, जिसमें रंगे हुए पित्र्यकों का प्रभाव हो, वह युग्मानेकगुण होता है।

जव हमने नीले एंडालूसियन के समान प्रसंकर की उत्पत्ति पक्की कर दी हो तो पारस्परिक स्वतन्त्र संयोग से होनेवाली सन्तति न केवल नीले युग्मानेकगुण की ही उत्पत्ति करती है परन्तु काले तथा श्वेत युग्मैकगुण की भी करती है। इसका अर्थ है कि ये सन्ततियाँ अव केवल शुद्ध श्वेत तथा काले वच्चे उत्पन्न करेंगी, मानो वे संकरण से उत्पन्न ही न हुई हों।

इस प्रकार से पित्र्यकों (जीन्स) के दो समूहों में छँट जाने को पृथक्करण कहते हैं। जहाँ पर इनकी संख्या वड़ी होती है, यह पृथक्करण वेतरतीव नहीं वरन् गणितीय आधार पर होता है। इसका प्रदर्शन चित्ररूप में निम्न प्रकार से तथा चित्र नं० १०० द्वारा भी किया जा सकता है जिसमें इसका जननिक गठन सरल तरीके से दिखलाया गया है।

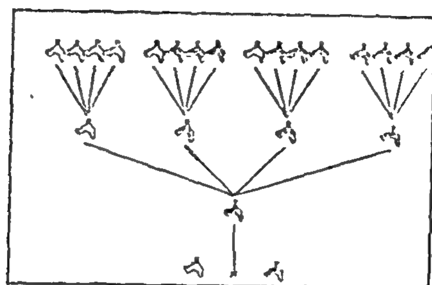
वचे हुए नीले एंडालूसियन दूसरी पीढ़ी में इसी क्रिया को दुहरायेंगे--प्रत्येक पीढ़ी में आधे से अधिक नीले रंगवालों की उत्पत्ति न होगी।

जव कि इस उदाहरण को हम नीले तथा कालों में संकरण करके कम सरल वना देते हैं, तव भी वही पृथक्करण की क्रिया चलती रहती है और एक समान सन्तति के निर्माण का प्रयत्न असफल वना देती है। पर इस वार हमें काले तथा नीले समान अनुपात में मिलते हैं तथा केवल काले ही शुद्ध प्रसव कर सकते हैं। इसके विपरीत यदि हम धव्वेदार श्वेतों का नीलों से संकरण करें तो हमें नीले तथा श्वेत धव्वेवाले वरावर संख्या में मिलते हैं। पूर्ण प्रसंकर पीढ़ी शुद्ध माता-पिता में संकरण करने से ही प्राप्त हो सकती है। प्रसंकरों के आपस में संकरण से या शुद्ध सन्ततियों से संकरण

१. Heterozygous

होने से अवश्य ही एक अथवा अधिक पूर्वज के प्रकारों की (जैसा संकरण हुआ हो, उसी के आधार पर) सन्तति होती है।'

हमारे प्रसंकर के समस्त अनुभव के अनुसार यही पृथक्करण की विधि सदैव कार्य करती है।



चित्र नं० १००
नीला ऐंडालूसियन कुक्कुट

(ए० डी० डर्बीशायर A. D. Derbyshire से उद्धृत ब्रीडिंग ऐण्ड मेण्डेलियन एक्सपेरीमेण्ट 'Breeding and Mendelian Experiment')

[श्वेत तथा काले ऐंडालूसियन के संकरण से नीलों की उत्पत्ति होती है परन्तु इनसे शुद्ध नीली संतति की उत्पत्ति नहीं होती।

नीले ऐण्डालूसियन अपूर्ण प्रभावी का अच्छा उदाहरण है। इसका कारण अनेक भिन्नयुग्मों (Allelomarph) की क्रिया बतलाया गया है।

समस्त नीले पक्षी फिर उसी अनुपात में काले तथा श्वेत पक्षियों को जन्म देते हैं।]

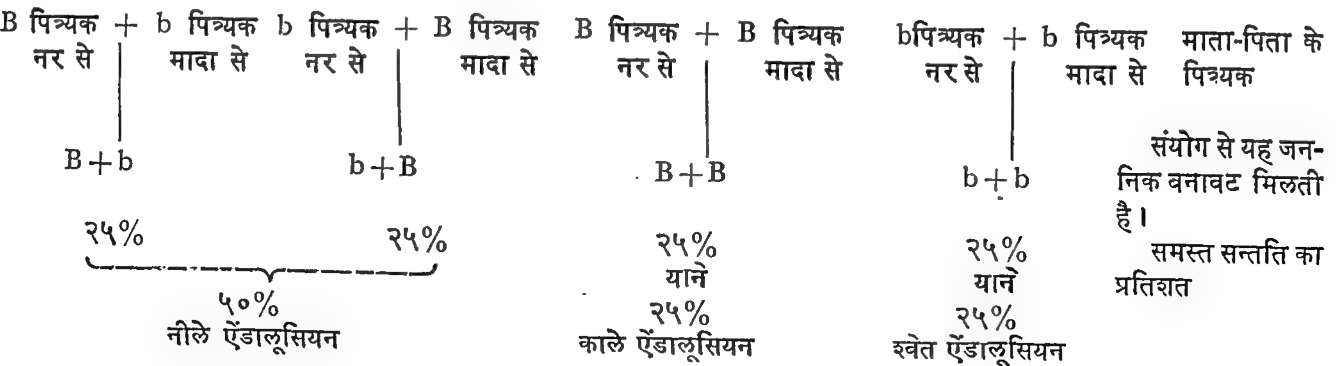
इस प्रकार जब दो रंगीन खरगोशों में संकरण होता है, जिनमें दोनों ही युग्मानेकगुणी हैं, तब, यतः दोनों ही शुद्ध सन्तति के नहीं हैं तथा अपने में धवलांगता के अपसारी पित्र्यक ले जाते हैं, अतः परिणाम होता है एक युग्मैकगुणी धवलांग तथा तीन रंगीन होते हैं। परन्तु ये अन्तिम तीन युग्मैकगुणी नहीं हैं। वास्तव में केवल एक ऐसा है तथा उसी में ठीक रंग के प्रसवन की क्षमता है, जब कि अन्य युग्मानेकगुणी (विषमयुग्मीय) हैं तथा समय समय पर धवलांग की उत्पत्ति करेंगे। इसलिए इनके साथ धवलांगता अपसारी है क्योंकि तीन में से दो ऐसे देखे जाते हैं, जैसे वे नहीं हैं, अर्थात् युग्मैकगुणी (समयुग्मिक) या शुद्ध प्रसव तथा धब्बेदार खरगोश।

चित्र नं० १०१

(B+B)=नीले ऐंडालूसियन के प्रारम्भिक काले माता-पिता

(b+b)=नीले ऐंडालूसियन के प्रारम्भिक श्वेत माता-पिता

यदि (B+B) तथा (b+b) का संकरण होता है तब प्रथम पीढ़ी में (B+b) मिलता है। यह नीली ऐंडालूसियन है जिसमें कि न तो काले न श्वेत प्रभावी गुण मिलते हैं तथा केवल तटस्थ (neutral) नीला रंग दिखलाई पड़ता है। यदि (B+b) बनावट के पक्षी (नीले ऐंडालूसियन) का अन्तः प्रसवन होता है तब निम्नलिखित पित्र्यक संयोजन मिलते हैं।



एक दशा जो कि प्रसवन में समान है (जैसा कि देखा जा चुका होगा) यह है कि संकरण के प्रथम जनन में पूर्ण अथवा अपूर्ण रूप से प्रभावी गुण का प्राधान्य होता है। यह नीले ऐण्डालूसियन में देखा जा चुका है जहाँ अपसारी धब्बेदार श्वेत पक्षी प्रथम जनन में पूर्ण रूप से गायब हो जाता है। परन्तु एक सम-रंग की अपेक्षा शुद्ध प्रभावी के लिए उसी जनन में अपसारी गुणों को नष्ट करना अधिक सरल है जैसा कि एवर्डीन ऐंगस तथा हेयरफोर्ड के संकरण में। तिस पर भी वे जब अपनी बारी में अंतःप्रसवन करते हैं तब हम मेण्डल के नियम को ३ काले तथा १ लाल पशु के रूप में कार्यान्वित होते पाते हैं। परन्तु इन तीन काले पशुओं में केवल एक की उत्पत्ति शुद्ध है तथा अन्य दो प्रसंकर हैं[१]।

खरगोशों में यह देखा गया है कि छोटे बालोंवाले बेल्जियन खरगोश तथा लम्बे बालों वाले ऐंगोरा खरगोश के संकरण से सब छोटे बालों के खरगोशों की उत्पत्ति होती है। तिस पर भी जब इन छोटे बालोंवाले प्रसंकरों का ऐंगोरा जाति से संग कराया जाता है तब लम्बे तथा छोटे बालोंवाले ऐंगोरा की उत्पत्ति ठीक मेण्डल के नियमानुरूप अनुपात में होती है।[२] इसके आगे दूसरी पीढ़ी में प्रसंकर ऐंगोरा का जब शुद्ध ऐंगोरा से संग कराया जाता है तो शुद्ध उत्पत्ति होती है[३]। यह परिणाम जातियों सम्बन्धी हमारे अध्ययन के लिए कुछ महत्त्व का है। कारण यह है कि हम चाहे खरगोश अथवा मनुष्यों[४] का अध्ययन करें दोनों में प्रक्रिया समान है, हालाँ कि मनुष्य के अध्ययन में वह अधिक जटिल हो जाती है। यदि हम श्वेतता के बदले स्वर्ण केश (blondness) और लम्बे कपाल होने के गुण को लें तथा उन्हें अपसारी गुण मानें, जैसा कि अनेक

१. जेम्स विल्सन (James Wilson), दि ब्रीडिंग एण्ड फीडिंग आफ़ फार्म स्टाक (The Breeding and Feeding of Farm Stock), लन्दन, १९२१, पृष्ठ ३६

२. मेण्डल के अनुसार प्रत्येक की अपेक्षित संख्या १९ है।

३. सी० सी० हर्स्ट (C. C. Hurst), एक्सपेरीमेन्ट्स इन जेनेटिक्स (Experiments in Genetics), कैम्ब्रिज, १९२५, पृष्ठ १६९–१७१

४. युजेन फिशर (Eugen Fisher) ने अपने (Die Rehobother Bastards und das Bastardierungs problem beim Menschen) में १९१३ के लगभग दिखलाया है कि मेण्डल के सिद्धान्तों को होटेनटाट (Hottentot) तथा यूरोप निवासियों के संकरण से देखा जा सकता है।

दशाओं में वे हैं, फिर दो प्रकार की जनसंख्या, एक तो श्वेत वर्ण तथा लम्बे कपाल वाली तथा दूसरी भूरे रंग तथा छोटे कपाल वाली, का संकरण करें तो इसका भी ठीक उसी प्रकार का परिणाम होगा। हालाँ कि मनुष्य की जननिक बनावट पशुओं की अपेक्षा अधिक जटिल होती है और ये गुण निःसन्देह ही पित्र्यकों के एक जोड़े से अधिक द्वारा प्रभावित होते हैं। इससे अधिक विभिन्नता होगी[१] तथा परिणामतः प्रत्येक का अनुपात भी प्रभावित होगा।[१]

वंशानुगति को प्रभावित करनेवाले कारक इतने सरल भी नहीं हैं जितने कि प्रभावी तथा अपसारी के विचार से प्रतीत होते हैं। और न यही निश्चित है कि जहाँ पर हमने अपसारी शब्द का प्रयोग किया है, वहाँ अनुपस्थिति के बदले कोई अन्य कारक सम्बद्ध हैं।

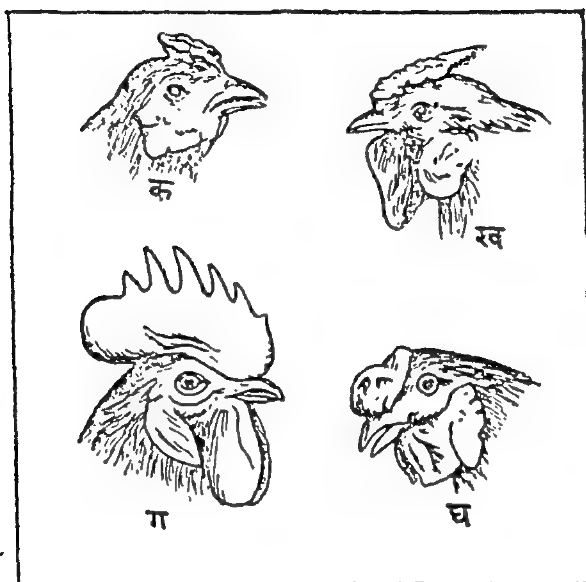
यदि हम शुद्ध प्रसव के रोज़ कोम (जैसे कि एक ब्लैक हैम्बर्ग, व्हाइट डार्किंग अथवा व्यानडोट (Wyandotte) का शुद्ध प्रसव सिंगिल कोम (लेगहार्न, माइनार्का अथवा कोचीन), से संकरण करें, तब सम्पूर्ण सन्तति रोज़ कोम की होगी। इसमें रोज़ प्रभावी रूप में मिलता है। अगली पीढ़ी में यदि हम इनमें अन्तःप्रसवन करें तो शुद्ध रोज़, अशुद्ध रोज़ तथा शुद्ध सिंगल का यह अनुपात मिलेगा—१,२,१। यह वही है जैसी कि हमें आशा करनी चाहिए।

उसी प्रकार यदि हम शुद्ध प्रसव के 'पी' कोम पक्षी (इंडियन गेम तथा ब्रह्मा) का सिंगिल कोम से संकरण करें, तब भी ठीक वही क्रिया होती है। इसलिए रोज़ तथा पी-कोम दोनों सिंगिल कोम की तुलना में प्रभावी हैं। परन्तु रोज़ तथा पी-कोम का संकरण होने से क्या होता है? यह संपरीक्षण १९०५ तथा १९०६[२] में बेटसन तथा पुनेट ने किया, जिसके आश्चर्यजनक परिणाम निकले। इस संकरण से वालनट (Walnut) कोम की उत्पत्ति हुई जैसे कि मलाया तथा ओरलोफ़ में मिलते हैं। इन सब के अन्तःप्रसवन से यह देखा गया कि अगली पीढ़ी में ९:३:३:१ के अनुपात में वालनट, रोज़, पीज़ तथा सिंगिल मिलते हैं। ये अनुपात मेण्डल के सिद्धान्तों पर भली भाँति

१. हम मनुष्य के जननिक से सम्बन्धित वास्तविक गुणों का वर्णन आगे कुछ विस्तार से करेंगे।

२. डब्लू० बेटसन (W. Bateson) तथा आर० सी० पुनेट (R. C. Punnett) "ए सजेशन एज टु दि नेचर आफ़ वालनटकोम इन फाउल्स" Proc. Comb Phil soc, १३, १६५ पृष्ठ

समझे जा सकते हैं परन्तु सिंगिल कोम का मिलना अनपेक्षित था जो कि माता-पिता के वर्ग में नहीं मिलता। इस स्थिति को समझने के लिए अनुपस्थिति के सिद्धान्त की कल्पना हुई। सभी कोम (चोटी या शिखा) मौलिक रूप से सिंगिल हैं, रोज़ चोटी एक सिंगिल है जो कि रोज़ के कारक की क्रिया के द्वारा रोज़ में परिवर्तित हो गयी।



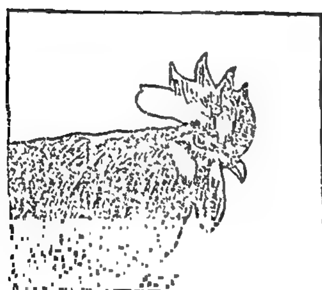
चित्र नं० १०२

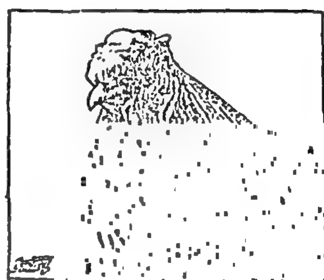
(आर० सी० पुनेट R. C. Punett के मेण्डलिज्म से उद्धृत पक्षियों की चोटी के प्रकारों की चित्रित रूपरेखा)

क पी चोटी (Pea Comb)
ख रोज चोटी (Rose Comb)
ग सिंगिल चोटी (Single Comb)
घ वालनट चोटी (Walnut Comb)

कहने का तात्पर्य यह है कि रोज़ कोम का कारक किसी पक्षी की बनावट में मिले अथवा न मिले, यदि यह उपस्थित है तो पक्षी में रोज़ चोटी के गुण प्रदर्शित होते हैं। यदि यह नहीं है तब सिंगिल कोम के गुण देख पड़ते हैं। उसी प्रकार से मटर की (पी) चोटी में भी होता है। जब किसी पक्षी की बनावट के कारकों में R (Rose comb) तथा P (Pea Comb) एक साथ उपस्थित रहते हैं तब उस पक्षी में वालनट के समान गुण

मिलते हैं तथा जब इनमें से कोई भी उपस्थित न हो तो शिखा (कोम) सिंगिल होती है। इस उपस्थिति तथा अनुपस्थिति के विचार के अनुसार (जैसा कि सबसे पहले कोरेंस ने बतलाया और बेटसन तथा अन्य लोगों ने बाद में विस्तार से निश्चित किया) विभिन्न गुणों के एक जोड़े के दोनों हिस्से दो स्पष्ट कारकों पर आधारित नहीं बल्कि एक ही कारक की दो सम्भावित दशाओं पर आधारित हैं—यह है समपित्र्यक[1] में उसकी उपस्थिति तथा अनुपस्थिति।





चित्र नं० १०३

कुक्कुटों की चोटी के प्रकार

(टी० डब्लू० स्टर्जेस (T. W. Sturgess) द्वारा ए० डी० डर्बीशायर के ब्रीडिंग ऐण्ड मेण्डेलियन डिस्कवरी से उद्धृत)

[१. ब्लैक लेगहार्न (Black Leghorn) कुक्कुट के सिंगल कोम।
२. पेट्रिज व्यानडोट (Patridge Wyandotte) के रोज कोम]

जननिक सूत्र में इसे व्यक्त करने का तात्पर्य यह है कि युग्मैकगुण रोज तथा पी के संकरण के पश्चात् उसका प्रदर्शन RRPP × rrPP से होता है। जिस पीढ़ी की उत्पत्ति होती है (F_1) वह Rr PP होगी। बड़े अक्षर **उपस्थित** कारक तथा छोटे अक्षर **अनुपस्थित** कारक को प्रदर्शित करते हैं, जैसा कि प्रभावी तथा अपसारी गुणों के उदाहरण में होता है।

१. एफ़० ए० क्रू (F. A. Crew), M. D., D. Sc., F. R. S. E., एनीमल जेनेटिक्स १९२५, पृष्ठ ४५–४६

इस पीढ़ी के अन्तःप्रसवन से F_2 पीढ़ी निम्नलिखित प्रकार से उत्पन्न होती हैं।

नर

मादा

	Rp	Rp	rp	rp
RP	RRPP	RRPp	RrPP	RrPp
Rp	RRPp	RRpp	RrPp	Rrpp
rP	RrPP	RrPp	rrPP	rrPp
rp	RrPp	Rrpp	rrPp	rrpp

इसको संक्षिप्त करने से हम निम्नलिखित परिणाम पाते हैं—

वाह्य समरूप में हमारे पास वालनट (Walnut) के ९ रूप हैं (R P) जो कि निम्न प्रकार से हैं—

समपित्र्यक 'Gentoype' R R P P—संख्या में १
समपित्र्यक R R P p —संख्या में २
समपित्र्यक R r P P —संख्या में २
समपित्र्यक R r P p —संख्या में ४, योग ९

वाह्य समरूप में हमारे पास रोज़ (Rose) के ३ रूप (R p) हैं जो कि निम्न प्रकार से हैं—

समपित्र्यक R R p p —संख्या में १
समपित्र्यक R r p p —संख्या में २, योग ३

वाह्य समरूप में हमारे पास पी (Pea) के ३ रूप हैं (r P) जो कि निम्न प्रकार से हैं—

समपित्र्यक r r P P —संख्या में १
समपित्र्यक r r P p —संख्या में २, योग ३

वाह्य समरूप में हमारे पास सिंगिल (Single) रूप (r p) का एक समपित्र्यक rrpp है।

वेटसन तथा पुनेट ने सन् १९०८ में श्वेत डार्किंग (Dorking) तथा श्वेत सिल्कीज़ (Silkies) में संकरण किया। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रथम पीढ़ी में समस्त पक्षी रंगीन हुए। जब परिणामित प्रकारों से बच्चे प्रसूत कराये गये तो ९ रंगीन पक्षी तथा ७ श्वेत हुए। इसमें भी ठीक वही घटना घटी जैसी कि कोम (चोटी)

के अध्ययन में हुई, जहाँ कि उपस्थिति तथा अनुपस्थिति गुण कार्य कर रहे थे, सिवाय इसके कि समस्त श्वेत प्रकार एक से हैं तथा उनमें ३:३:१ का अनुपात न होकर कुल ७ ही निकले। ऐसा कहा जाता है कि इनमें रंग रंग के कारकों में पारस्परिक क्रिया का परिणाम है जो कि यदि साथ ही प्रकट होते तो रंगीन प्रकार होते, नहीं तो वे सफ़ेद ही रहते।





चित्र नं० १०४
कुक्कुटों की चोटी के प्रकार
(टी० डब्लू० स्टर्जेस (T. W. Sturgess) द्वारा ए० डी० डर्बीशायर के ब्रीडिंग एण्ड मेण्डेलियन डिस्कवरी से उद्धृत)
१. सुमात्रा गेम के पी कोम।
२. मलाया पक्षी के वालनट कोम।

इसलिए यह स्पष्ट है कि श्वेत डार्किंग तथा श्वेत सिल्कीज़ का श्वेत रंग, रंग का अपसारी है तथा यह इसलिए है कि उनमें रंग के उत्पादनवाला कारक अनुपस्थित है। जब कि श्वेत लेगहार्न तथा श्वेत डार्किंग के बीच संपरीक्षण किये गये, यह देखा गया कि बिलकुल वही क्रिया नहीं हुई जैसा कि श्वेत सिल्कीज़ के होने से होती। यह स्पष्ट हो गया कि कोई निरोधक कारक भी सम्मिलित था।

मान लिया जाय कि C रंग के कारक का प्रदर्शक तथा I रंग के निरोधक का प्रदर्शक है, तब CCII बनावट का एक पक्षी पूर्ण श्वेत परन्तु प्रभावी होगा, जब कि कोई दूसरा cc ii बनावट का भी बिलकुल श्वेत परन्तु अपसारी होगा। CC ii सूत्र निःसन्देह रंगीन होगा तथा CC Ii भी कुछ सीमा तक श्वेत होगा।

इसलिए श्वेत लेगहार्न तथा श्वेत डार्किंग के संकरण से प्रथम पीढ़ी (F^1) Cc-Ii की है जो कि कुछ अंश तक रंगीन है (वास्तव में समस्त श्वेत पंखों में कुछ रंगीन

धब्बे हैं)। इस पीढ़ी का अन्तः प्रसवन CI, Ci, cI, ci चार पित्र्यकों के आधार पर निम्न प्रकार से होगा—

नर

	CI	Ci	cI	ci
CI	CCII	CCIi	CcII	CcIi
Ci	CCIi	CCii	CcIi	Ccii
cI	CcII	CcIi	ccII	ccIi
ci	CcIi	Ccii	ccIi	ccii

मादा

किसी युग्म (जाइगोट) (याने पित्र्यकों के संयोजन) में यदि आधिकारिक या मुख्य कारक हो तो वह एक श्वेत पक्षी के रूप में उत्पन्न होता है। यदि दोनों पित्र्यकों में यह मिलता है तो पक्षी बिलकुल श्वेत होता है चाहे CC रंगकारक भी उपस्थित हों। परन्तु एक I से एक श्वेत पक्षी की उत्पत्ति होती है जिसमें रंग के धब्बे होते हैं तथा उन सब संयोजनों से जिनमें C हो पर I नहीं, रंगीन पक्षियों की उत्पत्ति होती है।

इससे स्पष्ट है कि अपसारी श्वेत पक्षी जिसकी बनावट cc ii (अर्थात् जिसमें रंग तथा रंग-निरोधक कारक की कमी है) बिलकुल श्वेत पक्षी है, जब कि CC II कारकोंवाला बिलकुल श्वेत दिखाई देनेवाला तथा प्रभावी पक्षी वास्तव में रंगीन है, जिसमें रंग के प्रदर्शन को रोकनेवाला निरोधक कारक है।

इस संपरीक्षण से यह स्थापित होता है कि कोई गुण एक जाति में प्रभावी तथा अन्य में अपसारी होता है। परिणामतः जब जाति की बनावट के इन मूल सिद्धान्तों को हम मनुष्य पर लागू करते हैं तब इन सब बातों को ध्यान में रखना चाहिए। ऐसा विश्वास करने के लिए उचित कारण है कि मेडिटेरेनियन तथा ऐटलाण्टिक जातियों

के काले केश नार्डिक के स्वर्णकेशों पर प्रभावी हैं परन्तु हमें अभी तक पता नहीं कि उनकी स्थिति में पारस्परिक क्या सम्बन्ध है। साथ ही इन जातियों के काले केश और मंगोलायड तथा मेलोनायड के केशों के लिए भी यह उतना ही सत्य है। फिर जैसा कि हम आगे देखेंगे, जब कि पूर्वी यूरोप में चौड़े कपालवाले लम्बे कपालवालों की अपेक्षा प्रभावी हैं, उत्तर-पूर्वी यूरोप के लैप्स में मिलनेवाले कुछ चौड़े आकार के कपालों की अपेक्षा लम्बे कपाल प्रभावी हैं। वास्तव में क्या यह ठीक उसी प्रकार के तत्त्वों के कारण है जिनका वर्णन हमने अभी किया है, यह देखना शेष है। फिर भी तथ्य यही है कि पशुओं की इस प्रकार की व्याख्या (चाहे हमारे ज्ञान की वृद्धि के साथ बाद में उसमें भी सुधार करना पड़े) मानव जातियों में वंशानुगत जातीय गुणों के साधारण सिद्धान्तों के समझने में सहायक है।

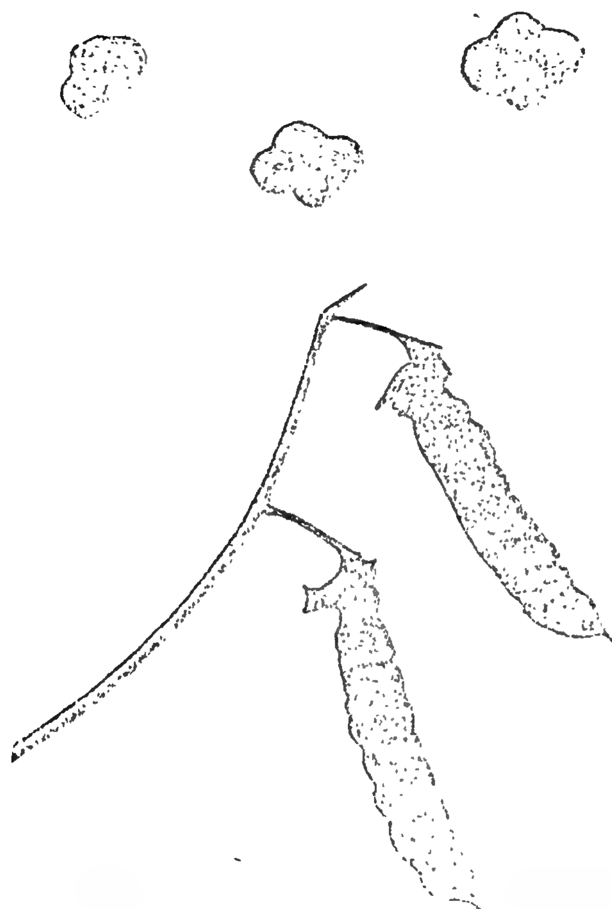
हम यह देख चुके हैं कि संकरण होने पर नियमित रूप से एक सन्तति के समस्त गुण दूसरे के सम्बन्ध में एक एकक की भाँति कार्य नहीं करते। दूसरे शब्दों में प्रत्येक गुण को नियन्त्रित करनेवाले पित्र्यक अन्य गुणों को नियन्त्रित करनेवाले पित्र्यकों से भिन्न कार्य करते हैं। वे सब मेण्डल के उन्हीं नियमों का पालन करते हैं।

मेण्डल को द्विसंकर[1] में इस क्रिया का पता चला जब उसने बाग के पीले गोल आकार के एक मटर का एक हरे सिकुड़े मटर से संकरण किया। जो मटर उत्पन्न हुए वे पीले गोल थे क्योंकि पीला हरे पर तथा गोल सिकुड़े पर प्रभावी था। परन्तु दूसरी पीढ़ी में इन द्विसंकर आकारवालों में अन्तःप्रसवन करने से वे सामूहिक रूप से अपने पूर्वजों के आकार में नहीं बदल जाते। संयोजन (गोल-पीले तथा हरे-सिकुड़े) टूटे जाते हैं तथा गुणों का प्रत्येक समूह (पीला, गोल, हरा तथा सिकुड़ा) स्वतन्त्र हो जाता है, कारण यह कि प्रत्येक विभिन्न पित्र्यक की बनावट द्वारा निर्मित है।

फिर भी बनावट में वंशानुगत तत्त्वों का स्वतन्त्र रूप से व्यवहार करना प्रत्येक उदाहरण में पूर्ण रूप से सत्य नहीं है। बेटसन तथा पुनेट ने जन्यु या जननकोश के जोड़े अथवा ग्रथन की खोज की, जिसका वर्णन अगले अध्याय में किया जायगा

१. एकसंकर (Monohybrid) वह संकरण है जिसमें केवल एक ही गुण से सम्बन्ध है जैसे कि नीले एंडालूसियन में काला तथा श्वेत गुण। द्विसंकर (Dihybrid) वह है जहाँ दो गुण (इस उदाहरण में जैसे कि रंग तथा आकार) से सम्बन्ध रहता है तथा त्रिसंकर (Trihybrid) वह है जहाँ तीन गुणों का सम्बन्ध है, जैसा कि गिनी सुअर में, जहाँ कि छोटे कोट, चिकने कोट तथा रंग से सम्बन्ध है।

तथा यह दिखलाया जायगा कि ग्रथित गुण एक ही पित्र्यसूत्र से नियन्त्रित रहते हैं। जब कि बैंगनी फूल तथा पराग के लम्बे कणों के तत्त्ववाले मीठे मटर का लाल



चित्र नं० १०५

(ए० डी० डर्बीशायर (A. D. Derbyshire) के ब्रीडिंग एण्ड मेण्डेलियन एक्सपेरीमेण्ट्स से उद्धृत)

गोल तथा सिकुड़े मटर

[फलियों में इनके विभिन्न अनुपातों को देखकर मेण्डल ने उनके साथ सम्परीक्षण किया तथा उससे उनको जननिक विज्ञान के उस नियम की स्थापना में सहायता मिली जिसको पित्रागति सिद्धान्त (Mendelian law) कहते हैं, जिसने जीव-विज्ञान सम्बन्धी ज्ञान में क्रान्ति उत्पन्न कर दी तथा वंशानुगति के प्रभाव की सत्यता प्रमाणित कर दी।]

फूल तथा गोल कणवाले मटर से संकरण किया जाय तव दोनों कारक द्विसंकर में ग्रथित रहते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि गुण, समूहों के रूप में पारेपित किये जा सकते हैं, क्योंकि समूह का प्रत्येक सदस्य अन्य से ग्रथित है।



चित्र नं० १०६

(ए० डी० डर्बीशायर (A. D. Derbyshire) के ब्रीडिंग एण्ड मेण्डेलियन एक्सपेरीमेण्ट्स से उद्धृत)

सिकुड़े पीले तथा हरे गोल मटरों के संकरण का परिणाम

[पैत्रिक सन्तति—ऊपर बाईं ओर—पीले सिकुड़े माता-पिता
ऊपर दाहिनी ओर—हरे गोल माता-पिता

F_1 पीढ़ी —मध्य के पाँच मटर प्रथम प्रसंकर पीढ़ी के हैं

F_2 पीढ़ी —फली के अन्दर के मटर दूसरी प्रसंकर पीढ़ी के हैं जो कि सिकुड़े-पीले, पीले-गोल, हरे-गोल तथा हरे-सिकुड़े मटर हैं।]

फिर यही ऐसा प्रभाव है, जो किन्हीं परिस्थितियों में कार्यान्वित होने पर जातिगत विभिन्न गुणों को एक दूसरे से पृथक् रखता है।[1]

१. इसका और वर्णन आगे किया जायगा

अब फिर द्विसंकर की ओर ध्यान दें तो इसकी क्रिया मेण्डल के मटरसम्बन्धी सम्परीक्षण में, जिसका वर्णन अभी किया गया है, वंशानुगति के निम्नलिखित विस्तृत चित्रण में भली-भाँति देखी जा सकती है। हम मान लें कि YY= पीले के पित्र्यक तथा GG= हरे के पित्र्यक हैं और RR= गोल के पित्र्यक तथा WW= सिकुड़े के पित्र्यक हैं। पीले गोल (=YY RR) तथा हरे सिकुड़े (=GG WW) प्रारम्भ के माता-पिता हैं।

इनमें संकरण करने पर प्रथम पीढ़ी में सब बाह्य समरूप (Phenotype) पीले गोल मटर निकलते हैं, जिससे यदि हमें ठीक पता नहीं होता तो हम परिणाम निकालते कि इसकी YY RR बनावट है। पर वास्तव में उनका समपित्र्यक (जीनोटाइप) अथवा भिन्नरूप (आइडिओटाइप), जैसा कि हम जानते हैं, YG RW हैं क्योंकि उनकी क्रिया से स्पष्ट है कि पीले तथा गोल प्रभावी तथा हरे सिकुड़े अपसारी हैं।

दूसरी पीढ़ी में अनेक प्रकारों की उत्पत्ति होगी। इनमें से एक पीले तथा गोल समरूप होंगे तथा चार समपित्र्यक होंगे—जो ये हैं, YY RR, YY WR, YG RR तथा YG RW। परन्तु पीले तथा गोल के प्रभावी होने के कारण ये गुण बाह्य समरूप के साथ भी दीखते हैं। उसी पीढ़ी में एक दूसरे बाह्य समरूप की उत्पत्ति होगी जो पीले तथा सिकुड़े होंगे। समपित्र्यक में यह YY WW तथा YG WW से प्रदर्शित होंगे। यह देखा जायगा कि सिकुड़ेपन की दृष्टि से मटर का यह प्रकार युग्मैक-गुणी (होमोज़ाइगस, समयुग्मिक) है, परन्तु रंग की दृष्टि से केवल एक भाग ऐसा है, क्योंकि हरे रंग के लिए आधे में अपसारी पित्र्यक मिलते हैं। इसी पीढ़ी के तीसरे प्रकार में हरे तथा गोल समरूप होते हैं, परन्तु फिर वास्तव में वे GG RR तथा GG RW समपित्र्यक में मिलते हैं। यहाँ पर रंग का पित्र्यक युग्मैक-गुणी है तथा आधे में गोलपन युग्मानेकगुण (विषमयुग्मीय) है। अन्त में चौथे प्रकार की उत्पत्ति में वह गोल और सिकुड़े होंगे तथा समपित्र्यक में वह भी GG WW याने युग्मैकगुणी होगा। यह हरे तथा सिकुड़े हुए अपसारी पित्र्यकों से बनता है, अतः जब तक वह अपने समान का ठीक प्रसव न कर सके इसकी उत्पत्ति नहीं हो सकती।

इन प्रकारों की उत्पत्ति का वास्तविक अनुपात इस प्रकार होगा—

बाह्य समरूप में ९/१६ पीले, गोल होंगे (परन्तु १/१६ ही युग्मैकगुणी होंगे), ३/१६ पीले तथा सिकुड़े होंगे (परन्तु केवल १/१६ युग्मैकगुणी होंगे), दूसरे ३/१६ बाह्य समरूप में गोल तथा हरे होंगे (परन्तु केवल १/१६ फिर एक बार युग्मैकगुणी होंगे) तथा अन्त में १/१६ बाह्य समरूप तथा सम पित्र्यक में हरे तथा सिकुड़े होंगे।

यही नियम प्रत्येक प्रसवन के लिए सत्य है तथा केवल पौधों तक ही सीमित नहीं है। इसलिए यदि एवर्डीन-ऐंगस (Aberdeen Angus) का जो कि काले तथा विना सींग के होते हैं, हेयरफोर्ड (Hareford) से संकरण किया जाय जो कि लाल तथा सींगवाले हैं, तव उनकी सन्तति काली तथा विना सींग के होगी। परन्तु वाद वाली पीढ़ी में अपसारी लाल रंग तथा सींग पुनः प्रकट हो जाते हैं, तव हमें निम्न अनुपात मिलता है—

काले तथा सींग-रहित ९;
काले तथा सींग वाले ३;
लाल तथा सींग-रहित ३;
लाल तथा सींग वाले १.

इनमें से काले तथा सींग-रहित के ९ में से १ शुद्ध प्रसव करता है, काले तथा सींग वाले ३ में १, लाल तथा सींग-रहित के ३ में १ तथा अपसारी लाल तथा सींगवाले १ में १ शुद्ध प्रसव करता है।[1]

यदि हम एक काले हैम्वर्ग का (जिसके रोज़ चोटी है) श्वेत लेगहार्न (जिसके सिंगिल चोटी है) से संकरण करें तव परिणाम होगा[2]—९ श्वेत रोज़ चोटी (कोम), ३ श्वेत सिंगिल चोटी (कोम), ३ काले रोज़ चोटी तथा १ काला सिंगिल चोटी (कोम)।

वेलमैन[3] (Wellman) ने भी जव एक वेसेट हाउण्ड कुत्ते का फाक्स टेरियर कुतिया से संकरण किया, तव उन्हीं सिद्धान्तों को क्रियान्वित होते पाया। प्रथम जनन में ५ काले तथा धव्वेदार (छाती तथा टाँगों में श्वेत चित्तियाँ) तथा ढाँचे में लगभग वेसेट के समान मिले। इसलिए वेसेट का काला तथा धव्वेदार ढाँचा फाक्स टेरियर

१. जेम्स विल्सन (James Wilson) पूर्व कथित, पृष्ठ ३७-३८.

२. एफ़० ए० ई० क्रू (F. A. E. Crew, M. D., D. Sc., F. R. S. E., एनिमल जेनेटिक्स (Animal Genetics) १९२५, पृष्ठ ३०

३. ओ० वेलमैन (O. Wellman) के 'एक्सपेरिमेन्ट्स विद डाग्ज इन कनेक्शन विद दि मेन्डेलियन लाज आफ़ हेरिडिटी', नेशनल साइन्स वुलेटिन, १९१६, ४८, पृष्ठ ३१५

के गुण की अपेक्षा प्रभावी है। इनके प्रसवन से दूसरे जनन में ३२ बच्चे उत्पन्न हुए जिनमें से २१ जीवित रहे, बचनेवालों में—

१८ काले तथा धब्बेदार बेसेट से मिलते जुलते,
४ चित्तीदार बेसेट के आकार के,
३ काले तथा धब्बेदार, टेरियर गठन के,
२ धब्बेदार टेरियर रंग के, टेरियर शरीर के थे।

यह मेण्डल के नियम के अनुपात ९:३:३:१ से काफ़ी मिलता जुलता है जो कि निःसन्देह ही अधिक संख्या होने पर ठीक देखा जाता।

यह उदाहरण जातियों-सम्वन्धी अध्ययन की दृष्टि से काफी लाभदायक है। यहाँ पर मिश्रित मटरों की संख्या है जो कि मनुष्यसमूह की विभिन्नताओं से मिलती जुलती है। इस जनसंख्या में एक छोर में ९/१६ वाँ भाग मिलता है जो शुद्ध जातीय प्रकार से सम्वन्धित मालूम पड़ता है, हालाँ कि वास्तव में उस संख्या का १/९ भाग ही शुद्ध सन्तति उत्पन्न करता है। दूसरी ओर केवल १/१६ वाँ भाग है। वास्तव में इसका प्रसव शुद्ध तथा शुद्ध सन्तति का होता है। इनके वीच में एक या अन्य से मिलते जुलते कई विभिन्न गुण-वाले मिलते हैं। यदि जाति की प्रक्रिया के विषय में हमें कुछ नहीं मालूम होता तब हम इस परिणाम पर पहुँचते कि प्रारम्भिक जातीय तत्त्व, जिनसे मिश्रित जनसंख्या का निर्माण हुआ है, ९:१ के अनुपात में रहे होंगे। यह हमारी भूल होती, क्योंकि जनसंख्या का प्रसव दोनों सन्ततियों की बराबर संख्या से हुआ है। यह होता इस प्रकार है कि एक सन्तति के गुण अन्य की अपेक्षा अपसारी होते हैं तथा बाह्य समरूप से एकांगी स्थिति का ही पता चलता है।

जैसा कि हमने पहले बतलाया है, जहाँ पर तीन गुणों का सम्वन्ध है उसे त्रिसंकर-कहते हैं। इस उदाहरण में प्रथम जनन में (F^1) प्रत्येक व्यक्ति के तीन प्रभावी गुण होंगे, जब कि उनके समपित्र्यक में ६ कारक सम्बद्ध होंगे। दूसरे जनन में (F^2) २७: ९: ९: ९: ३: ३: ३: १ का अनुपात होगा।

केसेल के गिनी पिग के संपरीक्षण[१] द्वारा साथ में दी गयी तालिका नं० २ में त्रिसंकर को चित्रित किया गया है। इन पितृवंशों में से एक के कोट में तीन गुण हैं—छोटा,

१. डब्लू० ई० केसेल (W. E. Castle), साइज इन गिनी पिग क्रासेज (Size in Guinea Pig crosses), प्रोसीडिंग आफ़ नेचुरल, ऐकेडेमी आफ़ साइन्सेज १९१६, २, पृष्ठ २५२

चिकना तथा रंगीन। दूसरे में ये तीन हैं—लम्बा, पाटलक तथा श्वेत। प्रथम

तालिका नं० २

छोटे, चिकने तथा रंगीन गिनी पिग (Guinea Pigs) और लम्बे, पाटलक तथा श्वेत के संकरण से उत्पन्न बाह्य समरूप तथा समपित्र्यक के संयोजन को प्रदर्शित करनेवाली तालिका—

S S छोटे कोट (Coat) तथा s s अपसारी लम्बे कोट

C C रंगीन तथा c c अपसारी श्वेत (Albino)

R R पाटलक (Rosetted), गुलाबी रंगरंजित तथा r r अपसारी चिकने कोट

बाह्य समरूप	समपित्र्य	संख्या		
S C R	१. S S C C R R	१		*शुद्धप्रसवन
छोटे कोट वाला	२. S S C C R r	२		युग्मानेकगुणी
रंगीन	३. S S C c R R	२		,,
पाटलक	४. S S C c R r	४		,,
	५. S s C C R R	२		,,
	६. S s CC Rr	४		,,
	७. Ss Cc RR	४		,,
	८. Ss Cc Rr	८	२७	,,
S C r	९. SS CC rr	१		*शुद्धप्रसवन
छोटे कोटवाला	१०. SS Cc rr	२		युग्मानेकगुणी
रंगीन	११. Ss CC rr	२		,,
चिकना	१२. Ss Cc rr	४	९	,,
S c R	१३. SSccRR	१		*शुद्धप्रसवन
छोटे कोटवाला	१४. SSccRr	२		युग्मानेकगुणी
श्वेत (Albino)	१५. SsccRR	२		,,
पाटलक (Rosetted)	१६. SsccRr	४	९	,,

जनन में (F^1) छोटी, पाटलक तथा रंगीन उत्पत्ति हुई। जब इनका अन्तःप्रसवन हुआ तब दूसरे जनन (F^2) में आठ वाह्य समरूप मिले। ये निम्न प्रकार से थे।

१. छोटे, रंगीन, पाटलक (गुलाब-रंग-रंजित)
२. छोटे रंगीन, चिकने।
३. छोटे, श्वेत, पालटक।
४. लम्बे, रंगीन, पालटक।
५. छोटे, श्वेत, चिकने।
६. लम्बे, रंगीन, चिकने।
७. लम्बे, श्वेत, पालटक।
८. लम्बे, श्वेत, चिकने।

(तालिका नं० २ का शेषांश)

s C R				
लम्बे कोटवाला	१७. ssCCRR	१		*शुद्धप्रसवन
रंगीन	१८. ssCcRr	२		युग्मानेक गुणी
पाटलक	१९. ssCcRR	२		
	२०. ssCcRr	४	९	,,
Scr				
छोटे कोटवाला	२१. SSccrr	१		*शुद्धप्रसवन
श्वेत	२२. Ssccrr	२	३	युग्मानेक गुणी
चिकना				
ScR				
लम्बे कोटवाला	२३. ssCCrr	१		*शुद्धप्रसवन
रंगीन	२४. ssCcrr	२	३	युग्मानेक गुणी
चिकना				
scR				
लम्बे कोटवाला	२५. ssccRR	१		*शुद्धप्रसवन
धवलांग	२६. ssccRr	२	३	युग्मानेक गुणी
पाटलक				
scr				
लम्बे कोटवाला	२७. ssccrr	१	१	*शुद्धप्रसवन
धवलांग				
चिकना				

योग ६४

इन आठ बाह्य समरूपों (फेनोटाइप) में २७ समपित्र्यक (जेनोटाइप) थे। यह साथ दी हुई तालिका से स्पष्ट हो जाता है। यह देखा जायगा कि प्रत्येक के केवल ८ प्रकार हैं (ये सितारे के चिह्न से चिह्नित हैं) जो कि अन्तःप्रसवन से उसी समरूप का प्रसवन करेंगे जिनसे वे सम्बन्धित हैं। शेष इसके विपरीत युग्मानेकगुणी हैं जो कि परिवर्त्तित होकर प्रारम्भिक गुणों के विभिन्न संयोजन व्यक्त करते हैं।[1]

ऐसे उदाहरणों का सम्वन्ध केवल एक, दो अथवा तीन पित्र्यकों के सेट से रहता है। परन्तु मनुष्य तथा पशुओं में हमें कहीं अधिक मिलते हैं। इसलिए प्रारम्भिक दो सन्ततियों (प्रवर्गों, स्टेन्स) से अगणित भेदों का निर्माण होता है; हालाँकि उनमें शुद्ध प्रसव करनेवालों का अनुपात कम होता है। हक्सले तथा हेडन[2] वतलाते हैं कि यदि पुनः संयोजन में एक पित्र्यक सम्मिलित है तव जो प्रकार उत्पन्न होंगे उनकी संख्या १ घात २($१^२$) अर्थात् दो होगी, यदि दो सम्मिलित हों तो परिणामित प्रकार ($२^२$ याने) चार होंगे। जवकि यदि दोनों प्रकार १० पित्र्यकों के सम्वन्ध से भिन्न होते हैं, तव पुनःसंयोजन में २ घात १० ($२^{१०}$) याने १०२४ नये संयोजन सम्भव होते हैं। इनमें से केवल दो माता-पिता के आकार हैं। इस प्रकार १०२२ नये प्रकार मिलते हैं। यदि परिणामित संकरण में एक मध्य प्रकार भी निर्मित हो तो पुनः संयोजन

१. त्रिसंकर का दूसरा उदाहरण एबर्डीन-ऐंगस को हेयरफोर्ड के साथ मिलाने से होता है। यह न केवल बतलाये गये दो गुणों में ही (रंग तथा सींग) भिन्नता बतलाते हैं बल्कि इसमें भी हेयरफोर्ड का चेहरा श्वेत होता है जो कि एबर्डीन-ऐंगस के काले चेहरे पर प्रभावी है। इसका परिणाम है कि हमारे पास ८ बाह्य समरूप निम्न प्रकार के मिलते हैं।

२७ श्वेत चेहरा, काला, सींग रहित, एक शुद्ध प्रसवन के साथ
९ श्वेत चेहरा, काला, सींग वाला, ,,
९ श्वेत चेहरा, लाल, सींग रहित, ,,
९ साफ़ चेहरा, काला, सींग रहित, ,,
३ श्वेत चेहरा, लाल, सींग वाला, ,,
३ साफ़ चेहरा, काला, सींग वाला, ,,
३ साफ़ चेहरा, लाल, सींग रहित, ,,
१ साफ़ चेहरा, लाल, सींग वाला, ,,

२. पूर्व-कथित, पृष्ठ ७९

२ के स्थान पर ३ की शक्ति (घात) से बढ़ता है। परिणाम यह होता है कि जब हम मनुष्य पर आते हैं, जिसमें सहस्रों पित्र्यक हैं जो कि मनुष्य के अनेक गुणों को नियन्त्रित करते हैं, तब पुनःसंयोजन अगणित होते हैं। यही कारण है कि वंशानुगति के नियम मनुष्य में छिपे हुए या अप्रकट से रहते हैं परन्तु इस पर भी वे अपना काम बराबर करते रहते हैं।

व्यावहारिक रूप में इतनी अधिक विभिन्नता पर कुछ बन्धन भी हैं। कई गुण परस्पर ग्रथित होते हैं, अतः वंशानुगति से एक पूरी इकाई के रूप में हस्तान्तरित होते हैं।

त्रिसंकर की अपेक्षा अनेक संख्या के गुणोंवाले प्रकारों में जिनमें ग्रथन नहीं होता, संकरण के अनुपात जानने का प्रयत्न किया जा चुका है परन्तु चतुःसंकर से अधिक का संपरीक्षण कभी नहीं किया गया क्योंकि उनमें संख्या बहुत बढ़ जाती है। इस प्रकार से चतुःसंकर की दूसरी पीढ़ी में त्रिसंकर के ६४ अथवा $(३ \times १)^{३}$ की अपेक्षा २५६ अथवा $(३ \times १)^{४}$ प्रकारों की सम्भावना मिलती है। क्रू ने बतलाया है कि उन माता-पिता में जो कि १० एकक गुणों में भिन्न हैं १०,४८,५७६ प्रकारों की सम्भावना होगी। जैसा कि उसने बतलाया है व्यावहारिक संपरीक्षण तथा अभिजनन के लिए दो गुण अथवा एक समय में एक गुण के एकक को लेना ही ठीक होगा, जब तक कि वह युग्मैकगुण दशा में न मिल जाये। ऐसा करने के पश्चात् अन्य गुणों की दृष्टि से भी गणना की जा सकती है।

दसवाँ अध्याय

जाति की बनावट सम्बन्धी बहुत से कारक, जननिक परिवर्तन तथा अन्य बातें

इस समय यह वतला देना आवश्यक है कि वंशानुगति का समस्त चित्रण प्रभावी, अपसारी, निरोधन, अनुपस्थिति तथा उपस्थिति, ग्रथन (लिंकेज) इत्यादि से भले ही जटिल हो गया हो परन्तु उलझनों के अन्त तक हम अव भी नहीं पहुँचे हैं, क्योंकि जटिलता बढ़ाने के लिए वहुसंख्य कारकों (मल्टिपिल फैक्टर्स) का एक अन्य सिद्धान्त है जो कि कुछ संकरणों में प्रकट होता है।

इस समय तक दूसरी पीढ़ी (F_2) कुछ अंशों में अथवा सम्पूर्ण रूप से अपने माता-पिता के आकार से मिलती जुलती थी। परन्तु अब तक जो कुछ हमने अनुभव किया है उसके स्थान पर यह सम्भव है कि इस पीढ़ी में एक माता-पिता के आकार से दूसरे तक अस्पष्ट किन्तु पूर्ण परिवर्तन-क्रम मिले। कासेल द्वारा खरगोशों के कानों पर किये गये संपरीक्षण में हम ऐसा पाते हैं। उन्होंने बेलजियम के एक हेयर डो का जिसके कान ११८ मिलीमीटर लम्वे थे, एक २१० मि० मीटर के लटकते कानोंवाले खरगोश से संकरण किया। इन दोनों का औसत १६४ मि० मी० था। प्रथम जनन (F_1) के पाँच सदस्यों में यही औसत लम्बाई मिलती थी। इनमें से दो, १७० मि० मी० तथा १६६ मि० मी० कान की लम्वाई वालों का संग किया गया। इनकी सन्तति (F_2) के कानों की लम्वाई १६० मि० मी० से १७६ मि० मी० थी। इसमें प्रारम्भिक आकार को पुनः ग्रहण कर लेने की प्रवृत्ति नहीं मिलती जैसा कि अभी तक बतलाये गये उदाहरणों में नियम देखा गया है।

क्रू[1] ने वतलाया है कि वंशानुगति सम्वन्धी मेण्डल के नियम के प्रति इसमें कोई विरोधाभास नहीं प्रकट होता तथा जैसा कि प्रथम दृष्टि से मालूम पड़ता है ऐसा कोई सुझाव ग्राह्य नहीं माना जा सकता कि वंशानुगति सन्ततियों का एक दूसरी में मिल जाना

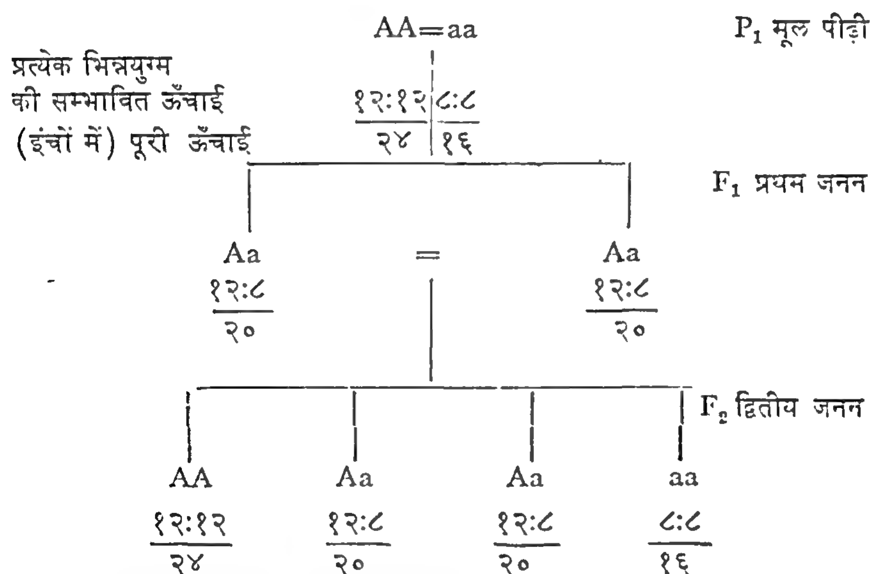
१. क्रू (Crew), पूर्वलिखित, पृष्ठ ५४–५५

साबित किया जा सकता है। गेहूँ के दाने में रंग की वंशानुगति के प्रति अनुसन्धान करके निलसन एहले[1] ने जहाँ पर कि उन्होंने एक छोर से दूसरे छोर तक यही क्रमिक परिवर्तन पाया, इसकी निम्नलिखित व्याख्या की है।

चित्र नं० १०७

कारकों की संख्या अनेक होने पर स्थिति की साधारण व्याख्या

मान लिया जाय कि AA, २४ इंच वाले तथा aa १६ इंच के हैं। यह भी मान लें कि पैत्रिक पीढ़ी (P_1), AA तथा aa जनों द्वारा प्रदर्शित की गयी है, तब --



[यह देखा जायगा कि वास्तविक कद १६ से २४ इंचों तक मिलता है और जननिक बनावट पर आधारित है।]

रंग के उत्पादन में तीन कारक सम्बद्ध हैं। इन तीनों की उपस्थिति से गेहूँ का रंग लाल होता है। परन्तु जब इसमें अपसारी जन्यु (गैमीट) उपस्थित रहते हैं तब गेहूँ सफ़ेद रंग का होता है। जब केवल एक प्रभावी रंग का जन्यु रहता है तो गेहूँ में

१. एच० निलसन एहले, Krevzungsuntersuchungen an Hafer und Weizen, १९०९, पृष्ठ १

कुछ लालपन होता है, जब दो रहते हैं तब अधिक लाल और जब तीन होते हैं तब उससे भी अधिक लाल मिलता है। रंग की गहराई, रंग जन्युओं (गैमीट) के एकत्रित प्रभाव पर आधारित है। इसका अर्थ है कि जब ६ जन्यु होते हैं तो दूसरे जनन (F_2) में एक छोर से दूसरे छोर तक ६ गहराई के रंग मिलते हैं।

कानों की विभिन्न लम्बाई वाले खरगोशों के संकरण में ठीक यही बात होती है, जैसा कि अभी बतलाया गया है। क्रू ने जहाँ माप से सम्बन्ध है इन प्रश्नों से सम्बद्ध सूत्र बतलाया है[1] कि यदि एक सदस्य २४ इंच लम्बा तथा दूसरा १६ इंच लम्बा है, उनका संकरण होता है तथा केवल एक ही ऊँचाई का कारक सम्बन्धित है तब जो वास्तविक ऊँचाई प्राप्त होती है वह १६ से २४ इंच तक के बीच की होती है। किन्तु यदि दो आकार के कारक सम्बन्धित हैं तब सूत्र कुछ अधिक जटिल हो जाता है, जैसा कि साथ में दिये हुए चित्र नं० १०८ से स्पष्ट है।

यह स्पष्ट है कि यह सारा ज्ञान जो हमारे लिए उपलब्ध है, अनेक गुणों के विश्लेषण में अधिक सहायक होता जायगा, मुख्यतः उनके विश्लेषण में जिनका सम्बन्ध माप से है, जैसे मनुष्य का क़द, जिसमें निस्सन्देह एक से अधिक कारक सम्बद्ध हैं। आगे जब हम मनुष्य के क़द का विवेचन करेंगे, तब फिर इसकी चर्चा करेंगे। त्वचा का रंग अनेक पित्र्यकों के परिणाम का एक और उदाहरण है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि काले तथा सफेद के संकरण से मध्यम रंग क्यों मिलता है तथा इन अर्धसंकरों (हाफ़ ब्रीड्ज) के विवाह से बीच के रंग के और भी प्रकार क्यों कर उत्पन्न होते हैं।[2] हो सकता है कि यही चीज बालों के रंग के सम्बन्ध में तथा अस्थियों के कितने ही लक्षणों के सम्बन्ध में भी लागू होती हो।

यह बात समझ में आती है कि अधिक संख्या में विभिन्नता होने से समस्या और भी अधिक जटिल हो जाती है जैसा कि हम मनुष्य में पाते हैं। परिणामतः मनुष्य में वंशानुगति का अध्ययन इतना जटिल है कि यदि हम ठीक-ठीक इन सिद्धान्तों को, इसी से मिलते-जुलते किन्तु साधारण सचेतनों (जीवों) में, पहले तो पौधों में, फिर पशुओं में न देख लेते, तो हम उन नियमों को अपना काम करते हुए कभी नहीं समझ सकते थे और मानव जातियों के जटिल आधारक की व्याख्या, भौगोलिक, सामाजिक

१. क्रू, पूर्व लिखित, पृष्ठ, ५९–६०

२. कोकेन, ई. ए. (Cockayne, E. A.) इनहेरिटेड ऐबनार्मेलिटीज आफ स्किन एण्ड इट्स अपेन्डेजेज, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस लन्दन, १९३३, पृष्ठ ४४

चित्र नं० १०८

दो आकार के कारकों से सम्बन्वित सूत्र की व्याख्या। मान लीजिये एक माता-पिता की सन्तति का कद २४ इंच है तथा दूसरे का १६ इंच और माता-पिता की (P१) पीढ़ी क्रमशः AABB तथा aabb द्वारा बतलायी गयी है तब —

AABB — aabb $\qquad$ P_1 जनन माता-पता की पीढ़ी

प्रत्येक भिन्न युग्म allclomrph का स्वाभाविक क़द। $\qquad$ ६६६६ | ४४४४

इंचों में व्यक्ति का पूरा कद $\qquad$ २४ | १६

AaBb (६४६४ / २०) = AaBb (६४६४ / २०) $\qquad$ F_1 जनन बाद की पहली पीढ़ी

F_2 जनन दूसरी पीढ़ी

१AABB	२AABb	२AaBB	४AaBb	१AAbb	१aaBB	२Aabb	२aaBb	१aabb
६६६६	६६६४	६४६६	६४६४	६६४४	४४६६	६४४४	४४६४	४४४४
२४	२२	२२	२०	२०	२०	१८	१८	१६

[यह देखा जायगा कि १६, १८, २०, २२ से २४ इंचों तक की जो क्रमिक विभिन्नता मिलती है वह दो जोड़े कारकों के आधार पर समझी जा सकती है।]

परिस्थिति तथा शिक्षा द्वारा करके परिस्थितिवादी अब भी अपनी अगणित उपधारणाओं को, किसी के द्वारा खण्डन न किये जाने के कारण, हमारे सम्मुख रखते रहते।

वंशानुगति का जो चित्र हम प्राप्त कर सके हैं वह एक जटिल पच्चीकारी के काम के समान है परन्तु इसमें एक नियम तथा तरीका है जो कि मेण्डल के खोजे हुए नियमों पर आधारित है जिनसे मनुष्यों, पशुओं तथा खेत के पौधों तक का नियन्त्रण होता है।

जननिक परिवर्तन (Genetic Drift)

पशु-प्रसवन का अध्ययन हमें मेण्डल के नियम के एक अन्य आवश्यक सिद्धान्त के समझने में सहायक होता है जो कि मनुष्यों की नस्लों तथा जातियों की उत्पत्ति में महत्त्वपूर्ण है। ऐंगस-एवर्डीन जाति के पशु की चर्चा अभी की जा चुकी है। यह नस्ल प्रथम बार गाय की नार्स तथा केल्टिक जातियों के संकरण से उत्पन्न हुई। नारवे-निवासी अपने पशुओं को स्काटलैण्ड लाये जो कि हलके रंग, बिना सींग वाले, छोटी टाँगों तथा बड़े पेट के थे। केल्टिक पशु काले, सींगदार, लम्बी टाँगों तथा लम्बे शरीर के कारण इनसे भिन्न थे। जब इन दोनों अभिजातियों (ब्रीड्ज) का संग हुआ तथा अंतः प्रसवन हुआ, तो काफ़ी समय बाद अन्य सन्ततियों के योग से, एवर्डीन-ऐंगस की उत्पत्ति हुई। वास्तव में हुआ यह कि नार्स (नारवे के) पशु का मौलिक प्रकार बचा रहा तथा साथ में, जिससे संकरण हुआ, उसका रंग मिल गया। परिणामतः चुनाव के प्रसवन से दोनों प्रारम्भिक प्रकार, जिनसे उसकी उत्पत्ति हुई थी, पूर्णतया समाप्त हो गये।

एवर्डीन-ऐंगस तथा हेयरफोर्ड के संकरण की व्याख्या करते हुए हम बतला चुके हैं कि काले तथा सींग-रहित ९, काले तथा सींगवाले ३, तथा लाल और सींग-रहित ३, लाल और सींगवाले १ के अनुपात में मिलते थे। इनमें से प्रत्येक प्रकार केवल एक शुद्ध सन्तति उत्पन्न करता है।

अगले पृष्ठ के चित्र में प्रत्येक उदाहरण में पित्र्यकों का संयोजन बतलाया है। BB=काले, PP=सींग रहित, bb=लाल तथा pp सींगवाले हैं। इस सम्बन्ध में मानी हुई रीति के अनुसार बड़े अक्षर प्रभावी गुणों को तथा छोटे अपसारी को प्रदर्शित करते हैं।

इस चित्र में यह देखा जा सकता है कि इसमें चार सम-पित्र्यक हैं जो कि सत्य (शुद्ध) प्रसवन करते हैं। इसलिए, हालाँकि प्रारम्भिक प्रकार BB+PP (काले, सींग रहित) तथा bb+pp (लाल, सींगवाले) हैं, फिर भी दो नये प्रकारों bb+pp (लाल सींगवाले) तथा BB+pp (काले, सींगवाले) की उत्पत्ति होती है। इनमें से प्रथम

चित्र नं० १०९

एवर्डीन-ऐंगस तथा हेयरफोर्ड के संकरण से उत्पन्न वाह्य समरूपों (Phenotype) तथा समपित्र्यकों (genotype) की विभिन्नता।

काले, सींगरहित पशु एवर्डीन-ऐंगस हैं। अन्य संकरित पशु हैं।
लाल, सींगवाले पशु हेयरफोर्ड हैं। (शेषांग पृ० १९८ पर)

BB PP	काले पशु विना सींग के ←——			लाल पशु विना सींग के ——→			bb pp
इस भाग में केवल एक, एवर्डीन-ऐंगस, सम पित्र्यक में शुद्ध है परन्तु वाह्य समरूप में सभी शुद्ध हैं।	BB PP	Bb PP	bB PP	bb PP			इस भाग के सब नये प्रकार हैं।
	BB Pp	Bb Pp	bB Pp	bb Pp			
	BB pP	Bb pP	bB pP	bb pP			
इस भाग में सब प्रकार नये हैं।	BB pp	Bb pp	bB pp	bb pp			इस भाग में सब समपित्र्यक तथा वाह्य समरूप में शुद्ध हेयरफोर्ड प्रमाणन हैं।
BB pp	काले पशु सींग वाले ←——			लाल पशु सींगवाले ——→			bb pp

उदाहरण में (bb+pp) हेयरफोर्ड का लाल रंग तथा एवर्डीन-ऐंगस का सींग-रहित होना पूर्ण रूप से पित्रागत है। दूसरे (BB+pp) में वाद के (अवरोक्त) का काला रंग तथा पहले (पूर्वोक्त) का सींग पित्रागत है।

यह सिद्धान्त जिसमें कि एक प्रसंकर (Hybrid) किसी जाति से लिये गये एक गुण के लिए युग्मैकगुणी हो जाता है तथा दूसरे में दूसरा हो जाता है, जननिक परिवर्तन कहलाता है। इसमें गुण अपने प्रारम्भिक आधारों या आश्रयस्थानों से भिन्न हो जाता है। प्रसवन में यह एक महत्त्वपूर्ण कारक है जिसका कारण मनमाना चुनाव अथवा पित्र्यकों के पृथक्करण के अन्य कारण हो सकते हैं।

इन तथ्यों से हम निश्चित नियमों की स्थापना कर सकते हैं जो मनुष्यों के नये प्रकारों तथा पशुओं में नयी नस्लों की उत्पत्ति में समान रूप से कार्य करते हैं।

उदाहरणार्थ हम कह सकते हैं कि यदि दो जातियाँ होतीं जिनमें केवल एक ही गुण की विभिन्नता होती तब कोई नये प्रकार की उत्पत्ति नहीं हो सकती थी। उदाहरण के लिए यदि हम मान लें कि ऐटलाण्टिक तथा नार्डिक चेहरे में मुख्य विभिन्नता केवल प्रथम के काले केश तथा बाद वाले के स्वर्ण-केशों की है, तब हम कह सकते हैं कि काले केशोंवाले ऐटलाण्टिक तथा हलके रंग के केशोंवाले नार्डिक में संकरण होने पर एक नये प्रकार की उत्पत्ति असम्भव होगी। परन्तु यदि हम ध्यान रखें कि उनमें वास्तविक दो जोड़े मुख्य गुणों के हैं जिनमें विभिन्नता मिलती है, जैसे कि केशों का रंग तथा चेहरे की लम्बाई, तो यह स्पष्ट है कि यदि प्रसवन को नियन्त्रित रखा जाय तो इन दो जातियों से दो की नयी उत्पत्ति हो सकती है, जिनमें से एक के तो काले केश तथा लम्बे चेहरे होंगे और दूसरे के स्वर्ण-केश तथा माध्यमिक लम्बाई के चेहरे होंगे।

इस परिणाम को सरल बनाने के लिए तथा केवल शुद्ध सैद्धान्तिक प्रदर्शन के लिए चित्र नं० ११० उन दो मानव जातियों के संकरण के मुख्य परिणामों को चित्रित करता है जिनमें केवल केश तथा चेहरे के आकार की विभिन्नता पायी जाती है। सत्यता यह है कि अपने जननिक रूप में दशा वस्तुतः इससे कहीं अधिक जटिल है। इसे प्रदर्शित

(पृ० १९७ का शेषांश)

इस चित्र में समपित्र्यकों में जितने तारका-चिन्हित हैं वे नये प्रकार हैं जो शुद्ध प्रसवन करेंगे।

समकोण चतुर्भुजों के अन्दर वन्द सम पित्र्यक शुद्ध पैत्रिक पीढ़ियाँ हैं जो कि शुद्ध प्रसवन करती रहेंगी।

करने के लिए दिये हुए मानचित्र से कहीं अधिक जटिल चित्र की आवश्यकता पड़ेगी क्योंकि यह स्पष्ट है कि केशों का रंग, साथ ही सम्भवतः चेहरे की लम्बाई भी, एक जोड़ा पित्र्यकों की अपेक्षा अधिक पर आधारित है। तिस पर भी चाहे जो हो इन सबका जो परिणाम निकलेगा, वह सिद्धान्ततः जैसा कि इस चित्र से पता चलता है, उससे भिन्न न होगा, यद्यपि यह उससे कहीं अधिक जटिल होगा——इतना जटिल कि वास्तव में इस स्थान में इसका प्रदर्शन नहीं किया जा सकता।[1]

हम यह सुझाव नहीं दे रहे हैं कि ये दोनों जातियाँ केवल इन्हीं दोनों गुणों में एक दूसरे से भिन्न हैं। उनमें विभिन्नता अनेक गुणों में पायी जाती है, जैसे कि ऐटलाण्टिक जातिवालों का अधिक लम्बा कद तथा गठा हुआ शरीर, अधिक चौकोर जबड़ा, गाल की ऊँची हड्डियाँ तथा अधिक मात्रा में बालों का लालपन। फिर भी मुख्यतः ब्रिटिश द्वीप, जर्मनी तथा स्वीडेन में होनेवाले सम-पित्र्यकों के संयोजन के प्रकारों को सरल रीति से समझने के लिए यह चित्र पर्याप्त होगा, बशर्ते कि वहाँ पर ऐटलाण्टिक तथा नार्डिक जातियों में होनेवाले प्रसंकरण में इन दो गुणों का ही ध्यान रखा जाय और सम्बन्धित अन्य अनेक कारकों की सम्भावना की अवहेलना कर दी जाय।

यदि दो जातियाँ तीन गुणों में भिन्न होती हैं तब दो नये प्रकारों की अपेक्षा छः की उत्पत्ति होती है तथा यदि उनमें चार गुणों की विभिन्नता हो तब १४ नयी सन्ततियां (ब्रीड्ज) मिलती हैं तथा इसी प्रकार से आगे समझना चाहिए।

यह सिद्धान्त, जिससे ज्ञात होता है कि एक तथा दूसरी जाति के संकरण से नये प्रकार की उत्पत्ति हो सकती है, चाहे वह पशु हो अथवा मनुष्य, वर्तमान मानव समाज के जाति-विज्ञान की व्याख्या के लिए महत्त्वपूर्ण कुंजी है, जैसा कि हम आगे इन समस्याओं पर अधिक विस्तार से विचार करते समय देखेंगे।

इस अवस्था में इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाना आवश्यक है कि जहाँ संकरण किये जानेवाले समाज के व्यक्तियों की संख्या बहुत थोड़ी है तथा जहाँ आकस्मिक पृथक्करण द्वारा वे पृथक् समूहों में बिखरे हैं, वहाँ यह कहा जा सकता है कि जो संततियां बच रहती हैं, वे बिलकुल ही पैत्रिक सन्ततियाँ न हों वरन् वे नये स्थायी प्रकार हैं। प्रारम्भिक मनुष्य ऐसे ही छोटे समुदायों से सम्बन्धित था जो अक्सर बड़े क्षेत्रों द्वारा एक दूसरे

१. सम्बद्ध पित्र्यकों की संख्या के अनुसार समपित्र्यकों की संख्या तथा अनुपात उससे भिन्न होगा, जैसा कि हमने इस सीधे साधारण उदाहरण में दिखाया है।

से पृथक् थे, इसलिए आकस्मिक संकरण में पित्र्यकों के नये संयोजन से बचे हुओं का पारेषण होता था, और उन पीढ़ियों में जाति की पुरानी सन्ततियाँ नष्ट होती गयीं। इस क्रिया को जननिक परिवर्तन (जेनेटिक ड्रिफ्ट) कहते हैं, क्योंकि एक जाति के पित्र्यक इस तरह दूसरी में चले जाते हैं।

चौड़े कपालवाले काकेसायड तथा जननिक परिवर्तन

हमारे मत से, जैसा कि आगे हम विस्तार से व्याख्या करेंगे, काकेसायड जातियों में अल्पाइन, डाइनारिक, आर्मीनायड तथा पूर्वी बाल्टिक जातियाँ इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई हैं, जिनमें चौड़े कपाल, रक्त समूह, तथा कुछ अन्य गुण मंगोलायड से काकेसायड लोगों में स्थानान्तरित हो जाने से ये नयी जातियाँ बन गयी हैं जिन्हें हम जाति की नयी नस्लें कहकर मूल जातियों से भिन्न दिखलाना ठीक समझते हैं।

फिर भी, जननिक परिवर्तन ही केवल एक कारक नहीं, जो इसके पीछे काम करता रहता है। संकरण के पश्चात् जननिक परिवर्तन उन समुदायों में से, जिनमें परस्पर संकरण होता है, विभिन्न नये प्रकारों को जन्म देता है। इन अनेक नये प्रकारों में से अन्त में यदि केवल एक बच रहता है, तो इसका कारण अन्य प्राकृतिक नियमों का प्रभाव ही है। इनमें सबसे अधिक शक्तिशाली है प्राकृतिक चुनाव का नियम। बहुधा इसमें निश्चित रूप से यथानुरूप मिलन भी सहायक होता है।

जब कि इस प्रकार नये प्रकारों की उत्पत्ति होगी ही, जहाँ भौगोलिक तथा सामाजिक दशाएँ उपयुक्त हों तथा काफी लम्बा समय भी सापेक्षिक पृथक्करण के लिए हो, जिससे कि नयी सन्ततियों की स्थापना की जा सके। वे दशाएँ जो कि प्रागैतिहासिक काल से नहीं मिलीं, यह आवश्यक नहीं कि वे मूल पैत्रिक पीढ़ियों को दबा दें जिनसे उनकी उत्पत्ति हुई है। हाँ, यदि जलवायु की स्थिति नये प्रकारों के लिए अधिक उपयुक्त हो तथा अन्य कारक प्राकृतिक चुनाव के लिए अधिक अनुकूल हों तो बात दूसरी है। जैसा कि हमने अन्य किसी स्थान पर बतलाया है, समान की समान से संग करने की प्रवृत्ति मिलती है। इसका अभिप्राय यह है कि एक प्राकृतिक प्रेरणा के कारण, उदाहरण के लिए अभी बतलाये गये सूत्र में वर्णित सन्ततियों में, एक साफ़ रंग, लम्बे चेहरेवाले व्यक्ति में उसी प्रकार के व्यक्ति से विवाह करने की प्रवृत्ति मिलेगी और चूँकि ये अपसारी गुण हैं, ये पूर्ण शुद्धता में मिलते जाते हैं। जब कि ऐटलाण्टिक प्रकार के उदाहरण में (काले केश तथा माध्यमिक लम्बा चेहरा) ये गुण प्रभावी हैं, उन लोगों की अधिक संख्या के मध्य में शुद्ध रूप में तथा संकरण के रूप में भी, सन्तति को बनाये रखने में कोई कठिनाई नहीं पड़ती। दबाने की जान-बूझ कर की गयी चेष्टा

चित्र नं० ११०

ऐटलाण्टिक तथा नार्डिक के संकरण से सम्बद्ध समरूपों तथा समपित्र्यकों की विभिन्नता का एक सरल सैद्धान्तिक उदाहरण, जिसमें यह मान लिया गया है कि प्रत्येक वाह्य समरूपी गुण बहुत से पित्र्यकों के बजाय केवल एक जोड़े के कारण है।

ऐटलाण्टिक जाति $\frac{BB}{MM}$ से प्रदर्शित है।

जहाँ पर B B काले केशों के लिए प्रभावी है, तथा M M माना हुआ प्रभावी है जिससे केवल मध्यम लम्बाई के चेहरे से अभिप्राय है।

नार्डिक जाति $\frac{bb}{mm}$ से प्रदर्शित है, जिसमें b b अपसारी स्वर्ण-केश तथा M M माना हुआ अपसारी लम्बा चेहरा है।

	काले केश, माध्यमिक चेहरा			स्वर्ण केश, माध्यमिक चेहरा	
ऐटलाण्टिक जातीय प्रकार; केवल एक चतुर्भुज के अन्दर घिरा, शुद्ध प्रसवन	B B M M	Bb MM	bB MM	bb* MM	नये प्रकार, केवल एक, * चिह्न द्वारा सूचित, शुद्ध प्रसवन।
	BB Mm	Bb Mm	bB Mm	bb MM	
	BB mM	Bb mM	bB mM	bb mM	
नये प्रकार, केवल एक, *चिह्न द्वारा सूचित शुद्ध प्रसवन	BB mm	Bb mm	bB mm	b b m m	नार्डिक जातीय प्रकार, शुद्ध प्रसवन [illegible]।
BB mm	काले केश, लम्बा चेहरा			स्वर्ण-केश, लम्बा चेहरा	bb mm

अथवा केवल बीमारी तथा परिस्थिति की प्रतिकूल दशाओं आदि से ही दोनों प्रारम्भिक जातियाँ पूर्ण रूप से मिटायी जा सकती थीं।

गुणों में अधिक विभिन्नता होने से न केवल नये प्रकारों की संख्या बढ़ती है परन्तु इसकी भी सम्भावना कम होती जाती है कि मिश्रित आधारक में से शुद्ध नस्ल का कोई व्यक्ति मिले। यदि ऐसी दो जातियों या नस्लों से संकरण बने हैं जो केवल एक गुण में ही विभिन्न हैं, तब चौथाई वर्ग के अतिरिक्त, जो कि अपने अपसारी माता-पिता की भाँति शुद्ध प्रसवन करेगा, शेष में से (जो प्रभावी माता-पिता से मिलते जुलते हों) तीन में केवल एक ऐसा होगा जो शुद्ध प्रसवन करेगा। परन्तु जहाँ पर संकरण के व्यक्तियों में दो प्रभावी गुण हों वहाँ समूह के ९ में से केवल १, जो कि अपने प्रभावी माता-पिता की भाँति है, शुद्ध प्रसवन होगा। यदि ३ गुण हों तब २७ में १ तथा यदि ४ गुण हों तब ८१ में १ शुद्ध होगा; इसी प्रकार आगे भी समझना चाहिए।

हम नीले एंडालूसियन के उदाहरण में देख चुके हैं कि प्रथम जनन में काले के स्थान पर नीला प्रभावी था। इसी कारण चूँकि इसने पूर्ण रूप से अपने को प्रकट नहीं किया, इस उदाहरण में हम काले पित्र्यक को अपूर्ण प्रभावी कहते हैं। इसी प्रकार की क्रिया हम कुछ पशुओं में भी देख चुके हैं। इस तरह जब काले तथा लाल पशुओं का संग होता है, तब संकरज काले होते हैं। परन्तु यदि यह मेल लाल तथा श्वेत पशुओं में होता तो सन्तति लाल होती, जब कि यदि माता-पिता काले तथा श्वेत होते तब परिणाम स्वरूप नीला पशु होता।

यहाँ पर हमारे समक्ष ठीक उसी प्रकार की क्रिया उन अपूर्ण प्रभावी गुणों में काम करती है जो श्वेत तथा काले वर्गों के मनुष्यों के संकरण में पाये जाते हैं। जहाँ तक कि श्वेतों तथा नीग्रो लोगों के प्रसंकर का सम्बन्ध है, प्रथम पीढ़ी (मुलैटो) काली नहीं होती (हालाँ कि यह रंग प्रभावी है) परन्तु इन दोनों के बीच का रंग मिलता है। हम इसलिए चुने हुए अभिजनन द्वारा काले तथा श्वेत रंगों का प्रसवन करा सकेंगे तथा यही अनेक उदाहरणों में होता है। बाद में हम मनुष्य की इस वंशानुगति से प्राप्त रंग के प्रश्न की तथा सम्बन्धित अनेक कारकों की पूर्ण रूप से व्याख्या करेंगे, इसलिए इस स्थान पर अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं।

जातियों के अंत:प्रसवन के सम्बन्ध में यह याद रखना चाहिए कि किसी व्यक्ति में एक जोड़ा भिन्नयुग्म-पित्र्यकों से अधिक की पित्रागति नहीं हो सकती, उसके पूर्वज चाहे जितने मिश्रित क्यों न हों। इसलिए एक धूसर (Grey) घोड़े की उत्पत्ति ऐसे पूर्वजों से भले ही हुई हो जिनमें चेस्टनट (गहरा लाल), काला, बे (लाल सा भूरा), डन (मटमैला सा) तथा धूसर आदि रंगों का मेल रहा हो, परन्तु यदि यह शुद्ध धूसर

न होकर प्रसंकर है तो इसमें केवल धूसर तथा एक और किसी रंग के ही पित्र्यक हो सकते हैं[1]।

अब यह समझा जा सकता है कि यदि कोई मनुष्य चाहे जितने भिन्न-जात या मिश्रित पूर्वजों, उदाहरण के लिए नीग्रो, श्वेत, पीले तथा एमेरिंड पूर्वजों, से उत्पन्न हुआ हो, तो उसे इन सभी जातियों के पित्र्यक वंशानुगति से प्राप्त नहीं हो सकते वल्कि केवल दो ही प्राप्त होंगे। प्रकृति का ध्येय समस्त प्रसवन जगत में से छाँटना तथा ऐसा करके उस जटिलता को कम करना मालूम होता है जिसे मनुष्य, प्रकृति के नियमों के अज्ञान वश, वढ़ाता रहा है।

जातियों के बनने के प्रक्रिया-सम्बन्धी अन्य विचार

वंशानुगति की प्रक्रिया, न केवल ऐसे स्पष्ट गुणों का, जैसे कि त्वचा, आँखों, केशों के रंग, कपाल, कद तथा चेहरे के आकार आदि का, ही नियंत्रण करती है वल्कि अन्य

१. जेम्स विलसन (James Wilson) पूर्वकथित, पृष्ठ ४० में इसको प्रदर्शित करते हुए कहते हैं कि "एक चेस्टनट रंग के घोड़े का यदि पूर्ण काले से, जिसमें काला प्रभावी है, संग किया जाय तो सन्तति काली होती है, हालाँ कि उसके माता-पिता म काला तथा चेस्टनट दोनों ही रंग हैं। इस काले प्रसंकर का यदि शुद्ध वे (Bay) रंग वाले से संग किया जाता है जिसमें भूरा केवल गहरी छाया के रूप में है तथा वे रंग, काले तथा भूरे दोनों में प्रभावी है, तव सन्तति वे रंग की होती है, हालाँ कि वे माता-पिता के कारण वे रंग तथा काले माता-पिता से काला या चेस्टनट होने की सम्भावना है। यदि यह प्रसंकर वे शुद्ध डन (Dun) से मिलाया जाता है तथा डन भी वे, काले तथा चेस्टनट की अपेक्षा प्रभावी है, तव सन्तति डन होगी, यद्यपि डन माता-पिता के कारण डन अथवा काले या चेस्टनट, जो भी वे को अपने काले माता-पिता से मिला, दोनों होने की सम्भावना थी। अन्त में यदि डन प्रसंकर को शुद्ध धूसर से मिलाया जाता है तथा धूसर अन्य चार रंगों से प्रभावी है तव सन्तति धूसर होगी, जिसमें, धूसर माता पिता के कारण, धूसर रंग तथा डन अथवा अन्य रंगों में से जो भी रंग उसे वे माता-पिता से मिला था, वह रंग निश्चित हो गया हो। घोड़ा इन पाँचों रंगों में से किसी रंग का हो सकता है परन्तु उसमें एक समय में दो रंग के प्रभाव से अधिक नहीं मिल सकते।" घोड़ों में वालों के रंग के अध्ययन के लिए सी० सी० हर्स्ट (C. C. Hurst), एक्सपेरीमेन्ट्स इन जेनेटिक्स, कैम्ब्रिज, पृष्ठ २३९ देखिए

बहुत से ऐसे गुणों का भी जो कि अभी तक परिस्थिति के परिणाम समझे जाते थे। हम दिखला चुके हैं कि कद वंशानुगति पर आधारित है, परन्तु यह उन गुणों में से एक है जो कि परिस्थिति द्वारा प्रभावित होते हैं, कारण यह है कि इसमें केवल वृद्धि का प्रश्न है इसलिए इसका नियन्त्रण ठीक उस तरह से नहीं किया जा सकता, जिस तरह से अन्य गुणों का। तात्पर्य यह कि कोई मनुष्य यदि लम्बे कदवाली नस्ल का हो, तो भी उसके पूर्ण विकास को हम अ-पौष्टिक खुराक द्वारा रुद्ध कर सकते हैं। दूसरी ओर जाति चूँकि नियन्त्रित करनेवाली मुख्य वस्तु है, इसलिए किसी प्रकार की भी अच्छी परिस्थितीय दशाएँ छोटे कद की जाति के मनुष्य को लम्बे कदवाली जाति के सबसे ऊँचे मनुष्य का मुकाबला करने योग्य नहीं बना सकतीं। अतः अपेक्षा की जा सकती है कि इस प्रकार के गुण पित्रागति नियम (मेण्डेलियन ला) द्वारा नियन्त्रित होते हैं। आगे हम काफ़ी स्थान, परिस्थिति तथा जाति के समस्त प्रश्न को देंगे। इसलिए यह आवश्यक नहीं कि उस विषय को यहाँ विस्तार से बताया जाय। यहाँ पर साधारण सिद्धान्तों को प्रदर्शित करने के लिए इसी से मिलते-जुलते ब्रिटिश गायों के उदाहरण की ओर ध्यान आकर्षित करना पर्याप्त होगा।

ब्रिटिश गायें तीन श्रेणियों में मिलती हैं जिनको कि सबसे अधिक दूध देनेवाली, माध्यमिक तथा सबसे कम दूध देनेवाली गायों की श्रेणी कह सकते हैं। यह देखा गया है कि सबसे अधिक तथा सबसे कम दूधवाली श्रेणी विभिन्न पित्र्यकों के कारण तथा माध्यमिक श्रेणी प्रसंकर के कारण है। इसलिए एक सी दशाओं में रहते हुए, तथा जहाँ अच्छे पशुओं पर प्रतिकूल परिस्थिति का बुरा प्रभाव नहीं पड़ने पाता, निम्नलिखित[1] पित्रागति सिद्धान्त का प्रदर्शन मिलता है।

यह भी देखा गया है कि प्रतिशत मक्खन के कम अथवा अधिक होने के गुणों का पारेषण होना वंशानुगति पर आधारित है। माता-पिता दोनों ही उन गुणों को पारेषित करते हैं जो कि अनेक कारकों[2] द्वारा नियन्त्रित हैं।

यह सब हमारे समक्ष होते हुए हमें यह समझ लेना चाहिए कि मनुष्य तथा पशुओं का प्रत्येक गुण पित्रागति सिद्धान्त (मेण्डेलियन सिद्धान्त) पर आधारित है। इसलिए

१. जेम्स विलसन (James Wilson) पूर्व कथित, पृष्ठ ४५

२. जे० डब्लू० गोवेन (J.W. Gowen) इनहेरिटेन्स आफ़ मिल्क यील्ड एण्ड बटर फैट परसेन्टेज इन क्रासेज आफ़ डेरी एण्ड बीफ़ ब्रीड्स आफ़ कैटल, जर्नल आफ़ हेरेडिटी, II, पृष्ठ ३०० तथा ३६५

उनके ऐसा होने में आश्चर्य न होना चाहिए जैसा हम बाद में अधिक विस्तार से देखेंगे, यहाँ तक कि हम देखेंगे कि न केवल प्राकृतिक गुण ही वरन् मानसिक गुण भी निःसन्देह और शायद मुख्य रूप से वंशानुगति पर आधारित हैं। वास्तव में जननिक विद्या के आधार पर हम उन चीजों को समझना आरम्भ कर सकते हैं जिन्हें अन्य प्रकार से समझना कठिन है।

चित्र नं० १११

दूध देनेवाली ब्रिटिश गायों में दूध उत्पादन का वंशानुगत आधार

गायों (या बैलों) की श्रेणी	उन गायों या बैलों की श्रेणी जिनसे उन का संग कराया जाय	सन्तति की उत्पत्ति		
		सबसे अधिक दूध वाली श्रेणी	माध्यमिक श्रेणी	सबसे कम दूध वाली श्रेणी
सबसे अधिक	सबसे अधिक	१०० %	० %	० %
सबसे अधिक	माध्यमिक	५० %	५० %	० %
सबसे अधिक	सबसे कम	० %	१०० %	० %
माध्यमिक	माध्यमिक	२५ %	५० %	२५ %
माध्यमिक	सबसे कम	० %	५० %	५० %
सबसे कम	सबसे कम	० %	० %	१०० %

[स्पष्ट है कि ऊपर की तालिका में मेण्डल के अनुपात मिलते हैं। सबसे अधिक तथा सबसे कम उत्पादन भिन्न पित्र्यकों के कारण है तथा मध्य का उत्पादन प्रसंकर के कारण है।]

इसलिए मेण्डल के सिद्धान्त के आधार पर, उदाहरणार्थ, हम यह भी समझ सकते हैं कि क्यों ऐसे माता-पिता जो कि देखने में पूरी तरह से ठीक और अन्य लोगों की तरह हैं, कभी कभी क्षीणमस्तिष्क, गूंगी-बहरी, धवलांग (एलविनोज) तथा अन्य असाधारण गुणोंवाली सन्तान उत्पन्न करते हैं। इसकी व्याख्या यही है कि हालाँ कि माता-पिता प्रत्यक्ष रूप में साधारण हैं परन्तु वे युग्मैकगुणी (होमोजाइगस) न होकर युग्मानेक-गुणी (हेटरोजाइगस) हैं और वे अपसारी रूप में इनमें से किसी कमी को अपने साथ लिये रहते हैं। परिणामतः उसी अपसारी कमीवाले दो जनों में अन्तर्विवाह होने पर उनके ऐसे वच्चों की उत्पत्ति होती है जो वाह्य समरूप तथा समपित्र्यक दोनों में अपसारी गुणवाले होते हैं और यह गुण, हो सकता है कि, पीढ़ियों से परिवार में न दिखलाई पड़ा हो। यही कारण है कि समीप के रिश्तेदारों में विवाह, जिनके वर्ग या मूल वंश (स्टाक) किसी भी रूप से दोषी हैं, दुर्भाग्यजनक होते हैं क्योंकि इससे ऐसे अवांछनीय संयोजनों की सम्भावना बढ़ जाती है। अन्तःप्रसवन से पैदायशी विद्वान होने की सम्भावना बढ़ जाती है तथा इससे लुकी-छिपी अज्ञता की उत्पत्ति की भी सम्भावना दुगुनी हो जाती है।

इनकी, तथा प्रकृति में वंशानुगति की प्रक्रिया के हमारे ज्ञान से उत्पन्न अन्य विचारों की, व्याख्या समय आने पर की जायगी। परन्तु इन नियमों का अर्थ तो बिलकुल स्पष्ट है जिनका प्रयोग मेण्डल ने प्रथम वार पौधों में करके देखा तथा वाद के कार्यकर्ताओं ने मक्खियों, चूहों, गिनी सुअरों और फिर कुक्कुटादि में, मवेशियों में तथा घोड़ों में प्रयुक्त कर विकसित किया और इसका सम्वन्ध मनुष्य के साथ, एक व्यक्ति की भाँति तथा जाति के सदृश सचेतन इकाई के सदस्य होने की भाँति भी देखा। इसीलिए जाति-विज्ञान को सबसे प्रथम तथा हमेशा के लिए जननिक विद्या पर आधारित करना चाहिए जिसका पूर्ण ज्ञान तब तक नहीं प्राप्त किया जा सकता जब तक कि हम मनुष्य के तथा जातियों के जननिक शास्त्र का अध्ययन करने के पूर्व पौधों तथा पशुओं के जननिक विज्ञान का अध्ययन न कर लें।

ग्यारहवाँ अध्याय

ग्रथन का विषय

पिछले किसी अध्याय में जो कुछ कहा गया है, जिसमें ग्रथन (लिंकेज) का भी उल्लेख किया गया था, उससे स्पष्ट है कि यदि एक ही पित्र्यसूत्र में वहुत से कारक (पित्र्यक—जीन्स) हों तथा पित्र्यसूत्र का वर्ताव एक पूर्ण एकक के समान हो, तो यह परिणाम निकलता है कि उस पित्र्यसूत्र से सम्वद्ध सभी कारक अथवा पित्र्यक उस से जुड़े हुए हैं और इस प्रकार वे एक दूसरे से ग्रथित हैं।

परिणामतः, जैसा कि हम देख चुके हैं, कुछ कारक (फैक्टर्स) ऐसे होते हैं जो आपस में जुड़े रहते हैं। जो भी परिस्थिति हो, ऐसा होना चाहिए, यह स्पष्ट है। उदाहरण के लिए ड्रोसोफीला मेलानोजास्टर[१] में केवल आठ पित्र्यसूत्र होते हैं परन्तु उसमें सैकड़ों मेण्डल के कारक आ जाते हैं। परिणामस्वरूप उन पित्र्यकों को, जो इन कारकों के आधार हैं, आठ पित्र्यसूत्रों के साथ सामूहिक रूप से सम्वद्ध होना चाहिए। लैन्सफील्ड (Lancefield)[२] ने वतलाया है कि ड्रोसोफीला आव्सक्योरा[३] में जिसके पाँच जोड़े पित्र्यसूत्र हैं, पाँच ग्रथित समूह हैं। मेज़[४] ने भी देखा है कि ड्रोसोफीला विलिस्टोनी (Drosophila Willistoni) के तीन जोड़े पित्र्यसूत्रों के समकक्ष ग्रथित गुणों के भी तीन समूह पाये जाते हैं।

१. Drosophila Melanogaster

२. डी० ई० लैन्सफील्ड (D. E. Lancefield), "लिंकेज रिलेशन्स आफ़ दि सेक्स-लिंक्ड कैरेक्टर्स इन ड्रोसोफीला आव्स्क्योरा" जेनेटिक्स ७, १९२२, पृष्ठ ५३५

३. Drosophila Obscura

४. सी० डब्लू० मेज़ (C. W. Metz), "क्रोमोसोम स्टडीज़ इन दि डिप्टेरा, आइ० ए० प्रिलिमिनरी सर्वे आफ़ फाइव डिफरेन्ट टाइप्स आफ़ क्रोमोसोम ग्रुप्स इन दि जीनस ड्रोसोफीला" जर्नल, एक्स, ज़ूलोजी १७, पृष्ठ ४५

लिंग-ग्रथन (सेक्स लिंकेज)

ग्रथित पित्रागति का प्रश्न मुर्गियों के प्रसवन के सम्वन्ध में न केवल ठीक प्रकार से देखा गया, परन्तु यह वाणिज्य के लिए काफ़ी महत्त्व का है, जहाँ पर कि दूसरे गुण के साथ लिंगसम्बन्ध मिलता है। इस सम्वन्ध को हम लिंग-ग्रथन कहते हैं।

हमने मादापन का कारक X X से तथा नर का Y से प्रकट किया है। इस प्रकार एक नर की कारकीय बनावट X Y है। ये गुण वास्तव में केवल पित्र्यक के ही नहीं होते बल्कि स्वयं पित्र्यसूत्रों के होते हैं। मान लिया जाय कि हम एक लाल आँखवाली मादा पोमेस मक्खी का श्वेत आँखवाले नर से संकरण करते हैं। यह देखा जायगा कि संकरण के उपरान्त लाल आँखवाली मक्खी की उत्पत्ति होती है तथा आगे के अन्तः-प्रसवन में दूसरी पीढ़ी में लाल तथा श्वेत मक्खियों की उत्पत्ति होती है किन्तु प्रत्येक श्वेत आँखवाला नर होगा। श्वेत आँखवाले बाबा ने श्वेतपन को केवल पोतों की ओर ही बढ़ाया है, पोतियों की ओर बिलकुल नहीं। इस घटना के होने के कारण की व्याख्या यह है कि श्वेत आँखों के अपसारी पित्र्यक, अपसारी रूप से X पित्र्यसूत्र में होते हैं। यह (wX) द्वारा प्रदर्शित किया गया है। लाल आँखों के पित्र्यक भी एक X पित्र्यसूत्र के होते हैं जो कि WX हैं इसलिए, लाल आँखोंवाली मादा की बनावट (WX) (WX) है। (लाल पित्र्यक, X पित्र्यसूत्र में स्थित हैं) तथा श्वेत आँख के नर की बनावट (wX) (Y) है—श्वेत आँखों का अपसारी गुण X पित्र्यसूत्र तथा नर के लिए Y पित्र्यसूत्र जिसमें कि आँखों के रंग के लिए कोई पित्र्यक नहीं है।

वे पैत्रिक जनन (P_1) हैं। संकरण करने पर दूसरे जनन में लाल आँखवाले मादा तथा नर क्रमशः (WX) (wX) तथा (WX) (Y) बनावट के होंगे। जब इनका अंतःप्रसवन होता है तब अगले जनन (F_2) में

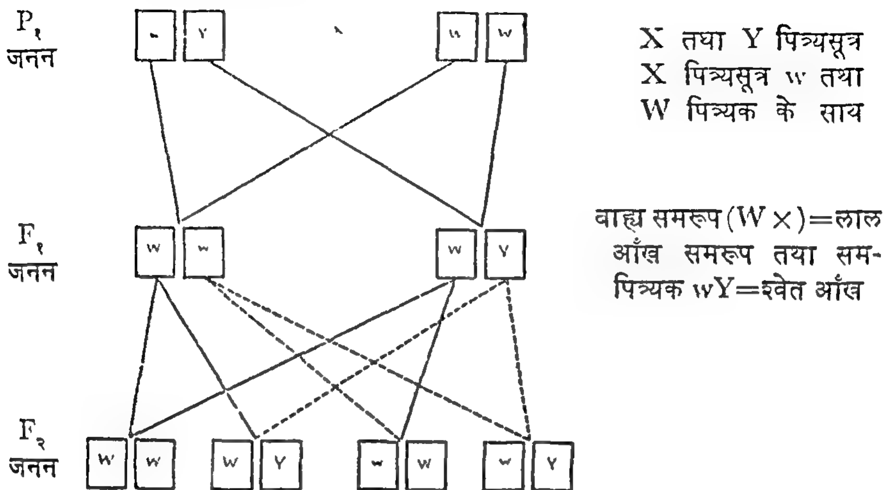
१ लाल आँख वाली मादा (WX) (WX)
१ लाल आँख वाली मादा (wX) (WX)
१ लाल आँख वाला नर (WX) (Y)
१ श्वेत आँख वाला नर (wX) (Y) मिलता है।

इसका चित्रण चित्र नं० ११२ में किया गया है।

पित्रागति की इस विधि की खोज प्रथम बार बिल्ली तथा मनुष्यों में हुई थी परन्तु जब तक ड्रोसोफीला के सम्वन्ध में इसकी जाँच भली-भाँति नहीं कर ली गयी, तब तक इसका मतलब पूर्ण रूप से समझ में नहीं आ सका था।

चित्र नं० ११२

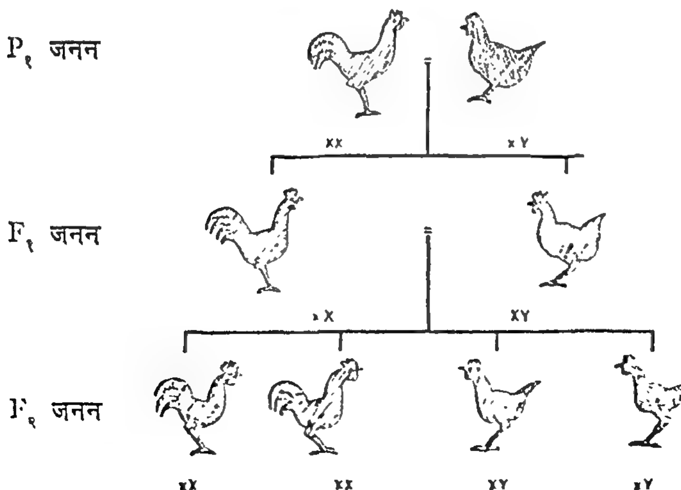
श्वेत आँखोंवाले नर का संकरण लाल आँखोंवाली मादा से



W=लाल आँखोंवाले प्रभावी पित्र्यक जो X-पित्र्यसूत्र में मिलते हैं।
w=श्वेत आँखोंवाले अपसारी पित्र्यक जो X-पित्र्यसूत्र में मिलते हैं।

चित्र नं० ११३

बार्ड राक (Barred rock) मुर्गा तथा ब्लैक आरपिंगटन मुर्गी का संकरण



लिंग के लिए नर में XX की तथा मादा में XY की बनावट होती है। बार्स (Bars) के लिए X प्रभावी है। काले के लिए x अपसारी है।

एक दूसरे प्रकार का लिंग-ग्रथन होता है जिसमें मादा की बनावट XY पित्र्यसूत्रों की तथा नर की XX की होती है। ऐसा मुर्गे-मुर्गियों आदि में होता है, जैसा कि चित्र नं० ११३ में बार्ड राक मुर्गा तथा ब्लैक आरपिंगटन मुर्गी के संकरण में दिखलाया गया है।

लिंग-ग्रथित Y-पित्र्यसूत्र पित्रागति

न केवल यही दिखला दिया गया है कि लिंग-ग्रथन में गुण X-पित्र्यसूत्र में स्थित होते हैं परन्तु हाल में ही यह खोज की गयी है कि एक दूसरा तरीका भी है जिसमें Y पित्र्यसूत्र भी गुण का परिवहन करते हैं। इसे **लिंग-ग्रथित Y-पित्र्यसूत्र पित्रागति** कहते हैं। इसलिए अब यह नहीं माना जा सकता कि Y-पित्र्यसूत्र में पित्र्यक नहीं मिलते। वास्तव में पशुओं तथा पौधों में यह दिखलाया जा चुका है कि Y-पित्र्यसूत्रों में पित्र्यक मिलते हैं।[१]

Y-पित्र्यसूत्र में एक प्रभावी पित्र्यक केवल नरों को प्रभावित करेगा। ऐसे नर असामान्य गुण अपने वंश के नरों को देते जायँगे। मादा में Y-पित्र्यसूत्र न होने के कारण वह ऐसे गुण पारेषित नहीं कर सकती।

ऐसा प्रतीत होता है कि जुड़े हुए अँगूठे पित्रागति की इस विधि के कारण होते हैं जैसा कि पृ० २१२ के वंशक्रम[२] से ज्ञात होता है।

लिंग-ग्रथन की व्याख्या समाप्त करने के पूर्व हम लिंग-सीमित पित्रागति का कुछ वर्णन करेंगे जिसकी कुछ बातें लिंग-ग्रथन से सम्बन्धित हैं। स्टर्न[३] ने यह सुझाव दिया है कि Y-पित्र्यसूत्र में प्रभावी गुण का एक निरोधक पित्र्यक होता है। कुछ उदाहरणों में एक लिंग के व्यक्ति में ही किसी गुण के प्रकट होने का यही कारण होगा।

कोकेन ने बतलाया है[४] कि नर में लिंग-सीमित गुण प्रभावी हो सकता है परन्तु मादा में यह अपसारी होगा। इस प्रकार नर की DD बनावट में, जो कि प्रभावी तथा युग्मैक-

१. ई० ए० कोकेन (E. A. Cockayne), 'इनहेरिटेड एबनार्मेल्टीज आफ़ दि स्किन एण्ड इट्स एपेन्डेजेज', आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन, १९३३, पृष्ठ १६

२. आर० शोफील्ड (R. Schofield), जर्नल आफ़ हेरेडिटी, १९२२, XII, ४००

३. स्टर्न कर्ट (Stern Curt), Biol. Zentralbl, १९२६, XLVI, ३४४

४. कोकेन ई० ए०, पूर्वलिखित, पृष्ठ १८

गुणी होगी, गुण की अभिव्यक्ति होगी तथा इसी प्रकार DR बनावटवाला, युग्मानेक-गुणी नर भी गुण को प्रकट करता है। जब कि युग्मानेकगुणी मादा (DR) तथा युग्मैकगुणी मादा अपसारी (RR) गुणों के कारण दोनों बिना किसी गुण के होंगी।

भेड़ों में सींगों की पित्रागति इसी प्रकार की मालूम होती है। कोकेन ने बतलाया है कि इन उदाहरणों में Y-पित्र्यसूत्र में कोई निरोधक पित्र्यक नहीं होता परन्तु एक पित्र्यक होता है जो दूसरे पित्र्यसूत्र के प्रभावी पित्र्यक को क्रियाशील कर देता है। उसने लड़कों के तारुण्य के समय माथे पर श्वेत बालों का गुच्छा दिखलाई देने को पित्रागति[1] की इस विधि का फल बतलाया है।

मनुष्यों में पित्र्यसूत्र इस प्रकार से मिलते हैं कि माता के XX तथा पिता के XY होते हैं। लड़कियों में परिणामतः अपनी माता की जैसी बनावट XX मिलती है, जिसमें एक पित्र्यसूत्र X अपनी माता का तथा दूसरा पिता का एकमात्र पित्र्यसूत्र X आ जाता है, जब कि लड़कों में XY मिलता है, इनका X पित्र्यसूत्र माता से आता है।

इसलिए एक बात ध्यान में रखनी चाहिए जो कि लिंग-ग्रथन से स्पष्ट हुई। लड़का अपने X-पित्र्यसूत्र के पित्र्यकों को अपनी माता के X-पित्र्यसूत्र से लेता है, जब कि लड़की अपने X-पित्र्यसूत्रों में से एक से सम्बन्धित सभी गुण अपने पिता के एक पित्र्यसूत्र से लेती है।

इसलिए जैसा कि कोकेन ने बतलाया[2] है, "इस साधारण कथन का कि लड़का अपनी माता को पड़ता है तथा लड़की अपने पिता को, वास्तव में कुछ आधार भी है।"

यह स्पष्ट है कि लिंग-ग्रथन मनुष्यों में इतना बार बार नहीं होता जितना कि ड्रोसोफीला में, क्योंकि मनुष्यों में केवल १० लिंग-ग्रथित गुण होते हैं जब कि ड्रोसोफीला में १५० गुण तथा मनुष्यों में जो गुण लिंग-ग्रथित नहीं हैं उनकी [जिन्हें स्वयं शरीर-सम्बन्धी (Autosomal) कहते हैं] तुलना में गुणों का परस्पर अनुपात यह है—

१. इस गुण का होना क्रियाशील पित्र्यक के कारण नहीं है जैसा कि कोकेन ने बतलाया है परन्तु यह एक असाधारणता के कारण है जो कि मादा में अपसारी तथा नर में प्रभावी है।

२. कोकेन ई० ए० (Cockayne E. A.), पूर्वलिखित, पृष्ठ २७

१ लिंग-ग्रथित गुण : १७ अ-लिंगग्रथित गुण है, जब कि ड्रोसोफीला में यह अनुपात १ : १·७ है।[1]

क्रू[2] ने बतलाया है कि ड्रोसोफीला में जितने गुण बतलाये गये हैं उनसे कहीं अधिक गुण पित्र्यक तथा पित्र्यसूत्र के लिंग-ग्रथनहीन प्रबन्ध द्वारा पित्रागति से मिलते हैं।

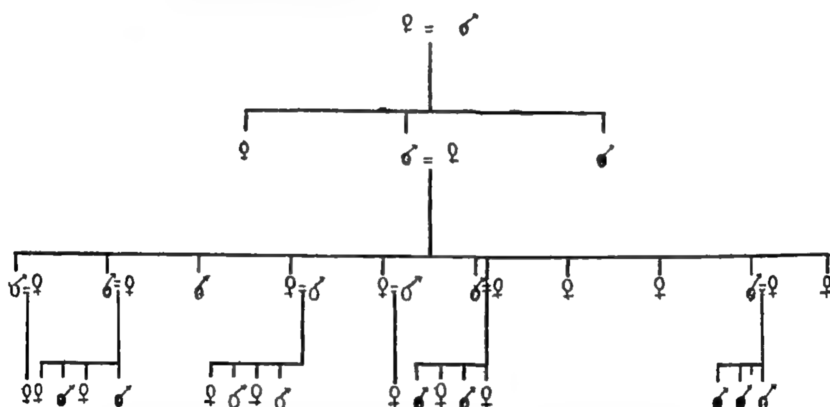
चित्र नं० ११४

Y–पित्र्यसूत्र (Y-Chromosome) द्वारा लिंग-ग्रथित जुड़े हुए अँगूठे की पित्रागति

♂=नर जुड़े हुए अँगूठेवाला (संकेत को भरा हुआ काला मानिए)

♂= नर साधारण अँगूठेवाला

♀= मादा साधारण अँगूठेवाली



इस वंशसूची में किसी मादा में असाधारणता नहीं है जो कि नर पित्र्यसूत्रों में होती है तथा नरों में ही पारेषित हो सकती है।

स्वभावतः जब कि पित्र्यसूत्र, लिंग का हो तब उसके ग्रथनसमूह को पहचानना अधिक सरल होता है, क्योंकि तब लिंगग्रथन तुरन्त होता है। परन्तु अक्सर एक दूसरा पित्र्य-

१. मारगन स्टर्टेवेन्ट एण्ड ब्रिजेज (Morgan, Sturtevant and Bridges) सेक्स लिंक्ड इनहेरिटेन्स इन ड्रोसोफीला, कारनेगी इन्स्टीट्युट, वाशिंगटन, १९१६, प्रकाशन नं० २३७, तथा जेनेटिक्स आफ़ ड्रोसोफीला, बिबलियोग्राफिका जेनेटिका, १९२५, ii, कोकेन ई० ए०, पूर्वलिखित, पृष्ठ ४२–४३

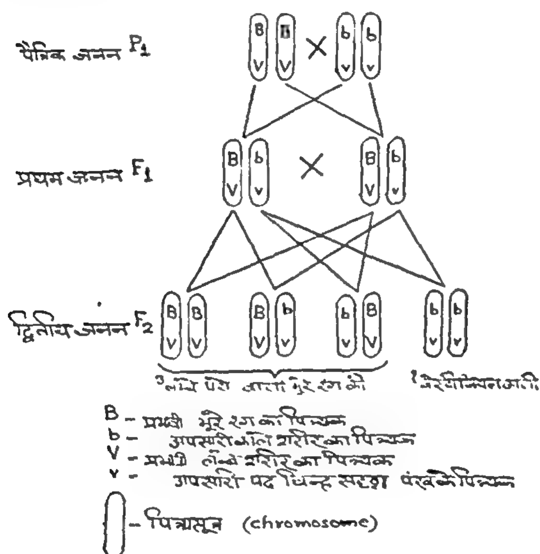
२. क्रू, पूर्वलिखित पृष्ठ, १०१

सूत्र समूह होता है जिसमें ग्रथित गुणों की संख्या अधिक हो सकती है। यह ड्रोसोफोल के काले शरीर के रंग से ग्रथित गुणों से स्पष्ट होता है।

पोमेस[1] मक्खी के काले-भूरे शरीररंग तथा लम्बे लुप्तप्राय पंख (वेस्टीजियल विंग) में, जहाँ दो कारक अथवा पित्र्यक एक ही पित्र्यसूत्र में होते हैं, क्या होता है, यह निम्न चित्र में दिखलाई पड़ता है।

चित्र नं० ११५

पोमेस (Pomace) मक्खी मे ग्रथन का उदाहरण



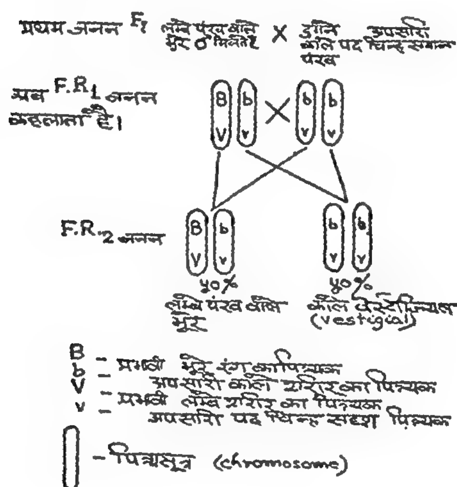
ग्रथन की परीक्षा के लिए तत्-संकरण (Back crossing)

ग्रथन की परीक्षा के लिए साधारण नियम है कि F_1 जनन का, अन्य अपसारी गुणों को दिखलानेवालों से (बैक क्रासिंग) ततसंकरण किया जाता है। समझने के लिए अन्तिम उदाहरण को लिया जाय। एक लम्बे पंख के भूरे नर का [(VB) (vb)

१. श्रू, पूर्वलिखित, पृष्ठ १०२

बनावट वाला], ऐसी मादा से जिसके दोनों ही पित्र्यक गुण अपसारी हों, जैसे कि (vb) (vb) तथा जिसके काला शरीर तथा लुप्तप्राय पंख हों, संकरण किया जाता है। यदि संकरण से ५० प्रतिशत लम्बे पंखवाले भूरे तथा ५० प्रतिशत काले लुप्तप्राय पंख (वेस्टीजियल) प्रकार की उत्पत्ति होती है, तब यह स्पष्ट है कि यह गुण ग्रथित है। यह चित्र नं० ११६ में सरलता से देखा जा सकता है।

चित्र नं० ११६



यदि ग्रथन न होता तो २५% लम्बे पंखवाले भूरे, २५% लम्बे पंखवाले काले, २५% लुप्तप्राय पंख भूरे तथा २५% लुप्तप्राय पंख काले FR_2 जनन में मिलते, जैसा कि वास्तव में लुप्तप्राय पंख भूरे तथा लम्बे पंखवाले काले का संकरण करने से होता है, जहाँ पर कोई ग्रथन नहीं मिलता। इसके परिणाम चित्र नं० ११७ में दिखलाये गये हैं।

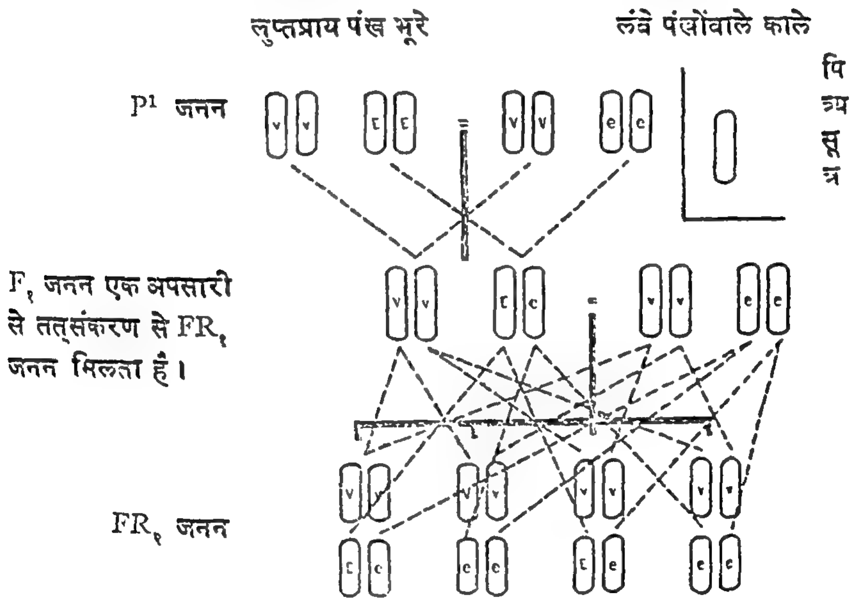
मनुष्य तथा जाति-विज्ञान के लिए इस सबकी आवश्यकता स्वयं-सिद्ध है तथा जैसे जैसे हम आगे बढ़ेंगे यह अधिक स्पष्ट होती जायगी। परन्तु इस स्थान पर भी

यह बतलाया जा सकता है कि कोकेन[1] (Cockayne) के कथनानुसार मनुष्यों में निम्न ग्रथन देखे जा सकते हैं—

१. मोनीलेथ्रिक्स (Monilethrix) तथा काले बाल।

चित्र नं० ११७

ग्रथन के लिए तत्-संकरण द्वारा परीक्षा, अग्रथन का उदाहरण



२५% लम्बे पंखवाले भूरे २५% लम्बे पंखवाले काले २५% लुप्तप्राय पंख भूरे २५% लुप्तप्राय पंख काले

EE = प्रभावी धूसर रंग

ee = अपसारी काला रंग

VV = प्रभावी लम्बे पंखवाला

vv = अपसारी लुप्तप्राय पंख

१. कोकेन ई० ए० (Cockayne, E. A.), पूर्वलिखित, पृष्ठ २६

बारहवाँ अध्याय

व्यत्यसन (Croossing over) की कार्य-प्रणाली

वंशानुगति की क्रियाएँ काफ़ी जटिल होती जाती हैं परन्तु अभी तक वे सदैव बिलकुल ठीक तथा स्पष्टता के साथ कार्य करती पायी गयी हैं। जो हो, इस अवस्था में पित्र्यसूत्रों (Chromosomes) का अध्ययन एक दूसरी समस्या उत्पन्न करता है, जो इनकी अपेक्षा कम नियमित है।

कोश (cell) में पित्र्यसूत्र, दो भागों में बँटकर दो कोश बनाने के पूर्व, एक साथ मिलते (या कांजूगेट, संयुक्त होते) हैं तथा फिर अलग अलग हो जाते हैं। इस क्रिया के होने में पित्र्यसूत्र गुथ जाते हैं तथा कभी कभी टूट जाते हैं, जैसा कि आगे दिये हुए चित्र में दिखलाई पड़ता है।

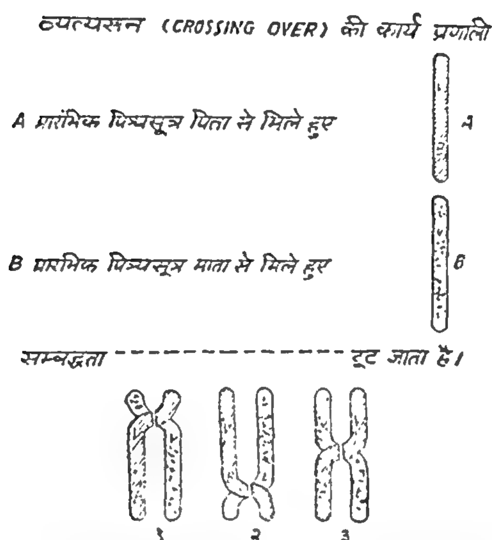
चूँकि अब हम यह जानते हैं कि यह विश्वास करने के सभी कारण हैं कि पित्र्यक प्रत्येक पित्र्यसूत्र में बिलकुल निश्चित स्थानों पर स्थित हैं, प्रसवन में मिलनेवाले अनुपातों पर उसका बड़ा बाधक प्रभाव पड़ने की सम्भावना है। चित्र में यह स्पष्ट है कि जब दो पित्र्यसूत्र परस्पर मिलते या संयुक्त हो जाते हैं (तथा कभी कभी टूट भी जाते हैं) तो सभी कुछ उनके टूटने के स्थानों पर निर्भर रहता है। संयोग के सम्भावित आकारों के प्रथम तथा दूसरे उदाहरण में पित्र्यसूत्रों के टूटने से परिणाम पर कोई भिन्न प्रभाव नहीं पड़ेगा। परन्तु अन्तिम सम्भावित उदाहरण में यह देख पड़ेगा कि टूटने की क्रिया सम्बन्धित पित्र्यकों के दो सेट (Vv तथा Bb) के बीच में होती है तथा वास्तविक व्यत्यसन हो जाता है। परिणाम यह होता है कि पित्र्यसूत्र Vb तथा vb पित्र्यकों सहित विभाजित होने के बजाय vB तथा Vb पित्र्यकों में विभाजित होते हैं।

इस स्थान पर यह कहा जा सकता है कि ड्रोसोफीला में यह व्यत्यसन केवल डिम्ब (ओवम) में ही देखा गया है तथा नरों को प्रभावित नहीं करता। वास्तव में व्यत्यसन की क्रिया होती है या ऊँचे प्रकार के जीवों से सचमुच उसका कोई सम्बन्ध होता है, इस विषय में अब भी प्रचुर अन्वेषण की आवश्यकता है।

ऊपर बतलाया हुआ उदाहरण लुप्तप्राय पंख (वेस्टीजियल) पोमेस मक्खी तथा धूसर लम्बी पंखोंवाली के संयोग से उत्पन्न, व्यत्यसन से सम्बन्ध रखता है।

F_1 मादा की बनावट (BV) (bv) थी। इसका संग एक ऐसे नर से किया गया जिसमें दुगुने अपसारी गुण (bv) (bv) थे, तब बच्चे चार श्रेणियों में हुए। दो का कारण चमकीले रंग के पदार्थ (क्रोमाटिन) तथा पित्र्यसूत्र के उस भाग के एक जोड़ा पित्र्यक को मिलाकर आपस में बदल जाना हो सकता है। इस प्रकार के

चित्र नं० ११८



V+B प्रभावी पित्र्यक A पित्र्यसूत्र पर स्थापित
v+b अपसारी पित्र्यक B पित्र्यसूत्र पर स्थापित

[अनुबद्धता में नर तथा मादा पित्र्यसूत्र गुथ जाते हैं, फिर अलग अलग हो जाते हैं। कभी कभी एक दूसरे से चिपक जाते हैं, फिर अलग अलग नहीं हो पाते इसलिए टूट जाते हैं।

यह चित्र तीन प्रकार का टूटना दिखलाता है तथा एक पित्र्यसूत्र के एक टुकड़े से दूसरे में पित्र्यकों के बदलने की क्रिया दीखती है, इसी प्रकार पित्र्यकों का ग्रथन टूट जाता है।]

उदाहरणों की प्रतिशत संख्या १७ थी जिससे विदित होता है कि ६ में एक की सम्भावना मिलती है जिसमें कि पित्र्यसूत्रों के टूटने से पित्र्यकों का ग्रथन भंग हो जाता है। (फ्लू, पूर्वलिखित, पृष्ठ ११३)

यह देखा गया है कि व्यत्यसन के अनुपात को बहुत ऊँचे या बहुत नीचे तापक्रम[1] से सम्बन्धित किया जा सकता है। यह हो सकता है कि प्रसवन की कृत्रिम रीति से सम्बन्धित दशाओं के कारण इन मक्खियों की प्रकृति में अनियमित विकास की वह प्रवृत्ति मिलती है जो साधारणतः कम पायी जाती है। इसलिए पशु तथा मानव-जनन में व्यत्यसन मिलने की पूरी सम्भावना होते हुए भी यह परिणाम निकलता है कि यह इस सीमा तक नहीं होता—या उच्च प्रकार के जीवों में ऐसा नहीं होता जो एक ही पित्र्यसूत्र में स्थित पित्र्यक गुणों के ग्रथन को भंग कर दे।[2]

मनुष्य में व्यत्यसन

यदि कोई पौधे तथा नीचे प्रकार के जीवों में व्यत्यसन के प्रश्न को भली-भाँति चित्रित करे, जैसा कि साधारण पाठ्य पुस्तकों में मिलता है, तो यह परिणाम न निकालना चाहिए कि मनुष्यों में ऐसा नहीं होता।

इसके विपरीत इसके अनेक उदाहरण हैं। पाठकों का ध्यान प्रोफ़ेसर आर० रेगेल गेट्स के ह्यूमन जेनेटिक्स के दो जिल्दोंवाले ग्रन्थ[3] की ओर आकर्षित किया जाता है, जिसमें मानव वंशों में पित्रागति की असाधारणता के अनेक उदाहरण दिये गये हैं तथा जिनमें सचमुच व्यत्यसन हुआ है या इसकी शंका की जाती है।

हरे रंग का अंधापन तथा अधिरक्तस्राव (Haemaphila) से सम्बन्धित व्यत्यसन के सम्बन्ध में बेल तथा हल्डेन[4] ने जो अध्ययन किया है उससे यह प्रकट है कि इन दशाओं के पित्र्यकों का काफ़ी घनिष्ठ ग्रथन था जिसमें व्यत्यसन का भी तत्त्व सम्बद्ध था। यह ५ प्रतिशत के लगभग आँका गया था।

१. सी०बी०ब्रिजेज (C. B. Bridges), ए लिंकेज वेरियेशन इन ड्रोसोफीला, जर्नल आफ़ एक्सपेरिमेंटल जूलोजी, १९, पृष्ठ १, १९१५

२. संभावित उत्परिवर्तन (Mutation) तथा मनुष्य में भी होने की सम्भावना का कारण पारमाणविक विकिरण (Atomic radiation) बतलाया जाता है। इसकी व्याख्या आगे अधिक विस्तार से करेंगे। यदि वास्तव में ऐसा है तब यह व्यत्यसन में टूटने के रूप में पित्र्यसूत्रों को काफ़ी प्रभावित कर सकता है।

३. मैकमिलन कम्पनी, न्युयार्क (New York), १९४६

४. जुलिया, बेल तथा जे० बी० एस० हल्डेन (Julia, Bell and J. B. S. Haldane), 'दि लिंकेज बिटवीन दि जीन्स फार कलर ब्लाइंडनेस एण्ड हेनोफीला इन मैन, प्रोसीडिंग्ज आफ़ द रायल सोसायटी, १९३७, १२३२, पृष्ठ ११९

पश्चिमी स्काटलैण्ड में रिडेल[1] (Riddel) के अधिरक्तस्राव तथा रंग के अन्धेपन के अनुसन्धान पर हल्डेन ने ४·५ प्रतिशत व्यत्यसन आँका है।

इन तथ्यों से स्पष्ट है कि मनुष्य में भी व्यत्यसन के ऊपर विचार करना चाहिए। यह हो सकता है कि जब असाधारण तथा जातिसम्बन्धी बेमेल गुण दिखाई दें तो यही तत्त्व उनका कारण हो। इस प्रकार से भूरे तथा काले केश, काली आँखों के साथ मिलते हैं तथा स्वर्ण-केश हलकी आँखवालों के साथ, हालाँकि काले केशों के प्रभावी होने पर वे हलकी आँखों के साथ उन क्षेत्रों में भी मिलते हैं जहाँ कि ऐटलाण्टिक जाति का प्रभाव नहीं है जिसमें यह असाधारण संयोजन मिलता है। इसलिए भूरी आँखों तथा स्वर्ण-केशों का होना व्यत्यसन का एक उदाहरण होगा, यदि केश तथा आँखों के रंग वास्तव में ग्रथित हैं।

ज्ञान की इस अवस्था में हम यह नहीं कह सकते कि यह ग्रथन वास्तव में होता है। परन्तु इससे सम्भावना होती है कि किसी समय भी मनुष्य में असमान प्रकारों की उत्पत्ति की व्याख्या व्यत्यसन द्वारा हो सकती है।

१. डब्लू० जे० बी० रिडेल (W. J. B. Riddel), हेमोफीलिया एण्ड कलर ब्लाइण्डनेस आकरिंग इन दि सेम फेमिली, ब्रिटिश जर्नल आफ आफ्थैल्मिया १९३७, २१, पृष्ठ ११३, तथा ए हेमोफीलिया एण्ड कलर ब्लाइण्ड पेडिग्री, जर्नल आफ जेनेटिक्स, १९३८, ३६, पृष्ठ ४५

तेरहवाँ अध्याय

संकुचित तथा विस्तृत पित्र्यकों-सम्बन्धी अनेक कारकों पर अधिक विचार तथा बहुल भिन्न-युग्मों का विषय

अभी तक हमने कारकों अथवा पित्र्यकों के बारे में बतलाया है तथा हमने देखा है कि वे पित्र्यसूत्रों में मिलते हैं, जैसा कि पित्र्यकों के ग्रथन द्वारा प्रदर्शित किया गया है। परन्तु फिर भी हम वास्तव में स्वयं पित्र्यकों के विषय में कुछ नहीं जानते तथा साधारणतया उनके कार्यों के परिणामों भर को पहचान सकते हैं।

एक महत्त्वपूर्ण खोज यह है कि न केवल एक पित्र्यसूत्र में मिलनेवाले सम्बन्धित पित्र्यकों के कारण ग्रथन होता है बल्कि एक दूसरे प्रकार का ग्रथन होता है जिसमें एक पित्र्यक कई कारकों को नियन्त्रित करता है। इसलिए बहुत से उदाहरणों में बहुत से परिणामों का कारण एक पित्र्यक में पाया जा सकता है। क्रू[1] (Crew) का कथन है कि

"यदि प्रभाव के आधार पर देखा जाय तो एक पित्र्यक बहुधा शरीर के काफ़ी विभिन्न ढाँचों को प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए अल्पविकसित पंखों के पित्र्यक पंखों के गुण के ऊपर पड़नेवाले प्रभाव के कारण पहचाने जाते हैं, परन्तु इस वर्ग को अधिक देखने से विदित होगा कि उससे अन्य स्थायी प्रभाव भी पड़ते हैं; पीछे के पैर जंगली प्रकार की मक्खी के पैरों से छोटे होते हैं, मादा पूर्ण रूप से वन्ध्या तथा इस वर्ग की जीवित रहने की शक्ति अपेक्षाकृत कम होती है......संतान की उत्पत्ति तथा पंखों के नमूने, दोनों उसी तथा एक ही पित्र्यक की क्रिया से प्रभावित रहते हैं।"

किसी अन्य स्थान में यह बतलाया गया है कि एकक गुण या इस तरह की कोई वस्तु नहीं होती जिसमें समस्त गुण एक साथ जुड़े होते हों तथा एक ही जैसा बर्ताव

१. क्रू (Crew), पूर्वलिखित, पृष्ठ १३२

करते हों। परन्तु एक ही पित्र्यक का जो अनेकविध प्रभाव होता है जिससे अनेक गुण परस्पर ग्रथित हो जाते हैं, वह छोटे पैमाने पर यही काम करता है। परिणामतः पित्र्यक के अनेक प्रभाव, साथ साथ उचित ग्रथन भी सदैव होते हैं (जिसका कारण कई पित्र्यकों का एक ही पित्र्यसूत्र में होना है)। इस ग्रथन से प्रसवन में विभिन्न गुण एक साथ बने रहते हैं।

एक पित्र्यक कई गुणों को नियन्त्रित करे, इसके विपरीत भी दशा मिलती है, जहाँ पर एक से अधिक पित्र्यक उन गुणों को नियन्त्रित करते हैं जो कि अनुभवहीन को एक ही समान लगते हैं। इस प्रकार से ड्रोसोफीला में हमें हलका काला, काला तथा आवनूस के समान काला; शरीर के ये रंग मिलते हैं जो समपित्र्यकों से नियन्त्रित रहते हैं। यह बिलकुल स्पष्ट है कि जब हम मनुष्यों के गुणों का अध्ययन करते हैं तब गुणों की उससे कहीं अधिक सुनिश्चित व्याख्या करना, जितनी कि अभी तक करते रहे हैं, बहुत आवश्यक है। इसका यह अभिप्राय नहीं कि सारे काले केश (उदाहरणार्थ) एक ही पित्र्यक से नियन्त्रित होते हैं, हालाँकि हम ऐसी ही धारणा बना लेंगे जब तक कि प्रमाण उसे गलत सिद्ध न कर दे।

अपूर्ण प्रभावी

अभी तक यह माना गया है कि जब एक प्रभावी का अपसारी से संकरण होता है, साधारण नियम के अनुसार एक संकरज के गुण सामान्य दशा में (जैसे कि यदि प्रभावी DD है तथा अपसारी RR, तब उसकी बनावट DR होगी) समरूपी अथवा DD आकार के होंगे। हमने देखा है कि ऐसा सदैव नहीं होता, इसी से नीले एंडालूसियन के मामले में प्रसंकर काले प्रभावी पित्र्यकों द्वारा अपूर्ण रूप से ही प्रभावित होता है।

यह विश्वास करने के कारण हैं कि एक साधारण प्रभावी पित्र्यक के कारण बाह्य समरूप में जो पूर्ण प्रभाव माना जाता है वह केवल देखने में ऐसा है, वास्तव में नहीं। दूसरे शब्दों में, ठीक से देखने पर बहुधा पता चलेगा कि प्रभाव अपूर्ण है, उतना ही जितना कि नीले एंडालूसियन में, भले ही यह उतना स्पष्ट न हो। इसलिए गुण के प्रकटीकरण में अन्तर होता है, चाहे यह समझना इस दृष्टि से कितना ही कठिन हो कि प्रभावी पित्र्यक साधारण अथवा दोहरी (डूप्लेक्स) दशा में है। यह दिखलाया जा चुका है[1]

१. एफ़० ई० लुज (F.E. Lutz), एक्सपेरीमेन्ट्स कन्सर्निंग दि सेक्सुअल डिफ-रेन्सेज इन दि विंग लेंग्थ आफ ड्रोसोफीला एम्पीलोफीला, जर्नल एक्स, जूलोजी, १४, पृष्ठ २६७, १९१३

कि यदि लम्बे पंखोंवाली ड्रोसोफीला में ठीक माप लिया जाता जो कि छोटे पंखों की अपेक्षा प्रभावी है, तब युग्मानेकगुणी से युग्मैकगुणी का अन्तर दिखाना सम्भव होता।

नीले एंडालूसियन में अनेक कारक

जैसा कि नीले एंडालूसियन में हम पहले देख चुके हैं वह प्रभावी और अपसारी तथा युग्मानेकगुणी दशाओं से उत्पन्न प्रसंकर का साधारण उदाहरण बतलाया गया था परन्तु यह सम्भवतः कहीं अधिक जटिल है। नीले एंडालूसियन का मामला उससे सम्बन्धित काफी विस्तृत संपरीक्षण किये जाने के पश्चात्, इतना सीधा-सादा सा प्रतीत होता था तथा वह अवश्य ही अपनी बनावट[1] की इस सरल परिभाषा के अनुसार ही कार्य करती है, जिससे यही समझा जा सकता था कि इसके आगे कुछ और कहने की आवश्यकता नहीं, परन्तु अब ऐसा विश्वास है कि उसके साथ ही एक अन्य युग्मकोश (जाइगोट) है[2] और हम एक दोहरे प्रसंकर की चर्चा कर रहे हैं।

विस्तृत तथा संकुचित कारक—उनका जाति-विज्ञान से सम्बन्ध

जो सिद्धान्त अब उत्पन्न होता है वह जाति-विज्ञान के लिए कुछ महत्त्व का है क्योंकि इससे हरी तथा हलकी भूरी आँखों में अधिकांश भूरा रंग पाये जाने की व्याख्या भली भाँति हो जाती है। उससे यह भी अनुमान होता है कि रंग के कारक के साथ ही एक दूसरा सेट है जो सारे शरीर में रंग के विस्तार से सम्बन्धित है तथा एक वह है जो उसके विकास को सीमित करने में प्रभाव डालता है। इसके अलावा यह भी प्रकट होता है कि अन्तिम दोनों साथ ही जुड़े (ग्रथित) हैं। ये सम्भवतः एक ही पित्र्यसूत्र में मिलते हैं और जो भी हो, यह सूचित करने के लिए कि पित्र्यसूत्र एक ही प्रकार के हैं, कोष्ठचिन्हों का प्रयोग करना सुविधाजनक होगा, क्योंकि उनका व्यवहार वही

१. डब्लू० बेटसन तथा ई० आर० साण्डर्स (W. Bateson and E. R. Saunders), रिपोर्ट टु दि इवोल्युशन कमेटी आफ़ दि रायल सोसाइटी, रिपोर्ट I, रायल सोसाइटी (Royal Society), पृष्ठ, I.

२. डब्लू० ए० लिपिन्कोट (W. A. Lippincott), दि केस आफ़ दि ब्लूड एंडालूसियन, (Amec Nat.), १९१८, ५२, पृष्ठ ९५, फर्दर डेटा आन दि इनहेरिटेन्स आफ़ ब्लूड इन पोल्ट्री, (Amer Nat). १९२१, ५४, पृष्ठ २८९, जीन्स फार दि एक्सटेन्शन आफ़ ब्लैक पिगमेन्ट इन दि चिकेन (Amer Nat). १९२३, ५७, पृष्ठ २८४

है जैसा कि ऐसा होने पर होता। परिणामतः काले कुक्कुट की बनावट में (PP) रंग तथा एक पित्र्यसूत्र में r (रंग की रोक का अपसारी) और E (सम्पूर्ण शरीर में रंग के विस्तार का कारक) होता है। दूसरे पित्र्यसूत्र में वही बनावट मिलती है—इसलिए चिह्नरूप में काला पक्षी PP (rE) (rE) हुआ।

श्वेत (चित्तीदार) पक्षी में भी जो कि नीले एंडालूसियन के माता-पिता में से दूसरा है, रंग का कारक P है परन्तु विस्तार (E) का नहीं तथा उसका अपसारी c है। रंग को संकुचित करने के लिए कारक (R) मिलता है। इससे बनावट हुई, PP (Rc) (Rc)।

इसलिए प्रसंकर, नीला एंडालूसियन, PP (Rc) (rE) होगा।[1]

श्वेत लेगहार्न तथा श्वेत डार्किंग के संकरण की व्याख्या करते समय हमने रंग के निरोधक कारक की क्रिया पर भी विचार किया है। संकुचित तथा विस्तृत पित्र्यकों के साथ भी यह कारक रह सकता है। इस प्रकार श्वेत लेगहार्न पक्षी वास्तव में रंग-वाला है परन्तु इसमें उसके विकास को रोकनेवाला कारक है। साथ ही स्पष्ट रूप से उसमें रंग के विस्तार का भी कारक होता है जो कि रोकनेवाले कारक का पूर्ण रूप से अपसारी है, इसलिए उसकी बनावट है II PP (rE) (rE)।

मनुष्यों के साफ़ रंग में सदैव इस तरह के रंग के निरोधक कारक (I) के होने की सम्भावना है जो कि प्रभावी है तथा उसका अपसारी (i) पित्र्यक है जो कि रंग के विकास में सहायक है।

१. निम्नलिखित नस्लों की बनावट निम्न प्रकार की समझी जाती है—

श्वेत व्यानडोट (Wyandotte)	PP (rE) (rE)
श्वेत प्लाईमाउथ रॉक (Plymouth Rock)	PP (rE) (rE)
काली एंडालूसियन (Andalusian)	PP (rE) (rE)
नीली एंडालूसियन	PP (Re) (rE)
नीली धब्बेदार एंडालूसियन	PP (Re) (Re)
काली लैंगशॉन (Langshan)	PP (rE) (rE)
नीली ऑर्पिंगटन (Orpington)	PP (Re) (rE)
श्वेत लेगहार्न (Leghorn)	PP (rE) (rE)
नीली लेगहार्न	PP (Re) (rE)

निरोधक कारक तथा मनुष्य के केशों के रंग से उनका सम्बन्ध

साधारण रूप से ऐसा माना जाता है कि स्वर्णकेश तथा भूरे केशों के विभिन्न प्रकार एक ही हैं। हाल के ही वर्षों में यूरोपीय देशों के अन्वेषकों ने पूर्वी बाल्टिक

चित्र नं० ११९

ड्रोसोफीला (Drosophila) **में रंग की पित्रागति**

निम्न प्रकार की दो काली मक्खियों का साथ किया गया है।

काली मक्खियाँ bb EE

आबनूसी (एबोनी) मक्खियाँ BB ee

P_1 मूल पीढ़ी bb EE (काली) | BB ee (एबोनी)

F_1 प्रथम जनन Bb Ee माता-पिता की पीढ़ी से कुछ हलका रंग

F_2 द्वितीय जनन

BBEE	BBEe	BbEe	bbEE	BBee	bbEe	Bbee	bbee
धूसर	कुछ गहरा	अधिक गहरा	उससे भी गहरा		उससे भी गहरा		बहुत गहरा

[**टिप्पणी—F_1 जनन में सम्भावित नियम से विभिन्नता मिलती है क्योंकि माता-पिता के रंग से कुछ हलका रंग है।**

एक से अधिक कारक काम करते हैं, यह इस बात का प्रमाण है।]

जाति तथा नार्डिक जाति के स्वर्ण-केशों में निश्चित विभिन्नता दिखलायी है, जो ठीक ही है। इन्हें इस रचना में हम क्रमशः प्लेटिनम तथा स्वर्ण-केश (Blond) कहते हैं। इस विभिन्नता का कारण यह बताया जा सकता है कि प्रथम उदाहरण में निरोधक कारक है जिसकी क्रिया से ऐसा होता है।

जैसा कि हमने पहले भी कहा है, यह काफ़ी सम्भव है कि ऐटलाण्टिक, अल्पाइन, डाइनारिक, आर्मीनायड, सुडेटिश जातियों के तथा मंगोलायड और निग्रायड समूह

आदि मनुष्य के कुछ वर्गों में पाये जानेवाले सभी भूरे रंग के गुणों को जननिक दृष्टि से समान कहना गलत हो। यह निष्कर्ष सत्य भी हो सकता है, इसका आभास क्रू द्वारा दिये गये मक्खियों के साधारण काले रंग के विवरण[1] में मिलता है। उसने वतलाया है कि एक जंगली प्रकार की मक्खी धूसर (ग्रे) शरीर की (BB) होती है। किन्तु सामान्य मक्खी (bb) का रंग अधिक काला होता है। इन दोनों का संकरण (B+b) है जिसमें दोनों माता-पिता के रंग का मध्यम रंग मिलता है, जैसी कि हम आशा कर सकते हैं। काले रंग की एक किस्म वह भी होती है जिसे हम एवोनी (आवनूस) ee कहते हैं तथा इन्हीं चिन्हों का प्रयोग करके हम भूरी जंगली मक्खी को EE से सूचित करते हैं। इस तरह इस प्रकार की मक्खियों में कालेपन के दो कारक हैं तथा दोनों ही उदाहरणों में अपसारी गुणोंवाले हैं। इसलिए काली मक्खी, जिसमें कि एवोनी (EE) के नहीं वल्कि कालेपन (bb) के गुण हैं, bb EE है, जब कि एवोनी रंग की मक्खी इसके विपरीत BB ee है।

इन दोनों के संकरण से F_1 पहली पीढ़ी Bb Ee हो जाती है जिनमें साधारण दशा में कालेपन के दो कारक हैं तथा विना किसी आश्चर्य के, माता-पिता में से प्रत्येक के रंग से कुछ गहरे रंग के प्रकार मिलते हैं। परन्तु जव इस जनन (पीढ़ी) का अन्तः-प्रसवन होता है तथा F_2 पीढ़ी की उत्पत्ति होती है, तव यह स्पष्ट है कि पुनःसंयोजन में कुछ ऐसे परिणाम निकलेंगे, जो यदि हमारे सम्मुख मेण्डल का सिद्धान्त न हो तो, वहुत ही अनपेक्षित होंगे।

इस प्रकार से BB EE पित्र्यकवालों में कालेपन के कारक नहीं होते इसलिए वे धूसर रंग के होंगे, जव कि bb ee संयोजनवालों में, जो कि दूसरे सिरे पर होंगे, प्रत्येक व्यक्ति अपने प्रारम्भिक माता-पिता की अपेक्षा अधिक गहरे रंग का होगा। पहले दिये हुए चित्र[2] नं० ११९ से यह वात स्पष्ट हो जाती है।

ऊपर दिये हुए चित्र के तथ्यों से एक नियम वनाया जा सकता है, वह यह कि जव प्रसवन की प्रथम पीढ़ी (F_1) में सम्भावित नियम से कुछ परिवर्तन मिले तथा दूसरी पीढ़ी (F_2) में और भी अधिक परिवर्तन हो तो उस गुण से केवल एक कारक या एक जोड़ा पित्र्यक का ही सम्बन्ध न समझना चाहिए।

१. क्रू, पूर्वलिखित, पृष्ठ १३८–१३९
२. क्रू द्वारा

बहुविध भिन्नयुग्म (Allelomorphs)

अब हम भिन्न-युग्मों पर विचार करेंगे। यह दिखलाया[1] जा चुका है कि कभी किसी गुण में, जैसे रक्त-लोचनत्व में, न केवल श्वेत-लोचनत्व का भिन्न-युग्मिक गुण पाया जाता है परन्तु अन्य बहुत से रंग भी, जो कि लाल के विकल्प हैं। ऐसा कहा गया है कि इसका आशय यह है कि चमकीले पदार्थ (क्रोमैटिन) में कुछ परिवर्तन उस समय होता है जब कि सम्बन्धित पित्र्यसूत्र में श्वेत आँखों का रंग उत्पन्न करनेवाला पित्र्यक उत्पन्न होता है। परिणामतः श्वेत रंग की उत्पत्ति करने के बजाय परिवर्तन की सीमा के अनुसार, वह चमकीला लाल, हलका पीला, श्वेत, गुलाबी इत्यादि रंग उत्पन्न कर सकता है। यह देखा गया है कि यह बहुविध भिन्न-युग्मिक दशा अन्यों की अपेक्षा कुछ गुणों से अधिक सम्बन्धित पायी जाती है। चूहे में यह निश्चित किया जा चुका है कि धूसर, श्वेत, पीले तथा काले रंग बहुविध भिन्न-युग्म हैं तथा खरगोश में यह हिमालयन, सर्वश्वेत तथा स्वयं अपने रंग के तीन प्रकार के होते हैं।

इसलिए, उदाहरणार्थ, रंग ऐसे पदार्थों को प्रभावित करने में रंग से सम्बद्ध केवल साधारण प्रभावी की स्थिति काफ़ी नहीं होती, परन्तु रंग के निरोध, विस्तार व संकोच तथा बहुविध कारक के प्रश्न भी सम्बद्ध हैं जहाँ एक से अधिक पित्र्यक की स्थिति या एक से अधिक पित्र्यसूत्र सम्बन्धित हैं। साथ ही भिन्न-युग्मों की सम्भावना का प्रश्न भी है जहाँ पर एक ही पित्र्यक के दूसरे रूपों में रंगों की अलग-अलग तर्जों का सम्बन्ध मिलता है।

इसमें से कितने कारक मनुष्य में क्रियाशील हैं यह कहना कठिन है परन्तु इस तथ्य से कि एक अथवा अन्य दशा में वे अन्य प्रकार के जीवों में मिलते हैं, यह विदित होता है कि मनुष्य के रंग को निर्धारित करनेवाले कारक कितने जटिल हो सकते हैं।

यह बात, जिसकी चर्चा पहले मक्खियों के शरीर के भूरे, एबोनी तथा काले रंग की व्याख्या के समय की जा चुकी है, स्पष्टतर होती जाती है कि बहुधा एक गुण की उत्पत्ति में एक से अधिक पित्र्यक सम्बन्धित होते हैं। मक्खियों की आँखों के रंग में यही बात होती है, जैसा कि ड्रोसोफीला मेलानोजास्टर में दिखलाया जा चुका है कि लगभग २५ जोड़े पित्र्यकों का इससे सम्बन्ध होता है। मनुष्यों की आँखों के रंग के सम्भावित

१. क्रू, पूर्वलिखित, पृष्ठ १४२

आधार को बतलाने का जो प्रयत्न हमने आगे किया है, उससे भी यह स्पष्ट हो जाता है कि एक जोड़े से अधिक पित्र्यक सम्बन्धित हैं। चूँकि मनुष्यों का मक्खियों की भाँति अध्ययन नहीं किया जा सकता, हमारे परिणामों का थोड़ा बहुत अपूर्ण रहना स्वाभाविक है, इसलिए हम कुछ ही कारकों को निर्धारित कर सके हैं। यह बहुत सम्भव है कि आँखों के रंगों के प्रत्येक गुण की उत्पत्ति में एक के स्थान पर अनेक पित्र्यकों का योगदान होता हो। इसका पक्का निश्चय अभी और अनेक वर्षों के संपरीक्षण से ही किया जा सकता है। तिस पर भी यह अनुमान सम्भवतः अथवा बहुलांश में, ज्ञान की और वृद्धि के कारण होनेवाले संपरिवर्तनों के बाद भी ठीक होगा, क्योंकि यह सब उन सिद्धान्तों पर आधारित है जो कि ड्रोसोफीला मेलानोजास्टर में स्पष्ट रूप से कार्यान्वित हैं।

यह पूर्ण स्पष्ट है कि ये नियम अवश्य ही मनुष्य में क्रियान्वित होने चाहिए जिनके साधारण सिद्धान्तों की व्याख्या हमने अभी की है तथा जो अधिकतर जीवन को नियन्त्रित करते देखे जाते हैं तथा जिन कुछ प्रमाणों को हमने बतलाया है उनसे उनकी क्रिया की स्पष्ट रूप से पुष्टि हो सकती है। इसलिए, जैसा कि हमने पहले बतलाया है, मानव जातियों के हमारे अध्ययन में जाति-विज्ञान के जननिक आधार की अवहेलना नहीं की जा सकती तथा इसके किसी भी विद्यार्थी को, जननिक सिद्धान्तों का अध्ययन, मानव-विज्ञान पर उन्हें लागू करने के पूर्व कर लेना आवश्यक है।

चौदहवाँ अध्याय

उत्परिवर्तन, विभासन (Irradiation) पर कुछ टीका-टिप्पणी तथा उत्परिवर्तन पर उसका प्रभाव

पिछले अध्याय में बहुविध भिन्न-युग्मों (एलेमाफर्स) की व्याख्या करते समय यह बतलाया गया था कि एक ही पित्र्यक में जो वैकल्पिक गुणों की उत्पत्ति होती थी, वह चमकीले पदार्थ (क्रोमैटिन) की बनावट में परिवर्तन के कारण थी।

जब इस प्रकार का परिवर्तन हो तब उसे उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) कहेंगे। इस प्रकार का कोई भी परिवर्तन जब पित्र्यसूत्र में चमकीले पदार्थ के रासायनिक स्वरूप में होगा तब अवश्य ही वह भी उसी तरह उत्परिवर्तन होगा। हालाँकि हम सोच सकते हैं कि पित्र्यकों (Genes) की रासायनिक बनावट में नियन्त्रित तथा आकस्मिक परिवर्तन से ही उत्परिवर्तन होते हैं, फिर भी यह ध्यान में रखना चाहिए कि व्यत्यसन के कारण, जिसकी व्याख्या हमने अभी की है, जो परिवर्तन होते हैं, वे भी एक अर्थ में उत्परिवर्तन ही हैं, क्योंकि वे नये प्रकार के पित्र्यसूत्रों की उत्पत्ति करते हैं तथा जहाँ सम्बन्धित पित्र्यक बहुविध कारकों के अंश हैं, प्रकारों के बदल देने में उनका काफ़ी प्रभाव पड़ सकता है।

फिर भी, रासायनिक परिवर्तनों के कारण होनेवाले उत्परिवर्तन सहज रूप स नहीं बल्कि क्वचित् ही होनेवाली घटना हैं और उनकी वास्तविक दशा का ज्ञान हमें नहीं है। जब उत्परिवर्तन एक बार हो जाता है तब सहज गुण की भाँति वह पूर्णरूप से स्थायी अस्तित्व बन जाता है। उत्परिवर्तन क्वचित् ही होते हैं फिर भी पित्र्यसूत्रों की किन्हीं स्थितियों में, अन्यों की अपेक्षा वे अधिक मिलते हैं।

स्वभावतः उत्परिवर्तन अपने गुण तथा प्रभाव में काफ़ी भिन्न होते हैं परन्तु जननिक शास्त्रियों के अनुसार साधारण सिद्धान्त यह है कि बड़े परिवर्तनों से सम्बद्ध उत्परिवर्तनों की अपेक्षा वे अधिक होते हैं जिनके गुणों में थोड़ा परिवर्तन होता है।

उत्परिवर्तन एक से अधिक गुणों को प्रभावित कर सकता है

यह भी देखा गया है कि जब उत्परिवर्तन होता है, वह केवल एक ही गुण को प्रभा-

वित नहीं करता। इस प्रकार ड्रोसोफीला में ऐसा प्रतीत होता है कि उत्परिवर्तन के किसी निश्चित परिणाम के साथ-साथ छोटे पंख तथा वक्ष-देश में कुछ उठा हुआ भाग भी मिलता है। यह स्वयं ही आश्चर्यजनक नहीं है क्योंकि ऐसा विश्वास करने के सभी कारण हैं कि कुछ पित्र्यक एक गुण से अधिक को नियन्त्रित अथवा प्रभावित करते हैं।

उत्परिवर्तन की प्रवृत्ति अपसारिता की ओर होती है

उत्परिवर्तन में अपसारी होने की प्रवृत्ति होती है तथा साथ ही साधारणतया यह घातक भी होता है, कम से कम ड्रोसोफीला ऐसे जीवित जीवों के सम्बन्ध में यही परिणाम निकाला जा सकता है।

उत्परिवर्तन में घातक प्रवृत्ति

डा० रोजर पिल्किगटन[1] इस मत के विशेष समर्थक हैं, यदि हम हाल में ही अखबारों में प्रकाशित उनके लेख को देखें, जहाँ उन्होंने लिखा है—

"लगभग सभी ज्ञात उत्परिवर्तन हानिकारक हैं, कुछ ही ऐसे हैं जिन्हें बहुत हुआ तो हम अहानिकर कह सकते हैं, पर अधिकांश घातक होते हैं। दोहरे अपसारी तथा लिंग-ग्रथित (Sex-linked) घातक उत्परिवर्तन ही प्रारंभिक भ्रूण के बहुधा नष्ट हो जाने का कारण है। बहुत से उत्परिवर्तन अपसारी भी होते हैं इसलिए उनका प्रभाव तब तक ज्ञात नहीं होता, जब तक अनेक पीढ़ियों बाद कोई क्षति नहीं हो जाती।[2]

ये विचार बहुत ज़ोर देकर व्यक्त किये गये हैं तथा प्रत्येक को मान्य नहीं हो सकते।

अवश्य ही इस समय यह एक विवादास्पद समस्या है और अणु-शक्ति से सम्बन्धित भौतिक-शास्त्री, जीव-वैज्ञानिक तथा अन्य लोगों की अपेक्षा, इस तर्क से कम ही प्रभावित होते हैं। यह लिखते समय इस बात की सत्यता जानने के लिए कुछ गम्भीर अनुसन्धान किये जा रहे हैं।

१. Dr. Roger Pilkington

२. हाइड्रोजन बम का जननिक प्रभाव 'Genetic effects of the H. Bomb' टाइम एण्ड टाइड 'Time and Tide' लन्दन, मई, १९५५, पृष्ठ ५९१

हमारी स्वयं की भावना यह है कि जो लोग सतर्क होने के लिए कहते हैं वे इससे संतुष्ट या प्रसन्न होनेवालों की अपेक्षा सत्य के अधिक निकट हैं, क्योंकि सामान्यतः, जैसा कि हम देखते हैं, उत्परिवर्तन अधिक वार घातक प्रवृत्तियों से सम्वन्धित होते हैं।

उत्परिवर्तन तीन प्रकार के हो सकते हैं।

जन्यव (Gametic) उत्परिवर्तन

जन्यव वह है जव माता-पिता में से एक के जन्यु (गैमीट) में उत्परिवर्तन होता है, इसलिए वह युग्मकोश के केवल उस भाग में मिलता है जो उक्त माता या पिता से प्राप्त होता है।

युग्मिक उत्परिवर्तन

युग्मिक उत्परिवर्तन वह है जो निषेचन के तुरन्त वाद होता है तथा युग्मकोश (जाइगोट) के दोनों जन्युओं को प्रभावित करता है। यहाँ उसका प्रभाव केवल व्यक्ति में दिखलाया गया है, जब कि जन्यव में यदि वह अपसारी उत्परिवर्तन है, यह स्पष्ट नहीं है परन्तु वह वाद की पीढ़ियों में प्रकट होगा, जब संयोगवश दो अपसारी गुणों के व्यक्ति एक दूसरे का संग करेंगे।

शरीरसम्बन्धी (सोमैटिक) उत्परिवर्तन

एक तीसरे प्रकार का उत्परिवर्तन होता है जो कुछ महत्त्व का सिद्ध हो सकता है। यह शरीरसम्बन्धी है तथा इसका कीटाणुकोश पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि इसका सम्वन्ध केवल शरीरसम्वन्धी कोशों से रहता है और इसलिए अपना प्रभाव यह केवल शरीर पर ही दिखलाता है। इस शरीरसम्वन्धी उत्परिवर्तन से वेतुकी वस्तुओं इत्यादि की उत्पत्ति होती है।[1] इसलिए प्रत्येक असाधारण रूप को जननिक उत्परिवर्तन वतलाने के सम्वन्ध में सावधान रहना चाहिए, जब तक कि उसके परिणाम प्रसवन द्वारा न देख लिये जायँ।

१. शरीरसम्वन्धी उत्परिवर्तन की कुछ ऐसी घटनाएँ हैं जो जननग्रन्थि के तन्तुओं को प्रभावित करती हैं तथा इनसे उसका योगदान पित्रागति की ओर रहा है। कहाँ तक ये इस दशा में सचमुच शरीरसम्वन्धी उत्परिवर्तन समझे जा सकते हैं, यह संदेहास्पद है।

उत्परिवर्तन का मनुष्य से सम्बन्ध

यदि हम कुछ जाने हुए उत्परिवर्तनों पर विचार करें तो उत्परिवर्तन का मनुष्य से सम्बन्ध तुरन्त ज्ञात हो जायगा।

नीग्रो लोगों में इतरजायती दशा

उदाहरणार्थ कोकेन ने बतलाया है कि नीग्रो लोगों (हब्शियों) में इतरजातीय दशा, जो बहुत कम देखी जाती है, उन सभी उदाहरणों में, जिनका अध्ययन किया गया है[1], उत्परिवर्तन के कारण है।

अधिरक्तस्राव (Haemophilia) के लिए उत्परिवर्तन

अधिरक्तस्राव में पित्र्यक के उत्परिवर्तन का एक और उदाहरण मिलता है। यह एक बीमारी है जिसमें रक्त के जमने का गुण समाप्त हो जाता है, इस कारण वह बहा करता है। मनुष्य में रक्त के जमने के लिए एक कारक होना स्वाभाविक है। परन्तु कुछ अभागे व्यक्तियों में X पित्र्यसूत्र पर स्थित यह पित्र्यक, जो कि लिंग से भी सम्बन्धित है, स्वाभाविक रूप से अपना कार्य बन्द कर देता है, इसलिए शरीर में इस प्रकार की प्रक्रिया उत्पन्न नहीं करता जिसका कार्य रक्त को जमाना है। चूंकि एक पित्र्यक के उत्परिवर्तन के कारण रक्त का जमना बन्द हो जाता है, (जो कि अधिरक्तस्राव की दशा है) अतः स्पष्ट है कि असामान्यता का पारेषण होता है। जिन व्यक्तियों में अधिरक्तस्राव के पित्र्यक मिलते हैं उनमें से एक-तिहाई नर तथा दो-तिहाई मादा निम्बक होते हैं। यह इसलिए है कि XX पित्र्यसूत्र में उत्परिवर्तन से अधिरक्तस्राव होता है और पुरुषों में केवल एक ही X पित्र्यसूत्र तथा स्त्रियों में दो होते हैं। अधिरक्तस्राव वाले मनुष्यों में से लगभग एक-चौथाई प्रत्येक पीढ़ी में प्राकृतिक चुनाव द्वारा नष्ट हो जाते हैं।[2] परिणामतः अधिरक्तस्राव आज पूर्णतया समाप्त हो जाता यदि समय समय पर उत्परिवर्तन द्वारा उसका पुनर्निर्माण न होता। हल्डेन[3] का कथन है कि जनसंख्या में

१. जे० बी० एस० हल्डेन J. B. S. Haldane, हेरेडिटी एण्ड पालिटिक्स, १९३८, पृष्ठ ६९

२. जे० बी० एस० हल्डेन J. B. S. Haldane, हेरेडिटी एण्ड पालिटिक्स १९३८, पृष्ठ ६९

३. जे० बी० एस० हल्डेन J. B. S. Haldane, पूर्वोल्लिखित, पृष्ठ ७२

अधिरक्तस्राव की आवृत्ति से पता चलता है कि लगभग ५० सहस्र पीढ़ियों में एक वार X पित्र्यसूत्र का एक स्वाभाविक पित्र्यक उत्परिवर्तित होकर अधिरक्तस्राविक हो जाता है। अमेरिका के कुछ आँकड़ों से पता चलता है कि यह कुछ अधिक वार होता है।

उत्परिवर्तन बहुत कम होते हैं

इसलिए यह स्पष्ट है कि प्राकृतिक चुनाव के प्रभाव के कारण कुछ वीमारियाँ पूर्णतः नष्ट हो जातीं, यदि उत्परिवर्तन न होता, जिसके कारण जनसंख्या में वह फिर से उभड़ आती हैं। फिर भी ये उत्परिवर्तन सामान्यतः वहुत कम होते हैं।

प्राकृतिक चुनाव द्वारा घातक उत्परिवर्तनों का अन्त

कुछ घटनाओं में उत्परिवर्तनों का प्रभाव, जहाँ वे प्रभावी हानिकारक गुण उत्पन्न करते हैं, प्राकृतिक चुनाव द्वारा दूर हो जाता है। प्रकृति उत्परिवर्ती गुणों पर तुरन्त प्रभाव डाल सकती है जिससे समरूपता मिलती है। फिर भी जहाँ पर उत्परिवर्तन का सम्बन्ध एक अपसारी पित्र्यक से होता है, जैसा कि आसानी से समझा जा सकता है, प्रकृति बीमारी या खरावीवाले वर्ग को नष्ट करने में इतनी शीघ्रता नहीं करती, क्योंकि प्राकृतिक चुनाव का कार्य तभी होता है जब कि अपसारी गुण समरूप में सतह के ऊपर आ जाता है।

इस प्रकार बालकों की नेत्रशक्ति-सम्वन्धी दुर्बलता के उदाहरण में, जहाँ पर पित्र्यक अपसारी है, युग्मानेकगुणी व्यक्ति, जिनमें बीमारी का अपसारी गुण विद्यमान हो तथा जो स्वाभाविक पित्र्यक द्वारा दबा या छिपा रहता है, अपने वाहरी आकार (वाह्यसमरूप-Phenotype) में वीमारी को नहीं दिखलायेंगे। परिणामतः इसमें तथा ऐसे ही अन्य उदाहरणों में प्राकृतिक चुनाव प्रभाव नहीं डाल सकता, जब तक कि युग्मैकगुण (समयुग्मिक, होमोजाइगस) दशा में असामान्यता नहीं प्रकट होती। इस बीमारी में जब कि एक ही मनुष्य में दो अपसारी पित्र्यक मिलते हैं, जिस स्थिति में वह मूर्ख होगा, तभी प्राकृतिक चुनाव अपना कार्य आरम्भ कर सकता है। इस प्रकार प्राकृतिक चुनाव, प्रभावी उत्परिवर्तनों की अपेक्षा, अपसारी उत्परिवर्तनों को हटाने में अधिक सुस्त है।

मनुष्य में उत्परिवर्तन के उदाहरण

कोकेन[1] ने शरीरसम्बन्धी उत्परिवर्तन को लेकर मनुष्य में उत्परिवर्तन के अनेक

१. ई० ए० कोकेन (E. A. Cockayne) पूर्वलिखित, पृष्ठ ३४

उदाहरण दिये हैं। शरीरसम्बन्धी में मैरी सीले[1] का उदाहरण है जो लगभग ८ वर्ष की बच्ची थी तथा जिसका पिता भूरे रंग का और माता श्वेत रंग की थी। उसके चेहरे का रंग काला था तथा उसके सिर के एक भाग में लम्बे काले केश तथा दूसरी ओर छोटे घुंघराले तथा हलके रंग के केश थे। उसकी माता ने बतलाया कि उसके शरीर का रंग दो प्रकार का था, एक ओर भूरा तथा दूसरी ओर साफ़ रंग था।

मोट्रम[2] ने हांगकांग के एक आदिवासी बच्चे की उसी प्रकार की घटना बतलायी है जिसके शरीर का एक भाग श्वेत तथा दूसरा भूरा था।

जे० बी० एस० हल्डेन[3] ने एक उत्परिवर्तन की ओर ध्यान आकर्षित किया है जिससे पैर में काफ़ी छाले पड़ गये थे। यह शरीरसम्बन्धी उत्परिवर्तन न होकर, जिसका वर्णन अभी हमने किया है, जननिक गुण का उत्परिवर्तन है, जैसा कि अनेकों पीढ़ियों में उसके पारेषित होने से प्रमाणित होता है। यह निम्नलिखित वंशक्रम से स्पष्ट है जिसमें उसकी पित्रागति दिखलायी गयी है तथा जो कि हल्डेन की खोजों पर आधारित है।

यह बहुत कुछ F_1 पीढ़ी के पाँचवें बच्चे में प्रभावी उत्परिवर्तन होने के समान दीखता है जिसमें इस गुण के पित्र्यकों के जोड़े के लिए युग्मानेकगुण दशा होगी तथा जोड़े में से एक इस प्रभावी असामान्यता में उत्परिवर्तित हो गया। इस युग्मानेकगुणी दशा के फलस्वरूप सभी वंशजों में यह बीमारी नहीं मिलेगी। इस स्त्री (प्रथम पीढ़ी की पाँचवीं) में यह प्रभावी था, इसकी स्थापना इस तथ्य से होती है कि यह बहुत ही दुर्लभ दशा है। यह मानना अनुचित होगा कि उसके बच्चों तथा पोतों के पति-पत्नी उसे अपसारी रूप से युग्मानेकगुणी तरीके से ले गये, जैसा कि आवश्यक होगा यदि उसकी पित्रागति को अपसारी रूप में देखें। परिणामतः हम उसे एक प्रभावी उत्परिवर्तन का उदाहरण मानने को बाध्य होते हैं।

इसी प्रकार के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं, और पाठकगणों का ध्यान

१. Mary Seeley

२. ब्रिटिश मेडिकल जर्नल (British Medical Journal), १९३२ पृष्ठ ८०४

३. न्यू पाथ्स इन जेनेटिक्स (New Paths in Genetics), १९४२

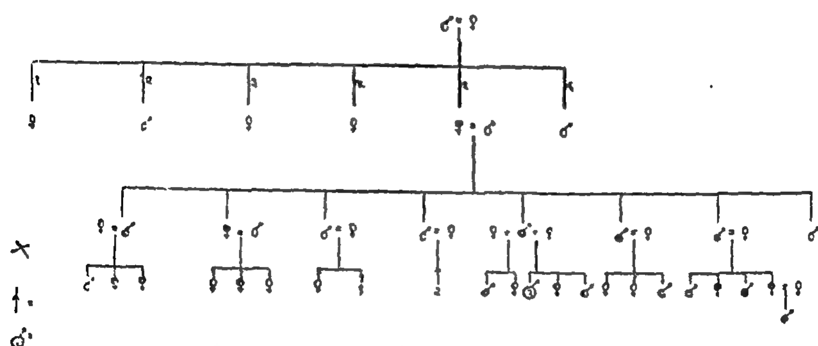
इस विषय में मानव-जननिक के प्रकाशित साधारण साहित्य की ओर आकर्षित किया जाता है।[1]

चित्र नं० १२०

एक असामान्यता के लिए उत्परिवर्तन की जननिक पित्रागति, जिसने छालों से युक्त पैर का रूप ग्रहण किया

(हल्डेन द्वारा)

जनन P_1 जनन F_1 (प्रथम पंक्ति), जनन F_2 (दूसरी पंक्ति), जनन F_3 (तीसरी पंक्ति),



नीचे का प्रथम संकेत = अन्य सन्तति, जिसका लिंग नहीं दिया गया, तथा उसके नीचे की संख्या वह है जितनी कि सन्ततियाँ रही होंगी।

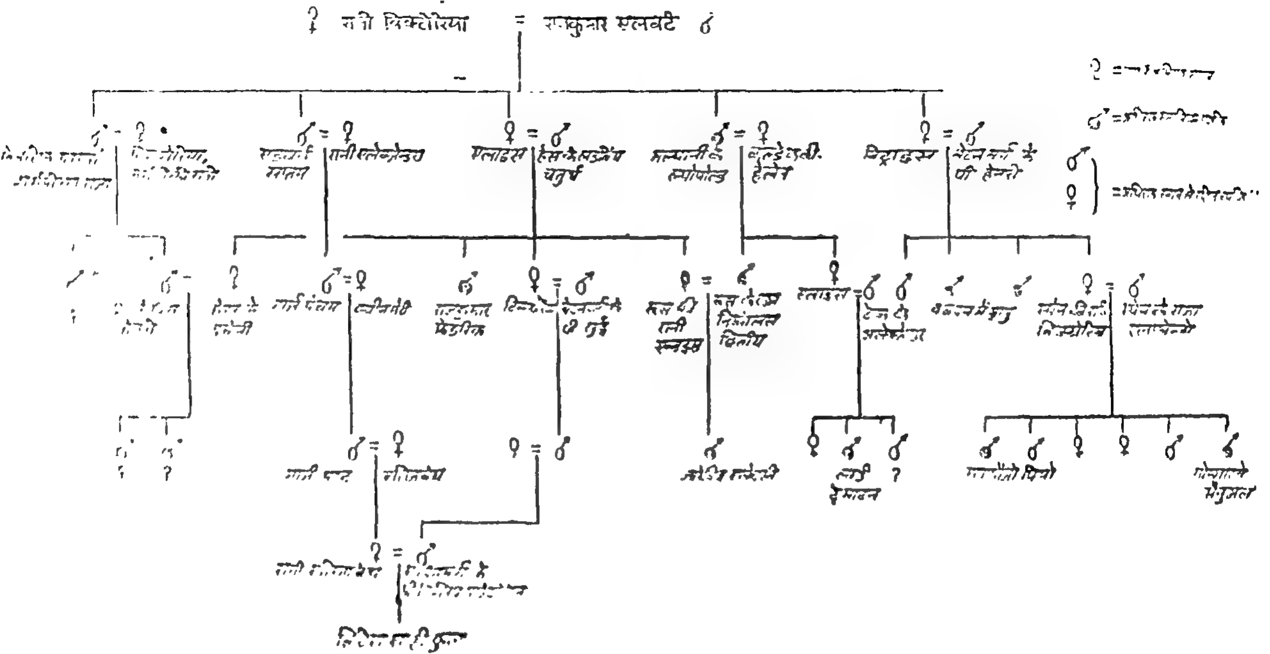
दूसरा संकेत = दो नर।

लिंग-ग्रथित उत्परिवर्तन

जो उत्परिवर्तन देखे तथा लिखे गये हैं, वे कभी कभी लिंग-ग्रथित होते हैं।

१. जैसे कि जे० बी० एस० हल्डेन के म्युटेशन इन मैन, प्रोसीडिंग्स आफ़ दि एट्थ इन्टरनेशनल कांग्रेस आफ़ जेनेटिक्स, हेरेडिटास (Hereditas), परिशिष्ट भाग १, १९४९, पृष्ठ २६७, दि म्युटेशनरेट आफ़ दि जीन फार हेमोफीलिया ऐण्ड इट्स सेग्रीगेशन रेशियोज़ इन मेल्स ऐण्ड फीमेल्स, एनल्स आफ़ जेनेटिक्स, १९४७, भाग १३, पृष्ठ २६२, (Wolff. Zeitschrift fur Rassenbiol, १९१३, भाग १३; सी स्टर्न, प्रिन्सिपिल्स आफ़ ह्यूमन जेनेटिक्स, १९५०, पृष्ठ ४०४

चित्र नं० १२१—यूरोप के शाही कुलों में अविरक्त स्राव की लिंग-ग्रथित पित्रागति का उदाहरण



(ह्यूगो इल्टिस 'Hugo Iltis' के जर्नल आफ हेरेडिटी पर आधारित, १९४८)

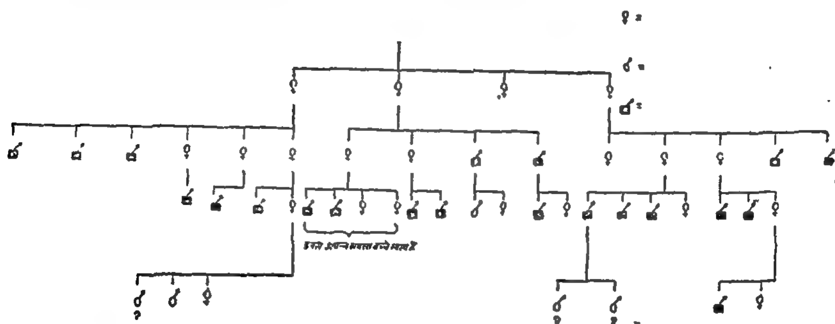
१. ... ने प्रिंसिपिल्स आफ ह्यूमन जेनेटिक्स (Principle of Human Genetics) में बतलाया है कि जमनी ... रानी विक्टोरिया अविरक्त स्राव से मुक्त थी तथा जर्मनशाही वंश में भी इसकी शिकायत नहीं थी।

शाही लिंग-ग्रथित उत्परिवर्तन

एक बहुत रोचक तथा प्रसिद्ध लिंग-ग्रथित उत्परिवर्तन है जिससे कि यूरोप के शासक कुलों में अधिरक्तस्राव की उत्पत्ति हुई। यह स्वयं रानी विक्टोरिया को हुआ अथवा उनके पिता को, यह अनुमान का विषय है। यह स्पष्ट रूप से विदित होता है कि उन्हें यह अपनी माता से नहीं मिला। यह वंशक्रम चित्र[1] नं० १२१ में चित्रित है।

चित्र नं० १२२

अधिरक्तस्राव के पोषण का दूसरा उदाहरण जिससे पित्रागति के लिंग-ग्रथित गुणों की पुष्टि होती है
(स्टेबेल द्वारा, आर० सी० पुनेट के मेण्डेलिज्म से, १९१९, पृष्ठ २०४)



पहला संकेत—स्त्री जो अधिरक्तस्राव से मुक्त अथवा देखने में मुक्त परन्तु जो वाहक का काम कर सकती है
दूसरा संकेत—अधिरक्तस्राव से पूर्ण रूप से मुक्त
तीसरा संकेत—अधिरक्तस्राव वाला पुरुष

[टिप्पणी—

यह कहना सम्भव नहीं है कि विवाह के बाद भी कोई स्त्री अधिरक्त-स्राव से, यदि वह कुल में है, मुक्त है, परन्तु यदि मुक्त नहीं तो वह अपने पुत्रों में उसे पारेषण करेगी।]

१. कुछ स्थानों पर पूर्ण सत्यता सन्देहास्पद है क्योंकि हम सदैव इसी विचार में रहे कि जर्मनी के वर्तमान शाही कुल में अधिरक्त स्राव की पित्रागति रानी विक्टोरिया की पुत्री राजकुमारी विक्टोरिया की ओर से नहीं हुई।

हमारे समक्ष उत्परिवर्तनों के आधार पर यह स्पष्ट है चूंकि वे अब भी बराबर हो रहे हैं, (हालाँकि वह साधारण प्रजनन की क्रिया के विपरीत प्रकार है) वे सदा ही बराबर होनेवाले कारक रहे होंगे इसलिए मानव जनसंख्या के गुणों पर थोड़ा या अधिक प्रभाव डालनेवाले कारक की दृष्टि से उनकी अवहेलना नहीं की जा सकती।

उत्परिवर्तनों की उत्पत्ति में क्ष-रश्मियों (X–ray) का प्रभाव

ऐसा विश्वास किया जाता है कि उत्परिवर्तनों की उत्पत्ति में क्ष-रश्मियों का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ सकता है। यदि ऐसा है तब, जैसा कोकेन[1] तथा अन्य लोगों ने बतलाया है, दवाओं में क्ष-रश्मि के प्रयोग का अध्ययन रोचक होगा। यदि इस प्रकार से उत्पादित परिवर्तन अपसारी हैं, तो वे ७०–१०० वर्षों तक प्रकट नहीं होंगे जिससे उस समय तक अच्छे या बुरे परिवर्तन स्वयं ही हो चुके होंगे, इससे पहले कि हमें वंशानुगति पर डाक्टरी में प्रयुक्त क्ष-रश्मि के प्रभाव की कोई चेतावनी मिल सके। हालांकि, आशा देनेवाली बात यह है कि मनुष्य कहाँ तक विकिरण (रेडियेशन) को सहन कर सकता है इसका पता चल गया है, और यह देखा जा चुका है कि वह उससे अधिक है जितना कि साधारण रूप से डाक्टरी इलाज में प्रयोग में लाया जाता है।

पारमाणविक विकिरण तथा उत्परिवर्तन

इस स्थान पर हम इस तथ्य की ओर इंगित कर सकते हैं कि कुछ वैज्ञानिकों का, जिनमें पिल्किगटन (Pilkington) भी है जिनके विचारों का अभी संक्षिप्त वर्णन किया गया है, यह सामान्य मत है कि पारमाणविक विकिरण का प्रभाव उत्परिवर्तनों को उत्पन्न करने के रूप में घातक हो सकता है, जो सदैव अपसारी होते हैं तथा पूर्णतः हानिकारक भी। अन्य लोगों ने, जैसे सर जान कोक्राफट ने इस बात से इनकार किया है कि पारमाणविक बमों से तथा अन्य परीक्षणों से उत्पन्न विकिरण की मात्रा घनत्व की उस सीमा तक पहुँच सकती है जिससे ऐसा प्रभाव पड़ सके।[2]

१. ई० ए० कोकेन (E. A. Cockayne), पूर्वलिखित, पृष्ठ ३४

२. जहां पर परमाणु बम का विस्फोट हो, उसके निकट यदि कोई व्यक्ति ४५० रंटजन एकक—विकिरण शक्ति का माप—या इससे अधिक सहन कर ले तो उसकी मृत्यु हो जायगी। लगभग २०० एककों के सहन से मानव में उत्परिवर्तन की प्राकृतिक गति दुगुनी, अथवा तिगुनी हो जायगी—उत्परिवर्तन जो कि स्वयं हानिकारक है। सी० स्टर्न, (C. Stern), पूर्वलिखित, पृष्ठ ४३७-३८ तथा ४५०

हल्डेन ने गणना की है कि यदि किसी परमाणुवम के विस्फोट से ५०००० मनुष्य मर जायँ तथा वचे हुए १० लाख को कुछ नहीं से ४५० रंटजन एकक तक विकिरण प्राप्त हो, जिससे २० रंटजन विकिरण का औसत हो तो यह घातक उत्परिवर्तन के कारण मृत्यु की उत्परिवर्तन-सम्वन्धी गति को वहुत अधिक नहीं वढ़ा देगा।

इससे यह भी देखा जा सकता है कि अणु वम के विस्फोट तथा पारमाणविक कलों से होनेवाले विकिरण के सम्वन्ध में जो वाद-विवाद चल पड़ा है उससे सचमुच एक घवराहट नहीं तो अनावश्यक आशंका अवश्य उत्पन्न हो गयी है। तिस पर भी, इसके पहले कि मनमाने तौर से कोई राय कायम कर ली जाय, काफ़ी सीखने को वाकी है। जो हो, एक तरह से यह भी अच्छा ही है कि अधिक विकिरण से उत्परिवर्तन का भय हमारे मस्तिष्क में वना रहे, वनिस्वत इसके कि उसके प्रभावों की हम लापरवाही से उपेक्षा करते रहें।

अव फिर हम उत्परिवर्तनों तथा उनके होने के प्रश्न की ओर झुकते हैं।

व्यत्यसन एक प्रकार का उत्परिवर्तन है

पित्र्यकों के गुणों में रासायनिक परिवर्तन से तथा पित्र्यसूत्रों के टूटने से होनेवाले व्यत्यसन (क्रासिंग ओवर) से और उनके भाग गलत पित्र्यसूत्रों में जुड़ जाने से तो उत्परिवर्तन होते ही हैं। पर ये अन्य प्रकार से भी हो सकते हैं।

पित्र्यसूत्रों की वृद्धि एक प्रकार का उत्परिवर्तन है

पौधों तथा प्राणियों में कभी-कभी देखा गया है कि साधारणतया एक कोश में दो पित्र्यसूत्र होते हैं और फिर अचानक ये तीन वन जाते हैं।

इस प्रकार से युग्मक (जाइगोट) में, माता-पिता में से एक का दूसरे की अपेक्षा अधिक पित्र्यसूत्रों वाला असन्तुलित कोश (सेल) मिलता है। मनुष्यों में ४९ तक पित्र्यसूत्र मिलते हैं। कभी-कभी यह दशा गलत अर्ध-सूत्रण (Meiosis) के कारण होती है, जव कि कोश क्रमशः २३ तथा २५ पित्र्यसूत्रों में विभक्त हो जाता है। इस दशा में एक साधारण मनुष्य से संग करने में ४९ पित्र्यसूत्रों के युग्मक की ही सम्भावना न मिलेगी वल्कि स्वाभाविक ४८ के वजाय ४७ का ही युग्यक होगा।

इस प्रकार के परिवर्तन के फलस्वरूप वहुधा निषेचित कोश नष्ट हो जाता है परन्तु यदि व्यक्ति जीवित रह जाय तो वह विलकुल असाधारण होगा।

अर्ध-सूत्रण में आकस्मिक घटना से उत्परिवर्तन

अर्ध-सूत्रण के समय पित्र्यसूत्र के टूटने तथा गलत भागों के एक साथ जुड़ने के अति-

रिक्त, जिनका वर्णन पिछले अध्याय में चित्र सहित किया गया है, और भी अनेक आकस्मिक घटनाएँ हो सकती हैं। उदाहरण के लिए अर्धसूत्रण में दो पित्र्यसूत्र जुड़ सकते हैं तथा इस क्रिया में एक का एक भाग टूटकर सदैव के लिए कोश के आसपास के कोशद्रव्य (Cytoplasm) में विलीन हो जाता है। जब यह होता है तब गुथे हुए पित्र्यसूत्रों के जोड़े अपना वास्तविक कार्य करने के लिए, एक दूसरे से फिर अलग होकर साधारण रूप में जोड़ा बनायेंगे, पर इस बार अनियमित प्रकार से जोड़ा बनेगा, क्योंकि जो कुछ हुआ है उसके परिणामस्वरूप पित्र्यसूत्र के जोड़े में अवश्य ही एक अथवा उन दोनों के उस हिस्से की कमी रहेगी जो कि साथ में विशिष्ट पित्र्यक लिये रहता है तथा जो अब पूर्ण रूप से उस नस्ल के लिए नष्ट हो गये।

यदि प्रत्येक पित्र्यसूत्र से थोड़ा-थोड़ा भाग विभिन्न छोरों से टूटता है तब परिणाम यह होगा कि जोड़े का शायद ही कोई हिस्सा एक दूसरे के समान हो।

ऐसा होने पर एक बहुत ही अ-साधारण दशा की उत्पत्ति होगी।[1]

इस तथ्य के आधार पर यह विचार करना चाहिए कि अपने बच्चों को दूध पिलानेवाले प्राणियों, मुख्यतः मनुष्यों में, जिनकी स्थिति संपरीक्षण तथा अन्वेषण के उपयुक्त नहीं है, यह निश्चय करना सम्भव नहीं कि उत्परिवर्तन भिन्नयुग्मिक पित्र्यकों (Allelomorphic genes) की बनावट में परिवर्तन से होते हैं, अथवा, जो कि ऐसे परिवर्तनों के लिए सदैव बतलाया जाता है, यह टूटने तथा उसी तरह के अन्य कारणों से सम्भावित पित्र्यसूत्रसम्बन्धी असामान्यता के इस प्रकार के कारण हैं जैसा कि छोटे जीवों पर आधारित हमारे ज्ञान द्वारा पता चलता है।

मनुष्य के उद्विकास में उत्परिवर्तन

विभिन्न प्रकार के मनुष्यों तथा उनकी जातियों के उद्विकास में उत्परिवर्तन के महत्त्व पर सदैव अधिक जोर दिया जाता है। परन्तु यदि वास्तव में जीववैज्ञानिकों का साधारण अनुभव यही हो कि उत्परिवर्तन अवश्य ही हानिकारक हैं तथा जो उदाहरण हमने दिये हैं वे नियम के अपवाद नहीं है, तब इस तथ्य को इस सिद्धान्त से मिलाना कठिन होगा कि उत्परिवर्तन सचमुच ही उद्विकास के साधन हैं।

१. सी० स्टर्न के प्रिन्सिपिल्स आफ़ ह्यूमन बायलॉजी, १९५०, पृष्ठ २० म इसका एक चित्र तथा इसके अतिरिक्त टूटने से बननेवाली अन्य व्यवस्थाओं को देखिए।

पिछले एक अध्याय में हमने व्यत्यसन की चर्चा की है तथा इसमें पित्र्यसूत्रों का टूटना[1] देखा है। इनका परिणाम अवश्य ही उत्परिवर्तन है क्योंकि उनके द्वारा नये प्रकार के पित्र्यसूत्रों का जन्म होता ह तथा ऐसे उदाहरणों में नये संयोजनों का निर्माण सम्भव होता है। यह देखना सरल है कि नये प्रकार की जातियों के उद्विकास में इस प्रकार के उत्परिवर्तनों का (यदि वे हानिकारक नहीं हैं तो) क्या भाग होगा। परन्तु इस प्रकार के उत्परिवर्तन (जिनमें कि चमकीले पदार्थ[2] में किसी भी कारण रासायनिक परिवर्तन भी होते हैं) मनुष्य के विकास में कोई आवश्यक तथा बड़ा भाग नहीं ले सकते, यदि ये उत्परिवर्तन सदैव नहीं, परन्तु साधारणतया हानिकारक हों। यह स्पष्ट है कि इस प्रकार के परिवर्तन जो कम कार्य-क्षमता तथा वास्तविक हानिकारक दशाएँ उपस्थित करते हैं, उद्विकास में सहायक नहीं हो सकते।

इसलिए हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि यदि उत्परिवर्तन, चाहे वे पित्र्यकों तथा पित्र्यसूत्रों के चमकीले पदार्थ (रासायनिक) में परिवर्तन के कारण हों अथवा टूटने या अन्य किसी अनिश्चित कारण से हुए हों, आज पूर्णरूप से घातक हैं, जैसा कि साधारण मत है, तो उन्हें उद्विकास के साधनरूप में देखना कठिन प्रतीत होता है।

अधिक आशा केवल उस असामान्य क्रिया से होती है जिससे एक अन्य पित्र्यसूत्र जुड़ जाता है तथा जिसका अधिक प्रभाव प्रकार बदलने में हो सकता है, यदि अपने पित्र्यसूत्रों की वृद्धि के वाद भी वंशशाखा विनष्ट होने से बची रह सके।

उद्विकास के अस्त्र के रूप में उत्परिवर्तन की क्रिया वैसी ही है जैसी कि आज हम पुरापाषाण (Palaeolithic) युग में जाति बनने के काल में देखते हैं, यदि कभी वैसा हुआ होगा जो ऊपर बतलाये हुए सभी तथ्यों के प्रकाश में काफ़ी सन्देहास्पद है।

उत्परिवर्तनों की प्रगति

इसलिए उस प्रकार के उत्परिवर्तनों का जिनसे हम परिचित हैं (मक्खियों अथवा मनुष्यों में उत्परिवर्तन के प्रभावों को देखकर जिनके कुछ उदाहरण भी दिये गये है) तथा जिन सभी को आज हानिकारक बतलाया जाता है, उद्विकास में हाथ था या नहीं, जैसा कि हमने देखा है कि वास्तव में ऐसा होना सम्भव नहीं यदि वह हानिकारक थे, फिर भी आज-कल सम्परीक्षण में उत्परिवर्तनों का बार-बार होना एक बड़े महत्त्व का विषय है!

१. इसके साथ पित्र्यसूत्रों के क्रम की पुनर्व्यवस्था भी समझनी चाहिए।

२. रंजितक, Chromatin

प्रथम तो चूँकि इसका बार-बार होना सहायक उत्परिवर्तनों की प्रगति बतलाने में निर्देशक हो सकता है, उत्परिवर्तनों की हानिकारकता के प्रमाण होने पर भी, हम यह जानते हैं कि प्रारम्भिक पुरापाषाण युग में मनुष्य के जाति-निर्माण के विकास में यह अवश्य ही सम्बद्ध रहे होंगे।

दूसरे इसलिए भी कि समस्त जनसंख्या में प्रकृतिसम्बन्धी दशाओं को बतलाने के लिए हमें उसकी प्रगति तथा उसका प्रभाव जानना चाहिए तथा कहाँ तक वह जन-संख्या घातक उत्परिवर्तनों से उत्पन्न जीव-वैज्ञानिक बनावट के हानिकारक परिवर्तनों को प्राकृतिक चुनाव द्वारा नष्ट करने में सफल हो सकी है।

जैसा कि हमने बतलाया है, अधिरक्तस्राव के उत्परिवर्तन की बारम्बारता के सम्बन्ध में हल्डेन ने हिसाब लगाया है कि लगभग ५० सहस्र पीढ़ियों में एक ऐसा उदाहरण मिलता है।

कोपेनहेगेन के एक चिकित्सालय में एक कान्ड्रोडिस्ट्रोफिक (Condrodys-trophic) बौनेपन के साधारण प्रभावी उत्परिवर्तन की प्रगति का अनुमान १२,००० पीढ़ियों में एक बार होने का लगाया गया था।[1]

चूँकि, प्रत्येक व्यक्ति के दो साथी अथवा भिन्नयुग्मिक पित्र्यक होते हैं जिनमें से एक इस प्रकार की दशा उत्पन्न करने में सम्बन्धित होता है, इसका अभिप्राय है कि उत्परिवर्तन २४,००० पित्र्यकों में से एक में हुआ है।

साधारण रूप से यह परिणाम निकाला जा सकता है तथा यह देखा भी जा चुका है कि कान्ड्रोडिस्ट्रोफी, हेमोफीलिया से एनीरीडिया (Haemophilia to aniri-dia) तक में उत्परिवर्तन की प्रगति की भिन्नता २५ सहस्र से ८० सहस्र पीढ़ियों में एक बार के हिसाब में से मिलती है।[2]

प्राकृतिक चुनाव तथा उत्परिवर्तन की प्रगति में प्राकृतिक सन्तुलन

इस तथ्य की ओर ध्यान देते हुए कि इन असामान्य उत्परिवर्तनों की प्रगति प्राकृ-तिक रूप से इतनी सन्तुलित है, हम साधारण रूप से कह सकते हैं कि उनके घातक प्रभाव असामान्यताओं के उत्पन्न होते ही उन्हें नष्ट कर देते हैं। इसलिए, उदाहरण स्वरूप

१. सी० स्टर्न, प्रिन्सिपिल्स आफ़ ह्यूमेन जेनेटिक्स, १९५०, पृष्ठ ४०७

२. जे० बी० एस० हल्डेन (J. B. S. Haldane) म्युटेशन इन मैन, प्रोसीडिंग्स, आठवीं इन्टरनेशनल कांग्रेस आफ़ जेनेटिक्स, हेरेडिटास, परिशिष्ट भाग, १९४९, पृष्ठ २६७

अधिरक्तस्राव वाले अधिक लोगों के प्रसवन का कोई मौका नहीं मिल पाता तथा ऐसा दीखता है कि हमारी जनसंख्या को प्रभावित करने के लिए तथा प्रकृतिसम्बन्धी असामान्यताओं द्वारा उसमें कोई विशेष कमी करने के लिए उत्परिवर्तन की प्रगति को काफ़ी आगे बढ़ाने की आवश्यकता पड़ेगी।

उत्परिवर्तन की उत्पत्ति में विभासन की प्रगति

हमारा यह ज्ञान कि क्ष-रश्मि (एक्सरे) से उत्परिवर्तन-सम्बन्धी परिवर्तन हो सकते हैं, जिससे कि क्ष-रश्मि से विभासन के प्रभाव की तथा परमाणु-बमों के संपरीक्षणों के प्रभाव की थाह लगाने में सहायता मिली है, जिसके कारण हम इससे उत्पन्न ख़तरे को समझने लगे हैं तथा उनके सम्परीक्षणों से सम्बन्धित बड़े अधिकारियों द्वारा इसका खण्डन हमें इस नतीजे पर पहुँचाता है कि वर्तमान उत्परिवर्तनसम्बन्धी गति पर प्रभाव डालने के लिए स्वाभाविक विभासन की गति को हजार गुना से भी अधिक बढ़ाना पड़ेगा। इसके सिवा, अधिकतर लोगों का मत इसके विरुद्ध है कि मनुष्य में होनेवाले उत्परिवर्तनों का मुख्य कारण प्राकृतिक विभासन है।

इसलिए यदि वातावरण पारमाणविक धूल से अनावश्यक रूप से बोझिल हो जाता है, जिससे विभासन की गति इतनी बढ़ जाय कि जीवन पर, मुख्यतः मनुष्य के जीवन पर, उसका असर पड़े तो उत्परिवर्तनों सम्बन्धी परिवर्तन प्राचीन समय की अपेक्षा अधिक भिन्न होने की सम्भावना बढ़ सकती है। यह भी हो सकता है कि यदि ऐसी बात कभी हुई तब ये परिवर्तन बहुत हानिकारक ही हो सकते हैं। उस अवस्था में इसकी बहुत कम आशा होगी कि उनके कारण जो व्यक्ति उत्पन्न होंगे वे जीवित रहें अथवा यदि वे जीवित रहने में सफल हुए तो वे जीवन-संग्राम में इतने अयोग्य सिद्ध होंगे जिससे यह माना जा सकता है कि उसका अन्त हो जाना ही अधिक सम्भावित है। अवश्य ही, यदि पूरा-का-पूरा प्रदेश प्रभावित हो जाता है तब जनसंख्या का बड़ा भाग नष्ट हो सकता है। परन्तु स्पष्ट है कि ऐसा करने के लिए विभासन की गति प्राकृतिक गति की अपेक्षा १००० गुना बढ़ानी पड़ेगी।

चूँकि ऐसा सम्भव नहीं है कि पूर्व काल में विकिरण (रेडियेशन) की गति कभी भी इतनी रही होगी, हम उचित रूप से मान सकते हैं कि ज्ञात अथवा सन्देहास्पद कारणों से सदैव ही उत्परिवर्तन की गति २५००० से ८०००० में एक के हिसाब से रही होगी तथा इसी आधार पर मनुष्य में हुए प्रगतिशील परिवर्तनों के सम्बन्ध में अनुमान लगाया जा सकता है।

तिस पर भी हमें इस तथ्य को न भूल जाना चाहिए कि हम केवल अनुमान लगा रहे

हैं कि उस उद्‌विकास में उत्परिवर्तनों का हाथ था, क्योंकि जैसा कि हमने जोर देकर बतलाया है उत्परिवर्तन, जहाँ तक हमें उनकी जानकारी है, निःसन्देह हानिकारक हैं तथा मानव अथवा जातियों की उन्नति में वे कारणस्वरूप न रहे होंगे। भूतकाल में समय-समय पर कुछ परिवर्तन जीवित पदार्थों की समरूप आकृति में हुए हैं। साथ ही ये सदैव धीरे-धीरे नहीं हुए हैं परन्तु कभी-कभी ऊपर की ओर शीघ्रता से प्रगति हुई है तथा यह मानना उचित है कि ये बड़े रूप में आन्तरिक जननिक परिवर्तनों को सूचित करते हैं, निःसंदेह ही जो उत्परिवर्तनों के समान, जैसा कि हमने अपने निरीक्षणों में देखा है, जननिक रूप से कार्य करते हैं। इस प्रकार के बड़े जननिक परिवर्तन, उत्परिवर्तन हो सकते हैं परन्तु वैसे नहीं जैसे हम उन्हें जानते हैं तथा जैसे आजकल प्राकृतिक अथवा कृत्रिम रूप से प्रयोगशाला में होते हैं।

इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि यदि उत्परिवर्तन, उद्‌विकास के लिए कारण समान होते, तब हमें मानना चाहिए कि आजकल पाये जानेवाले स्वाभाविक रूप से हानिकारक उत्परिवर्तनों से भिन्न, भूतकाल में एक नये प्रकार के लाभदायक उत्परिवर्तन हुआ करते थे जो जीवित पदार्थों की जाति या प्रकार बनने के समय सहायक होते थे।

अन्त में, जब कि हम उत्परिवर्तनों के विषय में अपने विचार बदलने को हमेशा तैयार हैं, हम सोचते हैं कि मनुष्य तथा उसकी जातियों के उद्‌विकास में उनके प्रभावों पर पूर्वकाल की अपेक्षा भविष्य में अधिक पूर्ण रूप से अनुसन्धान करना चाहिए तथा हमारा यह विचार नहीं है कि रासायनिक परिवर्तनों के कारण उत्परिवर्तनों की दोहाई दे देना ही पूर्णतः अभी तक हुए जातियों के विकास के प्रत्येक अगले कदम की व्याख्या है। यह हो सकता है कि व्यत्यसन आदि यंत्रवत कारणों से उत्पन्न उत्परिवर्तनों का होना उस समय बहुत महत्त्वपूर्ण कारक रहा होगा जब कि मानव-समाज का युवाकाल था और मनुष्यों की संख्या कम थी तथा जब प्राकृतिक चुनाव को छोटे एककों की स्थापना को प्रोत्साहन देने का पूर्ण अवसर था, जिनमें जननिक प्रसरण आदि आकस्मिक पृथक्करण द्वारा नये तथा इच्छित पुनःसंयोजन बन गये थे।

तृतीय खण्ड

परिस्थिति तथा भौगोलिक निश्चयवाद के दावे और जुड़वाँ तथा मानव-जनन के अन्य पहलुओं में वंशानुगति के अध्ययन पर आधारित उनके प्रमाण।

तृतीय खण्ड की भूमिका

जननिक नियमों के प्रयोग के प्रकाश में, जिनका वर्णन हम कर चुके हैं, मनुष्य के जातिगत गुणों की व्याख्या करने के पूर्व, परिस्थिति के प्रभाव सम्बन्धी दावों से उत्पन्न समस्याओं को सुलझाना आवश्यक है।

हम पौधों तथा पशुओं में वंशानुगति के प्रभाव का चाहे जितना वर्णन करें तथा मनुष्य में भी वंशानुगति-सम्बन्धी क्रियाओं का स्पष्ट उदाहरण बतलाएं, फिर भी वर्षों पुराना दावा बना रहता है कि जीवित पदार्थों, मुख्यतः मनुष्य पर, बाह्य उद्दीपनों के परिवर्तनकारी प्रभाव भी पड़ते हैं। ये प्रभाव मुख्य रूप से परिस्थिति के होते हैं, हालां कि इस सम्बन्ध में सामाजिक प्रभावों की भी पूर्णरूप से अवहेलना नहीं की जा सकती। फिर भी इस समय हम अपने उद्देश्य के लिए मनुष्य पर पड़नेवाले परिस्थिति के शक्ति-शाली प्रभाव के सम्बन्ध में किये गये मुख्य दावों तक ही अपने को सीमित रखेंगे।

इसलिए, हम सबसे पहले पूर्वकाल से वर्तमान समय तक के परिस्थितिवादियों के दावों के वर्णन से विषय का आरम्भ करेंगे तथा विशेष रूप से इस सम्बन्ध में जातीय जननिक के मूल तथ्यों से उनके दृष्टिकोण कहाँ तक समान तथा असमान हैं, यह देखते हुए भौगोलिक निश्चयवादियों के मतों की व्याख्या करेंगे।

इसके पश्चात् हम परिस्थिति तथा वंशानुगति के सम्पूर्ण विषय की व्याख्या करेंगे जिसमें समान तथा असमान जुड़वों के एवं समान माता या पिता के बच्चों के पारिवारिक इतिहास से प्राप्त सामग्री से इसका क्या सम्बन्ध है, इस पर भी विशेष रूप से विचार किया जायगा।

पंद्रहवाँ अध्याय

परिस्थिति तथा भौगोलिक निश्चयवाद

किसी भी ऐसी रचना में जो कि मानव जातियों की जटिलता के अध्ययन से सम्बन्ध रखती है, एक ऐसे नियम के जानने तथा प्रतिज्ञापन करने की आवश्यकता उत्पन्न होती है कि जातियों की उत्पत्ति क्यों और कैसे हुई। साथ ही ऐसी पुस्तक में एक जातीय समूह से दूसरे की विभिन्नताओं की भी व्याख्या करना आवश्यक होता है।

हमारी पुस्तक जननिक अध्ययन पर आधारित है इसलिए हमारे लिए वंशानुगति पर विचार करना महत्त्वपूर्ण है।

तिसपर भी चूँकि एक ऐसा मत है जो परिस्थिति की परिवर्तनकारी क्षमता के विचार पर आधारित है, इस दृष्टिकोण की माँगों पर विचार करना अच्छा होगा तथा उस प्रमाण की परीक्षा बाद में की जायगी जो कि मुख्यतः उस सामग्री पर आधारित है, जिसकी व्याख्या ऐतिहासिक तथा जातियों सम्बन्धी भूगोल के इन सामान्य निष्कर्षों की अपेक्षा अधिक विस्तार से की जा सकती है। इन निष्कर्षों से उत्पन्न दार्शनिक धारणाओं का खण्डन वैसे ही सामान्य तर्कों से किया जा सकता है।

अत्यन्त प्राचीनकाल से ही परिस्थितिवादी मिलते हैं

यह बतलाना निरर्थक है कि प्राचीनकाल से ही एक ऐसी धारणा थी कि मनुष्यों की विभिन्नता के निर्माण में परिस्थिति का शक्तिशाली हाथ होता है।

हिप्पोक्रेटीज़[1] ने (४२० ई० पूर्व)—अपनी रचना "आन एयर्स, वाटर्स तथा प्लेसेज़" में उत्साहहीन पूर्वनिवासी तथा अधिक शक्तिशाली किन्तु निर्धन पश्चिम-निवासियों की विभिन्नता का कारण भौगोलिक बतलाया है। उसके कथनानुसार पश्चिमी लोग अपनी शोचनीय परिस्थिति के कारण अच्छी दशाओं में स्थित अपने पड़ोसी एशिया-निवासियों की अपेक्षा अधिक कठिन परिश्रम करने को बाध्य हुए। उसने यह

१. Hippocrates

भी कल्पना की कि स्थलविशेष की प्राकृतिक स्थिति के कारण ही ठंडे ऊँचे प्रदेशों में, सूखे निचले प्रदेशों के दुवले, सख्त, साफ़ रंग के मनुष्यों की अपेक्षा, लम्वे, अनुद्दण्ड किन्तु वहादुर मनुष्य होते हैं।

अरस्तू ने (३८४-३२२ ई० पूर्व) अपनी "पालिटिक्स" में लगभग ऐसे ही विचार प्रकट किये हैं। उसके अनुसार यूरोप के ठण्डे प्रदेशों में वहादुर किन्तु साथ ही वौद्धिक एवं प्राविधिक रूप से पिछड़े कमज़ोर लोगों की उत्पत्ति होती है, जो कि इन परिस्थितियों के कारण ही स्वतन्त्रता-प्रेमी तो थे परन्तु राजनीतिक योग्यता न होने के कारण वे अपने पास-पड़ोस के लोगों पर शासन नहीं कर सके। जव कि पूर्व के लोग वुद्धिमान् तथा प्राविधिक रूप से निपुण होते हुए भी निम्न भावना के थे इसलिए दासता तथा अत्याचार से पीड़ित हुए। यूनान के निवासी इन दोनों छोरों के मध्य में होने के कारण दोनों क्षेत्रों की अच्छाई से लाभ उठाने में सफल हुए।

हम पोलीवियस[1] को (२०३-१२१ ई० पूर्व) लिखते पाते हैं कि मनुष्यों में जलवायु से प्रभावित होने की एक अनिवार्य प्रवृत्ति मिलती है तथा मनुष्यों में आकार, रंग और साथ ही आदतों की जो अत्यन्त विभिन्नताएँ दिखलाई देती हैं, वे इन्हीं कारणों से हैं। यह धारणा, जैसा कि हमने अभी वतलाया है, साधारण रूप से अव भी मानी जाती है तथा उष्ण कटिबन्ध में काले लोगों और शीत कटिवन्ध में श्वेत लोगों के सामान्य वितरण से इस मत को स्पष्ट रूप से वल मिलता है जिसकी चर्चा हम वाद में फिर करेंगे।

स्ट्रेबो ने (६३ ई० पूर्व ३६ ई० पश्चात्) अपनी भौगोलिक *व्याख्या* में ऐसे मतों को स्वीकार किया है क्योंकि उसके अनुसार रोम की उन्नति के लिए इटली (Italy) की वनावट, प्राकृतिक दशा तथा जलवायु उत्तरदायी है।

वाद के १६वीं तथा १७वीं शताव्दी के फ्रान्स के परिस्थितिवादी

वाद के लेखकों में इन्हीं मतों के माननेवाले थे जिनमें से अधिकांश फ्रान्स के थे। १६ वीं शताव्दी के जे० बोदां[2] (J. Bodin) ऐसे ही दर्शनशास्त्रियों में थे। उन्होंने उत्तरी देशान्तर को वहाँ के निवासियों की निर्दयता, क्रूरता तथा पराक्रमशीलता का कारण वतलाया है। इसी तरह उन्होंने अधिक शीतोष्ण देशान्तरों को उत्तरी निवासियों की अपेक्षा वहाँ वालों के अधिक कौशलपूर्ण होने का कारण माना है तथा दक्षिण

१. Polybius

२. Les Six Livres de la Republique, Lib. V. Cap. I.

के देशान्तर में रहनेवालों में कम उत्साह, साथ ही अधिक छल तथा विद्वेष का पाया जाना वहाँ की स्थिति के फलस्वरूप बतलाया है। हालाँकि उनकी प्रशंसा में उन्होंने स्वीकार किया है कि उनमें सत्य तथा असत्य के बीच निर्णय करने की क्षमता होती है।

सत्रहवीं शताब्दी में मान्टेस्क[1] (Montesquieu) का विश्वास था कि उत्तरी भाग के लोगों को मजबूत शरीर के, बहादुर तथा सत्य बोलनेवाले और दक्षिणवालों की तरह छली अथवा शंकास्पद न बनाने के लिए वहाँ का जलवायु उत्तरदायी था। परन्तु उसका विश्वास था कि यदि उत्तर के लोग दक्षिण के शक्तिहीन बना देनेवाले जलवायु में बस जाते तब शीघ्र ही उनकी शक्ति समाप्त हो जाती। इसलिए यह प्रश्न नहीं उठ सकता कि उष्ण कटिबन्ध वाले देशों में सदैव ही स्थिर सभ्यताएँ मिलेंगी। मान्टेस्क के अनुसार अफ्रीका की तरह के बंजर प्रदेश गणतन्त्र की उत्पत्ति करते हैं तथा डोरियन्स जैसे उपजाऊ प्रदेश में राजतंत्र मिलता है। इसी तरह द्वीपसमूहों का भी वहाँ के निवासियों के चरित्रों पर विशेष प्रभाव पड़ता है।

१९ वीं शताब्दी के परिस्थितिवादी

इन लेखकों के पश्चात् हम जर्मनी तथा फ्रान्स के बादवाले लेखकों को देख सकते हैं जिन्होंने अपने विचारों को इन परिस्थितीय आधारों पर विकसित किया है।[2]

इस प्रकार कार्ल रिटर[3] के (१७७९-१८५९) मत ने साधारणतया गम्भीर होते हुए भी इस दृष्टिकोण के विकास में सहायता दी है। उदाहरण के लिए जब वे खुलकर मत व्यक्त करने लगते थे तो उन्होंने बतलाया कि तुर्की-निवासियों की सँकरी आँखें मरुस्थलीय परिस्थिति के प्रभाव के कारण थीं।

रायटर १८४९ में यह बतलाने में समर्थ हुए कि डच लोगों में कफ का मिलना उनकी भौगोलिक दशाओं के कारण था। इसी तरह फ्रेडरिक लेपले[4] (१८००-८२),

१. स्पिरिट आफ् लाज (Spirit of laws), बुक् (Book) XIV, अध्याय २, ४, ५, बुक XVIII, अध्याय १, ५

२. जी० टॅथम (G. Tatham) के एनवाइरनमेन्ट एण्ड पासीबिलिज्म इन ज्योग्रेफी इन ट्वेन्टिएथ सेन्चुरी (Environment and Possibilism in Geography) ग्रिफिथ टेलर द्वारा संकलित, न्यूयार्क तथा लन्दन, १९५३, पृष्ठ १३०

३. Carl Ritter

४. Frederick Leplay

तथा एडमन्ड डेमोलिन्स का कार्य भी उसी दिशा में मिलता है। डेमोलिन्स[1] लिखते हैं कि—

"पृथ्वी के धरातल पर पायी जानेवाली जनसंख्या में वहुत विभिन्नता है। यह विभिन्नता किसने उत्पन्न की है? साधारणतया जो उत्तर दिया जाता है वह है 'जाति' (रेस) ने; परन्तु जाति से कुछ स्पष्ट नहीं होता क्योंकि यह खोजना अब भी वाकी रह जाता है कि जातियों की उत्पत्ति कैसे हुई। मनुष्यों तथा जातियों में विभिन्नता मिलने का प्रथम तथा सबसे निश्चित कारण वह भिन्न मार्ग है जिसे मनुष्यों ने (अपने देशान्तर-गमन के समय) अपनाया। यह मार्ग ही है जिससे अलग-अलग जातियों तथा सामाजिक प्रकार की उत्पत्ति हुई है। पृथ्वी के मार्गों ने, शक्तिशाली धातु के भभके की भाँति, इनमें से निकलनेवाले लोगों को एक ढंग से या दूसरे ढंग से परिणत कर दिया है।"

"यह उपेक्षा का विषय नहीं रहा है कि मनुष्यों ने एक मार्ग अथवा दूसरा मार्ग लिया, जैसे एशिया में घास के मैदानों का मार्ग, या साइवेरिया-टुन्ड्रा का मार्ग अथवा अमेरिका में घास के मैदानों का मार्ग या अफ्रीका में वनों का मार्ग। अलक्ष्य रूप से तथा अनिवार्य रूप से इन मार्गों ने तातार, मंगोल, लैप, एस्क्वीमाक्स, रेडस्किन, भारतीय अथवा नीग्रो प्रकारों का निर्माण किया। इस कथन के विपरीत कुछ नहीं कहा जा सकता। यह देखा जायगा कि यह एक सुप्रतिष्ठित नियम है। यह भी उदासीनता का विषय नहीं है कि मनुष्य अरेविया तथा सहारा के मरुस्थलों के मार्गों से अथवा दक्षिणी तथा पूर्वी एशिया के मार्गों से चले। अलक्ष्य तथा अनिवार्य रूप से इन मार्गों ने अरब निवासी, तथा असीरिया (Assyria) और मिस्री प्रकार को अथवा मीड्स तथा फ़ारस वालों या चीनियों, जापानियों अथवा हिन्दुओं के प्रकार को वनाया है।"[2]

डेमोलिन्स के विचार काफी विस्तार से उद्धृत किये जा सकते हैं जिनमें उन्होंने भौगोलिक परिस्थिति को, मानव के जातिसम्वन्धी विभागों के साथ ही उनकी मानसिक, स्वभावसम्वन्धी तथा मनोवैज्ञानिक विशेषताओं की और अन्त में मानव के सामाजिक संघटन की उत्पत्ति का एकमात्र कारण वतलाया है।

१. Edmond Demolins, Essai de geographie sociale, Comment la route cr' eeletype sociale, 1901-3.

२. जी० टैथम (G. Tatham) से ज्योग्रफ़ी इन दि ट्वेन्टिएथ सेन्चुरी (Geography in the Twentieth Century) में, पूर्वलिखित, पृष्ठ ३९

कुमारी सेम्पल के विचार

डेमोलिन्स के पश्चात् ही ई० सी० सेम्पल[1] उसी निश्चयता के दृष्टिकोण को लेकर आगे बढ़ी हैं, हालाँकि वे उस सीमा तक नहीं गयीं। जैसा कि टैथम ने उनकी सन् १९११ में प्रकाशित रचना "इनफ्लुवेन्सेज़ ऑफ ज्योग्रेफिक एवाइरनमेण्ट" के विषय में कहा है—"हालाँकि मानव-भूवृत्त सिद्धान्तों के कथन के लिए इसकी योजना की गयी पर यह (जैसा कि शीर्षक से स्पष्ट है) एक पुराने विषय की, याने मानव पर प्राकृतिक परि-स्थिति के प्रभाव की समीक्षा है। यह पुस्तक इस कल्पना से आरम्भ होती है कि ऐसे प्रभावों का अस्तित्व है जिनसे कुछ सीमा तक वैज्ञानिक पक्षपातहीनता नष्ट हो जाती है।" इस प्रकार वे मनुष्य के विषय में कहती हैं—"पर्वतों पर पृथ्वी ने उसकी टाँगों की मांसपेशियाँ लोहे की बनायी हैं जिससे वह ढालों पर चढ़ सके तथा तटवर्ती प्रदेशों में उसने टाँगों को कमजोर और कोमल बनाया है, परन्तु इसके स्थान पर उनकी छाती तथा बाँहों का अच्छा विकास किया है जिससे वह डाँड़ अथवा पतवार चला सके।"

कुमारी सेम्पल ने अधिकांश भौगोलिक निश्चयवादियों के समान ही मानव की शारीरिक बनावट पर भूगोल के प्रभाव की बात तक ही अपने को सीमित नहीं रखा वरन् यह भी बतलाया है कि उसने मनुष्य के मानसिक तथा मनोविज्ञान सम्बन्धी दृष्टि-कोण को भी प्रभावित किया है तथा वास्तव में उसके विभिन्न धर्म भी प्रकृति के प्रभाव के कारण ही हैं। इस प्रकार "बुद्ध भगवान् का जन्म हिमालय की उष्णतापूर्ण तराइयों में हुआ तथा गर्मी और आर्द्रता से उत्पन्न थकावट से संघर्ष करने के बाद उन्होंने अपने स्वर्ग को मोक्ष (या निर्वाण) के रूप में माना है, जहाँ समस्त कार्यों तथा व्यक्ति के जीवन का अन्त हो जाता है।"[2] वे भी उस मत को मानती हैं कि अद्वैतवाद की उत्पत्ति मरु-स्थलों में हुई, जैसा कि उन अध्यात्मवादियों ने कहा है जो कि यहूदी धर्म को अन्य की उत्पत्ति बतलाते हैं—"इतिहास का प्रमाण हमें यह दिखलाता है कि एक ऐसा सिद्धान्त भी है कि धर्म की विशिष्ट प्रतिभा मरुस्थल में उत्पन्न होती है।"

देशान्तर तथा जलवायु के प्रभाव पर उनके विचार पूर्ण रूप से परिस्थितिवादी पद्धति पर हैं तथा उनमें पूर्व लेखकों की ध्वनि का आभास मिलता है। इसीलिए हमें उनके निम्नलिखित विचार मिलते हैं—

१. E. C. Semple
२. जी० टैथम से, पूर्वलिखित, पृष्ठ ४१

"यूरोप के उत्तरी निवासी भावुक होने की अपेक्षा उद्योगशील, गम्भीर वृत्ति के एवं विचारशील हैं तथा उत्तेजनावाले होने की अपेक्षा सावधानी से काम करनेवाले हैं। दक्षिण में भूमध्यसागरीय प्रदेश के लोग सरल प्रकृति के, अत्यन्त आवश्यकता के समय छोड़कर अन्य समयों में अदूरदर्शी, प्रसन्न, भावमय तथा कल्पनाशील गुणों के होते हैं और यही गुण विषुवत क्षेत्रीय नीग्रो लोगों में गम्भीर जातीय दोषों में परिणत हो जाते हैं। यदि सुवर्ण रंग के ट्युटन्स जातीय लोग भूमध्यसागरीय भूरी जाति से साफ होकर बने हैं, जैसा कि बहुत से जाति-वैज्ञानिक मानते हैं,, तब स्वभाव की यह विपरीतता जलवायु[1] के कारण ही है!"

वर्तमान निश्चयवादी—

प्रोफेसर एल्सवर्थ हण्टिंगटन तथा ग्रिफ़िथ टेलर

भूगोलवेत्ताओं में से निश्चयवादी मत के माननेवालों में हमारे समय में ग्रिफ़िथ टेलर[2] तथा एल्सवर्थ हण्टिंगटन[3] के नाम[4] उल्लेखनीय हैं।

बहुत कम भूगोलवेत्ता आज इस दर्शन के पक्ष में हैं। इसके भौगोलिक कारणों का निरीक्षण हम बाद में करेंगे। तिस पर भी जो लोग इसके माननेवाले हैं, उन्होंने अपने पूर्व वैज्ञानिकों सहित साधारण विचारों को बहुत प्रभावित किया है जिससे आजकल की सामाजिक दशा तथा राजनीतिक सिद्धान्तों की मुख्य विचार-धाराओं पर पूर्ण अथवा अपूर्ण रूप से उन सिद्धान्तों का प्रभाव पड़ा है जिनमें यह माना गया है कि परिस्थिति प्रभावकारी शक्ति है।

फिर भी ग्रिफ़िथ टेलर की स्थिति में अपने पूर्वजनों की तुलना में कई बातों में परिवर्तन हो गया है। उदाहरण के लिए हम उन्हें यह कल्पना करते हुए पाते हैं कि स्वर्ण रंग के नार्डिक उसी वर्ग से उत्पन्न हुए हैं जिससे मेडिटेरेनियन लोग। ये पिछले लोग इसलिए काले हो गये कि स्वर्ण रंगवाले उस परिस्थिति के अनुकूल नहीं थे "तथा

१. पूर्वलिखित, पृष्ठ ६२०

२. Griffith Taylor ३. Ellsworth Huntington

४. उनके साथ उनके जीववैज्ञानिक साथी, उपार्जित गुणवादी, भी लिये जा सकते हैं, जो कि उसी सिद्धान्त के माननेवालों का, कि प्राप्त किये गये गुणों का बाह्य उद्दीपनों द्वारा पारेषण होता है, एक छोटा समूह है।

प्रागैतिहासिक देशान्तरगमन के कारण सहस्रों वर्षों में नष्ट हो गये।"[1] यह मत वास्तव में शुद्ध परिस्थितिवाद का त्याग ही है, क्योंकि भौगोलिक निश्चयवादी जाति में परिवर्तन होने का यह कारण स्वीकार न करता कि भूगोल ने वंशानुगति से उत्पन्न परन्तु परिस्थिति के प्रतिकूल होने के कारण किसी विशेष प्रकार को प्राकृतिक चुनाव द्वारा नष्ट कर दिया। उसने यह घोषित कर दिया होता कि परिस्थिति ने ही एक नये प्रकार का निर्माण किया।

रुको और जाओ—निश्चयवाद

इसलिए हम कह सकते हैं कि प्रोफेसर ग्रिफ़िथ टेलर ने, जिन्होंने अपने मत को "रुको और जाओ, निश्चयवाद" कहा है, भौगोलिक प्रभाव के विशुद्ध जीववैज्ञानिक पहलू में निश्चयवाद का त्याग कर दिया है। इस विषय के अन्य पहलुओं, विचारों में उन्होंने इसका त्याग नहीं किया, यह दूसरी बात है तथा इनमें वे अब भी निश्चयवादियों के मतों को माननेवाले हैं। हालांकि, यहाँ पर भी, टॅथम[2] तर्क करेंगे कि उन्होंने अपने शुद्ध निश्चयवादी दृष्टिकोण में काफी सुधार कर दिया है या उसे त्याग ही दिया है।

जाति-निर्माण के क्षेत्र में स्वर्गीय प्रोफ़ेसर एल्सवर्थ हण्टिंगटन के कार्य पूर्ण निश्चय-वादी बने रहे हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि शरीर के आकार[3] के विषय में लिखते समय वे कहते हैं—

"किसी दिये हुए समूह के मनुष्यों के शारीरिक आकार तथा कुछ सीमा तक उनके स्वभावसम्बन्धी गुणों की पित्रागति में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में परिवर्तन हो सकता है। इस प्रकार के परिवर्तन नयी परिस्थितियों के कारण हो सकते हैं जैसे कि हवाई (Hawaii) में जापाननिवासियों तथा न्यूयार्क में इटली अथवा रूस के आप्रवासितों में हुआ है।"

आगे चलकर इसकी व्याख्या करने की आवश्यकता पड़ेगी क्योंकि उसका सम्बन्ध

१. ग्रिफ़िथ टेलर, रेशियल ज्योग्रफी इन ट्वेन्टिएथ सेन्चुरी (Racial Geography in Twentieth Century) पृष्ठ ४३८

२. पूर्वलिखित, पृष्ठ १५९

३. मेनस्प्रिंग्स आफ़ सिविलाईजेशन (Mainsprings of Civilization) न्यूयार्क तथा लन्दन, १९४५, पृष्ठ ६३

प्रो० फ्रैन्ज़ बोआस[1] के कथनों से है। ये मानवशास्त्रियों में उपार्जित गुणवाद के जो कि भौगोलिक निश्चयवाद का जीववैज्ञानिक पर्याय है, व्याख्याताओं में से एक हैं।

फिर भी, हण्टिंगटन निश्चयवादियों के स्थान से काफ़ी आगे बढ़ गये हैं तथा यह स्वीकार करते हैं कि संभवतः अपने चुनाव संबंधी प्रभाव से, सामाजिक कारण भी, उतने ही बड़े परिवर्तन कर सकते हैं जितने बड़े उन्होंने परिस्थिति द्वारा बतलाये हैं, क्योंकि ऊपर दिये हुए अवतरण के साथ ही वे कहते हैं —

"भौतिक परिस्थिति में कोई स्पष्ट विभिन्नता न होने पर भी वे हो सकते हैं परन्तु सामाजिक रीतियों में होनेवाले परिवर्तनों के साथ सामंजस्य बनाये रखते हुए, जैसे लड़कियों को अपना पति चुनने की स्वतन्त्रता अथवा किसी नये विचार का समावेश, जैसे गर्भनिरोध का विचार। इस प्रकार येल (Yalc) के विद्यार्थियों में गर्भरोध की नयी सामाजिक रीति ने तिकोने की अपेक्षा चौकोर आकार के मनुष्यों अथवा उनकी पत्नियों को अधिक प्रभावित किया है। सम्भवतः शारीरिक गठन की विभिन्नता से सम्बन्धित स्वभाव की विभिन्नता के कारण ऐसा हुआ।

इसलिए हम यह प्रश्न कर सकते हैं कि परिस्थितिवादियों के भौगोलिक मत की धीरे-धीरे क्यों इतनी अवनति हो गयी तथा उसकी सीमा क्यों इतनी संकुचित रह गयी कि अभी तक अपने को निश्चयवादी कहलाने वाले लोग या तो जाति के निर्माण में परिस्थिति के परिवर्तनकारी प्रभाव को पूर्ण रूप से अस्वीकार कर दें अथवा यदि वे इस सीमा तक जाने को तैयार न हों तो परिस्थिति के साथ-साथ वैसे ही अन्य शक्तिशाली कारकों का होना स्वीकार करें।

सम्भवतः इस प्रश्न का दोहरा उत्तर है।

प्रथम यह कि उनका घटते जाना उपार्जित गुणवाद के उतार के साथ-साथ चल रहा है, क्योंकि वैज्ञानिक प्रमाणों के प्रकाश में जीव-वैज्ञानिक मतवालों में से उस सिद्धान्त के अनुयायी कम ही मिलते हैं[2]। इसके विषय में हमें कुछ समय बाद काफ़ी कहना है जब कि हम परिस्थिति के प्रभाव से सम्बन्धित जीव-वैज्ञानिक प्रमाण पर आधारित कुछ मुख्य तत्त्वों की चर्चा करेंगे।

दूसरा कारण भूगोल के क्षेत्र में ही मिलता है जहाँ पर सम्भववाद नाम का एक

१. Prof. Franz Boas

२. यह देखना शेष है कि रूस में उपार्जित गुणवाद के पुनरुत्थान के पश्चात् वहाँ पर भौगोलिक निश्चयवाद का, इसी के समान पुनर्विकास होता है या नहीं।

प्रतिद्वन्द्वी सिद्धान्त, जिसको माननेवाले अधिक लोग हैं, उसका स्थान ग्रहण करता जा रहा है ।

सम्भववाद (Possibilism)

स्थूल रूप से सम्भववाद का मत, निश्चयवाद के आवश्यक पहलुओं को छोड़कर अन्य पहलुओं से सम्बन्धित रहा है । हमारी दृष्टि से आवश्यक पहलू वह है जिसका सम्बन्ध मनुष्य के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक कार्यों के विकास पर पड़नेवाले भौगोलिक प्रभाव से है।

इस मत की उत्पत्ति प्राकृतिक विज्ञान की अपेक्षा सीधे इतिहास के क्षेत्र से हुई तथा उस पर मनुष्य की चुनाव की स्वतन्त्रता के सिद्धान्त का काफी प्रभाव पड़ा है।

इस दृष्टिकोण का फारे[1] ने अपनी ज्योग्रेफिकल इन्ट्रोडक्शन टु हिस्ट्री में, वाइडल डेला ब्लाश[2] तथा ब्रुने[3] ने फ्रान्स में और इसाइया बोमैन[4] तथा अन्य ने अमेरिका मे समर्थन किया।

इनके सिद्धान्तों ने मनुष्य पर पृथ्वी के प्रभाव की अपेक्षा पृथ्वी पर मनुष्य के प्रभाव पर जोर दिया है।

सम्भववादी दर्शन का मुख्य विचार यह है कि परिस्थिति अनुमोदक है, आज्ञा देनेवाली नहीं।

जिस प्रकार यह प्रतीत होता है कि बाद के निश्चयवादी कभी कभी दो स्वर में बोलते हैं और यह विचार त्याग देते है कि मनुष्य तथा उसके समाज के उद्विकास में परिस्थिति का पूर्ण प्रभाव पड़ता है, ठीक उसी प्रकार जब हम सम्भववादियो को बोलते हुए पाते हैं तब उनकी भाषा से स्पष्ट परिस्थितिवादियों का मत प्रकट होता है, जिस प्रकार कि वाइडल डिला ब्लाश **'परिस्थिति के श्रेष्ठ प्रभाव'** के बारे में कहता है तथा ब्रुने भी उसी प्रकार की भाषा का प्रयोग करता है।

ये तथ्य हमारे मस्तिष्क में शंका उत्पन्न कर देते है कि सम्भववाद ने जो इतना अधिक निश्चयवाद का स्थान ले लिया है, क्या यह, जैसा कि मानववैज्ञानिक अथवा

१. Febvre.

२. Vidal de la Blache.

३. Brunhes.

४. Isaiah Bowman.

जननिकशास्त्र का ज्ञाता कहेगा, ठीक कारण से हुआ है। कारण, यह स्पष्ट है कि भूगोल-वेत्ताओं के कुछ समूहों में साधारणतया भूतकाल में तथा अब भी, कम प्राविधिक शिक्षा-प्राप्त मनुष्यों के समान, कुछ ऐसी प्रवृत्ति मिलती है कि वे मनुष्यों की वर्तमान विभिन्नता में परिस्थिति का प्रभाव देखते हैं।

जहाँ तक वे ऐसा करते हैं वे जीव-विज्ञान में उपार्जित गुणवाद के माननेवालों के साथी हैं, परिणामतः अब भी भौगोलिक निश्चयवादी बने रहते हैं।

सम्भववादियों ने मुख्यतः दार्शनिक दृष्टिकोण से आलोचना की है और पूछा है कि क्या मनुष्य अपने कार्यों के लिए स्वतन्त्र है? इस प्रकार वे वर्तमान तथा निकट भूतकाल के दर्शनों की साधारण प्रवृत्ति बतलाते हैं, जो कि आर्मीनियावाद (Arminianism) तथा उसके 'स्वतन्त्र इच्छा के सिद्धान्त' से मिलती-जुलती अथवा उससे उत्पादित हुई। निश्चयवादी लोगों के प्रति उनका आक्षेप उसी प्रकार का है, जैसे कि आर्मीनिया निवासियों का कैल्विनवादियों के पूर्वनिर्धारित भाग्य या प्रारब्ध[१] के सिद्धान्तों के प्रति था।

जहाँ तक ऐसा है, वास्तव में इसका अर्थ यह नहीं निकलता, जैसे हम आगे देखेंगे, कि जाति-विज्ञान के प्रमाण की जननिक रूप से व्याख्या सम्भववाद के पक्ष में है। इसलिए हो सकता है कि वंशानुगति के तथ्यों की अधिकांश वैज्ञानिक चाहे कितनी ही व्याख्या करें कि वे परिस्थितिवादियों के इस विश्वास के विरुद्ध हैं कि परिस्थिति में सक्रिय परिवर्तन की शक्ति है, फिर भी इसके विपरीत जातीय जननिक विज्ञान से उत्पन्न दार्शनिक सिद्धान्त भौगोलिक निश्चयवादियों के अधिक समीप हो सकते हैं तथा वे मनुष्य की अपनी स्वतन्त्र इच्छा को कार्यान्वित करने की सम्भावना को सीमित करते दिखलाई पड़ते हैं।

इसकी इससे अधिक व्याख्या करने से हम अपने अनुसन्धान के क्षेत्र से बाहर निकल जायँगे, फिर भी इन तथ्यों की ओर ध्यान आकर्षित करना आवश्यक था, क्योंकि हमारी छानबीन में उनका विशेष महत्त्व है। प्रथम दृष्टि में यह कहा जा सकता है कि चूँकि भौगोलिक निश्चयवादियों का मत इतने स्पष्ट रूप से अवनत हो रहा है इसको निर्णयकारी प्रमाण के रूप में ले सकते हैं कि स्वयं भूगोलवेत्ताओं की श्रेणियों में ही

१. पिछली शताब्दी में काल्विनवाद जितना बदनाम हो गया था, उसे देखते हुए किसी को सम्भववाद जैसे सिद्धान्त की, जो उसके विरोधियों से अधिक मिलता-जुलता है, सफलता पर आश्चर्य नहीं होता।

वंशानुगति की परिवर्तनकारी शक्ति के सिद्धान्त का खण्डन हो गया है, इसलिए उससे मिलते-जुलते उपार्जित गुणवाद की भी थोड़ी सी अवनति दिखलाने के सिवाय उदविकास में परिस्थिति के प्रभाव की अधिक व्याख्या करने की कोई आवश्यकता नहीं।

चूंकि, ऐसा प्रतीत होता है कि भूगोलवेत्ताओं ने, जो सम्भववादी मत के हैं उन्होंने भी परिस्थिति के सर्जनशील महत्व का पूर्ण रूप से त्याग नहीं किया है तथा निश्चयवादियों पर उनकी सफलता में ऐसे दार्शनिक परिणाम मिलते हैं जिन्होंने उस सफलता पर काफ़ी प्रभाव डाला है, इसलिए हम जातिविज्ञान के विकास में परिस्थिति की क्रियाशील शक्ति के प्रश्न को समाप्त कर देने के सम्बन्ध में निश्चयवादियों की हार को स्वीकार नहीं कर सकते।

इसके अतिरिक्त चूंकि निश्चयवादियों के सिद्धान्तों का, इन्हीं दृष्टिकोणों ने जीवन के अनेक क्षेत्रों में प्रचलन है तथा हमारे राजनीतिक और सामाजिक मतों के विकास में इनका काफ़ी प्रभाव है, यह ठीक नहीं प्रतीत होता कि व्याख्या यहीं समाप्त कर दी जाय तथा आगे न ले जायी जाय, जहाँ हम जननिक एवं जाति-विज्ञान[1] के अधिक कड़े तथा आग्रहशील नियमों के अन्तर्गत, जातियों और नये प्रकार के मनुष्यों के निर्माण में परिस्थिति के प्रभाव की परीक्षा कर सकें।

१. जो कि विज्ञान की एक शाखा है जिसे हम जातीयजननिक विज्ञान कहते हैं, जब हम जातिविज्ञान को जननिक विज्ञान के साथ लेते हैं।

सोलहवाँ अध्याय

उपार्जित गुणों की पित्रागति के विरुद्ध प्रमाण

हम निश्चयवादी दर्शन के विकास का क्रम देख चुके जो पूर्व काल से भौगोलिक परिस्थिति के कुछ स्पष्ट कारकों पर आधारित रहा है तथा हमने अभी तक इस समस्या की व्याख्या के लिए मनुष्य तथा अन्य जीवित पदार्थों के जननिक पित्रागति के वर्तमान ज्ञान से निश्चय किये गये तथ्यों का प्रयोग करने का कोई प्रयत्न नहीं किया है। जो कुछ हमने देखा उससे वंशानुगति के ज्ञान के विना मतों की अनिश्चितता स्पष्ट है जहाँ जाति के बनने में निर्माणकारी शक्ति के रूप में भौगोलिक निश्चय के पक्ष अथवा विपक्ष में निश्चित रूप से कहना कठिन है। फिर भी हम यह सुझाव देने का साहस करते हैं कि जब जीव-विज्ञान के तथ्यों को, हम भौगोलिक परिस्थिति के विस्तृत सिद्धान्तों पर आधारित अधिक साधारण ज्ञान के साथ देखते हैं, तब कोई सन्देह नहीं रहता, जैसा कि पाठक स्वयं ही देख सकते हैं, कि भौगोलिक निश्चय की सर्वव्यापक शक्ति पर निरन्तर विश्वास रखने के लिए कोई स्थान नहीं रह जाता, जहाँ तक इसका अभिप्राय है कि जाति का निर्माण भूगोल द्वारा हुआ है।

भौगोलिक निश्चयवाद तथा उपार्जित गुणवाद

भौगोलिक परिस्थितिवादियों द्वारा जो तर्क उपस्थित किये जाते हैं, वास्तव में, वे जीव-विज्ञान के कतिपय क्षेत्रों में उपार्जित गुणवाद (लामार्किज्म) के नाम से काफ़ी समय पहले से प्रचलित थे। यह तथ्य स्वयं महत्त्वपूर्ण है कि यह सिद्धान्त त्याग देना पड़ा है तथा आज अमेरिका तथा रूस में नवोपार्जित गुणवाद (Neo-Lamarkian) के माननेवालों के अतिरिक्त मुश्किल से बहुत थोड़े वैज्ञानिक इसे मानते हैं। इसका कारण यह है, जैसा कि हम किसी अन्य स्थान में बतला चुके हैं, कि अनेक प्रसवनों के सम्परीक्षण के उपरान्त भी उपार्जित **गुणों की पित्रागति** का कोई प्रमाण नहीं मिलता, जब कि अनेकों में, पूर्ण रूप से उसके विपरीत ही मिलता है।

यह सम्भव नहीं है कि प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक के निश्चयवादियों के विचारों को लेकर उनकी समालोचना की जाय। इसलिए, मुख्य रूप से हम अधिक

विस्तृत उदाहरणों की अपेक्षा कम साधारण प्रस्तावनाओं को लेना ठीक समझते हैं, जहाँ पर पित्रागति, परिस्थिति की तुलना में अधिक निर्णायक है।

इसलिए हम भौगोलिक निश्चयवादियों के केवल कुछ मुख्य तथा स्पष्ट दावों या कथनों की समालोचना करने तक ही अपने को सीमित रखेंगे और फिर इनमें तथा आगे के पृष्ठों में वंशानुगति के आवश्यक प्रमाणों की कुछ विस्तार से परीक्षा करेंगे।

जलवायु तथा रंग

इस प्रकार हमने देखा कि ई० पू० दूसरी शताब्दी में पोलीबियस का कथन था कि मनुष्यों में आकार और रंग की विभिन्नता का मुख्य कारण जलवायु है। यदि यह एक पौराणिक मत ही होता तो हम बिना किसी व्याख्या के इसे छोड़ देते। परन्तु, आश्चर्य है कि यह ऐसा मत है जो साधारणतया ग्रहण किया जाता है, मुख्यतः जहाँ रंग का सम्बन्ध है। उदाहरणार्थ किसी प्रदेश के रंग तथा वहाँ के निवासियों की रंग की आवश्यकता में स्पष्ट सम्बन्ध है। इस प्रकार बहुत से लोग भूतकाल में तथा कुछ आजकल भी यह तुरन्त कह उठते हैं कि श्वेत रंग का मनुष्य यदि उष्ण कटिबन्ध में रहता है तो वह अपने ही जीवनकाल में परिस्थिति के अनुकूल बनने के प्रयत्न से गहरे भूरे रंग का हो जाता है। इसके सिवा परिस्थिति का यह प्रभाव हम उस समय भी देखते हैं जब कि अधिक मात्रा में दूध पानेवाले पाठशाला के विद्यार्थी, उन विद्यार्थियों की अपेक्षा कद में अधिक बढ़ जाते हैं जिनको दूध इतना नही मिलता। तब यह परिणाम निकाला जाता है कि इन आंकड़ों से परिस्थिति के प्रभाव का व्यावहारिक प्रदर्शन हो जाता है।

फिर भी, यह सब स्पष्ट भ्रम है। धूप से साँवर पड़े हुए रंग वाले मनुष्यों के भी श्वेत त्वचा के बच्चे होते है तथा उष्ण कटिबन्ध में एक सहस्र पीढ़ियों के पश्चात् भी यह तथ्य नही बदलेगा, जैसा कि जननिक विज्ञान के तथ्यों ने, जितना ही उनका अध्ययन किया जाता है, उतना ही यह स्पष्ट हो जाता है।

लेबानान में बेथलेहेम[1] के ड्रूसेज़ (Druses, निवासियों से तथा भारत के

१. विलहेम सीगलिन (Wilhelm Sieglin) Die blonden Haare der Indogermani schen. Volker des Altertums म्यूनिख, १९३५, पृष्ठ १२६, "इन हिज स्टेप्स" (In his Steps", लन्दन, १९३९, खण्ड १, पृष्ठ १० को भी देखिए—"बेथलेहेम की बहुत-सी स्त्रियों की आँखें नीली तथा आकार यूरोप निवासियों समान है जिससे इस वंश में धर्मयुद्ध में सहायता देनेवालों (क्रूसेडर्स) का मिश्रण प्रकट होता है।"

(अब पाकिस्तान के) उत्तर-पश्चिमी प्रदेश के पठानों में, कुछ में दो सहस्र वर्षों से अधिक होने पर भी, **स्वर्ण केश तथा नीली आँखें पायी जाती हैं।** इसी तरह कुछ सीमा तक जातीय मिश्रण के उपरान्त भी वे मनुष्य तथा जातियाँ जो कि भारत पर काकेशिया (Caucasian) के आक्रमणकारियों से सम्बन्धित हैं, अन्यों की अपेक्षा साफ़ रंग की दिखलाई पड़ती हैं।

यदि परिस्थिति में (इसके सिवाय कि वह प्राकृतिक चुनाव द्वारा अनुपयुक्त तत्त्वों का नाश कर दे) मनुष्यों के प्रकारों में परिवर्तन करने की शक्ति होती तो ये श्वेत तथा अधिक श्वेत मनुष्य बहुकाल पूर्व ही विलीन हो गये होते।

इसके उपरान्त भी परिस्थितिवादियों को इसकी व्याख्या करनी है कि काली जातियाँ, जैसे कि कांगो के नीग्रो, क्यों उसी परिस्थिति में रहती हैं जिसमें कि बोर्नियो (Borneo) के पीले पुनान (Punan) तथा अमेज़न (Amazon) में पीलापन लिये हुए भूरे रंग के निवासी रहते हैं अथवा क्यों एक ही कटिबन्ध में काले फीजी-निवासी तथा श्वेत समोआनिवासी रहते हुए पाये जाते हैं।

परिस्थिति तथा कद

उदाहरणार्थ, देशान्तरगमन में जो कद की वृद्धि दिखलाई पड़ती है वह भूगोल द्वारा जातिगत गुणों में उस तरह मुख्य रूप से परिवर्तन होने का प्रमाण नहीं है जिस तरह भौगोलिक परिस्थितिवादियों तथा उपार्जित गुणवादियों ने माना है।

इस प्रकार से ऊँचाई या कद में वृद्धि का मिलना अच्छी परिस्थितियों के प्रति मनुष्यों के सामूहिक सक्रिय होने का उदाहरण है। परन्तु रहने की दशाओं में ऐसा सुधार होने से कोई मनुष्य अपनी जाति के गुणों की निश्चित सीमा से आगे नहीं बढ़ जायगा।

साधारणतया ब्रिटेन तथा अन्य जगहों के औद्योगिक शहरों में जीवन की दशाएँ ऐसी थीं कि १९वीं शताब्दी में शारीरिक अवस्था में अवनति हुई है, इसलिए औद्योगिक अंग्रेज़ का शारीरिक स्वास्थ्य जैसा होना चाहिए उससे कम मिलता है। परिणामतः, इसमें आश्चर्य नहीं कि उनका ढाँचा उनकी जाति के औसत कद से कम हो। अच्छे पोषण से कद की वृद्धि में तुरन्त प्रभाव पड़ता है, यह इंग्लैण्ड के तथा अन्य देशों के औद्योगिक क्षेत्रों में नवयुवकों की पीढ़ी में देखा जाता है, परन्तु इस प्रकार का सुधार इसीलिए संभव हुआ कि अच्छी परिस्थिति ने उन्हें जाति के औसत कद तक बढ़ने का मौका दिया।

यही परिस्थिति का कार्य है कि वह जाति के विकास को संकुचित अथवा प्रोत्साहित कर सकती है पर वह जाति का **निर्माण** नहीं करती।

कद का वंशानुगत आधार

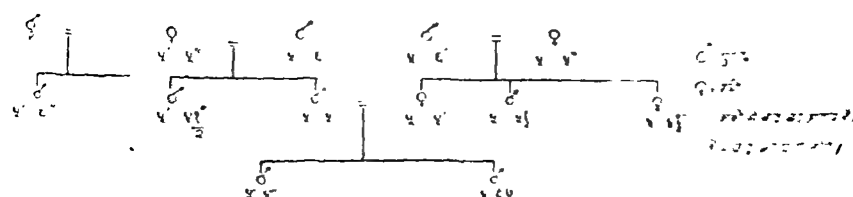
फिर भी साधारण से विशेष की ओर आकर हम सुझाव देते हैं कि निम्न चित्र, जो कि सहस्रों उदाहरणों में एक है, इस विचार का पूर्णतः खण्डन कर देता है कि कद मूल रूप से वंशानुगति पर नहीं, परन्तु परिस्थिति पर आधारित है।[1]

इस चित्र में यह देखा जायगा कि जो कुल या परिवार लम्बे मनुष्यों से प्रारम्भ हुए उनमें लम्बे पुरुष तथा स्त्रियों का प्रसवन होता रहा, जब कि उन कुलों में बिल्कुल विपरीत मिलता है जिनका प्रारम्भ छोटे मनुष्यों से हुआ।

लम्बे मनुष्योंवाले कुल में केवल एक छोटे कद का है तथा काफ़ी सम्भव है कि यह खराब पोषण अथवा बाल्यावस्था में बीमारी के कारण हो।

बहुधा विपरीत दशाओं के कारण लोग अपने स्वाभाविक कद से छोटे होते हैं जैसा कि औद्योगिक क्षेत्र के अंग्रेज़ों में होता है जिनकी चर्चा हम अभी कर चुके हैं।

चित्र नं० १२३
छोटे कद का वंशानुगत आधार



टिप्पणी—५' ६' से कम ऊँचाई के पूर्वजों के वंशजों में कोई एक भी उस कद तक भी नहीं पहुँचता। इस चित्र की अगले चित्र की लम्बे समूहवालों की सन्तति से तुलना कीजिए।

परिस्थिति से प्रभावित बौनों का ढांचा

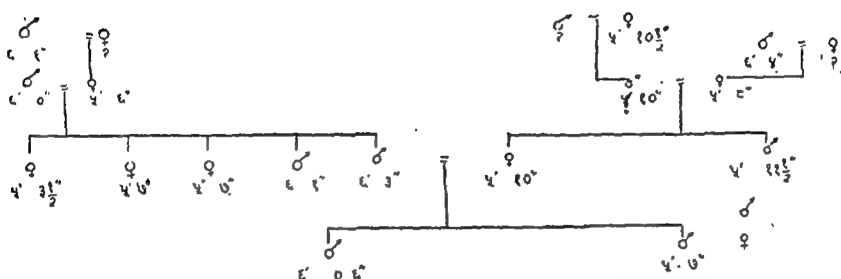
इस प्रकार के रुद्ध विकास का अन्य उदाहरण बहुत सी बौनी वन्य जातियों में मिलता है, जो वास्तव में जितना छोटा होना चाहिए उससे, खराब परिस्थितीय दशाओं के कारण, अधिक छोटी हैं। टोर्डे[2] ने खोज की कि कसाई नदी के बांगो बटवा बौने, जो वनों को दो पीढ़ी पूर्व ही त्याग कर कृषक हो गये थे, साधारण बौनों से लम्बे थे।

१. पापनो तथा जानसन (Popinoe and Johnson), यूजेनिक्स, पृष्ठ १४, ए० एफ० २. Torday.

यहाँ तक परिस्थिति के परिवर्तन से उनके कद में सुधार हुआ है। तिस पर भी वे अपने पड़ोसी वशुंगो लोगों के समान नहीं थे जो लम्बी जातीय सन्तति में थे।

चित्र नं० १२४

लम्बे कद का वंशानुगत आधार



पुरुष तथा स्त्री के सूचक संकेत वही हैं जो चित्र नं० १२३ की दाहिनी ओर दिये हैं।

अंकों से कद का आशय है
? कद का पता नहीं
टिप्पणी---इस वंश में सबसे छोटा पुरुष पिछले चित्र के सबसे बड़े से बड़ा है। एक छोटी स्त्री का (५" ३ १।२") बालावस्था में बीमारी के कारण अवरुद्ध विकास हुआ है।

किसी भी जीव-वैज्ञानिक को, जब तक कि वह उपार्जित-गुणवादी (लामार्कियन) न हो, पिटर्ड[1] के इस कथन से सहमत होने में कोई कठिनाई नहीं होगी—

"हमें यह विश्वास दिलाना व्यर्थ है कि मूल रूप से जो जातियाँ छोटे कद की थीं, उनसे लम्बी जातिवालों का निर्माण हुआ है—जब तक कि अचानक कोई उत्परिवर्तन न हुआ हो। ऊँचाई को यदि शरीर की बनावट के गुणों के औसत स्वरूप देखा जाय तो वह वंशानुगति के कारण[2] है।"

१. यूजीन पिटर्ड (Eugene Pittard), पूर्वलिखित, पृष्ठ ३७

२. यह महत्त्वपूर्ण है कि कुक्कुटों का बौनापन जो छोटी जाति की उत्पत्ति करता है, वंशानुगति के कारण है।

वंशानुगति तथा दीर्घायु

यह न केवल कपाल के आकार, त्वचा के रंग तथा कद तक के सम्बन्ध में ही सत्य है परन्तु यह दिखलाया जा सकता है कि परिस्थिति नहीं बल्कि वंशानुगति ही अन्य विभिन्न लक्षणों के लिए अधिक महत्त्वपूर्ण है, यों देखने में चाहे उनका सम्बन्ध वंशानुगति की अपेक्षा हमारे पास की परिस्थितियों से अधिक जान पड़े।

उदाहरणार्थ, सांख्यिकीय जाँचों से पता चलता है कि यद्यपि परिस्थिति भी महत्त्वपूर्ण है, फिर भी यह जानने के लिए कि हम में से प्रत्येक कितने वर्षों जीवित रहेगा, वंशानुगति अधिक प्रभावकारी है।

पौपनो तथा जानसन[1] आँकड़े देकर बतलाते हैं कि बालमृत्यु का औसत उन वंशों में राष्ट्रीय औसत से कम है जिनमें दीर्घायु होने की वंशानुगत प्रवृत्ति मिलती है। वे उन उदाहरणों के विषय में जिनको उन्होंने उद्धृत किया है, बतलाते हैं—

"इस जनसंख्या में जिसमें कि असाधारण रीति से बालमृत्यु की गति कम मिलती है, ऐसा नहीं है कि उसे बच्चों के बचाव के आन्दोलन की सहायता मिली हो अथवा उसे वर्तमान वैज्ञानिक ज्ञान की सहायता ही मिली हो। उसकी माताएँ अधिकांशतः निर्धन ही थीं, उनमें से बहुत सी अज्ञान तथा बहुधा कठिनाई में ही रहीं, वे किसान तथा कार्यकर्त्री थीं। उनके बच्चे बिना किसी डाक्टर, बिना शुद्ध दूध, बिना बर्फ़ के, बिना किसी सफ़ाई के तथा बहुधा साधारण भोजन ही पर रहे हैं। परन्तु उनको एक लाभ था जो किसी भी मात्रा में प्रयोगात्मक विज्ञान उन्हें नहीं दे सकता और वह था अच्छी वंशानुगति का।"

उन्हें वंशानुगति से असाधारण रूप में अच्छी शारीरिक गठन मिलती थी।[2] बहुत से उदाहरणों में यह भी बतलाया गया है कि पाठशालाओं के बालक यदि चश्मा लगाने

१. पूर्वलिखित, पृष्ठ ४०७

२. एच० एच० हिब्स (H. H. Hibbs) का यह मत (इनफ़ैन्ट मार्टेलिटी Infant Mortality न्यूयार्क, १९१६) कि औद्योगिक केन्द्रों में बच्चों की अधिक मृत्यु अपूर्ण साधनों तथा खराब निवासस्थान के कारण होती है, पूर्ण रूप से तथ्यों द्वारा ठीक नहीं उतरता—हालाँ कि अवश्य ही स्वाभाविक रूप से ये कारण भी बच्चों की मृत्यु के कारण हैं, परन्तु यदि ये कारण गौण कोटि के नहीं तो वंशानुगति पर आधारित कारणों के अतिरिक्त ही माने जा सकते हैं। जैसा कि पोपनो तथा जानसन ने पूर्व लिखित पृष्ठ ४११, में बतलाया है —

हैं तो अपने माता-पिताओं के ही कारण।[1] इस सम्बन्ध में कार्ल पियर्सन (Karl Pearson) के कार्यों से भी वही परिणाम निकलते हैं।

वंशानुगति तथा मानसिक गुण

मानसिक गुणों में भी ऐसा प्रतीत होता है कि परिस्थिति नहीं, परन्तु वंशानुगति अधिक प्रभावशाली शक्ति है। कुमारी पेरिन[2] (Miss Perrin) ने डिक्शनरी आफ् नेशनल बायोग्राफ़ी तथा हूज़ हू में १५५० जोड़े पिताओं तथा पुत्रों पर अनुसन्धान किया है। उसने देखा कि...अनिश्चयता का गुणांक पिता तथा पुत्र के व्यवसाय में, प्रथम समूह में ·७६ तथा बाद वाले में ·७५ है। हम जानते हैं कि यदि सांख्यिकीय ढंग से बतलाया जाय तो पित्रागति का गुणांक लगभग ·५ होगा। परिणामतः हम शुद्ध तथ्यों के तर्क से ही इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि मनुष्य के व्यवसाय की पसन्द दो-तिहाई वंशानुगत झुकाव पर तथा एक-तिहाई परिस्थितीय दशाओं पर निर्भर होती है।

ये आँकड़े भारत ऐसे देश के लिए विशेष महत्त्व के हैं जहाँ का सामाजिक संघटन वर्णव्यवस्था पर आधारित है। हम देखेंगे कि नैतिक आधार पर हम चाहे जितना इस प्रथा को बुरा कहें, जिससे मनुष्य अपने पिता के व्यवसाय के लिए ही प्रेरित होता है,

"शाही तथा उनके शाही सम्बन्धियों के रहने का स्तर नीचा नहीं है परन्तु फिर भी उनमें बच्चों की मृत्यु की गति बहुत अधिक है—यह, जहाँ पर माता या पिता की मृत्यु युवावस्था में हो गयी हो, वहाँ पर १००० में ४०० के लगभग है।"

कार्ल पियर्सन, ई० सी० स्नो, तथा ईथेल, एम० एल्डरटन (Karl Pearson, E. C. Snow and Ethel M. Elderton) के कार्य यह बतलाने में सफल हुए हैं कि जहाँ पर राष्ट्र का काफ़ी धन खर्च करके बालमृत्यु को कम किया गया है वहाँ पर जो बच्चे प्रथम कुछ वर्षों में मृत्यु से बचा लिये जाते हैं, बाद के वर्षों में वे मृत्यु के शिकार होते हैं। क्योंकि उनमें साधारण परिस्थिति में भली भाँति जीवित रहने की शक्ति नहीं रहती।

१. पोपनो तथा जानसन, पूर्वलिखित, पृष्ठ १३–१४।

जहाँ तक वंशानुगत आँख की खराबी का सम्बन्ध है, यह सम्भव है कि वह केवल एक एकक कारक मान ली जाय तथा उसे साधारण नेत्रज्योति के ऊपर प्रभावी समझना चाहिए।

२. बायोमेट्रिका (Biometrika) III, १९०४, पृष्ठ ४६७

तिस पर भी बात यह है कि यदि उसे स्वतन्त्र चुनाव का अवसर मिलता तो अधिकतर उदाहरणों में वह उसी को पसन्द करता।

वंशानुगति तथा मानसिक अस्वस्थता

यदि हम मानसिक अस्वस्थता पर ध्यान दें तो देखेंगे कि वंशानुगति एक प्रभावशाली शक्ति है।

साइज़ोफ्रेनिया[1] एक साधारण मानसिक बीमारी है तथा यह १०० में एक मनुष्य में देखी गयी है। इसको कभी कभी डेमेन्शिया प्रेकाक्स[2] कहते हैं। यह पागलपन का प्रारम्भिक रूप है और साधारणतः २० से ३०-३५ वर्ष तक की उम्र में मिलता है। इसकी विशेषता रोगी का विभाजित व्यक्तित्व है जिसके कारण, बढ़ी हुई हालतों में, मनुष्य को पागलखाने तक में रखना पड़ता है। लक्जेमबर्गर[3] तथा वान वर्गुअर[4] के कार्यों से पता चलता है कि सम्बन्धियों से रहित मनुष्यों में साइज़ोफ्रेनिया होने की सम्भावना ·८५ प्रतिशत तथा सम्बन्धियों युक्त व्यक्तियों में साइज़ोफ्रेनिया से मिलते-जुलते मानसिक लक्षणों में २·९ प्रतिशत मिलती है, परन्तु पीड़ितों के ५००० भाइयों के अध्ययन में यह संख्या १०·८ प्रतिशत तथा ९·७ प्रतिशत मिलती है और पीड़ितों के १५९५ बच्चों में संख्या और भी अधिक हो जाती है जो क्रमशः १६·४ प्रतिशत तथा ३२·६ प्रतिशत मिलती है।

सम्बन्ध में दूरी होने के साथ साथ इस प्रतिशतता में बराबर कमी होते जाना महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि पोते ३ प्रतिशत तथा १३·८प्रतिशत, चचेरे भाईबहन १·८ तथा १०·२ प्रतिशत, भतीजे-भतीजियाँ १·८ तथा ५·१ प्रतिशत और भतीज-पोते, भतीज-पोतियाँ १·६ प्रतिशत तथा १·९ प्रतिशत थे।[5] शिथिलता लानेवाला पागलपन २०० में से एक में होता है तथा जहाँ तक देखा जा सकता है, इसका बनावटसम्बन्धी आधार है जो सम्भवतः पित्रागति में किसी प्रभावी पित्र्यक के[6] कारण है।

१. Schizophrenia

२. Dementia praecox

३. Fortschrift. Erbpathol. १९३७, भाग १

४. Erbpathologie, Steinkopff १९३७

५. कुछ ने यह परिणाम निकाला है कि साइज़ोफ्रेनिया केवल एक अप्रभावी पित्र्यक के कारण है।

६. सी० स्टर्न (C. Stern) पूर्वलिखित, पृ० ४८९

अभी तक हमने जिन प्रमाणों को देखा—उनसे स्पष्ट होता है कि वंशानुगति की शक्ति काफी प्रभावशाली है, जब कि उसकी परीक्षा ऐसे प्रमाणों के प्रकाश में की जाती है, जिनका ठीक ठीक विश्लेषण किया जा सके। इसलिए यदि हेरन[1] अपनी पुस्तक "दि इन्फ़्लुयेन्स आफ़ अनफेवेरबुल होम एनवाइरनमेन्ट एण्ड डिफ़ेक्टिव फिज़ीक ऑन दि इन्टेलिजेन्स ऑफ स्कूल चिल्ड्रेन" में मानसिक स्थिति, योग्यता तथा पोषण में दाँतों की दशा, स्वच्छता इत्यादि में कोई सम्वन्ध न पा सके तो कोई आश्चर्य नहीं है।

उपार्जित गुणों के पारेषण का कोई प्रमाण नहीं

यह सिद्ध करने के लिए कि परिस्थितीय दशाओं से उपार्जित गुणों की पित्रागति होती है, इस समस्या को उस दृष्टिकोण से देखा जाता है कि अच्छे गुण प्राप्त किये जाते हैं इसलिए उनका पारेषण होता है, तथा दूसरी पीढ़ी में इस प्रकार से सुधार हो जाता है और वह उद्विकास के मार्ग में आगे पहुँचा दी जाती है। यह मत लेमार्क का तथा उनके अनुयायियों का है।

इस मत के माननेवाले शायद ही कभी इस वात पर ध्यान देते हैं कि यदि यह ठीक होता तो इसके विपरीत भी ठीक हो सकता था। इस प्रकार प्रथम महायुद्ध में फ़ौजों की गर्जनावाली वीमारियाँ सैनिकों के बच्चों में पारेषित हो जातीं। इसी तरह अन्य दोष तथा बुराइयाँ जो मनुष्य ग्रहण कर लेता है, जिनमें प्रतिकूल आर्थिक दशाओं के परिणाम भी शामिल हैं, वाद की सन्ततियों में फैल जातीं, किन्तु जैसा कि हमें साधारण निरीक्षण से मालूम है, वात ऐसी नहीं है।

अधिकांश अमेरिकानिवासियों के पूर्वज अमेरिका में निर्धन आप्रवासितों की भाँति आये परन्तु उनकी सन्ततियों में कोई चिह्न ऐसा नहीं मिलता जिससे यह सिद्ध हो कि उनमें उनके पितामहों, प्रपितामहों तथा अगणित पूर्वजों की निर्धनता के फलस्वरूप, जो यूरोप के गाँवों तथा शहरों की कठिन स्थितियों को छोड़कर वहाँ गये थे, कोई अयोग्यता है।

जनसंख्या के इतने वड़े अनुपात में उन निर्धन आप्रवासितों से उत्पन्न होने का एक ही प्रभाव उन गुणों पर पड़ता है जो उस कृषकवर्ग की वास्तविक प्रकृति को प्रति-

१. डेविड हेरन (David Heren) "दि इन्फ़्लुयेन्स आफ़ अनफ़ेवरेबुल होम एनक्वाइरनमेन्ट एण्ड डिफ़ेक्टिव फिजीक आन दि इन्टेलिजेन्स आफ़ स्कूल चिल्ड्रेन" युजीनिक्स लेबोरेटरी, लन्दन, मेमोरियल सिरीज, नं० ८ (VIII)

फलित करते हैं जिससे वे आये हैं।[1] यह प्रभाव उनकी सांस्कृतिक पित्रागति की निर्धनता (कमी) में भी देख पड़ता है, जिससे अंशतः इस बात का भी पता चल जाता है कि उनके समाज के अधिकतर लोगों में क्योंकर वह प्रवृत्ति पायी जाती है जिसे हम शीघ्रातिशीघ्र धनी बन जाने की प्रवृत्ति कह सकते हैं। परन्तु इसका कारण यह नहीं है कि अमेरिका की धरती से ये गुण उपार्जित किये गये हैं या अमेरिका की परिस्थिति ने ही वहाँ के मनुष्यों की मानसिक तथा स्वभावसम्बन्धी प्रक्रियाओं को बदल दिया है। यह बिलकुल सांस्कृतिक या कहिए कि संस्कृति के अभाव की पित्रागति है और भौतिक, मानसिक तथा स्वभावसम्बन्धी पित्रागति से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

जैसा कि शीनफ़ेल्ड ने विश्वस्ततापूर्वक बतलाया है, "एक ऐसी स्त्री से उत्पन्न बच्चे जो कि अपनी बाल्यावस्था में सुन्दर रही हो, परन्तु किसी घटना, कठिनाई आदि के कारण जिसने अपनी सुन्दरता खो दी हो, लेश भर भी उससे भिन्न नहीं होंगे, जैसे वे तब होते जब वह चित्रजगत की रानी बन जाती।"[2] उपार्जित गुणों की पित्रागति (इनहेरिटेन्स) के विरुद्ध किये गये प्रमाणों के साथ हम इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए कह सकते हैं कि चीननिवासी अपने बच्चों के पैर हजारों वर्षों से बाँधते रहे हैं पर वे उत्पत्ति के समय अब भी कुरूप नहीं होते; इसी प्रकार यहूदियों में लगभग ३००० से ४००० वर्षों से खतना होता आया है परन्तु अब भी उनके बच्चे बिना खतना के ही उत्पन्न होते हैं। मुसलमानों के यहाँ भी यह रिवाज काफी समय से चला आ रहा है, हालाँ कि इतने समय से नहीं जितना कि यहूदियों के यहाँ। नाना प्रकार की जंगली जातियाँ अगणित पीढ़ियों में लाखों वर्षों से आकृति तथा अंगसम्बन्धी अंग के काटने का रिवाज अपनाती आयी हैं परन्तु इन प्रथाओं ने पित्रागति पर किसी प्रकार का भी प्रभाव नहीं डाला है।

जैसा कि काफी समय पूर्व वीज़मैन (Weisman) ने दिखला दिया है—जब उसने कई पीढ़ियों तक चूहों की पूँछ काटी, तब भी कोई चूहा बिना दुम के नहीं उत्पन्न

१. इस प्रकार से मध्य तथा पूर्वी मध्य यूरोप के किसानों की प्रसन्न तथा दिखावे की प्रकृति एक प्रधान विशेषता है जो कि अंशतः अमेरिका की जनता के दिखावेपन तथा बहिर्मुखी गुणों की व्याख्या करती है।

२. अमराम शीनफेल्ड (Amram Scheinfeld) दि न्यू यू एण्ड हेरेडिटी, चैटो एण्ड विन्डस (The New You and Heredity, Chatto and Windus) लन्दन, १९५२, पृष्ठ १८

हुआ, कोई ऐसी विधि नहीं है जिससे कि यदि मनुष्य अथवा प्रकृति द्वारा शरीर के जीवित या बाह्यांग पर कोई कारखाई की जाय तो वह किसी भी प्रकार से प्रजनन सम्बन्धी गुणों को बदल सके।

यदि ऐसा सोचा जाता है कि जितने तर्क अभी तक हमने साधारण जाति-विज्ञान तथा जननिक विचारों की दृष्टि से दिये हैं वे भौगोलिक परिस्थिति के उद्भवसम्बन्धी प्रभावों को अस्वीकार करने के लिए अपर्याप्त हैं जो कि उपार्जित गुणों के पारेषण के सिद्धान्त द्वारा कार्य करते हैं, तब इनका जुड़वों के अधिक विस्तृत अध्ययन के साथ विचार करना चाहिए।

अवश्य ही मनुष्य के उद्विकास में भूगोल के प्रभाव के लिए स्थान है। इसकी व्याख्या हम आगे करेंगे। वास्तव में भौगोलिक प्रभाव का महत्त्वपूर्ण स्थान है परन्तु वह सर्जनात्मक रूप से कार्य नहीं करता, जो स्वयं मनुष्य की बनावट में परिवर्तन करता हो और वही वंशानुगति द्वारा पारेषित हो जाता हो।

सत्रहवाँ अध्याय

जुड़वों के अध्ययन से वंशानुगति के महत्त्व के और अधिक प्रमाण

जब कि साधारण जुड़वों में एक दूसरे से उतनी ही विभिन्नता पायी जाती थी जितनी कि समान जुड़वों में समानता मिलती थी।

एच० एच० न्युमैन (H. H. Newman), एफ० एन० फ्रीमैन (F. N. Freeman) तथा के० जे० होलज़ंगर[1] (K. J. Holzunger) ने जो कार्य किये हैं वे महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि उन्होंने यह बतलाया है कि जब समान जुड़वाँ साथ साथ तथा अलग अलग पाले गये तो वज़न के अतिरिक्त बहुत ही कम महत्त्वपूर्ण औसत विभिन्नता—ऊँचाई, वजन तथा सिर की लम्बाई-चौड़ाई के विषय में—मिली, जहाँ पर अंक वैसे ही थे जैसे नं० ३ तालिका में दिये गये हैं।

वज़न की विभिन्नता कोई महत्त्वपूर्ण नहीं है क्योंकि वज़न ऐसी वस्तु है जिस पर पोषणसम्बन्धी दशाओं का बहुत शीघ्र प्रभाव पड़ता है तथा यह विभिन्नता असम्भावित नहीं है।

जब ये परस्पर सम्बन्धित गुणांकों (को एफीशेण्टस्) में परिणत किये जाते हैं तो परिणाम कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि जितना कि प्रथम दृष्टि में पता चलता है, परिस्थिति का उससे कहीं कम प्रभाव पड़ता है, जैसा कि साथ में दी हुई तालिका नं० ४ में तुलना से विदित होता है।

समानता के गुणांकों का प्रमाण

पित्रागति नियम (मेण्डेलियन लॉ) के अनुसार बच्चे पूर्ण रूप में अपने माता-पिता के आकार में प्रजनित नहीं होते, हालाँ कि उनके समस्त गुण वंशानुगत होते हैं तथा पूर्वजों के प्रकारों से आते हैं। परिणामतः जब हम इस समानता अथवा सादृश्य के (जिसको हमने अभी व्यवसाय के पसन्द करने में वंशानुगत झुकाव के सम्बन्ध में बतलाया है) गुणांक को सांख्यिकीय रूप में प्रदर्शित करते हैं, तब यह आशा नहीं की जा सकती कि यदि ० किसी समानता को नहीं तथा १ पूर्ण समानता को प्रदर्शित करता है तब बच्चे ठीक अपने माता-पिता के समान नं० १ में प्रजनित होंगे।

भाइयों की समानता के गुणांक में ठीक यही सत्य है।

१. ट्विन्स (Twins), ए स्टडी आफ़ हेरिडिटी एण्ड एनवाइरनमेन्ट (A study of Heredity and Environment), यूनिवर्सिटी आफ़ शिकागो प्रेस (University of Chicago Press), १९३७.

हम देखते हैं कि पित्रागति तथा भाइयों में समानत
सब ·५ तथा ·६ के पास मिलता है। इस प्रकार से भाइ
रंग की समानता ·५२, कद की ·५१, कापालिक देशना व
तथा चौड़ाई का अनुपात है) ·४९ तथा केशों के रंग की

यह सब परिस्थिति की तुलना में वंशानुगति का अधिव
यक होते हैं क्योंकि उनसे विदित होता है कि साधारणतया
दिखलाई देनेवाला साम्य, वंशानुगति से सम्वन्धित मि
हमारी जननिक विद्या काफ़ी अंशों तक वतलाने में सहायव
स्थिति के आँकड़े, यदि वास्तव में उनका अस्तित्व है अथव
वहुत कम होना चाहिए जव कि जातीय अंक उससे काफ़ी अ

वंशानुगति तथा जुड़वों में शरीरसम्बन्धी गुण

अन्य वच्चों की अपेक्षा समान जुड़वों में परिस्थिति
पर जो अनुसन्धान हुए हैं, इनको केवल शारीरिक गुणों त
चाहिए, जिनके वारे में अभी हमने वतलाया है।

इस प्रकार से रक्त-दवाव (याने *Blood Pressure*
सम्वन्ध में यह देखा गया है कि समान जुड़वों में ऐसी दशा
तथा ५६ प्रतिशत की समानता मिलती है, जवकि असमान
प्रतिशत तथा ३४ प्रतिशत मिलती है।[1]

वंशानुगति का प्रभाव स्पष्ट है। प्रथम मासिक धर्म दूसर
गुण है।

समान जुड़वों में प्रथम मासिकधर्म के समय के अन्तर
है तथा असमान जुड़वों में १२ मास है। अन्य सपितृक वच्चों
माता-पुत्री के सम्वन्ध में १८·४ महीने और असम्वन्धित स्त्रिय
उन दो व्यक्तियों के जीवनविस्तार में काफ़ी समानत

१. मलकोवा (Malkova) के कार्य पर आधारित

जुड़वाँ हैं। कालमैन तथा सैन्डर[1] (Kallman and Sander) के अन्वेषणों ने यह सिद्ध कर दिया है, जिनसे पता चलता है कि जब कि समान जुड़वों में ६० वर्ष से आयु अधिक वालों में जीवनविस्तार का अन्तर ३६·९ मास था, असमान जुड़वों में यह ७८·३ था।

जुड़वों में वंशानुगति तथा खेलों सम्बन्धी शारीरिक शक्ति

वंशानुगति का प्रभाव अन्य अनेक गुणों में—बच्चे के चलना शुरू करने से बाद की खेलने की शक्ति तक, दिखलाया जा सकता है। इस प्रकार एक अध्ययन[2] में यह देखा गया था कि समान जुड़वों में ६९ प्रतिशत में चलने की सदृशता थी जब कि असमान जुड़वों में केवल ३५ प्रतिशत थी। एक दूसरे अध्ययन[3] में अंक इनसे मिलते जुलते थे जो क्रमशः ६७ तथा ३० प्रतिशत थे। जब कि कुछ जुड़वों के जोड़ों में कूदने की ऊँचाई में यह देखा गया कि समान जुड़वों में औसत अन्तर १·७५ तथा असमान में यह अन्तर ७·६ सेन्टीमीटर था।

जुड़वों में वंशानुगति तथा चिकित्सासम्बन्धी दशाएँ

चिकित्सासम्बन्धी दशाएँ प्रत्यक्ष रूप से वंशानुगति द्वारा काफ़ी निकटता से नियन्त्रित हैं जैसा कि इस सम्बन्ध में (जिनमें से कुछ की व्याख्या हम अन्य स्थान पर कर चुके हैं) न केवल साधारण जननिक अध्ययन से ही परन्तु मुख्यतः समान जुड़वों के अध्ययन से स्पष्ट है जहाँ पर परिस्थिति के प्रभाव से इसका सम्बन्ध महत्त्वपूर्ण है।

उदाहरणार्थ, चेचक के विषय में जो सभी अथवा लगभग सभी बच्चों को हो सकती है, यदि वे छूतवाले क्षेत्र के निकट आ जाते हैं, इसका विस्तार जुड़वों के समान जोड़ों में असमान की अपेक्षा अधिक होगा। (८७ प्रतिशत की अपेक्षा ९५ प्रतिशत तुलना करने पर मिलता है)

१. 'इन जर्मनी' (In Germany), वी० वर्शुअर (V. Verschuer) द्वारा, १९२७, सी० स्टर्न (C. Stern) पूर्वलिखित, पृष्ठ ४८० से प्रोद्धरित

२. बोसिक (Bossik) द्वारा, यू० एस० एस० आर० (U. S. S. R.) १९३४ सी० स्टर्न, पूर्वलिखित, पृष्ठ ४८० से प्रोद्धरित

३. मिरेनोवा (Mirenova), प्रोसीडिंग्स, मैक्सिम गोर्की मेडिकल बायलोजिकल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, १९३४, ३

साधारण रूप से मानसिक गुणों की पित्रागति पर किये गये अनुसन्धान से निकले परिणामों का जुड़वों के अध्ययन से भी समर्थन होता है।

इस प्रकार से साइजोफ़ेनिया के उदाहरण में, जैसा कि हमने दिखलाया है अवश्य ही वंशानुगति का आधार होना चाहिए, हम पाते हैं कि स्टर्न[1] वान वर्शुअर से लक्जेम्वर्जर[2] तक रोजनाफ़[3], प्लेसेट[4] तथा ब्रश[5] के कार्यों के आधार पर इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि असमान तथा समान जुड़वों में मानसिक अस्वस्थता क्रमशः ११ प्रतिशत तथा ६८ प्रतिशत है। जैसा कि स्टर्न वतलाते हैं—

"समान तथा असमान जुड़वों में सदृशता की वारम्वारता में काफ़ी अन्तर है . . .। यह वहुत कम ठीक जान पड़ता है कि परिस्थिति में अधिक समानता, जुड़वों में साइजोफ़ेनिया के अधिक सादृश्य के लिए उत्तरदायी है।"

वह, कालमैन द्वारा वतलाये हुए एक उदाहरण की ओर ध्यान आकर्षित करता है, जहां समान जुड़वाँ वहनें जन्म के उपरान्त विभिन्न घरों में अलग अलग कर दी गयीं तथा एक-दूसरी से शायद ही कोई सम्वन्ध रहा हो। १५ वर्ष में एक ने जो कारखाने में कार्य करती थी, एक अवैध वच्चे को जन्म दिया तथा दूसरी एक परिवार की सुरक्षित शरण में एक घरेलू नौकरानी की भाँति रही। परन्तु दोनों को साइजोफ़ेनिया हो गया, एक को वच्चे के जन्म के उपरान्त ही तथा दूसरी को डेढ़ वर्ष पश्चात्। जैसा कि उसने ठीक ही वतलाया है, उसमें वीमारी की शारीरिक वनावट-सम्वन्धी पृष्ठभूमि का संकेत मिलता है। स्पष्ट रूप से परिस्थिति का प्रभाव अवैध गर्भाधान वाले उदाहरण में यह हुआ कि बीमारी और भी शीघ्र हुई।

उन्मत्त उदासी के साथ पागलपन एक दूसरे प्रकार की मानसिक वीमारी है जिसमें जुड़वों के प्रमाण महत्त्वपूर्ण हैं। जर्मनी में लक्ज़ेम्वर्जर तथा अमेरिका के रोजनाफ,

१. सी० स्टर्न (C. Stern) पूर्व लिखित, पृष्ठ ४८८

२. Luxemberger

३. Rossanoff

४. Plesset

५. अमेरिक्न जर्नल आफ़ साइकियेट (American Journal of Psychiat), ९१, १९३४

हैन्डी तथा प्लेसेट ने असमान जुड़वों में कम सादृश्य तथा समान जुड़वों में अधिक सादृश्य दिखलाया है।

जुड़वों में वंशानुगति तथा क्षीण बुद्धि

क्षीण बुद्धि उस मानसिक अस्वस्थता के साथ निकटता से सम्बन्धित है जिसकी व्याख्या हम अभी तक करते रहे हैं। यह मानसिक पीड़ित के, जिसका जड़ (मूढ़) के अन्तर्गत वर्गीकरण हुआ है, तथा साधारण बुद्धि के लोगों के मध्य की अवस्था है। बुद्धिपरीक्षा में इन लोगों को ५० से ७० नम्बर तक मिलते हैं। पश्चिमी देशों में, जिनके कुछ आंकड़े हमारे पास हैं, उनकी संख्या नगण्य नहीं होती। साथ ही हमारा विश्वास है कि ये लोग इस विषय में निराले नहीं हैं।

जड़ता तथा बुद्धि की क्षीणता दोनों ही जन्म (Natal) के पूर्व तथा पश्चात् मस्तिष्क में चोट लगने के परिणामस्वरूप हो सकते हैं। परन्तु इन कारणों को अलग कर दें तो जननिक में जननसम्बन्धी प्रमाण से पित्रागति का ज्ञान हो सकता है जिसके फलस्वरूप ऐसी दशा उससे अधिक होनी चाहिए जितनी कि सम्पूर्ण जनसंख्या में साधारणतया मिलती है। यदि हम जुड़वों द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रमाणों को देखें तो यह सिद्ध हो जाता है। उदाहरणार्थ, डेनमार्क में क्षीण बुद्धि वाले जुड़वों के एक समूह में से, जिसमें से सभी परिस्थितीय कारण हटा दिये गये थे, यह देखा गया कि १५ जोड़े असमान जुड़वों में केवल एक जोड़े में क्षीण-बुद्धिपन की सदृशता मिली। जब कि १६ समान जुड़वों में १४ में सादृश्य पाया गया।[1]

क्षीण बुद्धि से साधारण बुद्धि की ओर जाने में जुड़वों के अध्ययन से वही प्रभाव प्रदर्शित होता है जो अधिकांश में वंशानुगति के कारण माना जायगा।

एच० एच० न्युमैन (H. H. Newman), एफ० एन० फ्रीमैन (F. N. Freeman) तथा के० जे० होलजिंगर[2] (K. J. Holzinger) ने विनेट बुद्धिपरीक्षा का उपयोग करके साथ पाले गये समान जुड़वों, अलग अलग पाले गये समान जुड़वों, असमान जुड़वों तथा अन्य समान माता-पिता वाले बालकों का सम्बन्ध गुणांक दिलाया है, जैसा कि तालिका नं० ५ में दिया गया है।

१. सी० स्टर्न (C. Stern) पूर्वलिखित, पृष्ठ ४९४

२. ए स्टडी आफ़ हेरेडिटी एण्ड एनवायरनमेण्ट (A Study of Heredity and Environment) शिकागो युनिवर्सिटी प्रेस, १९३७

यहाँ पर हमारा अभिप्राय जुड़वों के सम्वन्ध में अधिक विस्तार से वुद्धिपरीक्षा पर विचार करना नहीं है। जव कि स्पष्ट है कि अनुकूल शैक्षिक तथा सामाजिक दशाओं से मस्तिष्क, लाभ तथा ऐसी कम दशाओं से हानि उठा सकता है, साधारण नियम के अनुसार यदि समान जुड़वों को विश्वविद्यालय की शिक्षा दी जाय तो उन्हें वुद्धिपरीक्षा में, उनकी अपेक्षा जिन्हें ऐसी शिक्षा नहीं मिलती, अधिक नम्वर मिलना चाहिए। तिस पर भी तालिका नं० ५ के आंकड़ों से पता चलता है कि ऐसी परिस्थितियों में भी सम्वन्धित जुड़वों की वुद्धि में अन्तर साथ पाले गये समान जुड़वों तथा भाइयों के जोड़े तथा अन्य समान मातापितावाले वच्चों के स्तर के मध्य में आता है।

तालिका नं० ५

वुद्धिपरीक्षा के सम्वन्ध में साथ साथ पाले गये समान जुड़वों तथा अलग अलग पाले गये समान जुड़वों के मध्य में परस्पर-संवन्ध गुणांक (विनेट वुद्धिपरीक्षा)

	माध्यमिक अन्तर	ठीक किया हुआ माध्यमिक अन्तर	सम्वन्ध गुणांक
५० समान जुड़वाँ साथ साथ पाले हुए	५·९	३·१	०·८८१
१९ समान जुड़वाँ अलग अलग पाले हुए	८·२	६·०	०·७६७
५२ असमान जुड़वाँ साथ साथ पाले हुए	९·९	८·५	०·६३१
४७ जोड़े समान मा वाप के वच्चे	९·८		

(न्युमैन, फ्रीमैन तथा होलजिंगर से)

[यह देखा जायगा कि परस्पर-सम्वन्ध गुणांक से पता चलता है कि समान जुड़वों में अलग अलग पाले जाने के वावजूद, असमान जुड़वों की अपेक्षा, जो कि साथ साथ पाले गये हों, समानता का अधिक ऊँचा गुणांक मिलता है।]

समस्या के इस पहलू के निरीक्षण को समाप्त करते हुए हम टरमैन के अनुभव को प्रोद्धरित कर सकते हैं जो कहता है कि अलग अलग पाले जाने पर भी समान जुड़वों की वुद्धि में अधिक अन्तर होने की वात का पता नहीं चलता।

परिस्थिति से सम्बन्धित वंशानुगति तथा स्वभाव

भावना तथा स्वभाव, व्यक्तियों के मानसिक गुणों के एक अन्य रूप को प्रकट करते हैं। न्युमैन, फ्रीमैन तथा होलजिंगर[1] द्वारा देखे गये व्यक्तियों के इतिहास से विदित होता है कि विभिन्न परिस्थितियों में पाले गये, समान जुड़वों के आधार रूप गुणों में प्रत्यक्ष समानता मिलती है।[2]

अपराध, वंशानुगति तथा परिस्थिति

अपराध तथा उसकी ओर प्रवृत्ति, मानसिक अभिव्यक्ति का विशेष प्रकार है, इस लिए वंशानुगति तथा परिस्थिति के दृष्टिकोण से उसकी परीक्षा की जा सकती है। बँधी हुई धारणा के आधार पर हम मानते हैं कि अपराध मुख्यतः परिस्थिति का परिणाम होता है। यदि किसी मनुष्य को निर्धनता में, भूखे अथवा लगभग भुखमरी की दशा में, निम्न तथा खराब वातावरण में पाला जाय, तो यह स्वतः सिद्ध-सा प्रतीत होगा कि वह अपराध करने के लिए प्रेरित होगा ही। निस्सन्देह यही आधार है जिस पर इस विषय के लगभग समस्त सामाजिक विधान बने हैं।

फिर भी, जुड़वों के अध्ययन से स्पष्ट है कि बात ऐसी नहीं है।

जर्मनी, हालैण्ड तथा अमेरिका में किये गये कार्य से प्रकट है कि जहाँ असमान जुड़वों में ३४ प्रतिशत सादृश्य रहता है, वहाँ समान जुड़वों में ७२ प्रतिशत अर्थात् उसकी अपेक्षा कहीं अधिक रहता है।

अवश्य ही, इस विषय में अपराधी प्रवृत्तिवाले घर में सभी बच्चों पर परिस्थिति का प्रभाव पड़ता है तथा जहाँ तक समान जुड़वों का सम्बन्ध है, यदि एक बच्चा किसी

१. पूर्वलिखित

२. हम 'डने इन्डिविडुअल विल टेम्परामेन्ट टेस्ट प्रोफाइल्स' (Douney Individual will Temperament Test profiles) से प्रभावित नहीं होते जिसमें भावना तथा स्वभाव की परीक्षा की जाती है, क्योंकि बहुत से गुण जो इतने आवश्यक नहीं हैं जितने अन्य, बराबरी की श्रेणी में रख दिये गये हैं। शीघ्र निर्णय की क्षमता ऐसी बात है जो अध्ययन द्वारा काफी प्रभावित हो सकती है तथा विरोध की प्रतिक्रिया भी उसी के समान प्रभावित होती है और साथ साथ नैतिक शिक्षा तथा अनुशासन इत्यादि का भी उन पर प्रभाव पड़ता है। इसलिए हमें यह देखकर आश्चर्य नहीं होता कि ये कृत्रिम परीक्षा-विधियाँ बुद्धिपरीक्षा से कम ठीक परिणाम बतलाती हैं।

अपराधी प्रवृत्तिवाली परिस्थिति का अनुभव करता है तो दूसरा भी उतना ही करेगा। पर यह सब कारक असमान तथा समान जुड़वों के अपराध की घटनाओं में देख पड़नेवाली अत्यधिक असमानता का कारण समझाने में असमर्थ हैं। जैसा स्टर्न कहते हैं—"जुड़वों के जोड़ों के विस्तृत अध्ययन से परिस्थितीय व्याख्या के ठीक प्रमाणित होने का समर्थन नहीं होता।"[१]

वंशानुगति तथा स्थूलचरण (Clubfoot)

मानसिक दशाओं पर पड़नेवाले वंशानुगति के प्रभाव को छोड़कर, जो कि इस प्रकार के गुण हैं जिनको हमने पूर्ण अथवा अपूर्ण रूप से परिस्थिति के कारण समझा होता, यदि हम इन तथ्यों पर पुर्नविचार न करते जिनकी व्याख्या हमने अभी की है, हम कुछ ऐसी शारीरिक दशाओं पर विचार कर सकते हैं जो परिस्थिति के परिणाम-स्वरूप मालूम होती हैं।

इन दशाओं में स्थूलचरण जैसी घटनाएँ हैं। सम्भवतः यह उन दशाओं के कारण है जिनसे भ्रूणावस्था में ही कुछ क्षति पहुँचती है तथा यह जुड़वों में से एक को हो सकता है दूसरे को नहीं। इसलिए प्रथम दृष्टि में ऐसा प्रतीत होगा कि यह ऐसी घटना का स्पष्ट उदाहरण है जो परिस्थितीय आधार से उत्पन्न हुई है। किन्तु यहाँ भी उसी तरह समान जुड़वों में २३ प्रतिशत तथा असमान जुड़वों में केवल २ प्रतिशत सादृश्य देखा गया है।

इससे हम इस परिणाम पर पहुँचने को बाध्य हो जाते हैं कि जननिक ढंग की कुछ शारीरिक निर्वलता के कारण एक वच्चे में, दूसरे की अपेक्षा क्षति शीघ्र होने की सम्भावना हो जाती है। परिणामतः जहाँ पर समान जुड़वों में से एक को यह दशा हो जाती है, उस दिशा में निर्बलता की उचित सम्भावना मिलती है, इसलिए असमान जुड़वों की अपेक्षा, जिनकी जननिक वनावट एक ही नहीं है, समान जुड़वों के जोड़े में उसी प्रकार की अधिक क्षति पहुंच सकती है।

वंशानुगति, परिस्थिति तथा तपेदिक

ऐसा समझा जाता था कि तपेदिक की वीमारी वंशानुगत होती है तथा यदि यह किसी सदस्य को हुई तो परिवार में काफ़ी घबराहट फैल जाती थी। साथ ही जिस

१. सी० स्टर्न, पूर्व लिखित, पृष्ठ ४९१

कुल में यह बीमारी देख पड़ती थी, उस कुल में विवाह करने में वास्तविक भय समझा जाता था।

ये भय इस खोज से काफ़ी शान्त कर दिये गये कि वास्तव में वंशानुगति के कारण नहीं, वल्कि अणु-जीव (micro-organism) के कारण यह रोग होता है।

फिर भी जुड़वों के अध्ययन से निकले हुए प्रमाण, उन अधिक सुविधाजनक परिणामों का समर्थन नहीं करते, जो तपेदिक के कीटाणु की खोज से निकले हैं। यह सत्य है कि वास्तविक बीमारी वंशानुगत नहीं होती परन्तु यह भी स्पष्ट है कि निर्वलता की पूर्व प्रवृत्ति अवश्य मिलती है जिससे रोग का प्रतिरोध करने की शक्ति कम हो जाती है। इस प्रकार जब कि असमान जुड़वों में, जहाँ पर दोनों जुड़वों में बीमारी मिलती है, यह २५ प्रतिशत में पायी जाती है तथा उसका कारण जितनी परिस्थिति हो सकती है उतनी ही वंशानुगत दशाएँ। जब हम समान जुड़वों पर आते हैं तब बीमारी में सादृश्य के आँकड़े दोनों में से प्रत्येक जुड़वाँ में लगभग ६५ प्रतिशत तक मिलते हैं। असमान तथा समान जुड़वों में यह अन्तर अधिकतर वंशानुगति के कारण ही होना चाहिए।

इस प्रकार के तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि जब हम माता-पिता तथा बच्चों में बीमारी के क्रम पर किये गये कार्यों के परिणामों पर विचार करते हैं तब बीमारी के आँकड़े उन बच्चों में अधिक मिलते हैं जिनके माता-पिता में यह हो चुकी थी, बनिस्बत उन बच्चों के जिनके मा-बाप इससे मुक्त थे। परन्तु यह पूर्ण रूप से बीमार माता-पिता की निकट परिस्थितीय दशाओं के कारण ही नहीं है, जैसा कि अन्यथा समझ लिया जा सकता है।

इसके विपरीत, निम्न आँकड़ों से यह प्रत्यक्ष है कि इसमें परिस्थितीय कारक के साथ साथ छिपा हुआ वंशानुगत कारक भी है। पर्ल (Pearl) ने ये अंक तैयार किये हैं जो कि साथ में दी हुई तालिका नं० ६ में दिये गये हैं।

वंशानुगति तथा सूखा रोग (रिकेट्स)

सूखा रोग एक ऐसी दशा है जो पूर्ण रूप से विटामिन डी की कमी के कारण होती है, इसलिए यह विना किसी संकोच के परिस्थितीय दशाओं से सम्बन्धित समझी जायगी। स्पष्ट है कि यदि बच्चे के खाने में विटामिन डी तथा सूर्य के प्रकाश की कमी है, सूखा रोग होने की सम्भावना की जा सकती है। यह एक ऐसी घटना है जहाँ परिस्थिति स्पष्ट निर्णायक के रूप में दिखलाई पड़ती है। फिर भी यह निश्चय है कि वंशानुगति अब भी सर्वप्रथम विचारणीय है। क्योंकि जब कि असमान जुड़वों में सादृश्य केवल २२ प्रतिशत में मिलता है, समान जुड़वों में लगभग ८८ प्रतिशत में मिलता है।

यह उदाहरण किसी अन्य की तरह ही इस वात पर जोर देता है कि परिस्थिति के कार्यो का वास्तविक स्वरूप क्या है। भौगोलिक परिस्थितियों द्वारा प्रकृति कुछ नियन्त्रित दशाएँ तथा सीमाएँ निर्धारित करती है जिन्हें जीवित पदार्थ विना कुछ मूल्य चुकाये पार नहीं कर सकते तथा यह मूल्य इतना अधिक हो सकता है कि पूर्ण नाश की आवश्यकता पड़ जाय, परन्तु उसे उन जीवित पदार्थों की वंशानुगति के आधार पर ही कार्य करना होता है जिसके लिए यह परिस्थिति प्रस्तुत करती हैं।

तालिका नं० ६

तपेदिक से प्रभावित वच्चों का प्रतिशत, जहाँ कि एक या दोनों माता-पिता प्रभावित हैं उनकी उनसे तुलना जहाँ पर माता-पिता में से कोई प्रभावित नहीं है

प्रभावित माता-पिता	प्रभावित वच्चों का लगभग प्रतिशत
माता-पिता में से कोई नहीं	८ %
माता	१३ %
पिता	१४ %
दोनों	३४ %

[५४६ जोड़े माता-पिता तथा २४८० वच्चों के अध्ययन पर आधारित।]

वंशानुगति तथा बहुमूत्रता

वहुमूत्रता 'मेटावोलिज्म' (Metabolism) की असामान्य दशा के कारण होती है, परन्तु फिर भी जुड़वों के अध्ययन से पता चलता है कि वंशानुगति एक मुख्य कारक है, क्योंकि असमान जुड़वों में ३७ प्रतिशत तथा समान जुड़वों में लगभग ८४ प्रतिशत इसका सादृश्य मिलता है।

वंशानुगति तथा महामारी (epidemics)

केवल महामारी के ढंग के रोगों में भी, जो कि किसी एक अथवा दूसरे समय में थोड़ा बहुत सभी को हो सकते हैं, वंशानुगत कारक के सम्बद्ध होने के कुछ प्रमाण मिलते हैं क्योंकि इसमें भी असमान तथा समान जुड़वों के सादृश्य में अन्तर पाया जाता है। उदाहरणार्थ असमान तथा समान जुड़वों में चेचक के लिए क्रमशः ८७ तथा ९५ प्रतिशत तथा स्कारलेट ज्वर के लिए क्रमशः ४७ तथा ६४ प्रतिशत सादृश्य मिलता है।[1]

वंशानुगति तथा कैन्सर

निःसंदेह कैन्सर का भी जिसके जननिकविज्ञान के विषय में अभी हम काफ़ी नहीं जानते, वंशानुगत आधार है, जैसा कि इस तथ्य से स्पष्ट है कि एक विशेष क्षेत्र में एक प्रकार के कैन्सर के सम्बन्ध में असमान जुड़वों में २४·२ प्रतिशत सादृश्य मिलता है परन्तु समान जुड़वों में यह ५८ प्रतिशत है।[2]

इसलिए इस बीमारी के होने की सम्भावना काफ़ी सीमा तक वंशानुगत कारकों पर निर्भर है।

परिस्थिति, वंशानुगति तथा पोष्य बच्चे (फोस्टर चिलड्रन)

जुड़वों के अध्ययन के साथ पोष्य बच्चों का प्रश्न भी आता है।

हम यह मान सकते हैं कि पोष्य पुत्र जब किसी सामाजिक स्तरवाले घर में जाते हैं तो उनका बुद्धिस्तर उस घर के अन्य बच्चों की अपेक्षा मध्यमान के आसपास होगा। बात यह है कि वंशानुगति यदि एक नियंत्रक कारक है तो स्वाभाविक रूप से उत्पन्न उस घर के बच्चे अपने माता-पिता के बुद्धिस्तर के अनुसार भिन्न होंगे, जो कि साधारणतया व्यवसायी वर्ग वालों से श्रमिकों तक कम होता जायगा।

वास्तव में ऐसा होता है, जो साथ में दी गयी तालिका से स्पष्ट है।

१. स्थूल चरण, तपेदिक, सूखा रोग, बहुमूत्रता, चेचक तथा स्कारलेट ज्वर के आँकड़े, वान वर्शुअर (Von Versehuer) के कार्य पर आधारित हैं। Ergebr. Allgem. Pathol. १९३२, भाग २६ तथा Beitrag. Zur Klinik, d. Tuber Kul. १९४१, भाग ९७, सी० स्टर्न (C. Stern) की एक तालिका से प्रोद्धरित, पूर्व लिखित

२. मैकलिन (Macklin), जर्नल आफ़ हेरेडिटी, १९४०, ३१

तालिका नं० ७

निम्नलिखित सामाजिक स्तरों में पोष्य बच्चों तथा घर के बच्चों के वृद्धि-सूचक अंकों की तुलना

बच्चों की संख्या	ग्रहण किया हुआ या उसी घर का बच्चा	सम्बन्धित घर का वर्ग	वृद्धिसम्बन्धी अंक	
			ग्रहण किये हुए बच्चे का	घर के बच्चे का
४३	ग्रहण किया हुआ	व्यवसायी वर्ग	११२·६	
४०	घर का	" " "		११८·६
३८	ग्रहण किया हुआ	व्यापारी मनुष्य	१११·६	
४२	घर का	" " "		११७·६
४४	ग्रहण किया हुआ	कुशल व्यापारिक तथा लिपिक कर्मचारी	०·६	
४३	घर का	" " "		१०६·९
४५	ग्रहण किया हुआ	अर्ध कुशल	१०९·४	
४६	घर का	" " "		१०१·१
२४	ग्रहण किया हुआ	अकुशल कर्मी	१०७·८	
२३	घर का	" " "		१०२·१

यह ध्यान देने योग्य है कि ग्रहण किये हुए बच्चे घर के बच्चों की अपेक्षा मध्यमान के (जो कि ११०·५ के लगभग हैं) निकट हैं तथा यह स्पष्ट प्रमाण है कि विभिन्न सामाजिक स्तरों के बुद्धिसूचक अंकों के अन्तर में वंशानुगति मुख्य कारक है।

अठारहवाँ अध्याय

वंशानुगति के महत्त्व के अन्य प्रमाण---समान जुड़वों के हाथों में रेखाएँ बनने से

हाथों की रेखाओं तथा चिह्नों की वनावट से न केवल उनकी पित्रागति का ही पता चलता है, परन्तु यह भी कि असमान जुड़वों की अपेक्षा समान जुड़वों में वे अधिक एक से होते हैं। इस प्रकार यह तथ्य उन प्रवृत्तियों का समर्थन करता है जिनकी चर्चा हम पिछले दो अध्यायों में करते आये हैं। चूँकि ये चिन्ह काफ़ी जातिवैज्ञानिक अभिरुचि के हैं तथा परिणामस्वरूप हमने वाद में उसी दृष्टिकोण से अध्ययन के लिए एक सम्पूर्ण अध्याय ही दिया है, अतः जुड़वों तथा एक ही माता या एक ही पिता के वच्चों के सम्वन्ध में इन लक्षणों के विषय पर पुनर्विचार करना वांछनीय जान पड़ता है। इससे क्रमशः वंशानुगति तथा परिस्थिति के प्रभाव के प्रमाणों की विस्तृत जानकारी होगी।

ऐसा समझा जाता है कि एक-युग्मिक (अथवा समान जुड़वों) के हाथ की रेखाओं तथा अन्य वनावटों में अन्य दो व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक समानता मिलेगी। घटनाओं से यह वात सिद्ध भी हो जाती है।

साथ ही "कम होते हुए सम्वन्धोंवाले वच्चों की तुलना में समानता की क्रमशः कमी देखी जा सकती है। इस प्रकार से एक जोड़े समातृक या सपितृक (समान माता या समान पितावाले) वच्चों तथा भ्रातृ-सदृश जुड़वाँ जोड़ों में, एक-युग्मिक जुड़वें जोड़े की अपेक्षा बहुत कम समानता होती है। माता-पिता तथा वच्चों में, औसतन, समातृक या सपितृक वच्चों की अपेक्षा कम समानता मिलती है तथा उसी जाति के असम्वन्धित व्यक्तियों में और भी कम, जव कि सवसे अधिक अन्तर विभिन्न जातिवालों के रूपों की तुलना में मिलता है।"[१]

१. एच० कमिन्स तथा सी० मिडलो (H. Cummins and C. Midlo), फिंगर प्रिन्ट्स, पाम्स एण्ड सोल्स फ़िलाडेलफिया, १९४३, पृष्ठ २१०

मनुष्य के हाथ की बनावट में परिस्थिति का प्रभाव

जे० डब्लू० मैकआर्थर[1] ने देखा कि समान (या एक-युग्मिक, मोनोजाइगोटिक) जुड़वों के उदाहरण में उनके हाथ की बनावट का अन्तर (standard deviation) २०·८ प्रतिशत प्रामाणिक विचलन होता है। चूँकि एक ही अण्डे से प्रत्येक जोड़े की उत्पत्ति होती है, इसलिए दोनों व्यक्ति समान होने चाहिए। उनमें यदि कोई विभिन्नता होती है तो वह गर्भावस्था से आगे तक किसी एक या दूसरे प्रकार के परिस्थितीय कारण से होती है।

वास्तव में हम इसको परिस्थिति के आपेक्षिक प्रभाव के एक स्पष्ट उदाहरण के रूप में ले सकते हैं जो व्यक्ति के बाह्य अथवा समरूपी गुणों पर प्रभाव डालते हैं तथा ऐसी अवस्था में उसमें यह सम्भावना हो सकती है कि परिस्थिति केवल बाह्य गुणों को बदल सकती है जो कि लगभग २०%है, जब कि अवश्य ही, जहाँ तक हम जानते हैं यह आन्तरिक जननिक ढाँचे सम-पित्र्यक (genotype) को किसी भी सीमा तक प्रभावित नहीं करती।

हाथ की बनावट का जननिक आधार

गाल्टन (Galton) का विचार था कि सूक्ष्म उभरे भाग तथा हाथ के अन्य गुण, जीव-वैज्ञानिक अथवा जननिक, एककों को प्रदर्शित करते हैं। परिणामतः ऐसी बनावट की पित्रागति से प्रमाणित होता है कि मानव-वंशानुगति सूक्ष्मतम पैमाने पर कार्य करती है। फिर भी, हाथों तथा पैरों के नमूने की बनावट की जटिलता से विदित होता है कि सम्भवतः उसमें पित्र्यकों की बहुत बड़ी संख्या सम्बद्ध है। वास्तव में, इसके लिए संतोष का कोई कारण नहीं है कि मानव पित्र्यकों तथा उन पित्र्यसूत्रों की जिनसे कि वे सम्बन्धित हैं बहुत शीघ्र तालिका बनायी जा सकती है तथा उनकी पहचान हो सकती है।

फ्रेन्सिस गाल्टन[2] ने उँगलियों की छाप के जननिक आधार की प्रथम स्थापना की है। इनकी रचना के पश्चात् एच० एच० विल्डर (H. H. Wilder) की रचना आती है जिसने दो परिवारों के अध्ययन के नमूने की पित्रागति को बतलाया है।

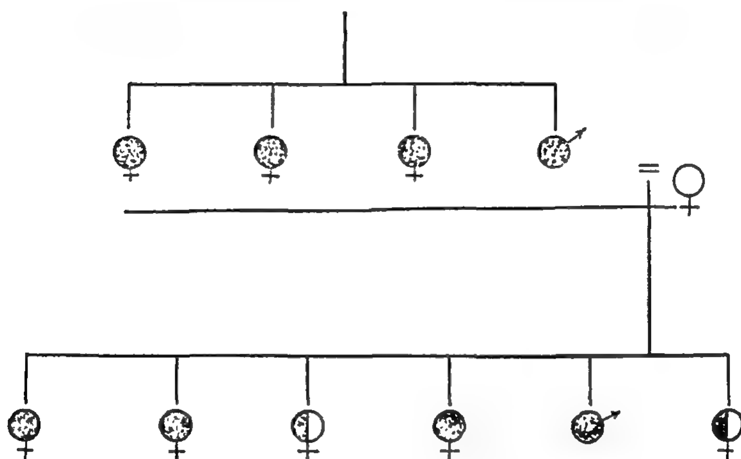
१. रिलायबिलिटी आफ़ डरमेटोग्लीफ़िक्स इन ट्विन डागनोसिस, ह्यु मेन बायलोजी, १९३८, भाग १०, पृष्ठ १२

२. फिगर प्रिन्ट्स (Finger Prints London), १८९२

प्रथम एक कुल में हथेली के उभरे भागवाला (thenar eminence) आकार था (अँगूठे के नीचे 'वीनस' का उभरा भाग जो कि १५–२० प्रतिशत काकेशियनों में मिलता है) जो कि पिता की प्रत्येक वहिन में मिलता था। पिता ने किसी दूसरे आकारवाली से विवाह किया।

चित्र नं० १२५

हाथ की बनावट के वंशानुगत गुण को सिद्ध करते हुए हथेली के उभरे भाग (thenar eminence) का वंशक्रम



(एच० एच० विल्डर द्वारा)

♀ स्त्रियां जिनके दोनों हाथों में उभरे भाग (thenar eminence) हैं।

♀ स्त्रियां जिनके केवल बायें हाथ में उभरा भाग है।

♀ स्त्रियां जिनके हाथ में उभरा भाग नहीं है।

♂ पुरुष जिनके दोनों हाथों में उभरे भाग हैं।

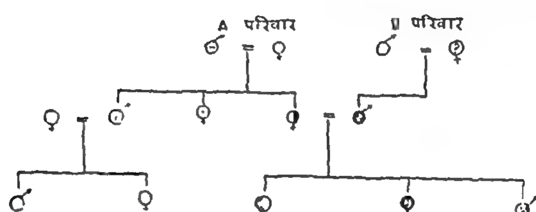
यह काकेसायड में विरली बनावट है तथा ऊपर की स्थिति अकस्मात् ही नहीं बल्कि अवश्य ही वंशानुगति के कारण है।

उत्पन्न वच्चों में एक पुत्र था जिसके दोनों हाथों में पिता के हाथ की जैसी रेखाएँ थीं, तीन लड़कियों के दोनों हाथों में थीं तथा दो लड़कियों के केवल वाएँ हाथ में थीं। साथ में दिया हुआ चित्र (चित्र नं० १२५) यह वात स्पष्ट कर देता है।

विल्डर (Wilder) के दूसरे कुल में ऐड़ी का ऐसा नमूना था जो १ प्रतिशत व्यक्तियों से अधिक में नहीं मिलता। फिर भी इस कुल में १२ मनुष्यों में से (जिनमें से

चित्र नं० १२६

विरल एड़ी (rare calcar) के नमूने की पित्रागति का वंशक्रम



(एच० एच० विल्डर से)

पुरुष जिनकी दोनों एड़ियों में प्राथमिक विरल नमूना है।

पुरुष जिनकी परीक्षा नहीं हुई।

पुरुष जिनकी दाहिनी एड़ियों में विरल नमूना है।

मनुष्य जिनकी दायीं एड़ी में विरल नमूना तथा बायीं एड़ी में प्राथमिक विरल नमूना हैं।

पुरुष जिनकी एड़ी का नमूना नहीं है।

स्त्रियाँ जिनकी बायीं एड़ी में प्राथमिक विरल आकार है।

वे स्त्रियां जिनकी परीक्षा नहीं हुई।

स्त्रियाँ जिनकी दोनों एड़ियों में विरल नमूना है।

स्त्रियाँ जिनकी दाहिनी एड़ी में विरल नमूना तथा बायीं एड़ी में प्राथमिक आकार है।

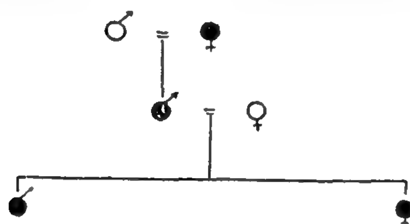
स्त्रियाँ जिनकी बायीं एड़ी में विरल नमूना तथा दाहिनी एड़ी में प्राथमिक आकार है।

२ की परीक्षा नहीं की गयी) ७ में किसी न किसी रूप में यह थी जैसा कि साथ में दिये हुए वंशक्रम से (चित्र नं० १२६) से पता चलता है।

वंशक्रम से यह अनुमान होता है कि नमूने का प्रकार अपसारी है, क्योंकि A कुल का संग करने में जहाँ पर बाबा में प्राथमिक चिह्न मिलते हैं, यदि उसके पूर्व की पीढ़ी (पुरुष) तक नहीं, जिसकी परीक्षा नहीं की गयी, तो यह पोतों की पीढ़ी तक समाप्त हो जाती है।[1]

चित्र नं० १२७

हथेली के बायें ऊँचे भाग (hypothenav eminence) पर घूँसे के उभरा भाग (the bulb of percussion) के चक्र की पित्रागति का वंशक्रम



(ए० सेवीडाली से)

● ♀ = स्त्री जिसकी गदेली के बायें ऊँचे भाग में चक्र है।

♀ = स्त्री जिसकी गदेली के बायें ऊँचे भाग में चक्र नहीं है।

● ♂ = पुरुष जिसकी गदेली के बायें ऊँचे भाग (hypothenav eminence) में चक्र है।

♂ = पुरुष जिसकी गदेली के बायें ऊँचे भाग में चक्र नहीं है।

एक अन्य छोटे वंशक्रम[2] में हथेली के बायें ऊँचे भाग (hypothenav eminence) में (घूँसे के उभरे भाग (the bulb of percussion) चक्र के पारेपण का पता चलता है, जहाँ पर कि काला पित्रागति को प्रदर्शित करता है।

१. कमिन्स तथा मिडलो (Cummins & Midlo) पूर्व लिखित, पृष्ठ २१७, दूसरे मत को मानते हैं तथा वे कहते हैं कि "उसमें बिना नमूनेवाले के ऊपर नमूनेवाली बनावट के प्रभावी होने की सम्भावना मिलती है" अवश्य ही, यह ऐसा हो सकता है परन्तु कुल के उन दोनों व्यक्तियों में नमूने के होने न होने पर बहुत कुछ निर्भर है—जिनकी परीक्षा नहीं की गयी।

२. ए० सेविडाली (A. Cevidalli) के द्वारा Contributo allo Studio delle linee papillari in rapporto alla erditarieta. Bol. Soc. Med. Chir. di Modena, 1911. भाग १३, पृष्ठ ५४७.

यह कुछ महत्त्व का विषय है कि हीन्डेल (Heindl) ने कुछ ऐसे प्रमाणों को पाया है जिससे पता चलता है कि किसी एक विशेष कुल के जिन लोगों की उँगली की छाप एक सी थी, उनके शरीर के अन्य गुण भी समान थे।[1]

इससे हाथों तथा पैरों में रेखाओं की बनावट तथा साधारण शारीरिक गुणसम्बन्धी नियंत्रण करनेवाले पित्र्यकों में ग्रथन का अनुमान होता है। यह इस विषय को और भी परिस्थिति के क्षेत्र से हटाकर वंशानुगति की ओर ले जाता है।

एच० ग्रुनवर्ग[2] ने देखा है कि समान (एक-युग्मिक monozygotic) जुड़वों के लगभग ८० प्रतिशत में उँगलियों के आकार मिलते हैं जो मैकआर्थर (Mac Arthur) के कार्य से प्रमाणित होता है तथा उसे भी यही संख्याएँ, लगभग ८१ प्रतिशत, मिली थीं, परन्तु असमान (अनेक-युग्मिक) जुड़वों में यह केवल ६३·४ प्रतिशत मिली।

उसने यह भी पाया कि जिन माता-पिता के गाँठ (loop, लंबवृत्त) थी उनके ८०·९ प्रतिशत वच्चों में भी वह थी तथा जब माता-पिता में चक्र था तब ७०·८ प्रतिशत के वच्चों में यह मिलता था।

इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि पित्रागति का प्रमाण मिलता है।

ई० एसेन मोलर[3] (Eo. Essen-Moller) ने देखा कि जहाँ तक समान जुड़वों की वात थी, जुड़वों के जोड़ों में या तो चक्र विलकुल नहीं था या दोनों में एक या अधिक लगभग ८५·७ प्रतिशत में मिलता था तथा अन्य जुड़वों में ६५·८ प्रतिशत में मिलता था।

ग्रुनवर्ग का विश्वास है कि गाँठ, चक्र तथा गुम्वद की उत्पत्ति से सम्वद्ध पित्र्यक X X पित्र्यक हैं जो कि प्रभावी हैं तथा x x अपसारी गुणों के साथ हैं और Y Y भी y y की अपेक्षा प्रभावी हैं। ये आकार निम्न जननिक संयोजनों का निर्माण करते हैं—

१. कमिन्स तथा मिडलो द्वारा प्रोद्धरित, पूर्व लिखित, पृष्ठ २१८, हिन्डेल से, System and Praxis der Daktyloskopie, तीसरा संस्करण, वर्लिन तथा लाग, १९२७.

२. Die Vererbung der Menschlichen, Tastfiguren Zeischrift unfur Indukt Abst V. Vererbungs-Lehre, भाग ५०, पृष्ठ ७६–९६, १९२९, कमिन्स तथा मिडलो, पूर्व लिखित से उद्धरित

३. Empirische "Ahnlichkeits diagnose bei Zwillingen, हेरेडिटाज (Hereditas) भाग २७, पृष्ठ १–५०, १९४१, कमिन्स तथा मिडलो, पूर्व लिखित से उद्धरित

X X Y Y गाँठदार वनावट का
X X Y y चक्रदार वनावट का
X X y y चक्रदार वनावट का
X x Y Y गाँठदार वनावट का
X x Y y गाँठदार वनावट का
X x y y चक्रदार वनावट का
x x Y Y गाँठदार वनावट का
x x Y y गाँठदार वनावट का
x x y y गुम्वददार वनावट का

यह सुझाव दिया जाता है कि Y तथा Y Y क्रमशः X तथा X X पर प्रभावी हैं परन्तु Y के ऊपर X X तथा यदि किसी जोड़े का प्रभावी पित्र्यक अनुपस्थित है तव दूसरे का प्रभावी स्पष्ट हो जाता है तथा यदि सभी प्रभावी अनुपस्थित हैं तव गुम्वद एक दोहरे अपसारी गुण के रूप में आता है।[1]

जातिसंकरण के प्रमाण

पशुओं की भाँति मनुष्यों में भी पित्रागति के जननिक नियंत्रण का काफ़ी प्रमाण जातीय प्रसंकरण में मिलता है। यह स्पष्ट रूप से उंगलियों, हथेलियों, तथा तलुओं में वने हुए नमूनों के विषय में भी मिलता है।

उदाहरण के लिए जमाइका में काले, भूरे तथा श्वेत मनुष्यों के विषय में डेवनपोर्ट तथा स्टेगर्डा[2] (Davenport and Steggerda) द्वारा अध्ययन किया गया है।

इनके अध्ययनों में ऐसा विचार किया गया कि जहाँ तक उनकी उँगलियों की छाप का सम्वन्ध है, भूरे लोग अपने माता-पिता के वर्ग में मध्यम थे। इस प्रकार से उँगलियों पर चक्र मिलनेवालों में श्वेत २२ प्रतिशत, काले ३० प्रतिशत तथा माध्यमिक भूरे २५ प्रतिशत मिलते हैं।[3]

१. कमिन्स तथा मिडलो, पूर्व लिखित, पृष्ठ २१९–२२०

२. सी० वी० डेवनपोर्ट तथा एम० स्टेगर्डा (C. B. Davenport and M. Steggerda) रेस क्रासिंग इन जमाइका (Race Crossing in Jamaica) कामेकी संस्था (Comequie Institution) वाशिंगटन, पवलिक, १९२९, भाग ३९५

३. हाथों के अन्य आकारों के विषय से सम्बन्धित कुछ अनियमित बातें हैं जिनका वर्णन यहाँ पर आवश्यक नहीं है। इनमें भूरे माध्यमिक नहीं हैं परन्तु कालों की अपेक्षा

उँगली की छाप के चक्र तथा जुडवें

ई० एसेन-मोलर (E. Essen moller) ने उँगलियों की छाप जैसी सूक्ष्म वस्तु पर विचार करके वतलाया है कि जुड़वों की उँगलियों पर एक अथवा अधिक चक्र होने अथवा कोई चक्र न होने का जहाँ तक प्रश्न है, साधारण दो-अण्डक (dizygotic) जुड़वों में लगभग ६५·८ प्रतिशत में समानता है जब कि समान अथवा एक-अण्डक (monozygotic) जुड़वों में इसकी वारम्वारता ८५·७ प्रतिशत थी। यदि यह कहा जाय कि वंशानुगति का प्रभाव हाथ के नमूनों पर नहीं पड़ता, तब इस प्रकार बार-म्वार देख पड़नेवाली समानता का और क्या कारण बताया जा सकता है ?

वास्तव में यद्यपि ज्ञान की वर्तमान अवस्था में विषय की जटिलता के कारण जननिक विज्ञान का विषय चाहे समझ में न आये, इसमें कोई सन्देह नहीं कि नमूनों के मुख्यतः वंशानुगति के कारण हैं, जव कि यह जोर देकर कहा जा सकता है कि—(१) जब माता पिता दोनों की उँगलियों में दोहरे लम्ववृत्त (गाँठें) हों तो साधारणतया बच्चों के भी ये होते हैं। (२) जब दोहरी गाँठें दोनों माता-पिता के नहीं होतीं तो बच्चों के भी नहीं होतीं तथा (३) यदि केवल माता-पिता में से एक में हैं तो कुछ बच्चों में मिलेंगी तथा कुछ में नहीं मिलेंगी।[1]

उँगलियों के नमूने के अध्ययन से के० वोनेविक[2] (K. Bonnevic) ने दिखलाया है कि परस्पर सम्वन्ध के गुणांक से पता चलता है कि असम्वन्धित मनुष्यों में यह ०·२७, साधारण जुड़वों में ०·५४, समातृक या सपितृक वच्चों में ०·६० जब कि समान जुड़वों में ·९२ है। वंशानुगति के महत्त्वपूर्ण प्रभाव का इससे स्पष्ट प्रमाण कुछ और नहीं हो सकता।

ऐसा होते हुए भी, हमारे अध्ययन से उन मतों के लिए वहुत थोड़ा स्थान रह जाता

अधिक हैं। जहाँ तक हमारे वर्तमान ज्ञान का सम्बन्ध है जब कि यह दशाएँ स्पष्ट रूप से नियमविरोधी हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं कि अन्त में उनकी व्याख्या हो सकेगी तथा वे उँगलियों की छाप के स्पष्ट संकेतों को निरर्थक नहीं कर देती जहाँ कि यह निश्चित है कि व्यक्तियों की सम्भावित उँगलियों की छाप के प्रकार में वंशानुगति नियन्त्रक कारक है।

१. कमिन्स तथा मिडलो, पूर्व लिखित, पृष्ठ २२१

२. स्टडीज आन पैपिलरी पैटर्न्स आफ़ ह्यूमेन फिंगर्स (Studies on papillary patterns of human fingers) जर्नल आफ़ जेनेटिक्स, भाग १५, पृष्ठ १

है जो किसी भी परिस्थिति में समान द्वारा समान की उत्पत्ति में वंशानुगति के महत्त्व को कम करने अथवा उनकी अवहेलना करने का प्रयत्न करते हैं।

इसलिए जननिक अध्ययन से अथवा पित्रागति के अध्ययनों से, जिनका हमने विवेचन किया है, एक ओर तो उपार्जित गुणों के पारेषण के सिद्धान्तों के लिए और दूसरी ओर उसके प्रतिरूप भौगोलिक मत के लिए स्थान शेष नहीं रहता जो अनेक वर्षों से भौगोलिक निश्चयवादियों का सिद्धान्त रहा है।

फिर भी, इन सब तथ्यों के उपरान्त भी, भौगोलिक निश्चयवादी अपने जीव-वैज्ञानिक शास्त्रों के उपार्जित गुणवादी मित्रों सहित उन मतों के प्रतिपादन से रोके नहीं जा सके हैं, जिनमें वंशानुगति के अत्यधिक प्रमाणों के होते हुए भी, यह दिखलाने का प्रयत्न किया गया है कि परिवर्तनशील जीवित पदार्थों को परिस्थिति अब भी बदलती रहती तथा उनमें परिवर्तन करती है और इस प्रकार नये प्रकारों तथा नयी जातियों की उत्पत्ति करती है।

इन सिद्धान्तों की मीमांसा हम अगले अध्याय में करेंगे, हालाँकि हमारा मत है कि जननिक अध्ययनों द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रमाणों से यह बात अन्तिम रूप से निश्चित हो जाती है कि वंशानुगति एक प्रभावशाली शक्ति है।

जैसा कि हमने पहले कहा है, भौगोलिक परिस्थिति का स्थान है, उसका अपना कार्य है, परन्तु यह उस प्रकार का नहीं है जैसा कि परिस्थितिवादी बतलाते हैं। उसका स्वरूप क्या है, इसकी चर्चा समय आने पर हम करेंगे।

उन्नीसवाँ अध्याय

जाति तथा वंशानुगति से सम्बन्धित भौगोलिक परिस्थिति तथा निश्चयवाद (DETERMINISM) के महत्त्व की अन्तिम व्याख्या

सोलहवें अध्याय में हमने जातिवैज्ञानिक तथा जननिक ढंग के उन साधारण तर्कों की संक्षिप्त व्याख्या की थी, जो अपनी सर्जनात्मक क्रियाशीलता से, उपार्जित गुणों के पारेषण के सिद्धान्त द्वारा मनुष्य की जातियों के विकास को बदल देने की परिस्थिति की शक्ति पर, शंका करते मालूम पड़ते हैं। इसके बाद के दो अध्यायों में हमने वंशानुगति के विस्तृत अध्ययन तथा विशेष रूप से जुड़वों के तुलनात्मक अध्ययन से मिलनेवाले प्रमाणों पर तथा परिस्थिति और वंशानुगति की आपेक्षिक शक्ति पर विचार किया।

प्रथम दृष्टि में, जननिक अध्ययनों के आधार पर इस प्रश्न के सम्बन्ध में जाति-वैज्ञानिक दृष्टिकोण, भौगोलिक निश्चयवादियों का कथन मानने को तैयार न होगा, क्योंकि उनके द्वारा प्रतिपादित प्रारम्भिक सिद्धान्त, जननिक विज्ञान की प्रक्रिया तथा जातीय विकास के, जैसा कि सामान्यतः उसका अर्थ लिया जाता है, विरुद्ध हैं।

इसलिए जब इन सबके ऊपर हमारे पास उन अध्ययनों के प्रमाण हैं जिनका सीधा सम्बन्ध परिस्थिति की शक्ति की परीक्षा करने से है तथा जिनके परिणाम परि-पोषकों (नरचरिप्ट) के परिणामों के प्रतिकूल हैं, तब यह पता चलता है कि यदि वैज्ञानिक तथ्य हमारे निर्देशक हैं, तो केवल यह परिणाम निकाला जा सकता है कि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में मनुष्यों के जातिगत गुणों के पारेषण में वंशानुगति ही मुख्य प्रभावशाली शक्ति है।

तिस पर भी, इस विषय का अन्त करने के लिए यह आवश्यक है कि वादविवाद जाति-विज्ञान के क्षेत्र में ले आया जाय तथा उसी के प्रकाश में भौगोलिक निश्चय-वादियों के मुख्य तर्कों का निरीक्षण किया जाय। यही हमने अगले पृष्ठों में करने का प्रयत्न किया है।

इसके फलस्वरूप हमें सभी सम्बद्ध विज्ञानों में परिणाम की एक आधारभूत एकता का संकेत मिलता दिखलाई पड़ता है, अतः साधारणतया इस प्रश्न के सम्बन्ध में, उनके परिणाम निर्णयकारी समझे जा सकते हैं। हालाँकि नव उपार्जितगुणवादी (neo

Lamarkian) विचारों पर, एक वैज्ञानिक मत अथवा दार्शनिक विश्वास की भाँति जोर दिया जाय तो अवश्य ही कुछ लोग इन परिणामों को उस तरह पूर्ण नहीं समझेंगे जिस तरह हमने सुझाया है।

फिर भी, चाहे जो हो, अब हम निश्चयवादियों के तर्कों की परीक्षा करेंगे तथा पाठकगणों को परिणाम स्वयं निकाल लेने के लिए छोड़ देंगे।

परिस्थिति तथा बढ़ा हुआ कद

कई स्पष्ट तथ्यों में से एक यह भी है कि शरीर की बाढ़ प्रभावित होती है—एक तो भौगोलिक परिस्थिति के द्वारा एवं अच्छे पोषण से, जो अच्छी परिस्थितियों से और बढ़ जाता है, दूसरे कठिन परिश्रम के घंटों में कमी हो जाने से विशेष कर कम उम्र में जब कि शरीर बढ़ रहा हो।

इसलिए विलर्मे[1] ने जो तर्क उपस्थित किया कि अच्छी परिस्थिति विकास में सहायक होती है तथा बुरी दशाओं में कद का बढ़ना रुक जाता है, उसे हम अपने अनुभव में स्वयं प्रमाणित देखते हैं।

इससे साधारणतया यह परिणाम निकाला जाता है कि इन कारकों को नियन्त्रित करने से जातीय तथा सामाजिक सुधार किया जा सकता है।

समाज-सुधार के सम्बन्ध में यह ठीक है, इसमें कोई सन्देह नहीं, हालाँकि सामाजिक उन्नति भी जातिसम्बन्धी सुधार से लाभदायक रूप में प्रभावित हो सकती है, परन्तु यह मान लेना कि इससे जातिगत सुधार भी हो सकता है, वास्तव में विवादास्पद वस्तु को ही सत्य समझ लेना है।

संक्षेप में लम्बे और छोटे कद तथा लोगों के रहने की दशाओं में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इस प्रकार के कुछ तथ्यों की परीक्षा के उपरान्त, जो कि जातिवैज्ञानिक के क्षेत्र में आते हैं, यह काफ़ी स्पष्ट हो जाता है।

उदाहरणार्थ, अंग्रेज मध्य श्रेणी के लोगों की ऊँचाई की गणना ६९·१४ इंच (१·७५७ मीटर) तथा श्रमिक वर्ग की ६५·७ इंच (१·७०५ मीटर) की गयी[2] है।

१. Villerme.

२. फाइनल रिपोर्ट्स (Final Reports), ब्रिटिश एसोसियेशन आफ एडवान्समेंट आफ साइन्सेज (British Association of Advancement of Sciences) १८८३, पृष्ठ १७

डा० जान बेडो[1] ने भी वतलाया है कि खानों में काम करनेवाले, आसपास रहनेवाले अन्य श्रमिकों से भी छोटे थे। उसी लेखक तथा रावर्ट्स[2] (Roberts) ने वतलाया है कि कारखानों तथा शहरों के काम करनेवाले, शहर से वाहर रहनेवाले देहाती कार्य-कर्ताओं की अपेक्षा छोटे थे।

वेल्जियम[3] (Belgium) में तथा साथ ही रूस[4] (Russia) में भी यही वात सत्य मालूम होती है।

पहली वात तो यह महत्त्व की है कि अधिक आराम करनेवाले वर्गों का कद श्रमिकों के कद से अधिक ऊँचा होता है।

दूसरे, जहाँ तक इन उदाहरणों का सम्वन्ध है, यह भी उतने ही महत्त्व का है कि श्रम करनेवाले वर्गों में भी, जो मुख्यतः उत्तरी यूरोप के थे, शहर के लोग १९ वीं शताब्दी के घने औद्योगिक शहरों की वुरी दशाओं में रहने के कारण देहातों के लोगों की अपेक्षा अवश्य ही छोटे कद के थे, जिससे हम परिणाम निकाल सकते हैं कि यह पोषण तथा रहन-सहन के नीचे स्तर के कारण था।

इस सम्वन्ध में न केवल यही दो तथ्य कद तथा उत्तम रहन-सहन के सम्वन्ध का महत्त्व वतलाते हैं परन्तु एक तीसरा तथ्य भी निकलता है जो उतने ही महत्त्व का है।

ये आँकड़े उस समय लिये गये हैं जव कि सभी पश्चिमी देशों में, जहाँ तक रहने की स्थिति तथा श्रम के घंटों का सम्वन्ध है, औद्योगिक दशाएँ आज की अपेक्षा वहुत खराव थीं। वास्तव में वे आजकल की अपेक्षा तन्दुरुस्ती के नीचे प्रमाप वाले लोगों को प्रदर्शित करते हैं।

१. Dr. John Bedoe, स्टेचर एण्ड वल्क आफ़ मैन इन ब्रिटिश आईल्स (Stature and Bulk of Man in British Isles), लन्दन, १८७०, पृष्ठ १४८

२. ए मैनुअल आफ ऐन्थ्रोपोमेट्री (A. Manual of Anthropometry), लन्दन, १८७८, तथा जर्नल आफ दि स्टेटिस्टिकल सोसाइटी आफ लन्दन (Journal of the Statistical Society of London), १८७६

३. हाउजे (Housz'e) वुलेटिन आफ़ सोशल एन्थ्रोपोलोजी (Bulletin of Social Anthropology), व्रुसेल्स (Brussels), १८८७

४. एनुचिन (Anuchin) "O Geograficheskom" लैनिनग्राड (Leningrad) १८८९, ज्योग्रेफिकल डिस्ट्रीव्युशन आफ स्टेचर इन रश। (Geographical Distribution of Stature in Russia)

पिटर्ड[1] ने वतलाया है कि यूरोप की उत्पत्ति के अमेरिका-निवासी, जिन लोगों से वे आये हैं, उनकी अपेक्षा अधिक लम्बे कद के पाये जाते हैं। इसकी उसने सम्भवतः सत्य ही विवेचना की है कि यूरोप की अपेक्षा अमेरिका में यान्त्रिक उन्नति पहले ही हुई है, इसीलिए बालिग होने के पूर्व अधिक श्रम के कारण रुक जानेवाली वाढ़ से वचे रहकर यहाँ के मनुष्यों को विकास के लिए अधिक समय मिला।

वह यह भी वतला सकता था कि उपजाऊ तथा प्राकृतिक पदार्थों से भरपूर देश में आप्रवासितों ने जो ऊँचे स्तर के जीवन का उपभोग किया यह भी एक अन्य कारक था जो कि उसी ओर सहायक था। जव कि आप्रवासितों के कद में तथा अमेरिका में उत्पन्न हुए उनके वच्चों के कद में फर्क होने का तथ्य यह है कि ये आप्रवासित लोग यूरोप के पददलित वर्गों से आये थे तथा ये वही लोग थे जिनका पोपण ठीक नहीं था और शरीर के विकास के समय उनके कार्य करने के घंटे भी अधिक थे।

ये सारे तथ्य वड़े मनोरंजक हैं अवश्य, परन्तु अव हम अपने प्रारम्भिक विपय को देखें जिससे हटकर हमने इस तथ्य को समझने का प्रयत्न किया था कि परिस्थिति के प्रभाव की जातिवैज्ञानिक कसौटी को प्रभावित करनेवाले ठोस प्रमाण हैं, तो मालूम होगा कि वे किसी खास वात की स्थापना नहीं करते। हालाँकि, यह स्वीकार किया जाता है कि जातियों में प्रकृति से ही जो परिवर्तन के प्रकार मिलते हैं, ये तथ्य वहुधा उनके निर्देशक माने जाते हैं।

फिर भी इन तथ्यों में जो कुछ है उससे कहीं अधिक उससे निकालना कितना गलत है, यह सरलता से जाना जा सकता है।

परिस्थिति लम्बी **जाति** (रेस) की नहीं, परन्तु एक लम्बी **पीढ़ी** (जेनरेशन) की उत्पत्ति करती है, वस यहीं सव कुछ है परन्तु दोनों में अन्तर वहुत अधिक है। फिर भी, हमें ध्यान रखना चाहिए कि यदि हम श्रेणी तथा श्रेणी के वीच में परिस्थिति के प्रभाव का अध्ययन करें तो, मालूम होगा कि एक अन्य कारक, जातीय कारक, भी इसके वीच में आता है।

डेनकिर[2] (Deniker) ने वतलाया है कि यूरोप में हम ऊँची तथा नीची श्रेणी के लोगों के कद की विभिन्नता में जातीय वनावट की विभिन्नता भलीभाँति देख सकते हैं, क्योंकि महाद्वीप के अधिकांश भाग में, ऊँचे कदवाली नार्डिक जाति

१. पूर्वलिखित, पृष्ठ १५

२. पूर्वलिखित, पृष्ठ ३१–३२

समाज के ऊर्ध्वार्ध भाग में अधिक मिलती है और अल्पाइन तथा मेडिटेरेनियन जैसी छोटे कद की जातियाँ निचली श्रेणी में मिलती हैं।[1]

परिस्थिति तथा जातियों का मिश्रण

स्थायी रूप से जातीय प्रकारों को परिवर्तित करने में परिस्थिति के प्रभाव के पक्ष में एक दूसरा तर्क भी उपस्थित किया जाता है। वह है यहूदियों में अनेक प्रकार के गुणों का मिलना जिसको कि बोआस (Boas)[2] तथा थोड़े से अन्य लोगों ने परिस्थिति के कार्य का परिणाम बतलाया है।

जैसा कि पिटर्ड[3] ने कहा है, जाहिरा तौर से जातीय मिश्रण ही उनकी व्याख्या है जिसका यहूदियों के इतिहास में स्पष्ट संकेत मिलता है।

अमेरिका की परिस्थिति तथा उससे उत्पन्न कहे जानेवाले जातिसम्बन्धी परिवर्तन

प्रोफ़ेसर फ्रैन्ज़ बोआस ने भी दावा किया है कि परिस्थिति ने अमेरिका के आप्रवासितों के भौतिक प्रकारों को, विशेष रूप से कपाल के अनुपातों के सम्बन्ध में भलीभाँति प्रभावित किया है तथा इस सम्बन्ध में उन्होंने यहूदियों के उदाहरण को प्रोद्धरित किया है।

१. ब्रिटेन (Britain) में यह कारक उतना नहीं लागू होता जितना कि जातीय इतिहास की विभिन्नता के कारण यूरोपीय महाद्वीप में। महाद्वीप के अनेक भागों में नार्डिक जाति वाले, विजेताओं की उच्च श्रेणी के रूप में थे किन्तु इंग्लैण्ड में, जहाँ तक कि देश के पूर्वी भाग का सम्बन्ध है, उन्होंने खुद ही उस प्रदेश को बसाया, पहले केल्टों ने, फिर ऐंग्लो-सैक्सनों ने तथा अन्त में कुछ भागों को डेन्स (Danes) ने बसाया। नार्मन आक्रमण के ऐतिहासिक, भाषासम्बन्धी तथा सांस्कृतिक काफी परिणाम हुए हैं परन्तु वे बहुत थोड़े जाति-वैज्ञानिक महत्त्व के थे क्योंकि नार्मन लोग अधिकांशतः नार्डिक उत्पत्ति के जर्मन लोग थे जो कि स्वयं ऐंग्लो-सैक्सनों के समान थे।

२. फ्रैन्ज बोआस (Franz Boas) चेन्जेज आफ़ बाडीफ़ार्म आफ डिसेन्डेन्ट्स आफ़ इम्मीग्रान्ट्स (Change of Body form of Descendants of Immigrants), १९१२

३. पूर्वलिखित, पृष्ठ १४

फिर भी प्रोफेसर के० पीयर्सन तथा एल० एच० सी० टिपेट[1] ने इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित किया है कि ब्रिटिश तथा मध्य यूरोप के यहूदियों की कापालिक देशनाएँ वहुत समान हैं तथा यूरोप के विभिन्न देशों में सैकड़ों वर्ष रहने के पश्चात् भी वह वात नहीं हो सकी जिसका फ्रैन्ज़ वोआस ने अमेरिका में केवल एक पीढ़ी में हो जाने का दावा किया है।

वास्तव में यह तथ्य कि यहूदी जातीय प्रकार (जिससे मतलव ऐंशकेनाजायक, 'Ashkenazaic' से है, जो कि आधार रूप में आर्मेनायड जाति के गुणों से प्रभावित है) साधारण निरीक्षण द्वारा ही सारे संसार में सरलता से पहचाना जा सकता है, एक अच्छा प्रमाण है कि परिस्थिति, वास्तव में जाति-वैज्ञानिक गुणों को विभिन्न प्रकार तथा आकारों में परिणत नहीं करती।

प्रोफेसर रगेल गेट्स ने इस विषय के अनेक कार्यकर्ताओं के मतों का संक्षिप्त विवरण दिया है, जिसका एकत्रित प्रभाव देशान्तरगमन के वतलाये गये प्रभाव का अर्थात् कपाल[2] के आकार पर नयी परिस्थितियों के प्रभाव का निराकरण कर देता है।

सम्भवतः आंशिक रूप से और वहुत थोड़ी मात्रा में देशान्तरगमन के कारण जो परिवर्तन वतलाये जाते हैं तथा जननिक उत्पत्ति से जिनका सीधा सम्वन्ध नहीं है, वे वास्तव में कपाल के आकार पर वढ़े हुए कद के प्रभाव के कारण हैं।

प्रोफेसर आर० ए० फिशर (Professor R. A. Fisher) ने वतलाया है कि यूरोप तथा जापान में छोटी श्रेणी के लोगों की अपेक्षा ऊँची श्रेणी में लम्वे कद तथा लम्वे सिरवाले लोग मिलते हैं।

फिर भी, जहाँ तक यूरोप का सम्वन्ध है ऊँची तथा नीची श्रेणियों में इस प्रकार का अन्तर मुख्य रूप से इस कारण से नहीं वतलाया जा सकता, क्योंकि यह अधिकांशतः जननिक है अर्थात् नार्डिक तथा डाइनारिक तत्त्व उच्च लोगों में, सामान्य जनता की अपेक्षा अधिक प्रदर्शित होते हैं।

फिर भी, ऐसा भी हो सकता है कि लम्वा कद वास्तव में सकरे कपालों की उत्पत्ति

१. ऑन दि स्टेबिलिटी ऑफ दि सिफालिक इण्डिसीज विद दि रेस (on the Stability of the Cephalic Indices with the Race.), वायोमेट्रीका (Biometrika), १६, पृष्ठ ११८

२. आर० आर० गेट्स (R. R. Gates) ह्यूमैन जेनेटिक्स (Human Genetics), १९४६, जिल्द दो, पृष्ठ १३८३

करता हो। यदि ऐसा है तो, उदाहरणार्थ अमेरिका, कनाडा तथा आस्ट्रेलिया की रहन-सहन की अच्छी दशाएँ अधिक लम्बी पीढ़ी की उत्पत्ति कर सकेंगी और इससे सकरे कपाल की उत्पत्ति होना भी वहुत संभव है। परन्तु यह चीज स्थायी अथवा जननिक महत्त्व की नहीं है। यदि जीवन की ऊँचे स्तर की दशाएँ हटा दी जायँ तो पीढ़ी पुनः अपने प्रारम्भिक प्रकार में परिणत हो जायगी। कोई भी जननिक शास्त्री वाह्य समरूप (फेनोटाइप) पर परिस्थिति के प्रभाव के सम्वन्ध में आपत्ति नहीं करना चाहता, परन्तु अपने कार्य के अनुभव द्वारा वे उन प्रमाणों को अस्वीकार करने को वाध्य हैं जो कई क्षेत्रों में यह दिखलाने के लिए अभी तक दिये गये हैं कि वाह्य उद्दीपन द्वारा किसी सम पित्र्यक में कोई मूलभूत परिवर्तन की उत्पत्ति की जा सकती है।

यह सब चाहे जो हो, कद की वृद्धि द्वारा, जो स्वयं देशान्तर गमन के पश्चात् सुधरी हुई परिस्थिति के कारण है, कपाल का इस तरह सकरा हो जाना किसी वड़े महत्त्व का नहीं है।

यह अवश्य ही इतने महत्त्व का नहीं है कि प्रोफेसर बोआस या और किसी के द्वारा उठाये गये इस दावे का औचित्य सिद्ध कर दे कि परिस्थिति ने काफी सीमा तक किसी जातीय प्रकार को वदल दिया है। कद में इस प्रकार के परिवर्तन दीर्घ कपालों (dolichocephals) को माध्यमिक कपालों (mesaticephals) में अथवा इन्हें पृयु कपालों (brachycephals) में परिणत नहीं कर सके।

वढ़े हुए कद के कारण कपाल के सकरे होने के सिद्धान्त के सम्वन्ध में प्रसंकर शक्ति के सम्भावित प्रभाव को न भूल जाना चाहिए।

प्रसंकर शक्ति जिसकी व्याख्या हम अधिक विस्तार से अंन्य स्थान में करेंगे, अन्य गुणों के साथ साथ लम्बे कद की उत्पत्ति भी कर सकती है तथा इस प्रकार कपाल का सकरापन हो सकता है। चूँकि परिस्थिति द्वारा कपाल के आकार में परिवर्तन की बात अक्सर ऐसे उदाहरणों से ली जाती है जिनमें यह परिवर्तन उन देशों में वस जाने के वाद होता है जहाँ जातीय मिश्रण हो रहा है तथा इसलिए जहाँ पर प्रसंकर शक्ति एक महत्त्व का कारक है, वहाँ इसकी सम्भावना को न छोड़ देना चाहिए।

भौगोलिक निश्चयवाद द्वारा बोआस का समर्थन

वोआस (Boas) ने यह सिद्ध करने के प्रयत्न में जो कार्य किया है कि आप्रवास से जातीय गुणों में मूल रूप से परिवर्तन हो जाता है, उस कार्य को भौगोलिक निश्चय-वाद के एक प्रमुख समर्थक, येल विश्वविद्यालय के स्व० प्रोफेसर एल्सवर्थ हंटिंगटन ने लिया। ऐसा करते समय उन्होंने जननिक क्षेत्र में कार्य करनेवालों के विचारों की अव-

हेलना की है, जिसके कुछ उदाहरण हम प्रोद्धरित कर चुके हैं। उन्होंने एक अतिशयतापूर्ण दावा भी किया है कि "प्रारम्भ की संदिग्धावस्था के वावजूद वोआस ने एक ठोस, युग-निर्माणकारी उन्नति की ओर कदम वढ़ाया है।"[1] वास्तव में यदि यह सत्य होता तो यह युग-निर्माण से भी अधिक होता, क्योंकि यह डार्विन, मेण्डल तथा अन्य जननिक शास्त्रियों के आज तक किये गये अन्वेपणों को नष्ट कर देता और मानव-शास्त्रियों तथा जातिवैज्ञानिकों द्वारा किये गये सम्पूर्ण परिश्रम के मूल आधारों को अप्रमाणित कर देता।[2]

हवाई में जापानी प्रवासी

इसकी पुष्टि करने के लिए हण्टिंगटन इसके आगे भी जाते हैं तथा हवाई में जापानी आप्रवासितों पर लिखित शेपीरो (Shapiro) के ग्रंथ से उद्धरण देते हैं, जिसके अन्वेषण आप्रवासित माता-पिताओं तथा उनके वच्चों के शारीरिक आकार के अन्तर की ओर संकेत करते हैं।

इसके साथ साथ उन्होंने पिछले १५० वर्षों में स्विटजरलैण्ड तथा ५० वर्षों में अन्य स्थानों में होनेवाली कद की वृद्धि के आँकड़ों के लिए वोलेस[3] (Bowles) को उद्धृत किया है।

शेपिरो का कार्य मुख्यतः शारीरिक अनुपात तथा उनसे मिलनेवाली देशनाओं से सम्वन्धित है। किसी अन्य स्थान पर हमने वतलाया है कि जननिक प्रभाव मापों में

१. मेर्नस्प्रिग्स आफ़ सिविलाइजेशन (Mainsprings of Civilization), न्यूयार्क एण्ड लन्दन, १९४५, पृष्ठ ५४

२. इस स्थान पर यह कहा जा सकता है कि सारे भौगोलिक निश्चयवादी, स्व० प्रोफेसर एलसवर्थ हन्टिंगटन के मतों से सहमत नहीं हैं। उदाहरण के लिए प्रोफेसर ग्रिफ़िथ टेलर इस सम्वन्ध में प्रोफेसर फ्रैन्ज वोआस के विचारों से असहमत हैं, जैसा कि उन्होंने अपने एक 'रेशिल ज्योग्रफ़ी' (Racial Geography) लेख में ज्योग्रफ़ी इन दि ट्वेन्टिएथ सेन्चुरी (Geography in the Twentieth Century) में वतलाया है, लन्दन (London) मेथुअन (Methuen), १९५३

३. न्यु टाइप्स आफ़ ओल्ड अमेरिकन्स एट हार्वर्ड ऐण्ड ऐट ईस्टर्न वुमेन्स कालेजेज (New Types of old Americans at Harvard and at Eastern women's Colleges) हार्वर्ड यूनीवर्सिटी (Harvard University), १९३२

प्रदर्शित नहीं होते वरन् आकार द्वारा अधिक सरलता से देखे जा सकते हैं। यह बात इसे इस दिशा में सीमित कर देती है, अन्यथा यह कार्य बड़े महत्त्व का है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि मुख्यतः यह कार्य हवाई में जापानी आप्रवासितों के वंशजों के कद की अथवा आकार तथा वजन की वृद्धि बतलाता है।

शारीरिक अनुपात, स्वभाव तथा प्रवसन

प्रोफेसर एल्सवर्थ हंटिंगटन स्वीकार करते हैं कि शारीरिक अनुपात तथा स्वभाव में सम्बन्ध मिलता है। अधिकांश प्रौढ़ भौतिक मानव-वैज्ञानिकों ने इस विषय पर कभी सन्देह नहीं किया था, जिनका विशेष ध्यान प्रारम्भ में चाहे कपाल के सम्बन्ध में रहा हो, यह जानते थे कि प्रत्येक कपाल के प्रकार में एक विशेष शारीरिक आकार से सम्बन्धित होने की प्रवृत्ति मिलती है।

इसलिए यदि, जैसा कि हंटिंगटन मानते हैं, ऐसा कोई सम्बन्ध है तब स्वदेश की औसत जनसंख्या तथा औसत आप्रवासितों के अन्तर का कारण चुनाव भी माना जा सकता है।

यह समझने के लिए कोई कल्पना करने की आवश्यकता नहीं है कि स्वदेश में चाहे जितनी कठिनाइयाँ हों परन्तु हर व्यक्ति ऐसा नहीं है जो उत्प्रवासी बनने को तैयार हो। उत्प्रवासन में पिछले को भूल जाने की, अपने को मूल स्थान से अलग करने की तथा सभी सुरक्षा को छोड़ने की आवश्यकता पड़ती है, जैसी भी वह रही हों, जो उस स्थान में रहने से मिलती हैं जहाँ पर कुछ लोग उसे जानते हैं तथा जहाँ उसके रक्त-सम्बन्धी तथा नातेदार रहते हों। उत्प्रवासन के लिए प्रवासी में साहसिक प्रवृत्ति तथा काफी सीमा तक घर में रहनेवाले औसत मनुष्यों से अधिक आत्म-निर्भरता होनी चाहिए। इसलिए, इसके लिए हिम्मत चाहिए, मुख्यतः उन दशाओं में, जब कि यह कार्य कुछ लोगों को बाहर बसाने की राज्य की किसी योजना के अन्तर्गत न हो रहा हो।

इसलिए यह स्पष्ट है कि उत्प्रवासियों में कुछ निश्चित स्वभावसम्बन्धी गुणों का होना अन्तर्निहित है। स्वभाव तथा शरीर की बनावट में घना सम्बन्ध होने के कारण यह परिणाम निकलता है कि उत्प्रवासन में जो एक विशिष्ट प्रकार के स्वभाव का चुनाव करना पड़ता है, उसके साथ ही एक विशेष प्रकार के शारीरिक आकार का भी चुनाव आवश्यक है।

इसलिए इसमें आश्चर्य नहीं कि हवाई द्वीपसमूह में जापान के जो आप्रवासी गये वे वास्तव में अपने देश की जनसंख्या से एक विशेष दिशा में थोड़ा भिन्न थे। परिणामतः उनके निकट-वंशजों में वही अन्तर बने रहेंगे।

साथ ही इसमें भी कोई आश्चर्य नहीं कि, जिन कारकों की हमने अभी व्याख्या की है उनको पूर्ण रूप से छोड़ दिया जाय तो भी, प्रवासितों के बच्चे अपने माता-पिता की अपेक्षा अधिक लम्बे तथा शरीर के भारी हों और उनमें कुछ अन्य गुणों के सम्बन्ध में भी थोड़ा अन्तर मिले। कारण यह है कि अभी जिन कारकों की व्याख्या की है उनके अतिरिक्त देशान्तर-गमन में बहुत से नये कारक भी शामिल रहते हैं।

प्रथम तो देशान्तर-गमन की प्रवृत्ति सदैव निर्धनता से अधिक अच्छी दशाओं की ओर बढ़ने की होती है।

आस्ट्रेलियानिवासियों के तथा अन्य उदाहरण इससे मिलते जुलते हैं। उन लोगों ने देशान्तर-गमन से अपनी स्थिति काफी सुधार ली है तथा उसी के साथ अपनी शारीरिक दशा की भी उन्नति कर ली है।

इसलिए, जो बच्चे पुरानी स्थिति के बजाय नयी तथा अच्छी परिस्थिति में बढ़ते हैं, वे पुराने समय की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह जाति के पूरे कद तक बढ़ेंगे। परन्तु यहाँ यह केवल अधिक अच्छे पोषण द्वारा परिस्थिति के कार्य करने तथा वाह्य समरूप पर उसके प्रभाव डालने का उदाहरण है। समपित्र्यक अप्रभावित रहता है। कम से कम इसका कोई प्रमाण नहीं कि उसमें परिवर्तन हुआ हो।

कद की वृद्धि, खुराक तथा पेशा

हण्टिंगटन[1] (Huntingtan) कद में साधारण वृद्धि के प्रमाणों का विवेचन करने के पश्चात्, जिसके सम्बन्ध में हमने भी मध्यकाल से वर्तमान समय तक बढ़ते चलने की चर्चा अन्य स्थान पर की है, केवल खुराक, स्वास्थ्य, व्यायाम तथा पेशे में सुधार को ही उसके लिए उत्तरदायी ठहराने के विचार को अस्वीकार करते हैं।

इसके विषय में शेपिरो ने भी उनका समर्थन किया है और इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित कर उक्त तर्क का खण्डन किया है कि अमेरिका के ओजार्क में तथा उस देश के दक्षिणी राज्यों में, जहाँ पर रहने की दशाएँ विशेष रूप से खराब हैं, संयुक्त राज्य अमेरिका के कुछ सब से लम्बे कद के लोग पाये जाते हैं। उनका कथन है कि "हालाँ कि चाहे यह दावा किया जा सकता है कि ये लोग पित्रागति द्वारा लम्बे कदवाले

१. पूर्वलिखित, पृष्ठ ५५

वर्ग से आये, तथ्य यह है कि बहुत खराब दशाएँ होते हुए भी ये लोग अब भी अपने यूरोप के पूर्वजों से अधिक लम्बे हैं।"[१]

फिर भी इस तर्क में उचित से अधिक बातें सत्य मान ली गयी हैं।

प्रथम तो, उनकी परिस्थिति की खराबी को उनके पूर्वजों की परिस्थिति तथा कद से तुलना करके सिद्ध करना आवश्यक है। यह केवल सम्भव ही नहीं है परन्तु काफी सम्भावित भी है कि उनके परदादाओं की रहने की दशाएँ आजकल मिलनेवाली दशाओं से कहीं अधिक खराब रही हों। यही कारण था कि ये लोग संयुक्त राष्ट्र अमेरिका को गये।

कद तथा प्रसंकर शक्ति

यदि केवल तर्क के लिए ही हम यह बात मान लें कि अच्छा पोषण इसके लिए उत्तरदायी नहीं है, तब भी एक आवश्यक बात छूट जाती है कि केवल यह तथ्य कि यूरोप से ओजार्क में लोगों ने देशान्तरगमन किया अथवा जापानी आप्रवासी जापान से हवाई (Hawaii) टापू गये, यह बतलाता है कि साधारणतया अन्तर्विवाह करने की परिधि बढ़ गयी और यहीं प्रसंकर शक्ति (Hybrid vigour) का विषय सामने आता है जो कि ऐसी व्याख्या के समय अक्सर छोड़ दिया जाता है।

प्रसंकर शक्ति के विषय की व्याख्या हमने अन्य स्थान में कुछ विस्तार से की है इसलिए यहाँ पर अधिक विस्तृत वर्णन करने का विचार नहीं है। फिर भी संक्षेप में हण्टिंगटन तथा शेपिरो के विचारों को स्पष्ट करने के लिए कुछ कहना आवश्यक है, यद्यपि वह कैसे होता है उसे हम आगे की व्याख्या के लिए छोड़ देंगे। ऐसी घटनाओं में उसकी विशिष्ट महत्ता पर अधिक जोर देना अनुचित नहीं है।

विवाह के क्षेत्र को बढ़ाये बिना, जहाँ से पति अथवा पत्नियाँ मिलती हैं, किसी प्रकार का देशान्तर-गमन नहीं हो सकता। जब कि पहले एक ही गाँव के पुरुष तथा स्त्री विवाह करते थे, देशान्तर-गमन के पश्चात्, पुरुष एक ऐसी स्त्री से विवाह कर सकता है जिसके माता-पिता निकटवर्ती गाँव के हों अथवा पुरुष के अपने माता-पिता के घर से अधिक दूर के प्रान्त के हों।

इस प्रकार से विभिन्न भिन्न-युग्म (allelomorphs) के आने से, जननिक

१. अमराम शेनफील्ड (Amram Scheinfield) से प्रोद्धरित, दि न्यु यू एण्ड हेरेडिटी (The New You and Heredity), लन्दन, १९५२, पृष्ठ १०४

बनावट का विस्तार हो जाता है। परिणामतः बहुत सी घटनाओं में प्रसंकर शक्ति का निर्माण होता है।

इसलिए यदि बच्चे अपनी उत्पत्ति के देशोंवाली पैतृक पीढ़ी की अपेक्षा बड़े न हों, तो यह आश्चर्य की बात होगी।

परिणामतः इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि वे बड़े हैं तथा नये प्रदेश में उत्पन्न होने से अपने पूर्वजों के कद की अपेक्षा, उनका कद बड़ा होने का जो परिवर्तन मिलता है उससे यह किसी प्रकार भी सिद्ध नहीं होता कि स्वयं परिस्थिति द्वारा ही यह सचेतन परिवर्तन हुआ है।

ऐसी सब घटनाओं में सम-पित्र्यक (जीनोटाइप) नयी परिस्थिति के असर से बिलकुल अप्रभावित रहते हैं।

इस प्रकार से यद्यपि कोई भी जातिवैज्ञानिक जो अपने विषय को समझता है तथा कोई भी जननिकशास्त्री यह स्वीकार नहीं कर सकता, जैसा कि हंटिंगटन तथा शेपिरो ने भी नहीं किया है कि केवल अच्छी स्वास्थ्यसम्बन्धी दशाएं, व्यायाम, खुराक इत्यादि ही पूर्णतया बढ़े हुए आकार के लिए उत्तरदायी हैं, फिर भी वे उस प्रसंकर शक्ति के प्रभाव की अवहेलना नहीं कर सकते जो कि माध्यमिक काल से आजकल तक धीरे-धीरे मनुष्यों की गतिविधि की स्वतन्त्रता से उत्पन्न हुई है।

उत्प्रवासियों के वंशजों में कद की वृद्धि के वास्तविक कारण

इसलिए, इसके विपरीत जो कुछ कहा जा सकता है उसके होते हुए भी अच्छे पोषण के बढ़ते हुए लाभों में एक यह भी है कि यह सम्बन्धित जातीय प्रकारों की सम्भावित सीमा के अन्दर अच्छे कद तथा वजन की वृद्धि उत्पन्न करने में एक आवश्यक कारक है। प्रसंकरोर्जा (हेटेरोसिस) ने भी काफी व्यावहारिक रूप से तथा बहुधा विस्तार से बाह्य समरूप को प्रभावित किया है जिससे कि कद में परिवर्त्तन हुआ।

इस प्रकार मनुष्य के विकास तथा कद से सम्बन्धित जटिल एवं परस्पर विरोधी-से प्रतीत होनेवाले इस तत्त्व की व्याख्या उस ज्ञान के आधार पर की जा सकती है जो हमें जातियों की आधारभूत समरूपी बनावट पर पड़नेवाले पोषण के प्रभाव के सम्बन्ध में होता है। इसके साथ ही प्रसंकरोर्जा (हेटेरोसिस) की जानकारी से भी उसकी व्याख्या हो सकती है जैसा कि वह बाह्य समरूप को प्रभावित करती है चाहे हम इस बात की व्याख्या कर रहे हों कि शहर तथा देहात के लोगों में अथवा आप्रवासितों तथा स्वदेश की जनसंख्या में इतनी विभिन्नता क्यों है। बढ़े हुए कद की बात हमारे जननिक ज्ञान से मेल खाती है और इससे इस मत का समर्थन कदापि नहीं होता कि वंशानुगति का

सिद्धान्त किसी भी मात्रा में "नये मानव विज्ञान" द्वारा परिवर्तित किया जा रहा है। यह "नव्य मानव विज्ञान" प्रभावतः ऐसा सिद्धान्त है जो उन सभी बातों को अस्वीकार करता है जो जाति-विज्ञान की शास्त्रीय व्याख्या पर वैज्ञानिक रूप से भली भाँति आधारित है।

अमेरिका में फ्रैन्ज बोआस ने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका (United States of America) में यहूदी आप्रवासितों के कपाल के अनुपात पर जो कार्य किया है तथा उस कार्य को स्व० प्रोफेसर एल्सवर्थ हण्टिंगटन द्वारा जो समर्थन प्राप्त हुआ है, उसका प्रयत्न वास्तव में इस क्षेत्र के प्रारम्भिक लेखकों ने पहले ही शुरू कर दिया था। मुख्यतः जर्मनी में ऐसा हुआ जहाँ पर सामान्यतः परिस्थितीय दशाओं को दक्षिणी जर्मनी तथा मध्य यूरोप की जनसंख्या के चौड़े कपालों का कारण बतलाया है। इनमें से बहुतों ने पर्वतीय दशाओं तथा स्थान की अधिक ऊँचाई के आधार पर इसे समझाने का प्रयत्न किया है।

कपाल के आकार पर जलवायु का प्रभाव

जो हो, इन समर्थकों में एक महान् जातिवैज्ञानिक स्व० प्रोफेसर सर विलियम फ्लिन्डर्स पेट्री (Professor Sir William Flinders Petrie) का नाम उल्लेखनीय है।[1]

उन्होंने परिस्थिति के प्रभाव का समर्थन करने में जलवायु की शक्ति का महत्त्व माना और यह सुझाव दिया कि कपाल का आकार समताप रेखाओं पर आधारित है।

इस मत के समर्थन में उन्होंने यह तथ्य प्रोद्धरित किया है कि लम्बार्डी (Lombordy) पर ५६८ ई० पूर्व में लैंगोबार्ड (Langobard) की लम्बे कपालवाले नार्डिक लोगों की ऐंग्लोसैक्सन जाति ने हमला किया था, परन्तु फिर भी आज लम्बार्डी यूरोप के सबसे छोटे कपालवाले क्षेत्रों में से एक है।

फिर भी यह तथ्य, जैसा कि पेट्री (Petrie) ने सोचा था, परिस्थितीय नियंत्रण के कारण नहीं है वरन् पूर्णतया मूल लैंगोबार्ड-निवासियों की जातीय अवनति के कारण है।

१. माइग्रेशन्स (Migrations) जर्नल आफ दि रायल एन्थ्रोपोलोजिकल इन्स्टीट्यूट (Journal of the Royal Anthropological Inst.) भाग ३६, हक्सले भाषण, १९०६

हमारे मत से प्रोफेसर पार्सन्स[1] निःसन्देह ही टीक कहते हैं जब वे पेट्री के विचारों की समालोचना करते समय उसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि "हम यह बिना विचार किये नहीं रह सकते कि पेट्री अपने उत्साह में कुछ तथ्यों को छोड़ गये हैं जिन पर भी, कोई निर्णय देने के पूर्व, विचार करना आवश्यक था। जिस बात पर उन्होंने पूरा जोर नहीं दिया है वह है कि इटली के उत्तरी शेष भागों की भाँति लम्बार्डी, आल्प्स के काफ़ी निकट है, जो कि छोटे सिरवाली अल्पाइन जाति (Alpine race) का केन्द्र था। अन्य बात जो उन्होंने नहीं बतलायी यह है कि अल्पाइन जाति पिछले १२०० वर्षों से अल्पाइन केन्द्र से उत्तर तथा दक्षिण की ओर अपने लम्बे सिरवाले पड़ोसियों की ओर बराबर फैलती रही है।"

इस सबके उपरान्त यह बात भी बतलायी जा सकती है कि अल्पाइनवालों का चौड़ा कपाल, नार्डिक तथा मेडिटेरेनियन के सकरे कपालों पर प्रभावी है। इसीलिए इस प्रकार की नार्डे-अल्पाइनो-मेडिटेरेनियन मिश्रित जनसंख्या में चौड़े कपालवाले प्रकार का बाह्य समरूपी प्रकटीकरण उसके समपित्र्यक से अधिक होगा।

इसलिए वास्तव में, उत्तरी इटली के लोग इतने अधिक अल्पाइनप्रभावित नहीं हैं जितना कि उनके कपाल के अनुपात से पता चलता है।

इसके आगे यदि यह भी जोड़ दिया जाय कि नार्डिक जातीय प्रकार गरम जलवायु के लिए कम उपयुक्त है और यह वर्तमान औषधियों, स्वच्छता के प्रयत्नों तथा उनके मलेरिया जैसे रोगों के नियन्त्रण के पूर्व मुख्य रूप से सत्य था, तो हम देखेंगे कि जहाँ तक लम्बे कपालों से चौड़े कपालों में वस्तुतः परिवर्तन हुआ है, जिससे कोई जातिवैज्ञानिक इनकार नहीं करता, ऐसा अंशतः जनसंख्या के नार्डिक तत्त्वों के विरुद्ध विपरीत चुनाव के कारण हुआ।

इस प्रकार, सन्तानोत्पादन की विभिन्न गति, जिससे नार्डिक की अपेक्षा अल्पाइन लोगों की शीघ्र वृद्धि हुई, फिर नार्डिक के विपरीत, बीमारी द्वारा विरुद्ध चुनाव होना तथा अन्त में कपाल के प्रभुत्व द्वारा जनसंख्या के नार्डिक तत्त्वों का ढक जाना और नार्डिक के ऊपर अल्पाइन रंग का प्रभाव (तथा जहाँ तक कि रंग का सम्बन्ध है मेडिटेरेनियन का) यह सब लम्बार्डी के लोगों के आकार में, नार्डिक से अल्पाइन में, परिवर्तित होने के कारण है।

१. दि अर्लियर इनहैबिटेन्ट्स आफ़ लन्दन (The Earlier Inhabitants of London), पृष्ठ ५५, १९३७

जब हमारे पास इतनी स्पष्ट व्याख्या है तब पता चलता है कि प्रोफेसर सर विलियम फिलन्डर्स पेट्री (Prof Sir William Flinders Petrie) द्वारा प्रतिपादित किये गये सिद्धान्त कितने अनावश्यक और सचमुच कितने वाहियात हैं।

लम्बे कपालों की तथाकथित प्राचीनता

बहुत से लेखक, जिनमें भौगोलिक निश्चयवादी भी हैं, लम्बे कपाल को प्राचीन बतलाते हैं, परन्तु वे मानव जातियों के उद्‌विकास को यूरेशिया (Eurasia) के मध्य में मानते हैं और दावा करते हैं कि चौड़े सिरवालों की उत्पत्ति बाद में हुई और इन्होंने धीरे-धीरे लम्बे सिरवालों को बाहर की ओर भगा दिया।

इससे भूगोलवेत्ताओं ने यह परिणाम निकाला कि लम्बे सिरवालों से जो सभ्यता की अच्छी बातों की उत्पत्ति हुई है, वह उनकी जातिगत योग्यता के कारण नहीं वरन् भौगोलिक सुविधाओं के कारण हुई है।

इस दृष्टिकोण में दो बातें हैं।

प्रथम तो लम्बे कपालवाली जातियों की प्राचीनता।

दूसरे, किसी सभ्यता को यदि लम्बे सिरवालों ने विकसित किया तो वह उनकी वंशानुगति के कारण नहीं हो सकती वरन् विभिन्न समय में सुविधाजनक भौगोलिक परिस्थितियों के कारण है।

वास्तव में तर्क के रूप में लम्बे कपाल की तथाकथित प्राचीनता का इतना महत्त्व है कि इसके आधार पर अनेक बड़ी सभ्यताओं के गुणों को वंशानुगति न बताकर परिस्थिति के कारण बतलाया जाता है और यही कारण है कि अनेक भौगोलिक लेखकों ने लम्बे कपालवालों के अपरिपक्व गुणों पर अधिक जोर दिया है।

कारण यह है कि यदि ये जातियाँ इतनी प्राचीन हैं कि ये सभ्यता की उत्पत्ति नहीं कर सकतीं तब इसका श्रेय भौगोलिक दशाओं को मिलना चाहिए।

हम निश्चयपूर्वक यह परिणाम नहीं निकालते कि अवश्य ही ऐसी प्रवृत्तियाँ पूरी तरह समझी गयी थीं तथा जान-बूझकर सभी अथवा अधिकांश निश्चयवादियों द्वारा इनका दुरुपयोग किया गया, परन्तु हमें विश्वास है कि कुछ उदाहरणों में, उनकी विचारधारा पर उनका प्रभाव पड़ा है इसलिए संक्षेप में ऐसे अभिकथनों की चर्चा करना आवश्यक है।

इस मत के माननेवाले विद्वानों में मुख्य प्रोफेसर एल्सवर्थ हंटिंगटन[1] हैं जिन्होंने

१. मेनस्प्रिंग्ज आफ़ सिविलाइजेशन, न्युयार्क तथा लन्दन, १९४५, पृष्ठ ५८

जव कि यह माना है कि "विश्व इतिहास में मेडिटेरेनियन तथा नार्डिक जातियों के लम्वे सिरवाले लोग वास्तव में एशिया के अल्पाइन तथा मंगोलायड चौड़े सिरवालों की अपेक्षा अपने कार्यों में अधिक प्रसिद्ध रहे हैं", तिस पर भी वे कहते हैं कि "यह विशिष्टता, फिर भी आन्तरिक योग्यता की अपेक्षा अधिकांशतः सुविधाजनक भौतिक परिस्थितियों के कारण है। समस्त युग के कुछ महान् लोगों में, लुई पाश्चर (Loius Pasteur) तथा विक्टर ह्यूगो (Victor-Hugo) की तरह, चौड़े सिरवाले अल्पाइन थे।"

वास्तव में कोई भी यह सोच सकता है कि केवल उनकी इस स्वीकारोक्ति के प्रकाश में ही इन भौगोलिक निश्चयवादियों के मतों की तर्कहीनता सिद्ध हो जाती है।

चूँकि यह मत उन्हीं के द्वारा प्रतिपादित किया गया है इसलिए प्रश्न यह नहीं है कि चौड़े कपाल के लोग अधिक वुद्धिमान्[1] हो सकते हैं अथवा नहीं, परन्तु यह कि विकास की प्रारम्भिक दशा में लम्वे सिरवाले प्राचीन हैं या नहीं।

संक्षेप में तथ्य यह है कि केवल चीन की सभ्यता को छोड़कर, जो कि समय की दृष्टि से वाद की हो सकती है तथा मध्य अमेरिका के मय तथा इनका (Mayas and Incas) की, जो कि अवश्य ही वाद की है, सवसे अधिक प्राचीन सभ्यताएँ पूर्णरूप से अथवा अंशतः लम्वे कपालवाले लोगों के कारण हैं जो कि सभी काकेसायड जातियाँ हैं। इस प्रकार से मिस्र, अमेरिका, वेवीलोनिया, यूनान, मेडिटेरेनियन वेसिन तथा भारत में सिन्धुघाटी की सभ्यताएँ उन लोगों की हैं जो कि मुख्यतः मेडिटेरेनियन जाति से आये हैं तथा यूनान और रोम में कुछ नार्डिक और कुछ डाइनारिक जाति का मिश्रण भी मिलता है।

वाद की ये सभ्यताएँ, जिन्होंने आर्यसभ्यता तथा इन्डो-यूरोपियन भाषाओं को जन्म दिया और जो कि पूर्व में भारत की आर्यसभ्यता से लेकर समय पाकर यूरोप में ईसाइयों तक फैली हुई हैं, अधिकतर नार्डिक जाति से सम्वन्धित हैं क्योंकि चाहे काकेसायड लोगों की अन्य कोई भी जाति शामिल हो, सव में उसी की सामान्य सन्तति (कॉमन स्ट्रेन) मिलेगी। जिन देशों में काकेसायड लोग रहते थे वहाँ की भूमि की भौगोलिक दशाएँ विभिन्न प्रकार की थीं जो कि भारत तथा मेसोपोटामिया में गरम से

१. किसी जातिवैज्ञानिक अथवा जननिक शास्त्री ने यह कभी नहीं कहा है कि वे नहीं थे, इसलिए पाश्चर तथा ह्यूगो तथा और अनेकों के नाम लेना निरर्थक है जिनको कि हम वतला सकते थे।

लेकर मेडिटेरेनियन की तथा ठंडे शीतोष्ण तक की मिलती हैं। परन्तु उनमें एक समान कारक के रूप में वह जातीय समूह रहा है जिसमें लम्बे सिरवाले सबसे महत्त्वपूर्ण रहे हैं। इसलिए, प्रोफेसर एल्सवर्थ हंटिंगटन का कथन केवल सत्य ही नहीं है वरन् उनके अपने इस सिद्धान्त को भी अयोग्य ठहराता है कि जहाँ तक इन सभ्यताओं का प्रश्न है, ये केवल आन्तरिक जातीय गुणों के कारण नहीं बल्कि भौगोलिक कारणों से विकसित हुई हैं।

अधिक प्राचीन जातियाँ लम्बे कपालवाली हैं

इन सब लेखकों का मुख्य आधार यह है, जैसा कि प्रोफ़ेसर ग्रिफिथ टेलर[1] ने तथा अन्य लेखकों[2] ने एक से अधिक बार जोर देकर कहा है, कि सभी प्रारम्भिक प्रकार के मनुष्य लम्बे कपालवाले थे।

दूसरे, बात केवल ऐसी ही नहीं है परन्तु, जैसी कि आशा करनी चाहिए, सबसे अधिक प्राचीन जातियाँ, जातियों के मानव-भूवृत्त-सम्बन्धी वितरण के सिद्धान्तों के आधार पर, महाद्वीपों के छोर में (जैसे कि केप आफ़ गुड होप) केपहार्न तथा तसमानिया में मिलती हैं। साथ ही वे दुर्गम पर्वतों, वनों तथा द्वीपों के शरण मिलनेवाले स्थानों में भी मिलती हैं जो कि यूरेशिया के मध्य से महाद्वीपों के किनारे के भागों तक फैले हुए हैं।

जब कि, भूभाग के मध्य में, जैसा कि उनका विचार है बाद में उत्पन्न होनेवाली चौड़े कपाल की जातियाँ पायी जाती हैं जिनको उन्होंने मनमाने तौर से अल्पाइन्स[3] कहा है।

१. क्लाइमेटिक साइकिल्स एण्ड इवोल्युशन (Climatic cycles and Evolutions) ज्योग्रेफ़िकल रिव्यू (Geographical Review), दिसम्बर १९१९, भाग ८, पृष्ठ २८८ तथा इवोल्युशन एण्ड डिस्ट्रीब्युशन आफ़ रेस (Evoution and Distribution of Race) कल्चर एण्ड लैंगवेज (Culture and Language) ज्योग्रेफ़िकल रिव्यु १९२१, भाग २, पृष्ठ ५५

२. एल्सवर्थ हंटिंगटन, दि केरेक्टर आफ़ रेसेज (The Character of Races. Chas. Scrbner's), न्युयार्क, १९२४

३. उन जातीय समूहों के लिए जिनके लिए जातिवैज्ञानिक को अल्पाइन, पूर्वी बाल्टिक, डाइनारिक, आर्मेनायड (चौड़े सिरवाले काकेसायड के लिए) तथा मंगोलायड (एशिया के चौड़े सिरवाले तथा पीले लोगों के लिए) वर्गीकरण का प्रयोग करना पड़ता है।

लम्बे सिर तथा लम्बे सिर

फिर भी, प्रागैतिहासिक भूतकाल के प्राचीन निवासियों के साथ लम्बे कपाल-वालों का तथा सभ्यता के विकास से महाद्वीपों के छोरों का जो सम्बन्ध है, उसका यह सब बहुत छिछला संश्लेषण है।

बहुधा लम्बे कपालवालों की प्राचीनता के विषय में जो एक बात छोड़ दी जाती है वह यह है कि लम्बे सिरवाले भी कई वर्ग के मिलते हैं। काकेसायड (Caucasoid) वर्ग के बचे हुए दीर्घ कपालवाले (dolichocephalic) लोग प्रारम्भिक लम्बे कपालवाले मनुष्यों से उतने ही विकसित हुए हैं जितने चौड़े सिरवाले मंगोलायड हैं। ये शरीर-रचना-सम्बन्धी तथ्य हैं जिनकी पूर्णतया अवहेलना की गयी है।

जातियों के विकास में भौगोलिक परिस्थिति का कार्य

स्वभावतः भूगोल का एक अपना स्थान है परन्तु लम्बे कपाल की विशिष्टता, जैसा कि हंटिंगटन ने बतलाया है, "अधिकांशतः स्वाभाविक योग्यता के बजाय भौतिक परिस्थिति की सुविधा के कारण है," ऐसी बात नहीं है। किसी कलाकार के हाथ पीछे की ओर बाँध दिये जायँ तथा खींचने अथवा रंगने के सम्पूर्ण साधनों से उसे वंचित कर दिया जाय तब उसे अपनी कलात्मक योग्यता प्रदर्शित करने का बहुत थोड़ा अवसर मिलेगा अथवा बिलकुल ही नहीं मिलेगा, परन्तु यदि उसे हाथों की स्वतन्त्रता, पेन्सिल, कुछ ब्रश तथा रंग दे दिये जायँ तब उसकी बुद्धि का प्रदर्शन हो सकेगा।

ऐसा ही मानव के लिए भी है। कोई जातीय समूह चाहे उच्च कोटि की कला, प्राविधिक ज्ञान तथा विचारों के योग्य हो परन्तु यदि उसे प्राचीन वनों अथवा ध्रुव प्रदेशों (Arctic) में एकान्त में रख दिया जाय, तब उसका प्रदर्शन उस कोटि का नहीं होगा। यदि प्रकृति उसको भूमध्यसागरीय, पश्चिमी तथा उत्तर-पश्चिमी यूरोप में पहुँचा दे, जो कि सभ्यता के विकास के लिए सबसे अच्छे प्रदेश हैं, तो उसकी बुद्धि की प्रखरता प्रकट होगी, जैसा कि उन्हीं प्रदेशों में नार्डिकों तथा मेडिटेरेनियनों के साथ हुआ है। परन्तु यह "अधिकांशतः स्वाभाविक योग्यता की अपेक्षा सुविधाजनक भौतिक परिस्थिति के कारण" नहीं हुआ।

इसके विपरीत भूगोल ने इतना ही किया कि स्वाभाविक योग्यता को स्वयं प्रदर्शित करने का अवसर दिया।

यही भौगोलिक परिस्थिति का कार्य है।

यह बहुत महत्त्वपूर्ण है किन्तु है यह नकारात्मक ही; सकारात्मक या सर्जनात्मक शक्ति नहीं। सकारात्मक शक्ति, वंशानुगति में मिलती है तथा जितने तथ्यों का हमने

निरीक्षण किया है, वे न केवल इसका समर्थन करते हैं परन्तु भौगोलिक निश्चयवादियों के मत को पूर्ण रूप से अप्रमाणित कर देते हैं।

कोई भी मानवशास्त्री भूगोल के उस महत्त्वपूर्ण कार्य की अवहेलना नहीं कर सकता जो उसने जातियों के चुनाव में, विद्यमान जातियों तथा उनकी योग्यता के विकास में तथा परिणामतः जिन सभ्यताओं की उत्पत्ति हुई है, उनमें प्रकृति के छाँटनेवाले हथियार के रूप में किया है। फिर भी हमें भूगोल के सम्बन्ध में बढ़ चढ़कर दावा नहीं करना चाहिए। वास्तव में उसका कार्य नकारात्मक या अप्रत्यक्ष रूप का है। वंशानुगति में ही सर्जनात्मक शक्ति मिलती है जिससे मनुष्य उन्नति कर सकता है; हालाँ कि, बिना उस छँटनी के जो कि भौगोलिक परिस्थिति से मिलती है, न तो ऊँचे प्रकार के मनुष्यों के उद्विकास के लिए आवश्यक चुनने की शक्ति वह पा सकता और न इनकी उत्पत्ति हो जाने पर उसे अपने आपको प्रदर्शित करने का अवसर ही मिलता।

कद की वृद्धि के अन्य कारण

जब जातियों तथा व्यक्तियों का नयी परिस्थितियों से सम्पर्क होता है, तब कद की जो वृद्धि होती है उसके विषय में हमने जो कहा है वह सम्पूर्ण नहीं है, परन्तु उसका उद्देश्य देशान्तरगमन होने पर जो घटनाएँ होती हैं उनके लिए काफी कारण प्रस्तुत करना है, जो कि एक ओर तो भूगोल तथा दूसरी ओर बहुत कठोर जननिक शास्त्र के कारकों के अनुरूप हो। जो हो, उन कारकों की व्याख्या के बिना जो कि देशान्तर गमन से उत्पन्न होते हैं तथा उसके विकास पर प्रभाव डालते हैं, इसे यहीं पर छोड़ देना अवांछनीय होगा।

अभी तक परिस्थिति के प्रभाव की व्याख्या करते समय हमने मुख्यतः परिस्थिति से उत्पन्न रहन-सहन की अच्छी दशाओं की चर्चा की है। हम यह भी स्वीकार कर चुके हैं कि वाह्य समरूपों को प्रभावित करने में और इस प्रकार लम्बे तथा बड़े कदवाले लोगों की उत्पत्ति करने में यह एक कारक हो सकता है अथवा जहाँ पर इसके विपरीत दशाएँ मिलती हैं इसके विपरीत हो सकता है। इसके साथ हमने प्रसंकर शक्ति के प्रभाव को भी रख दिया है।

परिस्थिति के साथ कतिपय अन्य कारक भी कार्य करते हुए मिल सकते हैं, जिनमें से निम्नलिखित कुछ महत्त्व के हो सकते हैं।

यह काफ़ी सम्भव है कि सूर्य का अधिक प्रकाश, जैसा कि उदाहरणार्थ संयुक्त राष्ट्र अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया में मिलता है, कम सूर्य का प्रकाश मिलनेवाले उत्तर-पश्चिमी यूरोप से आये हुए लोगों के विकास को प्रभावित कर सकता है। इससे 'विटा-

मिन डी' (vitamin D) में जो वृद्धि होगी उसका प्रभाव वाढ़ पर अच्छा पड़ेगा। इसलिए सिर्फ इस कारण से ही समुद्रपार गये इन नये राष्ट्रों में कद तथा शरीर की वनावट में वृद्धि होने की आशा की जायगी।

साथ ही धरती के खनिज पदार्थ, जो कि पीने के पानी को प्रभावित करते हैं तथा भौगोलिक परिस्थिति से उत्पन्न वहुत से अन्य सूक्ष्म प्रभाव उसी प्रकार हमारी वाढ़ को रुद्ध अथवा विकसित कर सकते हैं, जिस प्रकार अपनी इच्छानुसार प्रकाश तथा कृत्रिम और प्राकृतिक खाद देकर हम पौधों के विकास को नियन्त्रित करते हैं। महत्त्वपूर्ण होने पर भी ये सव कारण केवल वाह्य समरूपों (phenotype) को ही प्रभावित करते हैं तथा उनका पारेषण नहीं होता। यदि वे पारेपित हो सकते हैं तो परिपोषण (nurture) के समर्थकों को हमें वतलाना चाहिए कि समपित्र्यक (genotype) किस प्रकार प्रभावित होता है।

इसलिए, हम फिर उसी तथ्य पर आ जाते हैं, जैसा कि जननिक अनुसन्धानों से पता चलता है, जव कि परिस्थिति में वंशानुगत तत्त्वों को किसी अन्य रूप में परिवर्तित करने की थोड़ी अथवा विलकुल क्षमता नहीं है, वह उस क्षेत्र को प्रभावित कर सकती है जिसमें जाति कार्य करती है, जैसा कि कद के सम्वन्ध में हमने अभी देखा है।

इस प्रकार जैसा प्रोफेसर क्रू' (Prof. Crew) ने वतलाया है, पशुओं में यह साधारणतया देखा गया है कि एक ही वंशशाखा की भेड़ का आकार तथा उसके मांस का स्वाद, जलवायु की दशाओं के अनुसार काफी भिन्न मिलता है।

उदाहरण के लिए सुअरों में कुछ वच्चे मातृक-गलग्रन्थि (thyroid) की लघु-इंद्रिय-क्रिया (hypofunctioning) के कारण, पूर्णतया केशरहित उत्पन्न होते हैं। इसका उपचार, इस उदाहरण में पशुओं को हरा भोजन तथा आयोडीन देकर परिस्थिति में परिवर्तन करने से होता है।

इसलिए, यह स्पष्ट है कि यदि खाने में वाह्य अथवा परिस्थितीय दशाओं के कारण मूलभूत तत्त्वों की कमी होती है, जैसा कि हमने देखा है, तव कद की वृद्धि में रुकावट होती है।

१. एफ़० ए० ई० क्रू (F. A. E. Crew), M. D. D. Sc. Ph. D. F. R. SE. एनिमल जेनेटिक्स (Animal Genetics) एडिनवर्ग, १९२५, पृष्ठ १३९

यह कई बार बतलाया जा चुका है कि ये दशाएँ जननिक नहीं हैं और न यह वंशानुगति पर कोई ऐसा प्रभाव ही छोड़ती हैं कि यदि एक बार फिर पुरानी दशाएँ स्थापित कर दी जायँ तो सदैव पुनः वही साधारण तथा जाने हुए जातीय प्रकारों की उत्पत्ति होगी।

उपार्जित गुणवाद तथा भौगोलिक निश्चयवाद की उत्पत्ति के कारण

यह मत कि परिस्थिति तथा अन्य बाहरी कारण जीवित पदार्थों के तथा मनुष्यों के सचेतन कीटाणुओं में परिवर्तन कर सकते हैं, तथा जो उन विभिन्न सिद्धान्तों का आधार है, जिन्होंने बिना वैज्ञानिक प्रमाण के लोगों का ध्यान आकर्षित किया है और हमारी समस्त सामाजिक विचारधारा तथा हमारे राजनीतिक सिद्धान्त एवं दर्शन शास्त्र का आधार बन गये हैं तथा जिन्हें शुरू शुरू में लेमर्क ने स्थापित किया, यह समझने के पहले निर्मित हुआ था कि कीटाणुकोश शरीरकोश से विभाजित होते हैं।

जैसा कि प्रोफेसर क्रू[1] ने बतलाया है, जब इन दोनों कोशीय बनावटों की भिन्नता स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो गयी, तब स्वभावतः इस खोज से एक पीढ़ी के लोगों को धक्का पहुँचा, जिनका अस्पष्ट विचार था कि जननकारी तत्त्व (reproductive elements) शरीर की एक शाखा मात्र है।

वास्तव में यह कहा जा सकता है कि यदि कीटाणु सचेतन तथा पित्रागति की विधि की खोज कुछ समय पहले हो गयी होती तो उपार्जित गुणों के पारेषण-सिद्धान्त तथा उसी पर आधारित उसके प्रतिरूप भौगोलिक निश्चयवाद के सिद्धान्त का प्रतिपादन ही न किया जाता।

परिस्थिति जातीय प्रकारों को प्रभावित नहीं कर सकती, इसके अन्तिम प्रमाण

गिनी सुअरों पर कासेल तथा फिलिप्स[2] (Castle and Philips) ने परीक्षण किया था जिसमें उन्होंने काले के अंडाशयों को सफ़ेद में डाल दिया तथा सफ़ेद

१. क्रू, पूर्वलिखित, पृष्ठ ३३९

२. डब्लू० ई० कासेल तथा जे० सी० फिलिप्स (W. E. Castle and J. C. Phillips) फरदर एक्सपेरीमेन्ट्स आन ओवेरियन ट्रान्सप्लान्टेशन इन गिनी पिग्ज (Further experiments on ovarian Transplantation in Guinea-pigs) साइन्स, १९१३, ३८, पृष्ठ ७८४

मादा का सफ़ेद नर के साथ मेल कराया। उससे केवल काली सन्तति की उत्पत्ति हुई जिससे यह सिद्ध होता है कि शरीर के कोश तथा ऊतियों का भी कीटाणुकोशों अथवा वंशानुगति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

इसलिए यदि, शरीर के कोशों का थोड़ा अथवा कोई आन्तरिक प्रभाव नहीं होता तब परिस्थिति का कैसे हो सकता है जो उनके द्वारा ही कार्य कर सकती है?

उपार्जित गुणों के पारेषण के कथित प्रमाण

यह तर्क किया जा सकता है कि उपार्जित गुणों के पारेषण के कुछ प्रदर्शनों का ठीक से मूल्यांकन नहीं किया गया।

अवश्य ही यदि यह सत्य है तो इसका अर्थ होगा कि शरीर के कोश, कीटाणुकोशों को प्रभावित कर सकते हैं।

उपार्जित गुणवाद के लिए सबसे हानिकारक दावे वे हैं, जो लिसेन्को (Lysenko) तथा मास्को एकेडमी आफ साइन्सेज़ (Moscow Academy of Sciences) द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं। ये दावे, स्पष्ट रूप से झूठे और बनावटी नहीं तो, पूर्णतया असत्य हैं, यह रूस के बाहर समस्त जातिवैज्ञानिक शाखाओं के किसी भी वैज्ञानिक की इस सम्बन्ध में की गयी व्याख्या से प्रकट होता है। इसलिए यहाँ हम उनकी अधिक विवेचना नहीं करना चाहते।

दूसरी ओर समय समय पर उनके लेखकों के सम्बन्ध में अधिक प्रतिष्ठितता के दावे किये जाते हैं। इस प्रकार के प्राचीन दावों में से एक फलों की मक्खी ड्रोसोफीला के सम्बन्ध में है।

इस उदाहरण में यह बतलाया गया है कि कुछ गुण कुछ अंशों तक वंशानुगति से स्वतन्त्र रूप से कार्य करते मिलते हैं जिसके फलस्वरूप कुछ लोगों ने इसको परिस्थिति का उससे अधिक महत्व प्रमाणित करने के लिए प्रयुक्त किया है जितना जननिक शास्त्री मानते हैं।

यह देखा गया है कि जिन फलों को ये मक्खियाँ खाती हैं यदि उन पर अधिक आर्द्रता होती है तो उनका पेट अधिक बड़ा हो जाता है परन्तु यदि भोजन सूखा होता है तो ऐसा नहीं होता।

अब यह आगे दिखलाया जायगा कि ऐसे भी उदाहरण हैं जिनमें बाह्य रूप से साधारण दीखनेवाली नस्लों में छिपे रूप से अथवा अपसारी रूप से अन्य गुण भी होते हैं। परन्तु यह जननिक गुण है, परिस्थिति द्वारा उत्पादित नहीं तथा जैसा कि क्रू (Crew) इस विशेष उदाहरण में बतलाते हैं, फल की मक्खियाँ, जिनकी बनावट

स छिपी असामान्यता को ले जाने योग्य नहीं है, असामान्य मक्खियों की उत्पत्ति नहीं करतीं।

यहाँ भी वंशानुगति की क्रिया दृष्टिगोचर होती है जो कि अपने केवल थोड़े से निश्चित तत्त्वों के सम्बन्ध में ही उस असाधारण परिस्थिति द्वारा किञ्चित् प्रभावित होती है जिसमें वह कार्य करती है।

समय-समय पर वैज्ञानिक कार्यकर्ताओं के छोटे समूह मिलते हैं जैसे गायर तथा स्मिथ[1] (Guyer and Smith) जिन्होंने उपार्जित गुणवाद की उपकल्पना (Hypothesis) की स्थापना के लिए अधिक ठोस प्रयत्न किये हैं।

परन्तु इन सब में शंका का कारण मौजूद है कि इन लोगों ने क्या सचमुच वही उदाहरण लिये हैं जो असंदिग्ध रूप से उपार्जित गुणों की पित्रागति के प्रमाणों की स्पष्ट स्थापना करते हैं।

साथ ही, और यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि, बहुत प्रयत्न के पश्चात् जो थोड़ा सा तथ्य प्रमाण के रूप में बतलाया गया है उसके विपरीत हमारे पास राशि राशि ऐसे प्रमाण हैं कि, साधारण तथा सहज नियम के रूप में, उपार्जित गुणों की पित्रागति नहीं होती।

उपार्जित गुणों के पारेषण में "विश्वास करने की इच्छा"

इस विषय की समालोचना करते हुए क्रू[2] (Crew) कहते हैं "यह बतला देना चाहिए कि जननिक शास्त्री विशिष्ट उपार्जित गुणों की स्पष्ट पित्रागति के प्रदर्शन की अपेक्षा और किसी को अधिक महत्त्व नहीं दे सकते। उपार्जित गुणों की पित्रागति की सम्भावना के विरुद्ध कोई पूर्वनिर्धारित मत नहीं है। परन्तु यह समझना आवश्यक है कि उपार्जित गुणों की पित्रागति में 'विश्वास की इच्छा' मानव के व्यवहार में एक समझने लायक प्रवृत्ति है और यह ऐसी चीज़ है जिसे रोकना आवश्यक है।"

१. एन० एफ़० गेयर तथा ई० ए० स्मिथ (M. F. Guyer and E. A. Smith) स्टडीज ऑन साइटोलिसिन्स। II. ट्रान्समिशन आफ़ इन्ड्युस्ड आई डिफेक्ट्स, (Studies on Cytolysins. II. Transmission of Induced Eye Defects.) जर्नल आफ़ एक्सपेरीमेंटल जूलोजी, १९२०, ३१, पृष्ठ १७१, फर्दर स्टडीज आन इनहेरिटेन्स ऑफ आई डिफेक्ट्स इंडयूस्ड इन रैबिट्स (Further studies on Inheritence of Eye Defects Induced in Rabbits) जर्नल आफ़ जूलोजी, १९२४, ३८, पृष्ठ ४४९

२. क्रू, पूर्वलिखित, पृष्ठ ३५१

हम यह सोचे विना नहीं रह सकते कि भौगोलिक निश्चयवाद तथा उसके जननिक प्रतिरूप उपार्जित गुणवाद के पीछे 'विश्वास की इच्छा' एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण शक्ति है।

उन्नीसवीं तथा वीसवीं शताव्दी में भौतिक धन तथा सामग्री का अपरिमित विस्तार होता रहा है और इसमें प्रत्येक स्थान पर नये मनुष्यों ने शक्ति प्राप्त की है। वास्तव में यह स्वतः-निर्मित मनुष्य का युग है।

विश्व-इतिहास में शायद ऐसा युग कभी नहीं था जब कि मनुष्य भूतकाल के आभारी होने में इतने असहिष्णु थे, केवल परिवर्तन के लिए ही परिवर्तन के इतने इच्छुक तथा समस्त उत्पादक शक्तियों के ऊपर शासन करने के लिए इतने उतावले थे (intolerent) जितने आज हैं।

हमारी राय में इन मानसिक प्रवृत्तियों से ही शायद उस असहनशीलता की उत्पत्ति हुई है जो आज के मनुष्य के मन में वंशानुगति की शक्ति के प्रति विद्यमान है। यहाँ तक कि उसमें भौतिक मानवविज्ञान तथा जातिविज्ञान के अध्ययन को अनुत्साहित करने की भी प्रवृत्ति मिलती है, जो कि मनुष्य के वंशानुगत गुणों के जननिक आधारों के प्रति उदासीन नहीं हैं और न हो सकते हैं।

जब कि वर्तमान समय में समस्त मानवसमाज इन साधारण विचारों से सहमत है, दो वड़े राष्ट्रीय क्षेत्रों तथा उनसे प्रभावित स्थलों में सवसे अधिक यह चीज पायी जाती है।

हमारी राय में यह 'विश्वास की इच्छा' ही इस महत्त्वपूर्ण तथ्य का कारण है कि अमेरिका तथा रूस नव-उपार्जित गुणवादी विचार के केन्द्र हैं। पहले उदाहरण में तो हमारे समक्ष ऐसा नया पूँजीवादी देश है जिसे वंशानुगति की शक्ति के प्रति नियमित अरुचि है—वादशाहों तथा सम्पन्न जनों से पित्र्यकों तक मानो स्वभाव से ही अरुचि है और है अपनी प्रारव्ध को अपने हाथों से ठीक करने तथा भूतकाल के नियमों की दासता स्वीकार न करने की उत्कट इच्छा। जब कि दूसरी ओर एक ऐसा देश है जो ऐसे राजनीतिक सिद्धान्त से ओतप्रोत है जो उपार्जित गुणवाद के इस दर्शन पर आधारित है कि मनुष्य जो कुछ भी है अपनी सामाजिक तथा आर्थिक दशाओं के परिणामस्वरूप है तथा मनुष्य एक नये तथा क्रान्तिकारी प्रकार के जीवन के लिए "सामाजिक रूप से तैयार" किया जा सकता है।

इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि ये देश मुख्यतः प्रतिक्रिया के केन्द्र हैं और इसीलिए अन्य देशों की अपेक्षा नव-उपार्जित गुणवाद के गढ़ हैं।

अमेरिका के आप्रवासितों के सम्बन्ध में प्रोफेसर बोआस का कार्य, उनको परि-

र्वतित करने में परिस्थिति की कही जानेवाली बड़ी शक्ति तथा प्रोफेसर एल्सवर्थ हंटिंगटन के मतों को, जान में अथवा अनजान में, ऐसे ही विचारों से अनुप्रेरित समझना चाहिए।

फिर भी, उपार्जित गुणवाद के समर्थन में वतलाये गये कुछ सम्परीक्षणों पर पुनः विचार करते समय ध्यान रखना चाहिए कि इनमें से अधिकांश सम्परीक्षणों ने, जिनमें उपार्जित गुणों की पित्रागति की बात प्रमाणित करने का (वास्तव में इतने कम परिणाम के साथ) प्रयत्न किया है, सम्बद्ध नस्लों को ऐसी कठिन दशाओं में रखने का प्रयास किया है जिनको कि वास्तविक जीवन में मिलने की सम्भावना कम है।

इसलिए ऐसा प्रतीत होगा कि उपार्जित गुणों की पित्रागति ऐसी दशाओं में ही हो सकती है जो साधारणतया मनुष्यों के लिए घातक होगी---इस प्रकार व्यावहारिक मतलब के लिए इस प्रश्न ने जितना शायद उपयुक्त है उससे अधिक समय तथा ध्यान आकर्षित किया है।

अतः यह स्पष्ट है कि हमें उन्नीसवीं शताब्दी के दर्शन के प्रभावशाली विचारों को त्याग देना चाहिए, जो कि परिस्थितीय दशाओं से प्रभावित होकर नये गुण उपार्जित किये जा सकते हैं, उपार्जित गुणवाद के इस सिद्धान्त पर आधारित हैं, क्योंकि तथ्य हमें केवल इस परिणाम तक पहुंचायेंगे कि वंशानुगति अथवा जाति की शक्ति की सत्यता स्वीकार की जाय; हालाँ कि उसके साथ ही परिस्थिति का भी अपना एक वहुत आवश्यक प्रभाव है तथा वह है, प्रत्येक पीढ़ी में वंशानुगति की शक्ति के विकास को प्रभावित करना। परन्तु जहाँ तक कीटाणु-प्राणरस में परिवर्तन करने और उसके द्वारा भविष्य के निर्माण की योग्यता का प्रश्न है, यदि वास्तव में उसमें है तो, उसका कार्य शायद वहुत ही कम है।

इस निर्णय पर पहुंचकर हम मुख्य वैज्ञानिकों के---जैसे अमेरिका के मारगन (Morgan), हालैण्ड के दि राइस (de Vries), डेनमार्क के जोहानसेन (Johansen), जर्मनी के कोरेन्स तथा वार (Corens and Baur), स्काटलैण्ड के क्रू (Crew), इंग्लैण्ड के हाल्डेन (Haldane)---तथा अधिकांश देशों के जीववैज्ञानिकों, प्राणिशास्त्रियों (Zoologists) और मानववैज्ञानिको के वहुमत के अनुयायी वन जाते हैं।

मनुष्य के सम्बन्ध में भूगोल का कार्य

मनुष्य के विकास में भूगोल का क्या हाथ है? जैसा हमने पहले अनेकों वार जोर देकर वतलाया है, उसका कार्य नकारात्मक किन्तु फिर भी वहुत महत्त्वपूर्ण है,

क्योंकि यह निश्चय करता है कि मनुष्य कहाँ रह सकता है तथा कौन से मनुष्यों एवं जातियों की उन्नति इस स्थान पर होगी या कौन यहाँ नष्ट हो जायँगी। भूगोल छाँटनेवाले उपकरण के समान है जो जीवित पदार्थों से उन रूपों का नाश कर देता है जो वंशानुगति द्वारा अधिक मात्रा में उत्पादित होते हों तथा जो परिस्थिति के प्रतिकूल हों। परन्तु भूगोल किसी नये प्रकार की उत्पत्ति नहीं करता और न जीवन की प्रकृति को देखते हुए ऐसा कर ही सकता है। उसका प्रभाव घातक से लगाकर अनुज्ञात्मक तक हो सकता है।

भूगोल के त्रिगुणात्मक कार्य; सुजननिक (Eugenics) दुर्जननिक (Dysgenic) तथा मानसिक

जितना वतलाया जा चुका है उससे स्पष्ट है कि भूगोल के कई प्रभाव हो सकते हैं। ये सब बड़े महत्त्व के हैं परन्तु मनुष्य में मिलनेवाली जननिक प्रक्रिया को ये नियन्त्रित नहीं करते वल्कि उसके द्वारा कार्य करते हैं। प्राकृतिक चुनाव के यंत्र के रूप में भूगोल निर्वल प्रकारों को छाँटकर अलग कर दे सकता है तथा इस प्रकार सुजनन के स्वाभाविक प्रकार के पीछे एक शक्ति वन जाता है और जाति में से निर्वल तत्त्वों को नष्ट करके शक्तिशाली तथा योग्य सन्ततियों की उत्पत्ति करता है। परन्तु इन सन्ततियों का निर्माण वह नहीं करता, वे तो हमेशा से ही वहाँ पर थीं। इसने केवल अच्छी सन्ततियों के साथ मिश्रित निर्वलों को हटा दिया और इस प्रकार सन्तति के सम्पूर्ण औसत को ऊँचा कर दिया।

दूसरी ओर भूगोल इसकी विपरीत दिशा में भी कार्य कर सकता है और दुर्जननिक (डिसजेनिक) शक्ति का यंत्र बनकर जातीय ह्रास तथा संहार की ओर ले जाता है, जिसमें निर्वल जीवित रहते हैं तथा ऊँची और अच्छी सन्ततियों का नाश हो जाता है।

फिर भी वैकल्पिक क्रम से, भूगोल एक तीसरे प्रकार का भी कार्य करता है और वह है मस्तिष्क पर प्रभाव डालना। भौगोलिक निश्चयवादियों के चाहे जितने मतों को हम पायें हम सभी विचारों का समर्थन नहीं कर सकते, न केवल इस दृष्टि से कि वास्तव में वे क्या कहते हैं, वरन् इस दृष्टि से भी कि उनका तात्पर्य क्या रहता है। यह तात्पर्य जाति-विज्ञान के जननिक आधार के सम्यक् ज्ञान के इतना विपरीत होता है कि हम प्रोफेसर एस० एस० विशर[1] (Prof. S. S. Visher) से सहमत होते हैं, जब वे

१. क्लाइमेटिक इनफ्लुयेन्सेज (Climatic Influencs) ज्योग्रफी इन दि ट्वेन्टिएथ सेन्चुरी (Geography in the Twentieth Century) लन्दन, १९५३, पृष्ठ १९६

एल्सवर्थ हंटिंगटन के योगदान की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं—जहाँ उन्होंने सभ्यता पर जलवायु का प्रभाव दिखलाया है।

यह स्वतः सिद्ध है कि मनुष्य के रहने योग्य स्थिति की अन्तिम सीमा पर रहनेवाले एस्किमो लोग भी ऐसी हालत में होंगे जहाँ परिस्थिति का प्रभाव उनके मस्तिष्क को सुस्त कर देता है जिससे कि सांस्कृतिक गतिहीनता उत्पन्न हो जाती है। उसी प्रकार से दूसरे छोर की चरम सीमा पर अति घने और सबसे अधिक नीची सतहवाले भूमध्यरेखा-स्थित दलदलों तथा वनों में इसी प्रकार का कुछ मिलना चाहिए।

इसके विपरीत, जैसा कि प्रोफेसर हंटिंगटन ने दिखलाया है, यह निःसन्देह ही सत्य है कि घर के बाहर का ५०° से ६०° फ० का औसत तापक्रम ऊंची सभ्यताओं के लिए सहायक है।

इससे इस तथ्य के कारण का पता चल सकता है कि, उदाहरण के लिए, क्यों नार्डिक लोग पिछले ३००० से ४००० वर्ष तक, अपेक्षाकृत पिछड़े हुए रहे।

साइबेरिया के मैदान के ठंडे पश्चिमी भाग में रहने के कारण उनकी शक्ति मुख्यतः जीवन को किसी तरह बनाये रखने के लिए ही आवश्यक थी, सभ्यता के विकास की ओर ध्यान देना उनके लिए संभव ही कहाँ था?

फिर भी एक बार हिमयुग के पश्चात् जब बर्फ कम हुई, और जब लोगों ने अपने आपको अपेक्षाकृत कम कठोर जलवायु में पाया, विशेष कर जब कि वे यूरोप में पश्चिम की ओर चलकर, भूमध्यसागर, ऐटलान्टिक सागर तथा उत्तरी सागर के सबसे अच्छे जलवायु के प्रदेश में पहुँचे, तब नार्डिकों ने जलवायुसम्बन्धी सरल दशाओं का अनुभव किया और वे लोग सभ्यता के विकास में शीघ्र उन्नति कर सके।

यद्यपि यह सब सत्य है तथा हम प्रोफेसर हंटिंगटन तथा अन्य लोगों के साथ इस बारे में सहमत हैं कि ये सब विकास भूगोल के कारण हुए, फिर भी इस विचार का समर्थन नहीं किया जा सकता कि भूगोल से नार्डिक जाति की विशिष्टता तथा उसकी सभ्यता की उत्पत्ति हुई है।

हुआ यह है कि उक्त जातीय वर्ग को जिसमें अपनी उद्विकास सम्बन्धी प्रगति के कारण आवश्यक जननिक गुण थे एक ऐसे प्रदेश में बसने का अवसर मिला जिसमें अत्यन्त प्राचीनकाल से वंशानुगत द्वारा पारेषित पित्रागत बौद्धिक गुण, पूर्ण विकसित हो सकते थे।

इसलिए, हालाँ कि प्रोफेसर हंटिंगटन उचित ही ५०°–६०° फ० तक संसार में सबसे उत्तम प्रदेशों के महत्त्व की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं, यह सिद्ध नहीं होता कि यदि कोई अन्य जातीय वर्ग वहाँ पर जाकर बस गया होता तो भी वही परिणाम

निकलता। वास्तव में, निग्रायड लोग पुरा-पाषाण काल में भूमध्यसागरीय भूभागों तक पहुँच गये थे, फिर भी उससे निग्रायड जाति की कोई विशेष उन्नति नहीं हुई। साथ ही प्रोफेसर ग्रिफिथ टेलर जैसे अन्य भौगोलिक निश्चयवादियों ने अपनी मानवजाति की मानव-भूवृत्तीय वितरण की योजना में, निग्रायड तथा निग्रिटो लोगों का मूल स्थान सम शीतोष्ण प्रदेश माना है। हम नहीं कह सकते कि उससे हम यह कल्पना करने को प्रेरित होते हैं कि उन प्रदेशों में काले लोगों की सभ्यता का जन्म हुआ।

केप आफ़ गुड-होप का जवलायु भी भूमध्यसागर के जलवायु से अधिक भिन्न नहीं है इसलिए हम होटेनटाट्स तथा बुशमैन (Hottentots and Busman) से सांस्कृतिक दृष्टि से कुछ उन्नतिशील होने की आशा कर सकते, यदि सम-तापक्रम वाली रेखाओं में ही सर्जनात्मक शक्ति होती। दूसरी ओर टसमानिया में जहाँ पर नीग्रिटो (Negrito) जनसंख्या है और जलवायु की उत्तर-पश्चिमी फ्रान्स जैसी सबसे उत्तम दशाएं भी हैं, फिर भी वे नीग्रिटो के जीवन-स्तर को ऊँचा करने में असफल रहीं जो कि सब स्थानों में नीचा है।

इसलिए, मुख्य बात यह है कि उचित जातीय सन्ततियों को ऐसे भौगोलिक प्रदेशों में जाना चाहिए जो उनकी योग्यता के लिए सबसे अधिक सहायक हों।

प्रोफेसर हंटिंगटन के इस मत में काफ़ी तथ्य हो सकता है कि गृह-निर्माणविद्या की उन्नति, अधिक उपयुक्त भोजन, अधिक गर्म कपड़े तथा कार्य में सहायक अन्य दशाओं से ठंडे देशान्तरों की उन्नति होना सम्भव हो जाता है, इसलिए भूमध्यसागर से उत्तरी यूरोप तक सभ्यता का विकास हुआ।

जहाँ तक यह सत्य है, यह उस बात को सिद्ध करता है जिसे हम कहना चाहते हैं। क्योंकि यहाँ पर मनुष्य ने अपनी सहज प्रतिभा तथा बौद्धिक योग्यता का प्रयोग करके, गर्म कपड़ों और उचित घरों को बनाकर, उत्तरी प्रदेशों द्वारा डाली गयी भौगोलिक बाधाओं को जीत लिया है।

इसलिए यह परिणाम निकलता है कि परस्पर प्रभाव डालने वाली दो बड़ी शक्तियाँ हैं—पृथ्वी तथा उसके ऊपर का जीवन। यही हमारे लिए भूगोल एवं मानवशास्त्र है। मनुष्य को अपनी परिस्थिति के साथ मिल जुलकर चलना चाहिए। यह कभी कभी उसे रोक सकती है या नष्ट कर दे सकती है और किसी समय उसके अनुकूल रुख भी ग्रहण कर सकती है। फिर भी मनुष्य उसकी रचना नहीं है। उसकी बनावट पित्रागत है जिसकी सामग्री से उसका विकास होता है। भूगोल की प्रत्यक्ष शक्ति एक

ओर चुनाव के रूप में उद्विकास को छाँटनेवाले उपकरण के रूप में और दूसरी ओर निष्क्रिय तथा अनुमोदक के रूप में अपना कार्य करती है।

इसलिए भूगोल स्वयं निश्चय नहीं करता कि क्या हो सकता है अथवा क्या होगा, क्योंकि उसे वंशानुगति द्वारा प्रस्तुत पूर्वनिश्चित सामग्री के दायरे के भीतर ही अपना चुनाव कार्य करना पड़ता है।

शब्द-व्याख्या

जाति-विज्ञान (Ethnology) तथा जाति-जननिक विद्या (Ethno-genetic) में प्रयुक्त महत्त्वपूर्ण प्राविधिक तथा अन्यविशेप रूप से व्याख्यायोग्य कुछ शब्दों की संक्षिप्त परिभाषा नीचे दी जाती है।

अपसारी (Recessive)

गुणों, कारकों अथवा पित्र्यकों के लिए प्रयोग किया गया शब्द, जो कि संकरण की प्रथम पीढ़ी में नहीं दिखलाई पड़ते। यह प्रभावी (dominant) का उलटा है।

अभिवर्ण (चमकीले रंग का पदार्थ, रंजितक chromatin)

यह धब्बा डालनेवाला एक प्राणरसीय पदार्थ है। यह अभिवर्ण त्वचा, आँखों तथा बालों के रंग के लिए उत्तरदायी है। जव उसका विभाजन नहीं हो रहा हो तव एक कोश की न्यष्टि में अभिवर्ण एक जाल की भाँति लगता है। जव कोश का विभाजन होता है तव अभिवर्ण पदार्थ अनेक भागों में वँट जाता है जिसे पित्र्यसूत्र (chromosome) कहते हैं। (पित्र्यसूत्र देखिए)।

अभिजनन (Breed) **(प्रसवन)**

पशु-प्रसवन में कृत्रिम रूप से, अथवा मनुष्य में प्राकृतिक चुनाव, आकस्मिक चुनाव तथा जननिक परिवर्तन से होने वाले परिणाम को कहते हैं, जिसमें शुद्ध अभिजनन दो या अधिक जातियों के संकरण के कुछ गुणों का पृथक्करण होता है तथा साथ ही पैत्रिक सन्ततियों से पित्रागत पित्र्यकों से पुनः संयोजन होता है।

इस प्रकार से यदि पीत केश तथा नीली आँखों वाली जाति का काले केश तथा भूरी आँखों वाली जाति से संकरण किया जाय और यह मान लिया जाय कि केश तथा आँखों के गुण ग्रथित नहीं हैं तव कुछ समय वाद संकरण से पीत केश तथा नीली आँखें, काले केश तथा भूरी आँखें, पीत केश तथा भूरी आँखें तथा काले केश एवं नीली आँखें लिये हुए व्यक्ति मिलेंगे।

प्रथम दो प्रारम्भिक दो जातियों के तद्गुणी (अथवा लिये प्रकार) हैं। यदि यह दो नष्ट हो जायँ और केवल दो नये प्रकार जीवित रहें और अपने वितरण तथा संख्या में वढ़ जायँ जिससे कि वे सरलता से पारस्परिक अन्तः प्रसवन कर सकें तव वे दो नये अभिजनन वन जायँगे।

हम, अल्पाइन, डाइनारिक-आर्मेनायड तथा पूर्वी बाल्टिक वालों को जातियाँ नहीं, परन्तु इस प्रकार अभिजनन (नस्लें) समझते हैं।

अमेरिन्ड जाति (Amerind Race)

अमेरिका महाद्वीप के मूल निवासियों के लिए इस शब्द का प्रयोग किया जाता है जो कि मंगोलायड जाति की प्रारम्भिक शाखा है ।

अर्धसूत्रण (Meiosis)

कीटाणु अथवा प्रजनन-कोशों में कीटाणु विभाजन की क्रिया जिसमें कि जन्युओं (gametes) के निर्माण के लिए पित्र्यसूत्र आधे रह जाते हैं, जो कि विपरीत लिंग-वाले से जब मिलते हैं तब जातियों के पित्र्यसूत्रों की वही संख्या स्थापित कर देते हैं जैसी कि प्रारम्भिक कोशों में मिलती है।

इस क्रिया से सूत्रभाजन (mitosis) का भ्रम न होना चाहिए।

अलिंग सूत्रसम्बन्धी ग्रथन (Autosomal Linkage)

जब गुण उसी पित्र्यसूत्र में मिलते हैं जो कि लिंग-पित्र्यसूत्र नहीं है ।

लिंग-ग्रथन देखिए

अल्पाइन (Alpine)

एक जातीय अभिजनन जो कि काकेसायड (Caucasoid) जातियों की एक शाखा है जो कि मध्य फ्रान्स के पहाड़ी क्षेत्रों से पूर्व की ओर दक्षिण जर्मनी तक, स्विटजरलैंड, उत्तरी इटली से पूर्वी यूरोप तक, मुख्य रूप से अल्पाइन प्रदेशों तथा पर्वतों में विकसित हुई है ।

आँखों का रंग (Eye Colour)

इनके अनेकों वर्गीकरण हैं। इनमें डा० वेडो (Dr. Beddoe) का सबसे शास्त्रीय है जिसमें कि हलकी आँखें (light eyes)—नीली अथवा धूसर काली आँखें (dark eyes)—पीली लालपन लिए हुए भूरी अथवा काली; अन्य लेखक (वर्तमान लेखक सहित, पीली) लालपन लिए हुए को मध्यम कह कर अलग कर देते हैं तथा इन वर्गों का और भी उप-विभाजन करते हैं।

आँखों-बालों के रंग की देशना (Eye-hair-Colour Index)

यह डा० कोलिगनन (Dr. Collignon) की है और इसे हलके बाल (L. H.) तथा आँखें (L. E.) तथा काले बाल (D. H.) और आँखों (D.E.) के प्रतिशत को लेकर निकाला जाता है, उससे निम्नलिखित देशना बनती है।

$$\frac{(LH) + (LE)}{2} - \frac{(DH)-(DE)}{2}$$ अन्य के ऊपर एक की अपेक्षिक अधिकता।

आँखों के रंग की देशना (Eye-Colour Index)

डा० वेडो (Dr. J. Beddoe) ने इसका आविष्कार किया है तथा काली-हलकी देशना से निकाला है।

आँख का तारा (Iris)

मानव की आँख का रँगा भाग जो पुतली को घेरे रहता है।

ईथियोपियन (Ethiopian)

नीग्रायड (Negroid) अथवा मेलेनीसियन (Melanesian) अथवा काली जाति के लिए प्रयुक्त पुराना शब्द।

उत्परिवर्तन (Mutations)

पित्र्यकों अथवा पित्र्यसूत्रों में अनपेक्षित परिवर्तनों को उत्परिवर्तन कहते हैं जिसमें जारी न रहनेवाली विभिन्नता मिलती है।

उन्मत्त उदासी (Maniac depression)

एक प्रकार का पागलपन जो शरीर की बनावट पर आधारित है।

उप-जातियाँ (Sub-races)

जातियों के उपविभाग।

जैसे मेडिटेरेनियन जाति दो प्रकारों में विभाजित की जा सकती है, एक तो पश्चिमी या मुख्य मेडिटेरेनियन जाति तथा दूसरी पूर्वी मेडिटेरेनियन जाति।

उपार्जित-गुणवाद (Lamarkism)

फ्रान्स के प्रकृतिवादी (पदार्थशास्त्रज्ञ) शिवेलियर दे लेमार्क (Chevalior de Lamark) ने (१७४४–१८२९) यह सिद्धान्त चलाया। उन्होंने उपार्जित गुणों की पित्रागति के मत का प्रतिज्ञापन किया जिसने कुछ सीमा तक चार्ल्स डारविन पर प्रभाव डाला परन्तु जो मेण्डेल के कार्य द्वारा पूर्णतया अग्राह्य ठहरा दिया गया है। मुख्यतः जर्मनी के प्रतिष्ठित जीववैज्ञानिक वीजमैन (Weismann) ने अपने प्रदर्शनों द्वारा उसे गलत सिद्ध कर दिया है।

डारविन का पैनजेनेसिस (Pangenesis) का सिद्धान्त इससे सम्बन्धित है।

ऊँचाई देशना, चौड़ाई के सम्बन्ध में (Altitudinal Index, in relation to breadth)

सिर अथवा कपाल की ऊँचाई को एक सौ से गुणा करके चौड़ाई से भाग देने पर यह मिलता है। कपाल की ऊंचाई की देशनाओं को देखिए।

ऊँचाई देशना, लम्बाई के सम्बन्ध में (Altitudinal Index, in relation to length)

सिर अथवा कपाल की ऊँचाई को एक सौ से गुणा करके लम्बाई से भाग देने पर यह मिलता है। कपाल की ऊंचाई की देशनाओं को देखिए।

एंडालूसियन (Andalusian)

कुक्कुटों का एक प्रसव जो कि काले, सफेद तथा नीले होते हैं। नीले अपूर्ण प्रभावी हैं जिनका अन्तःप्रसवन होने पर पित्रागति (मेण्डालियन सिद्धान्त) के अनुपात में, २५ प्रतिशत काले, ५० प्रतिशत नीले तथा २५ प्रतिशत सफेद, तद्गुणी रूप में मिलते हैं।

यह अपूर्ण प्रभुत्व का शास्त्रीय उदाहरण है।

एक-युग्मिक जुड़वाँ (Monozygotic Twins)

'जुड़वाँ' देखिए।

एटलाण्टिक जाति (Atlantic Race)

यह शब्द कुछ मानव भूवृतज्ञाताओं द्वारा गलत तथा अस्पष्ट रूप में प्रयोग किया जाता है जिसमें सभी चौड़े कपाल वाली जातियाँ सम्मिलित की जाती हैं। जैसे कि मंगोलायड जातियाँ, जो कि काकेसायड जातियों की एक शाखा है और मुख्यतः आयरलैण्ड (Ireland), पश्चिमी स्काटलैण्ड (Western Scotland), स्वीडेन में डलोर्ना (Dalorna), जर्मनी के वेस्टफेलिया में कहीं-कहीं, कार्नवाल (Cornwall), ब्रिटेनी (Brittany) से यूरोप के पश्चिमी तट तक, डर्डोगोयर में (Dordogire), फ्रान्स के मैसिफसेण्ट्रल ('Massif Centrale') के पश्चिम में और उत्तरी अफ्रीका के बर्बर (Berbers) लोगों में पायी जाती हैं।

इसमें आदि मेधावी मानव (Cro-Mognon Man) से कुछ समानता मिलती है—जो कि इस जाति की प्रारम्भिक शाखा के हो सकते हैं जिनमें लम्बा कद, छोटा निचला चेहरा, ठीक प्रकार से विकसित भ्रकुटि (Supraorbital ridges) अथवा मस्तिष्क का बड़ा आकार मिलता है।

आँखें साधारण नीले रंग की, त्वचा बहुत गौरवर्ण, कम उम्र की स्त्रियों में श्वेत तथा लाल मिला हुआ रंग और काले बाल मिलते हैं।

शरीर की गठन नार्डिक की अपेक्षा दृढ़ है।

जर्मन तथा स्कैन्डिनेवियन लेखकों ने उसे वेस्टफ़ेलिया के आधार पर फेलिक (Faelic) एटलान्टिश तथा डर्लेनियन और हूटन (Hootan) ने अप फ्राम दि एप्स (up from the Apes) में उसे केल्टिक (Keltic) कहा है।

काली जातियाँ (Black Races)

मेलानायड जातियों (Melanoid Races) के लिए प्रयुक्त शब्द है।

कापालिक देशनाओं की ऊँचाई (Height of Skull Indices)

कपाल में खड़ी ऊँचाइयों का वर्गीकरण, लम्बाई तथा चौड़ाई की तुलनात्मक देशनाओं में नीचे दिया है—

	ऊँचाई-लम्बाई देशना	ऊँचाई-चौड़ाई देशना
Platycephalic	–६७	–८३
Mesocephalic	६७–७०	८३–८५
Hypsicephalic	७०+	८५+

कापालिक देशना (Cephalic Index)

जहाँ तक कि मानवमितीय (anthropometrical) नियमों का दावा है—कापालिक देशना, जो —और कुछ सीमा तक यह उचित ही है—जाति-विज्ञान की मुख्य सहायक कही गयी है, यह चौड़ाई को एक सौ से गुणा कर लम्बाई से भाग देकर निकाली जाती है।

सिर तथा कपाल मुख्यतः दीर्घ कपालसम्बन्धी (dolichocephalic), माध्यमिक कपाल सम्बन्धी (mesaticephalic) तथा पृथु-कपाल सम्बन्धी (brachycephalic) अर्थात् लम्बे, माध्यमिक तथा चौड़े (अथवा छोटे) वर्गों में विभाजित होते हैं। इन प्रकारों की विभाजनरेखा के सम्बन्ध में बड़ी अनिश्चितता है। हम लम्बे कापालिक अथवा दीर्घ कपालवाले ७८ से कम तथा पृथु कापालिक ८१ अथवा ८२ से अधिक को समझते हैं।

काकेसायड (Caucasoid)

साधारणतया, इस पुस्तक में निरन्तर श्वेत जाति के लिए इसका प्रयोग हुआ है जो कि होमो योरोपिअस (Homo Europacus) भी कहलाती है। सर्जी (Sergi) ने योराफ्रिकन तथा डिक्सन (Dixon) ने उसे कैस्पियन भी कहा है। इसमें हलके भूरे से पीले और कालापन लिये हुए तथा श्वेत तक सम्मिलित हैं। इन सब में घुंघराले वालों की प्रवृत्ति मिलती है। यह मुख्यतः, यूरोप, उत्तरी अफ्रीका, निकट-पूर्वी प्रदेश, पश्चिमी मध्य एशिया तथा दक्षिण-पूर्वी भारत में मिलती है। न्यूजीलैण्ड के पालीनेशियन तथा मावरीज मुख्यतः इसी प्रकार के हैं। हमारी राय में ऐस्कीमो निवासियों में उसी वंशक्रम का आधारभूत तत्त्व मिलता है। यह पूर्व की ओर मिश्रित रूप में पूर्वी एशिया के मंचुओं में मिलती है। उत्तरी-पूर्वी अमेरिण्ड निवासियों में भी कुछ काकेसायड तत्त्व मिलते थे।

कारक (Factor)

कीटाणुकोश में एक पदार्थ का नाम जिससे कि कीटाणुकोश में विशिष्ट गुण विकसित होता है जैसा कि बौनेपन के विपरीत लम्बापन है। ए० डी० डर्बीशायर (A. D. Derbyshire), ब्रीडिंग एण्ड दि मेण्डेलियन डिस्कवरी, लन्दन, १९१३, पृष्ठ २७६। सदैव नहीं परन्तु साधारणतया मेण्डल का प्रारम्भिक शब्द कहा जाता है जो कि वाद में पित्र्यक (जीन्स) कहलाया है।

कीटाणु कोश (Germ Cell)

जन्यु (gametes गैमीट) को ही कहते हैं।

केल्टिक जाति (Keltic Race)

एटलाण्टिक जाति देखिए।

केल्टिक (Celtic)

केल्टिक लोगों की सेण्टम आर्यभाषाओं, संस्कृति तथा राष्ट्रीयताओं से सम्बन्धित जो कि प्रारम्भ में सम्भवतः नार्डिक अथवा मुख्यतः नार्डिक लोग थे। ये पहले मध्य यूरोप में थे परन्तु अव उनके तत्त्व यूरोप के उत्तर-पश्चिम तटीय भागों में स्काटलैण्ड के गाल्स (Gauls, Erse) मैन्क्स (Manx), वेल्स निवासी, कार्नवालनिवासी तथा ब्रिटेनी (Brittany) के लोगों में मिलते हैं। इन सभी में कुछ अन्य जातीय तत्त्व भी हैं जिनको उन्होंने आत्मसात् कर लिया है।

केशों का रंग (Hair colour)

डा० वेडो (Dr. Beddoe) ने ब्रिटिश वालों के रंग के महत्त्वपूर्ण विवेचन में

निम्न केशों के रंग को लिया---

लाल; साफ अथवा हलका भूरा; भूरा; काला अथवा गहरा भूरा; काला;

अवश्य ही, साफ़ रंग को स्वर्ण केशों से पृथक रखना चाहिए। स्वर्ण केश सुनहले या भूरापन लिये सुनहले हों। प्लैटिनम ब्लैण्ड वे हैं जो कि श्वेतता लिये पीले हों।

केशों का आकार (Hair-form)

केशों के आकार को निम्न प्रकार में विभाजित किया गया है---

ऊर्ण केश (Ulotrichi)---छल्लेदार केश (Frizzy hair)। अफ्रीका में नीग्रो, वैन्टू, बुशमैन, नेग्रिल्लो तथा एशिया एवं मैलेनेशिया (Melanesia) में नेग्रिटो लोगों में मिलते हैं।

स्निग्ध केश (Leiotrichi)---सीधे केश। मध्य तथा उत्तरी एशिया एवं अमेरिका के आदिवासियों में देख पड़ते हैं।

निजीर केश (Cymotrichi)---लहरदार केश वाले (Wavy haired)---(अ) आस्ट्रालायड (Australoid), (आ) जापान के एनस (Ainus), (इ) पोलीनेसिया निवासी तथा (ई) मुख्य काकेसायड लोग सम्मिलित हैं।

कैस्पियन (Caspian)

स्व० प्रोफेसर रोनाल्ड डिक्सन तथा ग्रिफिथ टेलर (Prof. Ronald Dixon and Griffith Taylor) ने काकेसायड के लिए इस शब्द का प्रयोग किया है।

गौर वर्ण, स्वर्ण केश (Blond

स्वर्ण केशों वाले काकेसायड, नार्डिक तथा पूर्वी बाल्टिक (Caucasoids, Nordic and East Baltic) वालों से अभिप्राय है।

ग्रथन तथा अलगाव (Coupling and repulsion)

यह वैसा ही है जैसा कि ग्रथन (Linkage), देखो ग्रथित गुण।'

ग्रथित गुण (Linked characters)

ये सदैव एक साथ मिलते हैं तथा उसी एक ही पित्र्यसूत्र (Chromosome) पर स्थित होने के कारण ग्रथित होते हैं।

लिंगग्रथन (Sex Linkage) और अलिंग-सूत्रसम्बन्धी ग्रथन (Autosomal Linkage) देखिए।

घुंघराले बाल (curly hair)

यह लहरवाले बालों का उन्नत प्रकार है और कभी कभी छल्लेदार बालों (frizzy hairs) के संकरण से ये मिलते हैं।

चितकवरा भेड़ का बच्चा (Roan)

माता-पिता के रंगों के बीच का रंग जो कि पशुओं तथा घोड़ों में मिलता है और अपूर्ण प्रभाविता का फल है। नीले एंडालूसियन कुक्कुट में नीला रंग उसी के समान है। उदाहरण के लिए लाल पशु की उत्पत्ति लाल तथा सफेद पशु के संकरण से होती है।

चिपट नासा (Platyrrhine)

नासा, नाक देखिये।

छल्लेदार बाल (Frizzy hair)

केशों का आकार देखिये।

छल्लेदार केश (Wooly hair)

यह कभी-कभी छल्लेदार (frizzy hair) केशों के लिए प्रयुक्त होता है।

केश-आकार देखिए।

जन्यु (Gametes)

नर अथवा मादा का प्रजनन-कोश जो कि शारीरिक कोशों की भांति गिुणसूत्रों की आधी संख्या से बनता है।

जाति (Race)

किसी किस्म का एक सचेतन या जीविज (आरगैनिक) उपविभाग, जिसके सम्पूर्ण सदस्य उन्हीं पूर्वजों से तथा रक्त से सम्बन्धित, समान जातीय गुणवाले पूर्वजों के ही गुणवाले होते हैं तथा उद्विकास के कारण होनेवाले परिवर्तन ही उनमें होते हैं।

इस प्रकार से काकेसायड वर्ग की नार्डिक, मेडिटेरेनियन तथा एटलान्टिक, ये तीन जातियाँ हैं।

जातिकशिका (Ethnomonads)

इस शब्द का प्रयोग इस पुस्तक में यूनीजेन (Unigen) के साथ साथ, जिसे कुछ लोग जातीय एकक कहते हैं उस अर्थ में किया गया है। यह 'एथनास' और 'मोनास' से लिया गया है, जिनका अर्थ क्रमशः लोग तथा एकक है।

उदाहरण के लिए फ़ीजी-निवासी अथवा आइसलैण्डनिवासी, जाति-कशिका (ethnomonadic) हैं जो कि काफी समान, अन्तः प्रसूत तथा स्थिर जनसंख्या वाले हैं। ये, उदाहरण के लिए, मैक्सिको निवासियों से भिन्न हैं।

जाति-विज्ञान (Raciology)

जाति-विज्ञान (Ethnology) देखिए।

जाति-विज्ञान (Ethnology)

संस्कृति से सम्बन्धित मनुष्य का सम्पूर्ण तुलनात्मक अध्ययन, उसके प्रकारों (जातियों) तथा संस्कृतियों को (जैसे लोग और राष्ट्र) ध्यान में रखते हुए।

जाति-वृत्त (Ethnography)

कभी-कभी जाति-वृत्त का प्रयोग जातिविज्ञान (ethnology) के अर्थ में ही किया जाता है परन्तु हमने उसका प्रयोग जातिविशेष, या विशिष्ट देश के निवासियों अथवा क्षेत्र-विशेष के वर्णनात्मक अर्थ में किया है। प्राक्कथन देखिए।

जातीय शास्त्र (Racial Science)

जाति-विज्ञान (Ethnology) देखिए।

जातीय एकक (Ethnic unit)

किसी समूह के लिए जो कि न जाति और न अभिजाति है परन्तु जिसमें कि अन्तः-प्रसवन अथवा अपने व्यक्तियों की कुछ समान उत्पत्ति द्वारा जननिक स्थिरता मिलती है, जैसे पुराने राष्ट्रीय समूह, जैसे यहूदी अथवा आयरिश, इंग्लिश, स्पेनिश इत्यादि हैं।

जातीयवाद, जातित्ववाद (Racialism)

जाति-विज्ञान अथवा जातीय शास्त्र पर आधारित वतलाये गये मत और राज-नीतिक दर्शन—परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है, यह जातिविज्ञान के कुछ पहलुओं की केवल एक संक्षिप्त व्याख्या है।

जुड़वाँ, एक-युग्मिक (Twins, monozygotic)

समान जुड़वों के लिए प्रयुक्त।

जुड़वाँ, भाई-सम्बन्धी (twins, fraternal)

जुड़वाँ जो कि समान अथवा युग्मैकगुणी नहीं है।

जुड़वाँ, समान (Twins, identical)

एक ही अण्डे से उत्पन्न जुड़वाँ हैं; कभी कभी युग्मैकगुणी कहलाते हैं।

जैन्यस (Xanthous)

हलके के अर्थ में। परन्तु कभी-कभी अस्पष्ट रूप में मंगलायड अथवा पीतवर्ण अथवा मंगोलायड जातियों के लिए इसका प्रयोग होता है। (ए० सी० हेडन के दि स्टडी आफ़ मैन, १८९८, पृष्ठ ७४ देखिए)

जैन्थोक्रोइक (Xanthocroic)

यह उत्तरी यूरोप के 'अतिश्वेत', जैसे कि नार्डिक (Nordic) के लिए आता है।

ट्युटानिक (Teutonic)

उन जर्मन तथा गोथिक लोगों की आर्य भाषाओं, संस्कृतियों तथा राष्ट्रीयता सम्बन्धी, जो कि मूल रूप में नार्डिक (Nordic) अथवा मुख्यतः नार्डिक थे और अब उत्तर-पश्चिमी अथवा मध्य यूरोप में स्थित हैं। भाषा की दृष्टि से ये स्कैन्डिनेवियन या गोथेनिक, नार्वेजियन, डेनिश, स्वीडिश तथा आइसलैन्डिक ऐंग्लो-सैक्सन तथा निचली जर्मन (इंगलिश तथा फ्रीजियन) और ऊँची जर्मन (जर्मन तथा डच) में विभाजित है।

डलार्नियन जाति (Dalarnian Race)

एटलान्टिक जाति देखिए।

डाइनारिक जाति (Dinaric Race)

वह जाति जो यूरोप के दक्षिण-पूर्वी पर्वतीय प्रदेशों में तथा मुख्यतः डाइनारिक आल्प्स (Dinaric Alps) से उत्तर-पूर्वी फ्रांस तक, दक्षिण-पश्चिमी बेल्जियम, जर्मनी तथा उत्तर में एवर्डीनशायर तक (जहाँ पर उसके चिन्ह आवादी में देखे जा सकते हैं), डेनमार्क में, कार्पेथियन में (Carpathians) और पश्चिम की ओर आल्प्स पहाड़ पर तथा स्विटजरलैण्ड में पायी जाती हैं। जर्मनी तथा आस्ट्रिया के बहुत से फ़ौजी परिवारों में इसकी विशेषताएँ मिलती हैं।

इस जाति के लोग लम्बे तथा गठीले बने होते हैं। साथ ही लम्बे से माध्यमिक चेहरा, लम्बी नाक, जो तथाकथित रोमनिवासियों की नाक से मिलती जुलती सी प्रतीत होती हो, छोटे कपाल, माध्यमिक से लम्बी काली आँखें तथा बालवाले मिलते हैं। जर्मनी तथा उत्तरी देशों के बहुत से प्रसंकर प्रकारों में बाल तथा आँखें हलके रंग की हैं।

डी० डी० (D. D.)—यह प्रभावशाली युग्मैकगुण का चिह्न है।

ड्रुसेज (Druses)

फिलस्तीन के लेबनान में एक वन्य जाति, जो कि जनसंख्या में कंजी आँखों तथा हल्के बालों के अनुपात के लिए प्रसिद्ध है। साधारणतया यह आक्रमणकारियों के कारण बतलायी जाती है परन्तु यह अधिकांशतः अरेमाइट्स (Aramites) के कारण है जो कि मिस्री यादगारों (monuments) को देखते हुए, अधिकांश में नार्डिक थे।

तद्पु-रूपी (Reversion)

दो प्रकारों के संकरण से तीसरे की उत्पत्ति को कहते हैं जो कि भूतकाल के इन दोनों के किसी पूर्वज का गुण लिये हो।

दीर्घ-कापालिक (Dolchocephalic)

कापालिक देशना (cephalic index) देखिये।

दीर्घ नासा (Leptorrhine)

नाकसम्बन्धी देशना देखिए।

द्वियुग्मिक जुड़वाँ (Dizygotic Twins)

भ्राता सम्बन्धी जुड़वाँ देखिये।

द्वैधीकरण (Duplex)

उन आँखों के लिए इसका प्रयोग होता है जिनमें कि आँख के तारे (iris) के आगे भूरे रंग की एक परत होती है जिससे नीले के स्थान पर दूसरे प्रकार की रंगीन आँखें मिलती हैं। एक अन्य अर्थ में भी इसका प्रयोग किया जाता है जब कि कहा जाता है कि किसी एक दिये हुए गुण के उत्पादन में पित्र्यक के भिन्नयुग्मिक जोड़े के दोनों पित्र्यकों से सम्बन्ध है।

नव-उपार्जित गुणवाद (Neo Lamarkism)

उपार्जित गुणवाद का पुनःकथन तथा पुनरुत्थान १९वीं शताब्दी में मुख्यतः अमेरिका में हुआ और वर्तमान समय में भी मुख्यतः अमेरिका तथा रूस में प्रचलित है।

नाकों के प्रकार (Nose types)

फ्रान्स के महान् मानवशास्त्री टोपीनर्ड (Topinard) ने अपने Elements de' 'Anthropologie Generale' में जो प्राचीन वर्गीकरण स्थापित किया वह आज भी उतना ही ठीक है। वह इस प्रकार है—

१. सीधी, समानान्तर आधार के साथ।
२. उद्बुज (convex) दबे हुए आधार के साथ।
३. गड्ढेदार अथवा उठे हुए आधार के साथ।
४. रोमन, ऊँची बँधी हुई अथवा वस्क (busque)।
५. टेढ़ी नाक (sinnous)।
६. चपटी नाक, चौड़ी मलेनेसियन प्रकार की।
७. सीधी, छोटी, चौड़ी नेग्रायड की भाँति।
८. चपटी, सीधे प्रकार, मंगलायड प्रकार की।

अधिक विस्तृत वर्गीकरण रूडोल्फ मार्टिन ने अपने (Lehrback der Anthropologie) में किया है।

नार्डिक (Nordic)

काकेसायड जाति की एक शाखा जो कि मुख्यतः उत्तरी सागर के चारों ओर स्थित है तथा ऊँचा कद, लम्बा-चेहरा, लम्बा और ऊंचा सिर, हल्की से माध्यमिक गठन, लम्बे से माध्यमिक, सकरी नाक, हलकी आँखें (नीली या धूसर), हल्के वाल (भूरे से सुनहले), हलकी त्वचा तथा लहरीले वाल आदि उसके कुछ गुण हैं।

नासा-आकारदेशना (Nasal form index)

इस देशना में नथुने के प्रकार के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है जो कि आकृति से भिन्न है।

नासा की ऊँचाई (Nasal height)

इसमें जड़ के केन्द्र विन्दु से कोण में मिलनेवाले उस विन्दु तक की, जो कि ऊपर के ओठ तथा सेप्टम (septum) से वनता है, रेखा को नापा जाता है।

नासा आयाम (Nasal length)

नाक की जड़ से छोर तक नापने से मिलता है।

नासा की गहराई (Nasal depth)

यह नथुने के छोर से उपनथुने के विन्दु तक नापने से मिलती है।

नासाविस्तार (Nasal Breadth)

नथुने की सवसे अधिक चौड़ाई को नापने से मिलता है।

नासादेशना (Nasal Index)

नाक के अनुपातों का एक-दूसरे से सम्वन्ध। जीवित मनुष्यों की नाक की चौड़ाई को १०० से गुणा करके ऊँचाई से भाग दिया जाता है।

क्रेनियल नथुने की देशना चौड़ाई को १०० से गुणा करके, ऊँचाई से भाग देकर निकाली जाती है।

देशनाएँ तीन विभागों में वाँटी जाती हैं, चाहे कपाल अथवा सिर में हों—

वर्ग	देशनाएं	
	सिर की	कपाल की
लेप्टरहाइन	–७०	–४७ अथवा ४८
मेसरहाइन	७०–८५	४७ से ५१ अथवा ५३
प्लेटिरहाइन	–८५	५१ से ५३ तक

निकाला हुआ (Extracted)

यह शब्द तद्गुणी भाव के लिए प्रयुक्त किया जाता है। उदाहरण के लिए A A का a a से संकरण किया जाता है, प्रथम पीढ़ी (Fi) Aa की होगी। जब उनमें अन्तः-प्रसवन होता है तब दूसरी पीढ़ी F^2 की सन्तति में A A २५ प्रतिशत, Aa ५० प्रतिशत तथा aa २५ प्रतिशत मिलेगा। यह A A तथा aa व्यक्ति सन्तति के प्रारम्भिक माता-पिता से तद्गुणी (थ्रोवेक) हैं और इसी लिए ये निकाले हुए A A तथा निकाले हुए aa हो जाते हैं।

निश्चयवाद, भौगोलिक (Geographic Determinism)

यह सिद्धान्त कि मनुष्य की संस्कृति तथा सभ्यता का, साथ ही उसके भौतिक प्रकारों का विकास भौगोलिक परिस्थिति द्वारा निश्चित होता है, बादवाले पहलू में यह जीवविज्ञान के उपार्जित गुणवाद सिद्धान्त का भौगोलिक रूप है।

'रुको और जाओ', निश्चयवाद को देखिये।

नीग्रेसेन्स की देशना (Index Negrescence)

इसका आविष्कार डा० जान बेडो (Dr. John Beddoe) ने किया है। यदि D = काले बाल वाला हो, R = लाल बालवाला, F = हल्के बालवाला, तब निम्न सूत्र बनता है—

$$D+2N-R-F = \text{देशना।}$$

पिंगल, असित केश (Brunets)

इसका, काले केशोंवाले काकेसायड (Caucasoids) से—मेडिटेरेनियन, अल्पाइन, डाइनारिक, आर्मेनायड, तथा अटलान्टिक से—अभिप्राय है।

यह शब्द साधारणतया काले केशों वाले मेलानायड तथा मंगोलायड (Melanoids and Mongoloids) के लिए प्रयुक्त नहीं किया जाता, क्योंकि उनके काले बाल भिन्न-जननिक उत्पत्ति के हैं।

पित्र्यसूत्र (Chromosome)

ये सूक्ष्म जन्तु हैं जिनकी जीवित पदार्थों की प्रत्येक जाति में बराबर संख्या मिलती है जो कि कोशों में मिलते हैं। शरीरकोशों में पित्र्यसूत्र जननकोशों अथवा कीटाणु-कोशों की अपेक्षा दुगुनी संख्या में मिलते हैं।

इनका यह नाम (अंग्रेजी) इसलिए रखा गया क्योंकि इनमें कुछ रंगों द्वारा रंगे जाने की क्षमता है (क्रोमो = रंग) जिसके कारण वे पहचाने जाते हैं तथा अणुवीक्षण यंत्र द्वारा उनका अध्ययन किया जा सकता है।

पूर्वी जाति (Eastern Race)

मेडिटेरेनियन जाति देखिए।

पूर्वी बाल्टिक (East Baltic)

पूर्वी बाल्टिक जाति, बाल्टिक सागर के पूर्व में पायी जाती है।

हालां कि उसका प्रभाव उक्त समुद्र के चारों ओर तथा सूदूर पूर्व और दक्षिण-पूर्व के लोगों तक में मिलता है।

यह अल्पाइन जाति (Alpine race) से मिलती जुलती है, सिर्फ इसकी त्वचा का, बालों का तथा आँखों का रंग हलका होता है। बाल रूपहले हलके रंग के तथा आँखें बहुत हलकी, सूक्ष्म, नीली तथा भूरी होती है।

पृथक्करण (Segregation)

प्रथम पीढ़ी के प्रसंकरों (hybrids) में जब अन्तःप्रसवन होता है, जैसे कि A a (जो कि माता-पिता A A तथा a a से मिलता है और जिससे, २५ प्रतिशत A A, ५० प्रतिशत A a तथा २५ प्रतिशत a a की उत्पत्ति होती है, तो यह प्रारम्भिक माता-पिता के A A तथा a a गुणों का पृथक्करण कहलाता है।

पृथु कपाल (Brachycephalic)

कापालिक देशना (Cephalic index) देखिए।

पैलिओ एल्पाइन (Paleo Alpine)

कुछ मानव-भूवृत्तवेत्ताओं द्वारा अल्पाइन जाति के लिए इस शब्द का प्रयोग किया गया है, क्योंकि अल्पाइन शब्द वे मंगोलायड के लिए प्रयुक्त करते हैं।

ऐसे प्रयोगों को रोकना चाहिए क्योंकि इससे गड़बड़ी होती है, जब कि भली-भांति प्रचलित शब्द मौजूद हैं जो उनका प्रयोग दूसरे अर्थ में करते हैं।

पैनजेनेसिस (Pangenesis)

चार्ल्स डारविन ने पित्रागति की समस्या पर इस दृष्टिकोण से विचार किया कि बच्चों के कीटाणुकोशों में माता-पिता के गुण कैसे आ जाते हैं। उसने परिणाम निकाला कि प्रत्येक शरीरकोश से कुछ अंश अलग होकर कीटाणु कोश बनाते हैं।

इस प्रकार से यह मत, जिसको उसने पैनजेनेसिस (Pangenesis) कहा, उपार्जित गुणवाद के सिद्धान्त को, जो कि उपार्जित गुणों की पित्रागति में विश्वास करता है, अधिक बुद्धिसंगत बना देता है।

पैनेजैनेसिस, जैसा कि अब हम जानते हैं, पूर्णतया गलत था। गाल्टन द्वारा

नकारात्मक परिणाम निकलने पर तथा वीजमैन द्वारा उसके विरोध में जोरदार आवाज उठाने पर विद्वानों ने उसे अमान्य ठहरा दिया।

वीज़मैन ने बिलकुल विरोधी पक्ष लिया—यह नहीं कि शरीर के सचेतन अंग किस प्रकार कीटाणुकोशों को प्रभावित करते हैं, वरन् कीटाणुकोशों द्वारा शरीर के गुण किस प्रकार उत्पन्न होते हैं। मेन्डल के कार्य ने वीज़मैन का पूर्ण समर्थन किया और पैनजैनेसिस बिलकुल अस्वीकृत कर दिया गया।

प्रकार (Variety)

एक साधारण प्रकार की भिन्नता अथवा उपविभाग, जैसे कि किस्म या शाखा है। जैसे काकेसायड की एक किस्म मानी जाय तो उसको प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है, जो अर्थ-विस्तार में जाति से वड़े होंगे। प्रकार (Type) भी है।

प्रभावी (Dominant)

यह शब्द उन गुणों, कारकों अथवा पित्र्यकों (genes) के लिए प्रयुक्त होता है जो कि दो व्यक्तियों के संकरण से प्रथम पीढ़ी में प्रदर्शित होते हैं जिसमें केवल एक भिन्नयुग्म (allelomorph) पित्रागति से आता प्रतीत होता है तथा दूसरा या तो मिल जाता है अथवा अपसारी हो जाता है। इस प्रकार एक माता या पिता में से एक में A A प्रभावी पित्र्यक हैं तथा दूसरे में a a भिन्नयुग्म हैं, तव सन्तति A a होगी परन्तु केवल A के गुण समरूप में दिखलाई देंगे। इसलिए a का प्रभावी A है जो कि उसका अपसारी है।

प्राकृतिक चुनाव (Natural selection)

इस सिद्धान्त का प्रतिज्ञापन चार्ल्स डारविन ने किया है। संक्षेप में यह इस प्रकार बतलाया गया है—"वंशानुगति तथा परिवर्तन के कुछ सिद्धान्तों के साथ कार्य करते हुए अस्तित्व बनाये रखने के लिए प्रतियोगियों का युद्ध जिसके फलस्वरूप जातियाँ धीरे धीरे तथा लगातार वदलती रहती हैं।" आर० सी० पुनेट, एफ० आर० एस० मेन्डलिज्म, मैकमिलन एण्ड कम्पनी लिमिटेड, लन्दन, १९१९, पृष्ठ, १०

प्राणरस (Protoplasm), जीवद्रव्य

प्राणरस जीवन का आधार और जीवित कोशों का एक मुख्य भाग है।

फ, (F_1)—यह वह चिह्न है जो कि प्रथम पैतृक अथवा प्रसंकर पीढ़ी के लिए आता है। इसी तरह F_2, F_3 इत्यादि दूसरी तीसरी प्रसंकर पीढ़ी के लिए है।

फेनो-उग्रियन (Fenno-Ugrian)

फ़िनो उग्रियन लोगों की अनार्य (non-Aryan) भाषाओं, संस्कृतियों तथा

राष्ट्रीयताओं के लिए प्रयुक्त शब्द। इनमें ये लोग शामिल हैं—मध्य यूरोप में मगयार या हंगरीनिवासी, फ़िनलैण्ड के पश्चिमी फ़िन निवासी, वाल्टिक के फिन लोग, अथवा इथोनियानिवासी तथा लिवोनिया के लोग, दक्षिण-पूर्वी फिनलैण्ड के केरेलियन्स, पूर्वी फ़िन लोग अथवा उग्रियन तथा लेप लोग।

ये सब लोग मुख्यतः अथवा अंशतः काकेसायड हैं तथा हो सकता है कि भूतकाल में ये भाषाएँ गलती से तूरानिया अथवा मंगोल की समझी गयी थीं।

फैलिक (Faelic)

एटलान्टिक जाति (Atlantic Race) देखिए।

बहुमूत्रता (Diabetes Mellitus)

शरीर से सम्बन्धित असामान्य दशा परन्तु साथ ही वंशानुगत कारकों से भी सम्बन्धित।

भिन्नपित्र्यक (Diversigen)

इस पुस्तक में यह शब्द उन विजातीय जातिवैज्ञानिक एककों के लिए प्रयुक्त हुआ है जिनमें विभिन्न उत्पत्तियों के व्यक्ति सम्मिलित हैं जो एक समान भौगोलिक प्रदेश अथवा एक नये राजनीतिक एकक में कुछ ही दिन पूर्व एक दूसरे के साथ आये हैं। इन्होंने अन्तःप्रसवन आरम्भ किया अथवा एक ही विवाहक्षेत्र निर्धारित कर दिया जिससे कुछ समय बाद साधारण अन्तःप्रसवन होने लगेगा।

नये राष्ट्र तथा राज्य, जैसे कि नई दुनिया के हैं, जाति कणिका अथवा जातीय एककों (ethnic units) से भिन्न उन भिन्नपित्र्यक अथवा युग्मोत्पगुण एकक के उदाहरण हैं जो प्राचीन समूह है तथा भली भांति अन्तःप्रसूत हैं और जिन प्रकारों का पुनः उत्पादन करते हैं उनके रूप में वे काफ़ी दृढ़ हैं तथा भिन्नपित्र्यक (diversigens) और अभिजाति (नस्ल) के मध्य में आते हैं।

इस शब्द का निर्माण लैटिन शब्द डाइवर्सी जेनेरिस (diversi generis) से करना पड़ा है जिसका अर्थ है विभिन्न वर्गों से आये हुए, क्योंकि साधारण अंग्रेज़ी शब्द विजात (mongrel), जिसका भी अर्थ वही है, बहुत से अन्य अप्रिय अर्थों में भी लिया जाता है जिनको इस शब्द के प्रयोग से मिश्रित नहीं करना चाहिए।

भिन्नयुग्म (Allelomorph)

(मेण्डल के) पित्रागति सिद्धान्त के जोड़े के गुणों में से एक। इसका विशेषण रूप 'भिन्न युग्मिक' उपयोगी है क्योंकि कथन में उसका प्रयोग जो इस प्रकार होता है कि गोल "गुण का सिकुड़े" गुण से वही सम्बन्ध है जो कि पित्रागति सिद्धान्त के जोड़े के

दोनों गुणों में से एक का दूसरे से होता है। उसे संक्षेप में इस प्रकार कह सकते हैं कि गोल सिकुड़ के प्रति भिन्नयुग्मिक है।

भौतिक मानवशास्त्र (Physical Ahthropology)

भौतिक रूप में मनुष्य का, उसके शरीर तथा ढाँचे की वनावट का तथा उसके सम्वन्धों का अध्ययन है।

मंगोलायड जातियाँ (Mongoloid Races)

मोटे काले वालोंवाले, पीली त्वचा के (अमेरिन्ड में लाल त्वचा के) चौड़े कपाल, आकृति चपटी, छोटे कदवाली जातियाँ, जिनके वितरण का केन्द्र पूर्वी मध्य एशिया है।

मध्य नासा (Mesorrhine)

नाकसम्वन्धी देशना देखिए।

माध्यमिक कापालिक (Mesaticephalic)

कापालिक देशना (Cephalic Index) देखिए।

माध्यमिक कापालिक (Mesocephalic)

उन सिरों का वर्णन है जो ऊँचाई-लम्वाई देशना अथवा ऊँचाई-चौड़ाइं देशना के सम्वन्ध में माध्यमिक लम्वाई के हों।

मानव-भूगोल (Human-Geography)

परिस्थिति के सम्वन्ध में विना जातियों में विभक्त मानव के सम्पूर्ण अध्ययन के तथा भौगोलिक परिस्थिति की दशाओं के प्रति उनकी क्रिया तथा परिस्थिति पर उनका प्रभाव है। इसलिए मानव भूगोल एक पारिस्थितिक अध्ययन है।

मानव-भूवृत्त (Anthropogeography)

मानव-भूवृत्त, मानव भूगोल (Human Geography) से इस वात में भिन्न है कि यह इस तथ्य के प्रति संकेत है कि समस्या पूर्णतया केवल परिस्थिति के सम्वन्ध में मनुष्य की ही नहीं है, परन्तु दो जातियों, उपजातियों, अभिजनन तथा जाति-वैज्ञानिक अन्य प्रकार के समूहों की भी है।

मानव-भूवृत्त, मानव-भूगोल की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक तथा सत्यतापूर्ण है।

मेडिटेरेनियन जाति (Mediterranean Race)

काकेसायड जातियों की एक छोटी किस्म, जो कि दो शाखाओं अथवा उपजातियों में मिलती है। पश्चिमी शाखा अथवा मुख्य भूमध्यसागरीय शाखा यूरोप तथा अफ्रीका के भूमध्यसागरीय तटों पर स्थित पायी जाती है। उसमें छोटा गठा कद, लम्बे कपाल

तथा चेहरे, काले केश और आँखें, लहरीले से लगाकर घुँघराले तक बाल, हल्का पीत वर्ण, माध्यमिक ऊँचाई की बहुत कुछ सीधी नाक मिलती हैं।

इस जाति का पूर्वी भाग जिसे जर्मन लेखक पूर्वी जाति (Oriental Race) कहते हैं, मेडिटेरेनियन से पूर्व की ओर अरेबिया, ईराक और आगे तक फैला पाया जाता है।

मेलेनस (Melanous)

काली त्वचावाले।

मेलानायड जाति (Melanoid Race)

इसके अन्तर्गत ऊर्णकेश (ulotrichic) काले छल्लेदार बाल, काली तथा गहरी त्वचावाली जातियाँ आती हैं जो नेग्रायड, नेग्रियेटो (जिनमें कि नेग्रिल्लोज भी हैं) तथा आस्ट्रेलायड, सम्मिलित कहलाती हैं।

मेलानोक्रोइक(Melanochroic)

दक्षिणी यूरोप के कम गौर वर्णवालों—मेडिटेरेनियन, सेमाइट तथा हेमाइट—के लिए, साथ ही भारत के अधिक काले काकेसायड लोगों तथा मेडिटेरेनियनों के लिए भी इसका प्रयोग किया गया है।

यथाक्रमिक मिलन (Assortative Mating)

समान की अपने ही समान का साथ करने की प्रवृत्ति। यह पशुओं में साधारण क्रम है और मनुष्यों में भी प्रायः ऐसा ही मिलता है। मनुष्यों की जातिगत विभिन्नता को बनाये रखने में यह एक महत्त्वपूर्ण कारक है।

युग्म, युग्मक (Zygote)

दो कीटाणुकोशों अथवा जन्युओं (gametes) के योग से निर्मित एक पूर्ण अण्ड।

युग्मोभय गुणी (Heterozygot)

युग्मानेकगुणी, जन्युओं का योग है और यह उन माता-पिता से मिलता है जो कि उसमें असमान कारकों का पारेषण करते हैं जिनमें से एक अपसारी (recessive तथा दूसरा प्रभावी (dominant) होता है।

युग्मक (Zygote) अथवा युग्मैकगुणी (homozygote) देखिए।

"DR" चिन्ह का प्रयोग युग्मानेकगुणी कोश अथवा जन्यु का अर्थ व्यक्त करने के लिए किया गया है।

युग्मैकगुण (Homozygote)

युग्मैकगुण, जन्युओं का योग है जो उन माता पिता से मिलता है जो कि उनमें

समान कारकों का पारेषण करते हैं जिनमें से दोनों प्रभावी अथवा अपसारी हो सकते हैं।

DD चिन्ह एक युग्मैकगुणी को प्रदर्शित करता है। गुण दोनों माता-पिता से पित्रागत तथा प्रभावी हैं।

RR चिन्ह एक युग्मैकगुणी को प्रदर्शित करता है जिसके गुण दोनों माता-पिता से पित्रागत तथा अपसारी हैं।

यूनीजेन (एकपित्र्यक, Unigen)

इस पुस्तक में जाति के एकक अथवा जाति-कणिका (etnnomonad) के अर्थ में इसका प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ भिन्नपित्र्यक (diversigen) के विपरीत है। उनका तात्पर्य अन्तःप्रसावित व्यक्तियों के प्राचीन जातीय समूह से है जिन्होंने यथाक्रमिक मिलन, आकस्मिक चुनाव, जननिक परिवर्तन तथा प्राकृतिक चुनाव, इनमें एक-एक अथवा कई की संयुक्त क्रिया द्वारा करीव एक नये प्रकार की उत्पत्ति की है।

जितनी समानता भिन्नपित्रयक (diversigen) में है, उससे इसमें वहुत अधिक समानता है। इसमें नस्ल से कम तथा जाति से और भी कम समानता मिलती है।

यहूदियों के अन्तःप्रसवन तथा उनमें आर्मीनायड गुणों के कुछ हद तक मिलने के कारण उनकी राष्ट्रीयता को यूनीजेन कहना उचित होगा।

कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि यूनीजेन पूर्णतया एक ही जाति से निर्मित होता है। उस अवस्था में वह एक उपजाति होगा और न वह शुद्ध नस्ल की इस दशा को पहुँच सका है जिसे जातीय नस्ल कहा जाय। परन्तु इस तथ्य पर जोर देना आवश्यक है कि कुछ प्राचीन जातिवैज्ञानिक समूह हैं जिनको विजात (mongrel) कहकर हम टाल नहीं सकते तथा जिनमें जनसंख्या के अधिकांश व्यक्तियों में प्रकार की कोई समानता नहीं होती।

यूरेफ्रिकन जाति (Eurafrican Race)

यह शब्द प्रोफेसर जीसेप सर्जी ने (Prof. Giuseppe Sergi) मेडिटेरेनियन जाति (Mediterranean Race) के लिए प्रयुक्त किया है परन्तु इसका सम्पूर्ण काकेसायड जाति के लिए भी प्रयोग किया गया है।

रुधिरसम्वन्धी (Erythrism)

रटिलिज्म (Rutilism) अथवा लाल वाल।

रासेनविशेनशैफ्ट (Rassenwissenshaft)

जातीय-शास्त्र (जातिविज्ञान) के लिए जर्मन शब्द।

राशेनकुन्ते (Rassenkunte)

रासेनविशेनशॅफ्ट (Rassenwissenshaft) देखिए।

राष्ट्रवाद (Nationalism)

जातित्ववाद (रेशलिज्म) का दूसरा रूप, जो कि राष्ट्र को वही अथवा वैसे ही गुण प्रदान करता है जो कि जातित्ववाद जाति को। इस प्रकार जर्मनी में नात्सी राज्य की अधीनता में राष्ट्रवाद तथा जातित्ववाद वास्तव में अभिन्न थे।

राष्ट्रीयता (Nationality)

यह शब्द एक राष्ट्र होने को प्रकट करता है जो कि एक राजनीतिक अथवा सामाजिक समूहन है जो जातिसम्बन्धी अन्तःस्थित प्रवृत्ति को सूचित करता है। यह अन्तः प्रवृत्ति यथाक्रमिक मिलन से भी प्रकट होती है जिसमें यह विश्वास करने की इच्छा सम्मिलित रहती है कि कोई समूह, जिससे किसी व्यक्ति का सम्बन्ध होता है, एक ही उत्पत्ति का है, या नहीं तो अपने सभी सदस्यों से सम्बन्धित है अथवा जो किसी न किसी प्रकार अपने प्रकार के लोगों से सम्बद्ध रहने की इच्छा को व्यक्त करता है, जिससे उसके सभी सदस्यों में अधिकार और कर्तव्य की भावना आ जाती है।

एक समान नाम रखने से, जैसे फ्रान्सीसी, जर्मन, अमेरिकन, राष्ट्रीयता का सिद्धान्त सम्भव हो सका। कभी कभी इसका निर्माण समान भाषा होने तथा हमारे समय में एक राज्य के रूप में समान राजनीतिक संघ द्वारा हो सका है, जहाँ पर सरहद के भीतर रहनेवालों में समान नागरिकता के कारण समान बन्धन की उत्पत्ति हुई।

पारिवारिक समूहों अथवा झुन्डों में रहना जातिसम्बन्धी अन्तःप्रवृत्ति का दूसरा रूप है।

वास्तव में यह शब्द लैटिन के नैस्कर (Nascor) से आया है जिसका अर्थ 'उत्पत्ति' है, तब उसे रक्त के रिश्ते से सम्बन्धित होना चाहिए तथा इसी लिए यह जाति ('रेस') के बराबर होगा। इसमें सन्देह नहीं कि, चाहे गलत ही क्यों न हो पर प्राचीन काल के लोगों ने राष्ट्र को जाति के भाव में लिया, क्योंकि बहुधा राष्ट्रीयता को बतलाने के लिए समान पूर्वजों की बात कही जाती थी। परन्तु आज इसी शब्द का ऐसा प्रयोग किया जाता है जिसमें जातिसम्बन्धी कोई वस्तु नहीं आती, चाहे किसी राष्ट्र के सदस्य अर्ध चेतन रूप से उसे जातीय शक्ति की भावना से युक्त बनाने का प्रयत्न क्यों न करें। जैसा कि हमने बतलाया है, जातीय अन्तःप्रसदन तथा पृथक्करण की सचेतन अन्तः-प्रवृत्ति का यह दूसरा रूप है। परिणामतः जाति के लिए इसका प्रयोग नहीं होना चाहिए।

रुको और जाओ निश्चयवाद (Stop and go determinism)

वर्तमान भौगोलिक निश्चयवाद का प्रोफेसर ग्रिफिथ टेलर द्वारा पुनर्कथन (भौगोलिक निश्चयवाद देखिए)। वास्तव में यह उपार्जित गुणवादी विचारों के भौगोलिक निश्चयवाद का त्याग है (अध्याय १५ देखिए)।

लहरदार केश (wavy hair)

केश आकार देखिए।

लघुकपालिक (platycephalic)

उन सिरों का वर्णन है जो कि ऊँचाई लम्बाई देशना अथवा ऊंचाई-चौड़ाई देशना से नीचे हैं।

लिंग-ग्रथन (Sex Linkage)

जब कि गुण एक ही लिंग पित्र्यसूत्रों में मिलते हैं।

अलिंग सूत्र ग्रथन (Autosomal Linkage) देखिए।

लिंग-पित्र्यसूत्र (Sex-Chromosomes)

ये X X तथा X Y पित्र्यसूत्र हैं तथा ये प्रजननकोशों (reproductive cells) में मिलते हैं और निषेचन (fertilisation) होने पर संयोजनों के अनुसार सन्तति का लिंग निर्धारित होता है।

लेथो-लिथुआनियन (Letho-Lithuanian)

लिथुआनिया तथा लैटविया (अब रूस के अन्तर्गत) के बाल्टिक राज्यों की आर्य भाषा, संस्कृति तथा राष्ट्रीयता से अर्थ है।

लैटिन अथवा रोमैन्स (Latin or Romance)

यह रोमेन्स (Romance) लोगों की सेण्टम् आर्य जाति भाषाओं, संस्कृतियों तथा राष्ट्रवादिता को प्रकट करता है, जो कि प्रारम्भ में शायद नार्डिक थे परन्तु अब उनमें मेडिटेरेनियन, अल्पाइन, एटलान्टिक जातीय सन्ततियाँ शामिल हैं जो इटली, फ्रान्स, स्विटजरलैण्ड, स्पेन, पुर्तगाल में निवास करती हैं तथा पूर्व में रूमानिया के पृथु कपालिक (brachycephalic) लोग भी सम्मिलित हैं।

वर्ग (stock)

अभिजनन (नस्ल) या प्रसवन-समूह के लिए प्रयुक्त साधारण शब्द, जैसे किस्में, किस्मों का भेद, जाति या जाति का उपविभाग अथवा अनिश्चित जातीय समूह, जैसे कि ब्रिटिश अथवा फ्रान्सीसी वर्ग।

वृहत् कापालिक (Hypsicephalic)

यह वे सिर हैं जो कि ऊँचाई-लम्बाई देशना अथवा ऊँचाई-चौड़ाई देशना के सम्बन्ध में ऊँचे हैं।

समान जुड़वें (Identitical Twins)

जुड़वाँ देखिए।

सम्भववाद (Possibilism)

भूगोलवेत्ताओं का एक सिद्धान्त जो निश्चयवाद के विरुद्ध है। उनका विश्वास है कि भूगोल द्वारा ही कुछ विकास सम्भव है परन्तु भगोल वाध्य नहीं करता।

समानता का गुणांक (Coefficiemt of Likeness)

मनुष्यों में समानता का सांख्यिकीय मूल्यांक 10 कोई समानता नहीं तथा I दो व्यक्तियों में पूर्ण समानता का प्रदर्शन करता है। इस प्रकार से माता-पिता और वच्चों में तथा भाइयों में यह ·५ है।

सांस्कृतिक मानवशास्त्र (Cultural Anthropology)

इसमें मनुष्य की कला, दस्तकारी, प्राविधिक विज्ञान तथा भाषा सम्मिलित है।

साइजोफ्रेनिया (Schizophrenia)

अस्वस्थ मानसिक अवस्था, साधारण मानसिक अव्यवस्था, कभी कभी डेमेन्शिया प्रेकाक्स कहलाती है जो कि प्रारम्भिक प्रकार का पागलपन है।

साधारण (Simplex)

आँखों के लिए प्रयुक्त शब्द, द्वैधीकरण (duplex) आँखों के विपरीत। साधारणतया, साधारण आँखें नीली अथवा धूसर (ग्रे) होती हैं परन्तु द्वैधीकरण में माध्यमिक से भूरी तक मिलती हैं।

साधारण आँखें वह हैं जिनमें भूरा रंग (चमकीला पदार्थ – chromatin) आँख के तारे (iris) के ऊपरी भाग में नहीं होता।

इस शब्द का प्रयोग उस समय भी किया जाता है जब कि यह कहा जाता है कि द्वैधीकरण (duplex) से भिन्न किसी गुण की उत्पत्ति में भिन्नयुग्मिक पिण्डकों के जोड़े में से एक का सम्बन्ध है।

सादृश्य (concordance)

किसी दी हुई जनसंख्या में किसी जाति के विशिष्ट जातीय गुणों में एक से अधिक मिलने पर इसका प्रयोग होता है।

इस प्रकार यदि हम कहें कि पूर्वी ऐंग्लिया (East Anglia) में वाल, आँख, त्वचा, कपाल और कद आदि जातीय गुणों की समानता है, तो यह जानते हुए कि जन-संख्या पूर्णतया नार्डिक है, इसका अर्थ होगा कि अधिकांश लोगों के स्वर्ण केश, कंजी आँखें तथा त्वचा, लम्वा कपाल और लम्वा कद होगा—जो सव नार्डिक जाति के गुण हैं। यदि वाल काले हों तव ये लोग असदृश होंगे।

सीधे केश (straight hair)

केशों के आकार को देखिए।

सेमेटिक (Semitic)

मानव का एक भाषावार तथा सांस्कृतिक विभाग जिसके अन्दर असीरिया, फोनीशिया, सीरिया (शाम), हीब्रू, अरामेइक, कनानान्टिश (Cananantish) तथा आजकल की अरेविया की भाषाएँ सम्मिलित हैं। इस वर्गीकरण में मेडिटेरेनियन जाति के पूर्वी भाग की जातियाँ सम्मिलित हैं।

सूखा रोग (Rickets)

विटामिन डी (Vitamin D) की कमी से उत्पन्न दशा जो वंशानुगति के आधार पर भी होती है।

सूत्रभाजन (Mitosis)

शरीरकोश के सभी पित्र्यसूत्रों का, उनका दो कोशों में विभाजन होने के पूर्व, समान भागों में अलग होना सूत्रभाजन है।

इस प्रकार, उदाहरण के लिए चार पित्र्यसूत्र वाले शारीरिक कोश में ये लम्बाई में वँट जाते हैं और आठ अर्ध पित्र्यसूत्र वनकर चार पित्र्यसूत्रों के दो जोड़े हो जाते हैं जो कि प्रारम्भिक कोश से वने इन दो नये कोशों की न्यष्टि वन जाते हैं।

इस क्रिया को सूत्र भाजन कहते हैं। इसे अर्धसूत्रण न समझ लेना चाहिए।

स्लाविक अथवा स्लावोनिक (Slavic or Slavonic)

साटेम-आर्य (Satem-Arya) भाषाओं सम्वन्धी स्लावोनिक लोगों की संस्कृति तथा राष्ट्रीयता—जिसमें पोल्स, स्लोवाक्स, स्लोविनीज, रूदेनियन्स, सर्वस, वेन्डस, मान्टेनेग्रियन्स, वलगारियन्स, युक्रेनियन तथा अनेक रोमन समूह सम्मिलित हैं।

शरीरसम्वन्धी कोश (Somatic Cells)

सोमा (Soma) या वाडी (body) शरीर शव्द से लिया गया है जिसका अर्थ शारीरिक कोश, कीटाणु कोश (germ cells) से भिन्न है।

इनमें प्रजननकोशों की भाँति पित्र्यसूत्रों की संख्या दुगुनी है।

शुद्ध (Pure)

जातियों, नस्लों तथा व्यक्तियों के लिए प्रयोग किया जाता है जो आपस में अन्तः-प्रसवन होने पर अपने ही समान सन्तति उत्पन्न करते हैं।

श्वेतता (Albinism), **धवलांगता**

त्वचा, बाल तथा आँखों में रंग की कमी जो कि सभी जातियों में हो सकती है। यह एक रोगसम्बन्धी दशा है जो कि जननिक प्रकार से पारेषित होती है।

श्वेत जातियां (White races)

काकेसायड जातियों के लिए प्रयुक्त शब्द।

हथेली का उभरा भाग (Thenar eminence)

अँगूठे के नीचे हथेली का उभरा भाग।

हथेली का बायाँ ऊंचा भाग (Hypothenar-eminence)

घूँसे का उभरा भाग।

हेलेन-इलीरियन (Helene Illyrian)

यूनान की आर्य भाषाओं, संस्कृतियों तथा राष्ट्रीयता से सम्बन्धित।

होमो मंगोलिकस (Homo Mongolicus)

मंगोलायड जाति के लिए प्रयोग किया गया शब्द।

होमो एनाटिकस (Homo Anaticus)

मंगोलायड जाति (Mongloid Race) के लिए प्रयोग किया गया शब्द।

होमो यूरोपीयस (Homo Europaeus)

काकेसायड जातियों (Caucasoids) के लिए प्रयोग किया गया शब्द।

होमो एफ्रीकानस (Homo Africanus)

नेग्रायड जाति (Negroid) के लिए प्रयोग किया गया शब्द।

हेमिटिक (Hamitic)

मानव का एक भाषावार तथा सांस्कृतिक विभाग, जिसमें ऐसी भाषावाले सम्मिलित हैं जैसे प्राचीन मिस्र की तथा उत्तरी अफ्रीका की, तब की और अब की वर्बर भाषाएं। यह भाषा बोलनेवाले लोग तब और अब भी जातीय वर्गीकरण में मेडिटेरेनियन प्रकार से हेमिटिक (Hamitic) तक से भिन्न हैं। हम उन्हें जाति-वैज्ञानिक दृष्टि से कुछ मेलानायड (Melanoid) रक्त के साथ मेडिटेरेनियन मानते हैं।

पारिभाषिक शब्द-सूची

अंत: प्रसवन inbreeding
अंत: प्रसूत inbred
अणुजीव micro-organism
अतिजीवन survival
अतिजीवन का युद्ध struggle for survival
अतिमानव superman
अधिरक्त स्राव haemaphila
अनुभवजन्य empirical
अपसारी* recessive
अभिजनन* breeding
अभिवर्ण* chromatin, रंजितक
अभिजाति breed, दे० सन्तति
अर्धसूत्रण* meiosis
अवबोध conception
अवरोक्त latter
आधारक matrix (क्षेत्रवस्तु)
आनुवंशिकी genetics, दे० जननिक-शास्त्र
आप्रवासित, आप्रवासी immigrant
आवृत्ति (बारम्बारता) frequency
उत्परिवर्तन* mutation
उत्प्रवासन emigration
उत्प्रवासी emigrant
उद्विकास evolution, उद्भव
उपजाति sub-race; species दे० 'किस्म'
उपधारणा postulate
उपरिचर्म epidermis
उपार्जित गुणवाद* Lamarkism
ऊतक tissue, तन्तु
एक – अंडक – दे० एकयुग्मिक
एकक unit
एकपित्र्यक* unigen
एकयुग्मिक* monozygotic
"जोड़वाँ"* monozygotic twins
एकसंकर monohybrid
कापालिक देशना Cephalic index
कारक factoi, घटक; पित्र्यक*
किस्म species (उपजाति)
कीटाणुकोश gamete जन्यु
कोश (कोशिका) cell
कोशद्रव्य cytoplasm
क्ष-रश्मि X-ray
गलग्रंथि thyroid
गुणांक coefficient (गुणक)
ग्रथन linkage (सहवर्त्तिता)
ग्रथित गुण* linked characters
घात power, विस्तारचिह्न
चमकीला पदार्थ – दे० 'रंजितक'
चुनाव की बंधुता elective affinity
चिपटनासा* platyrrhine
जनकबीज, जनकबिंदु – दे० 'पित्र्यक'
जननग्रंथि gonad
जनन-विद्या genetics
जननिक जातिविज्ञान genetic ethnology
जननिक परिवर्तन genetic drift
जननिक विद्या,-शास्त्र genetics
जन्यव gametic
जन्यु gamete
जातिकशिका* Ethnomonads
जातिगत (जातीय) racial
जातित्ववाद* racialism
जातिविज्ञान* (प्रजातिविज्ञान) ethnology

जातिवृत्त ethnography
जातिसंकरण race-crossing
जातीय प्रकार ethnic type
जातीय शास्त्र* racial science, दे० जातिविज्ञान
जीवमितीय biometrical
जीवविज्ञान biology
जीवन-विस्तार life span
जीविज organic
जुड़वाँ* twins
जुड़वाँ, समान या एकरूपधारी identical twins
जुड़वाँ, साधारण ordinary twins
डिम्ब (स्त्रीबीज) ovum
तत्संकरण back crossing
तद्गुणी throw back
त्रिसंकर trihybrid
दीर्घ कपाल* dolichocephal
दुर्जननिक dysgenic
देशना index
देशान्तर-गमन migration
दो अंडक dizygotic
द्विसंकर dihybrid
धवलांग* albino, श्वेत
नवउपार्जित गुणवाद* Neo-Lamarkism
नस्ल breed (अभिजाति)
निचर्म dermis
निश्चयवाद* determinism
निषेकहीन डिम्ब ovule
निषेचन fertilization
न्यष्टि nucleus
पदचिन्ह सदृश – दे० 'लुप्तप्राय पंख'
निर्वंश जीवशास्त्र palaeontology
पदार्थ वैज्ञानिक, – शास्त्रज्ञ naturalist
परिकल्पना hypothesis
परिस्थितिवाद environmentalism
परिस्थितिवादी environment list
पाटलक rosetted गुलाबरंग-रंजित
पारेषण transmission
पित्रागति inheritance
पित्रागति नियम (सिद्धान्त) Mendalism
पित्र्यक (जनकबिंदु) gene
पित्र्यसूत्र* Chromosome
पुराजाति विज्ञान Palaeo-Ethnology
पुरापाषाण काल palaeolithic
पुरासात्विकी विभाग Palaeontology
पूर्वावियव premises (प्रतिज्ञावाक्य)
पृथक्करण* segregation (विसंयोजन)
पृथु कपाल* brachycephalic
पोष्य वालक foster child
प्रकृतिवादी naturalist (पदार्थ शास्त्रज्ञ)
प्रक्रिया mechanism
प्रजनन reproduction
प्रतिज्ञा वाक्य premises (पूर्वावियव)
प्रतिष्ठित साहित्य classical literature
प्रभावी* dominant
प्रवसन migration
प्रसंकर hybrid
प्रसंकर शक्ति hybrid vigour
प्रसंकरोर्जा heterosis (प्रसंकर शक्ति)
प्राकृतिक चुनाव* natural selection
प्राकृतिक शास्त्र natural science
प्राणरस* protoplasm जीवद्रव्य, आदि-जीवरस
प्राणिशास्त्री Zoologist
प्रादेशिक पृथक्करण regional segregation
प्राविधिक technical
वंधुता का सम्वन्ध affinity
वहुकोशीय mulit-cellular
वहुयुग्म – दे० भिन्नयुग्म
वाह्यसमरूप phenotype
भिन्नपित्र्यक* diversigen
भिन्नयुग्म* allelomorph (वहुयुग्म)
भिन्नयुग्मिक पित्र्यक allelomorphic genes
भिन्नरूप idiotype
भूदृश्य landscape

भौगोलिक निश्चयवादी geographical determinist
मध्य मान mean
मानव ईक्षीय anthroposcopical
मानव भूवृत्त* Anthropo-geography
मानव विज्ञान Anthropology
मुख्य वर्ग genus, प्रवर्ग
मूलजाति समूह stock, मूलवंश
युग्मक, युग्मकोश Zygote
युग्मानेक गुण (विषम युग्मीय) heterozygous
युग्मैक गुण* (समयुग्मिक) homozygous
रंजितक Chromatin (दे० अभिवर्ण*)
राष्ट्रवाद* Nationalism
रुको और जाओ निश्चयवाद* Stop and go determinism
रूप-वर्णनात्मक morphological
लघु-इंद्रिय क्रिया hypofunc.ioning
लघु कपालिक* platycephalic
लम्ब वृत्त loop (गांठ)
लामार्कवाद Lamarkism, उपार्जित गुणवाद
लिंग ग्रथन* sex linkage
लिंग पित्र्यसूत्र sex chromosomes
लुप्तप्राय पंख vestivigial wing
वंशक्रम pedigree
वंशानुगति heredity
वन्य जाति tribe
वर्ग stock (मूलवंश, मूलजातिसमूह)
विकिरण radiation
विजात समूह mongrel collection
विद्युदणु electron
विभासन irradiation (रश्मीकरण)
व्यत्यसन crossing over
शरीर सूत्र विभाजन metosis, सूत्रभाजन
संकरज cross-breed
संकरण cross-breeding
संतति strain, दे० अभिजाति
संतुलित जाति-समूह unigen
संपरीक्षण experiment
संभववाद* possibilism
संयोजन combination
सबन्धुता kinship
सपितृक, समातृक बच्चे sibling समान माता या समान पिता के बच्चे
समजात, समांग homogeneous
समजातता, समजातित्व homogeneity
समविभाजन metosis दे० शरीर सूत्र विभाजन
समपित्र्यक genotype
समयुग्मिक homozygous
समरूपता homogenity
समान जुड़वाँ identical twins
समान माता पिता के बच्चे sibling
सुजननिक विज्ञान, सुजननविद्या eugenics
सूत्रभाजन* mitosis
स्थूल चरण club foot
हथेली का उभरा भाग thenar eminence
हिमनदी glacier

[नोट—तारकांकित शब्दों की व्याख्या 'शब्द-व्याख्या' में देखिए।]